अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Effect Of Selenium Accumulate On Soluble Leaf Proteins And Enzymatic Activities Of Cowpea Plants [Vigna Unguiculata (L.) Walp.] (Dr. Priyanka Madhwani) 12

06. Effect of Lead Nitrate on Kidney of *Anabas testudenius* of Shahdol district, Madhya Pradesh, India (Anoop Sen) 17

07. Butea monosperma (Lam.) Kuntze - A Traditional Medicinal Plant -An Overview (Dr. Shail Bala Sanghi) 20

08. Carbon Nanotubes : Means of Water Purification(Dr. Meena Swamy, Dr. U.K. Jain) 23

09. Antibacterial Activity of Extracts from Murraya koenigii against Different Bacterial strains (Shobha Shrivastava) 26

10. A Study Of Chemical Pesticides - Hazards To Human Health (Dr. Pramod Pandit) 28

11. Anti Cancer Approved Drugs (Dr. Sushama Singh Majhi) 32

12. Increasing Climate Change Impact On Environment Pollution (Reena Dhurve, R. B. Markam) 35

13. Reduction Of Hazardous Substances Emissions Through Green Chemistry (Dr. Basanti Jain) 37

(Home Science / गृह विज्ञान)

14. Impact Of Maternal Occupation On The Nutritional Status Of 6-30 Months Children In Jodhpur City Of Rajasthan (Neelima Panwar, Dr. Meenakshi Mathur) 39

15. ग्रामीण महिला बाँस कारीगरों द्वारा अपनायी गयी हस्तकलाओं एवं उनकी आर्थिक महत्ता के संदर्भ में अध्ययन - गोरखपुर जिले के विशेष संदर्भ में (डॉ. दीपशिखा पाण्डेय) 43

16. बालक, बालिकाओं के कुपोषण स्तर का अध्ययन (छतरपुर शहर के संदर्भ में) (डॉ. कनुप्रिया चौबे) 48

17. भारत में महिलाओं की स्थिति (डॉ. कृष्णा शर्मा) 50

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

18. Impact Of Job Stress On Performance Of Employees- Study Of Government Organizations In Jhalawar City (Prof. N. S. Rao, Perry Jain) 52

19. धार जिले में मनरेगा का क्रियान्वयन और सृजित मानव दिवसों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 61
(डॉ. पी. गौतम, महेश निगम)

20. केन्द्र सरकार के लोक-ऋणों की प्रवृत्ति का अध्ययन व विश्लेषण (डॉ. चन्द्रप्रकाश पंवार) 67

21. म.प्र. सरकार के राजस्व के लक्ष्य एवं प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. एल. एन. शर्मा) 73

22. छिन्दवाड़ा जिले की कृषि एवं विपणन (डॉ. नोखेलाल साहू) 78

23. भोपाल जिले के औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश वित्त निगम का योगदान एवं संभावनाएँ 81
(डॉ. एन. के. पाटीदार, डॉ. वी. के. जैन, दीपक शाक्यवार)

24. वाणिज्यिक वाहनों का मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में योगदान (डॉ. पी. एल. पाटीदार, सुस्मिता हिरवे) 84

25. मन्दसौर जिले में अफीम फसल का उत्पादन एवं लागत विश्लेषण (सारिका पारखी) 87

26. व्यावसायिक क्रोध प्रबंधन-अध्ययन (डॉ. अन्तिमबाला जैन) 90

(Economics / अर्थशास्त्र)

27. किसान क्रेडिट कार्ड का कृषकों पर प्रभाव - एक विश्लेषण (उज्जैन संभाग के विशेष संदर्भ में) (डॉ. रिखबचंद जैन) 92

28. छतरपुर जिले में महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम एवं पलायन 96
(ईशानगर विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में) (डॉ. विभा वासुदेव)

29. विकास का इंजन माने जाना वाला शहरीकरण - पर्यावरण के लिए चुनौति (प्रो. सुजाता नाईक) 101

30. जनसंख्या वृद्धि एवं बदलते आर्थिक समीकण (हरदयाल अहिरवार) 104

31. नीमच जिले की जनसंख्या का लिंगानुपात (डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा, बाला शर्मा) 106

32. मध्यप्रदेश में हाट बाजार योजना एक आर्थिक विश्लेषण (डॉ. शशि किरण नायक, अनुष्का मिश्रा नायक, रोहिणी त्रिपाठी) 108

33. डिजिटल इंडिया की संकल्पना में अग्रणी मध्यप्रदेश (डॉ. वसुधा अग्रवाल) 110

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

34. भारतीय प्रशासन में जनसहभागिता - सिद्धांत एवं व्यवहार एक सर्वेक्षण (डॉ. नेहा चौहान) 113

35. पूर्व मुख्यमंत्री श्री बाबूलाल गौर के कार्यकाल में मध्यप्रदेश राज्य व केन्द्र संबंधों की समीक्षा (डॉ. चन्द्रमणि प्रसाद मिश्रा) 117

36. संसद के गौरव (डॉ. अभिलाषा साठे) 120

37. वर्तमान संदर्भो में आचार्य नरेन्द्र देव के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता (डॉ. कान्ता अलावा) 123

38. मध्ययुगीन राजदर्शन पर ट्यूटन जातियों का प्रभाव (डॉ. मीनाक्षी पंवार) 125

(History / इतिहास)

39. महात्मा गांधी की ऐतिहासिक हरिजन यात्रा 'सिवनी जिले के विशेष संदर्भ में' (डॉ. संकेत कुमार चौकसे) 127

40. स्वाधीनता संघर्ष में महिलाओं का योगदान 'बैतूल जिले के विशेष संदर्भ में' (डॉ. गौरी बेदी) 129

41. युवा शक्ति के जागरूक से राष्ट्र जागरण (डॉ. नितिन सहारिया) 131

42. खैरागढ़ का ऐतिहासिक, राजनीतिक व साहित्यिक -सांस्कृतिक वैभव (डॉ. रजनीश कुमार उमरे,डॉ. ऋतु सेन) 133

43. ब्रह्म विद्या के प्रतीक-सुख के सागर चारों वेद (डॉ. नितिन सहारिया) 136

(Sociology / समाजशास्त्र)

44. A Comparative Study Of Madhya Pradesh And Karnataka- Demographic Change And Gender Inequality (Dr. Indra Barman) 138

45. मध्यप्रदेश की भील जनजाति में जनसंचार साधन- विकास एवं परिवर्तन (डॉ. संजय जोशी) 141

46. शिक्षित बेरोजगारी - एक समस्या (डॉ. मनोज वानखेड़े) 145

47. जनजातीय विकास - मध्यप्रदेश शासन की पहल (डॉ. उमा लवानिया) 147

48. नवबौद्ध या बौद्ध ? एक शोध अध्ययन (निलेश वासनिक, डॉ. अर्चना गौर) 150

49. ग्रामीण महिला सशक्तिकरण के सामाजिक आर्थिक आयाम (डॉ. प्रीति रवि) 152

(Psychology / मनोविज्ञान)

50. To study the capability of problem solving ability in Arts and Commerce student (Heenakshi Bhansali) 153

51. A Study of Examination Anxiety Amongst Secondary School Students (Dr. Madhu Mishra) 156

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

52. Socio-Cultural perspectives in the poetry of Jayanta Mahapatra (Dr. Manisha Dwivedi, Mrinal Kanti Das) 158

53. Girish Karnad As A Modern Indian Dramatist (Dr. Manisha Dwivedi, Twishampati De) 161

54. Arvind Adiga As A Novelist Of Modern Era (Dr. Manisha Dwivedi, Nidhi Chandra) 163

55. Rossetti's Extra Imagination Power Of Expression - A Brief Sketch (Dr. Jalaj Dixit) 165

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

56. छद्म राजनीति के प्रति संघर्षशील दृष्टिकोण - सुरंग में सुबह (विनोद कुमार) 166

57. आदिवासी जीवन की पीड़ा - साहित्यकारों की कलम से (राजिन्द्र कुमार) 169

58. भारतीय साहित्य का सामाजिक सरोकार और संस्कृति का वैश्विक परिप्रेक्ष्य (डॉ. विजय कुमार पाण्डेय) 172
59. आधुनिक संदर्भ में नागार्जुन का जनवादी काव्य (डॉ. पूनम त्रिपाठी) 175
60. द्वन्द्वात्मक विचारणा एवं नयी कविता (डॉ. गायत्री वाजपेयी) 178
61. भोजपुरी कविता में आत्मिक एवं सामाजिक सौन्दर्यबोध (डॉ. अनुपम कुमार वर्मा) 181
62. जीवन से साक्षात्कार करवाती हिन्दी कहानी (डॉ. मंजुला जोशी) 184
63. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी खड़ी बोली की चुनौती (डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन) 186
64. नाच - जी सकने का विवश कर्म (डॉ. संध्या टिकेकर) 188
65. महाप्राण निराला की मानवीय चेतना (डॉ. वारिश जैन) 190
66. नारी चेतना का उत्तरोत्तर विकास (डॉ. स्मिता सिंघई) 192
67. हिन्दी पत्रकारिता एवम् विधिक सीमाएँ (डॉ. एस. जे. सिद्दीकी) 194
68. अपोलो का रथ - एक श्रेष्ठ यात्रा वृतान्त (डॉ. सरोज जैन) 196
69. जयशंकर प्रसाद के कथा साहित्य एवं निबंधों की सामाजिक उपादेयता (डॉ. रेणू अग्रवाल) 198
70. कितनी सत्ताएं उपन्यास में वर्णित विविध सत्ताएं- एक अवलोकन (डॉ. संध्या खरे) 200
71. सामाजिक परिदृश्य में 'विष्णु प्रभाकर' (डॉ. अनीता चौबे) 202
72. समाज, सम्वेदना और स्वंय - विष्णु प्रभाकर (डॉ. अनीता चौबे) 204
73. मालवी लोक गीत और लोकोक्तियां - एक अध्ययन (डॉ. बिट्टो जोशी) 206

(Law/ विधि)

74. Sick Industries : Nationalisation Or Winding Up (Aprajita Bhargava) 207

(Music / संगीत)

75. मुगल काल से वर्तमान काल तक कत्थक नृत्य प्रस्तुतिकरण का बदलता स्परूप -विश्लेषणात्मक अध्ययन 210
(डॉ. भावना ग्रोवर)

(Education / शिक्षा)

76. 'दिवास्वप्न' में उल्लेखित गतिविधियों के प्रयोग द्वारा प्राथमिक स्तर पर बालकेन्द्रित शिक्षण व्यवस्था में सुधार करना
212 (प्रमोद कुमार सेठिया, डॉ. महेश कुमार तिवारी)

(Others / अन्य)

77. वैश्विक दर्शनों का सार, संस्थावाद और उसकी प्रयुक्तियाँ (डॉ. हजारी लाल मौर्य) 216

78. मृच्छकटिकम् का वैशिष्ट्य एवं दृष्टिकोण (डॉ. आशा उपाध्याय) 220
79. Effect of some selected Agrochemicals on germination of *Abelmoschus esculentus* (Linn) Moench. (Dr. Indu Bala Soni) 222
80. जनभाषा में सांस्कृतिक अस्मिता के संदर्भ (डॉ. अनुपमा सक्सेना) 224
81. Woman Perspective in Urdu Literature (Dr. Arshad Siraj) 226
82. Raman Effect (Ashok Kumar Verma) 229
83. An Understanding of Physics and its Importance in the Life of Man (Ashok Kumar Verma) 233
84. A Critical Analysis of Human Relationships in R.K.Narayan's Novels (Dr. Sitaram) 237
85. Role and Significance of Communication Skills in Organisation (Dr. Govind Prakash Acharya) 240

नवीन शोध संसार एवं दिव्य शोध समीक्षा की ओर से हार्दिक बधाई

मध्यप्रदेश शासन, उच्च शिक्षा विभाग द्वारा शिक्षक संवर्ग में उत्कृष्ट प्रदर्शन एवं योगदान के लिए डॉ.आभा तिवारी, प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय मो.ह.गृह विज्ञान एवं विज्ञान महाविद्यालय,जबलपुर को स्व.श्री लक्ष्मण सिंह गौड़ स्मृति पुरस्कार 2012-13 से विभूषित किया गया।

(बाएं से दाएं) श्रीमती मालिनी गौड़, श्री उमाशंकर गुप्ता (उच्च शिक्षा मंत्री), श्री दीपक जोशी (उच्च शिक्षा राज्यमंत्री) द्वारा पुरस्कार प्राप्त करते हुए डॉ.आभा तिवारी

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर .... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका

(02) श्री अशोककुमार .... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम

(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू .... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया

(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी .... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल

(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा .... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. .... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. .... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे .... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. .... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत

(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम .... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत

(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा .... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत

(14) प्रो. डॉ. संजय खरे .... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत

(17) प्रो. अखिलेश जाधव .... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत

(18) प्रो. डॉ. कमल जैन .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से .... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत

(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन .... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी .... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत

(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव .... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत

(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया .... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत

(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत

(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी .... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम............ प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा .... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत

(30) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया .... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत

(31) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी........... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

(32) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे............. विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत

(33) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(34) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ .... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(35) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा .... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत

(36) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

(37) प्रो.डॉ. के.एल. साहू................ प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(38) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन .... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

(39) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित .... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव..........प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ....निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत

(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ....सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत

(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ....प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय........प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ....प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ......प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ....प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ....प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ....संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ....प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ....संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी...........अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ....अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे....................संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ....प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ....प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला-रतलाम (म.प्र.) भारत

(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ....प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ....प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा .... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन ....प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

****** विज्ञान संकाय ******

गणित:- .... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:-....................... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नीरज दुबे, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:-........................ **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्ज्ैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:- .... **(1) अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

****** वाणिज्य संकाय ******

वाणिज्य :- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल , शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

****** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ******

प्रबंध :- .... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी , शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

****** विधि संकाय ******

विधि:- .... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

****** कला संकाय ******

अर्थशास्त्र:-..................... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:- .... (1) **प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन ,** शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) **प्रो. डॉ. उमा लवानिया ,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:- .... (1) **प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) **प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला,** वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. कला जोशी,** श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:-......................... (1) **प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:-....................... (1) **प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:- .... (1) **प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव,** शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:- .... (1) **प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. सरोज कोठारी,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:- .... (1) **प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव,** महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:- .... (1) **प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर,** राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:- .... (1) **प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. मधु गोयल,** स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. संध्या वर्मा,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:-................. (1) **प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) **प्रो. डॉ. आभा तिवारी,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:- ... (1) **प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) **प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा,** वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) **प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर,** प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) **प्रो. डॉ. नीना अनेजा,** प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) **प्रो. डॉ. सतीश गिल,** शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा .... (1) **प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान .... (1) **डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत .... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर .... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी .... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन .... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा .... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित .... जैन कला-वाणिज्य-विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार .... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा .... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक .... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान .... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र .... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन .... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान .... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित .... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी .... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी .... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े .... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित .... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना .... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे .... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी .... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट .... शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद .... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर .... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल .... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया .... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी .... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी .... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा .... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव .... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे .... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान .... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर .... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला- सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार .... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला-सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश .... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव .... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा-बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी .... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे .... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी .... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल .... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल .... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन .... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे .... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला- सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा .... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव .... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला .... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया .... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला-छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल .... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला - शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल .... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान .... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा .... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला- रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा .... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा .... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी .... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान .... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर .... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा .... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश .... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे .... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित .... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा .... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री .... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला .... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल .... शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई .... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन .... वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ .... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख .... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा .... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया .... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला- प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह .... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल .... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Effect Of Selenium Accumulate On Soluble Leaf Proteins And Enzymatic Activities Of Cowpea Plants[Vigna Unguiculata(L.) Walp.]

Dr. Priyanka Madhwani *

Abstract - A pot culture experiment was conducted to study the effect of various concentrations of Selenium provided as di sodium selenite & di sodium selenate (0.5, 1.0, 2.0, 4.0, 8.0 & 16.0 ugg-1) on the soluble leaf protein and enzymatic activity of cowpea plant *[Vigna unguiculata* (L.) Walp.]. Low concentrations of Selenium were observed to be beneficial for the test plants. A positive correlation was observed between a lower level of selenium (0.5 & 1.0 ug g^{-1}) in soluble leaf proteins, acid phosphatase and peroxidose.
Keywords - Selenium; enzymatic activity; soluble leaf proteins; acid phosphatase and peroxidose; *Vigna unguiculata* (L.) Walp.

Introduction - In order to investigate the essentiality of Se in higher plants, attempts have been made to establish whether plants contain essential selenoproteins, such as those discovered for bacteria and animals. Sabeh et al. (1993) found a 16-Kd tetrameric protein in Aloe vera, which they conclude is a GPX selenoprotein similar to that found in mammals. Ng (1979) reported that in plants, the formation of selenocysteine (SeCys) very likely takes place within the chloroplast. SeCys is formed by the action of Cys synthase which couples selenide with O-acetyl serine (Ng and Anderson, 1978). The synthesis of non-protein seleno-amino acid probably occurs along pathways associated with S metabolism (Brown and Shrift, 1982). Three possible pathways for the conversion of SeCys to (1) Se-methylSeCys, which has been found in many Se-accumulators (Brown et al., 1982); (2) Se-cystathionine, which has been observed to accumulate in *Neptunia amplexicaulis and Morinda reticulate* (Peterson et al., 1972) and (3) the dipeptide, y-glutamyl-Se-methylSeCys, which has been observed in two Se-accumulator Astragalus species. (Nigam et al., 1969) have been reported.

Peroxidase is an important enzyme in analytical biochemistry. It is widely used for the construction of biosensors and is also commonly used as the enzyme label in immunoassays.

Suggestion and Findings - The results are presented in tables 1, 2 and figure 1, 2. The maximum increase in soluble leaf protein content was observed during fruiting stage at 16.0 ug g^{-1} dose of selenite as well as selenate and was 7.34% and 13.26% respectively, over the control. Maximum decrease in soluble protein contents was observed at 1.0 ug g^{-1} concentration of Na_2 SeO_4 during vegetative stage of growth and was 10.64%, over the control.

In the present investigation, in cowpea, maximum induction of acid phosphatase was observed in the 16.0 ug g^{-1} treatment of selenite and selenate. Singh and Singh (1978) reported that the behavior of selenium in the presence of high P content changed during the growth period. The P content in the plant increased at both times with increasing Se up to 5 ppm in growth medium. With only 10ppm Se, P content was reduced dramatically when 100 ppm P was supplied to the plants.

Acid phosphatase is second to peroxidase as the enzyme most commonly studied for possible use as bioindicator of air pollution. Acid phophatase is produced in cell wall and also occurs in cystol of higher plants (Hasegawa et al., 1976). In leaves it occurs primarily in the spongy parenchyma and in minor veins, but it is much less abundant in the palisade parenchyma (Besfor and Syred, 1979).

The results are presented in table, acid phosphatase and peroxidase activity showed a significant increase, over the control, at the higher levels of selenium. At 16.0 ug g^{-1} concentration of $Se0_3$, the increase in the activity of acid phosphatase and peroxidase was respectvily, and 41.0% higher, over the control. The activity of the above enzymes was 54.16%, 26.30% higher, over the control, at 16.0 ug g^{-1} treatment of selenate.

Plant peroxidase are widely distributed in all higher plants and one of their main function is concerned with the defense enzyme complex in the cells, ensuring the detoxification of activated oxygen form. This function is very important in the formation of metabolic response of plants to different stress factors (Bakardijieva et al., 1996).

Penz et al. (1999) reported that the activity of POD of wheat seedling is increase in response to higher Se concentration (approx 5.0 mg/L) in culture medium. Se could

*Guest Faculty, Govt. Sitaram Jaju Girls College, Neemuch (M.P.) INDIA

incorporate in to some POD isoenzyme during either seed germination or the seedling growth period. There is a dose responsive incorporation of selenium in isozyme increase along with the increase of selenium concentration in the medium.

Penz et al. (2002) reported that appropriate amount of Se significantly increased glutathione peroxidase (GSH-Px) activity in rice leaves. Lee et al. (2001) reported that treatment with 2.0 to 4.0 mg Ge/lit + 2.0 mg Se/lit resulted in Se and Ge accumulation to suitable level in lettuce, improve the growth of treated plant and enhance the total antioxidant capacity without any nutritional loss.

Several other enzymes that may be involved in the Se assimilation and volatilization pathway have been over expressed in plants, that is, GSH-reductase (GR), O-acetylserine-(thiol) lyase (OSTAL), and S-adenosyl methionine synthetase (SMS) (Zayed et al. 2000).
Peroxidase induction has also been observed in roots and leaves of various species after application of toxic dose B (Palavan Unsal et.al., 2000)

In the present study, the highest peroxidase activity was observed in 16.0 ugg^{-1} treatment. Increase in peroxidase activity was also observed in tolerant genotype of lentil *(Lens culinaris* Medic.) during salt stress (Singh et al., 2001). Similar increase in peroxidase activity in salt tolerant varieties of *Pisum sativum* was observed by Olmos et al. (1994). Increase in POD activity and decrease in chlorophyll content were detected in coniserous tree species, namely *Pinus pinea* and *Cedrus libani* (Baycu et al. 1999) in Istanbul due to cadmium and lead concentration in soil. Huff (1982) demonstrated the possibility of a peroxidase catalysed oxidation of chlorophyll by hydrogen peroxide in vitro. The high level of selenium in plants adversely affects the plant cell structure as well as cell metabolism (Durmus and Kadioglu, 1998).

Zhang et al. (2002) also observed that selenium could cause increase in the height & root length and enhance the contents of protein, glutathione (GSH) and activities of antioxidant enzymes. The growth inhibition may result from cell wall tightening process related to formation of cross linkages among cell wall polymer by POD (Fry, 1986).

Table - 1 & Graph (See in the last page)

Table - 2 & Graph (See in the last page)

Conclusion - Soluble leaf protein contents showed a decrease in cowpea when treated with lower concentration of selenium. This was 0.50-4.0 ug g^{-1} for vegetative & 0.5-2.0 ug g^{-1} for fruiting. With increase in selenium dose the content of soluble leaf protein increased.

All higher concentration (2.0-16.0 ug g^{-1} dose of SeO_3 & SeO_4) increase the activity of acid phosphatase & peroxidase. Na_2SeO_3 was observed to be more toxic comparative to $Na_2Se_2O_4$ in Cowpea. .

References :-

1. Bakardijieva, N.T., Christova, N.V. and Chrisov, K. 1996. Reaction of peroxidase from different plant species to increased temperature and the effect of Cd and Zn ions. In: Plant Peroxidase: Biochemistry and Physiology Obinger, C., Burner, U., Embermann, R., Penel, C., Greppin, H. (Eds.), University of Geneva.
2. Baycu, G., Eruz, E., Cancer, H. and Gonencgil, B. 1999. Heavy metal stress and peroxidases: I.. Peroxidase activity and chlorophyll content in response to cadmium and lead in Pinus pinea. LABPV News letters. Plant Peroxidase News Letter, 12 June, 1999.
3. Besford, R.T. and Syred, A.D. 1979. Effect of phosphorus nutrition on the cellular distribution of acid phosphatase in the leaves of Lycopersicon esculentum L. Annals of Botany, 43: 431-435.
4. Brown, T.A. and Shrift, A. 1982. Selenium: toxicity and tolerance in higher plants. Biol. Rev., 57: 59-84.
5. Durmus, N. and Kadioglu, A. 1998. Effect of benzyladenine on peroxidase activity during senescence of sunflower (Helianthus annuus L.) cotyledons. Phyton., 37: 253-261.
6. Fry, S.C. 1986. Cross linking of matrix polymers in the growing cell walls of Angiosperms. Annu Rev. Plant Physiol., 37: 165-186.
7. Huff, A. 1982. Peroxidase-catalyzed oxidation of chlorophyll by hydroperoxide. Phytochemistry, 22: 261-265.
8. Lee, G.P., Park, K.W., Maloupa, E. and Gerasapoulos. D. 2001. Study of Se and germanium treatment on their accumulation traits and induced antioxidant capacity in 'Seoul' Lettuce in hydroponics. ACTA Horticulture, 548: 491-496.
9. Ng, BH., Anderson, J.W. 1978. Systhesis of selenocysteine by cysteine synthases from selenium accumulator and non-accumulator plants. Phytochemistry, 17: 2069-2079.
10. Ng, BH., Anderson, J.W. 1979, Light-dependent incorporation of selenite and sulphite into selenocysteine and cysteine by isolated pea chloroplasts. Phytochemistry, 18: 573-580.
11. Nigam, S.N., Tu, J-I., McConnell, W.B. 1963. Distribution of selenomethylcystenine and some other amino acids in species of *Astragalus*, with special reference to their distribution during the growth of *Astragalus bisculatus*. Phytochemistry, 8: 1161-1165.
12. Olmos, E., Hemandez, J.A., Sevilla, F. and Hellin, E. 1994. Induction of several antioxidant enzyme in the selection of a salt tolerant cell line of Pisum sativum. J. Plant Physiol., 144: 594-598.
13. Palavan-Unsal, N., Aetin, E. and Kadioglu, A. 2000. Boron stress affects peroxidase activity, Plant Peroxidase Newsletter, University of Geneva, Switzerland, 15: 37-44.
14. Penz, X., Liu, Y.Y., Luo, S., Jiang, B. and Cailian, Y.2002. Effect of selenium of lipid peroxidation and oxidizing ability of rice root under ferrous stress. Journal of Northeast Agricultural University, 9(1): 9-15.
15. Peterson, P.J. 1972. L-Cystathionine and its selenium analogue in Neptunia amplexicaulis. Phytochemistry, 11: 1837-1839.

16. Ruzgas, T., Csoregi, E., Emneus., J., Gorton, L., Marko-Varga, G. 1996. Peroxidase-modified electrodes: Fundamentals and application. Analytica Chimica Acta., 330: 123-138.
17. Sabeh, F., Wright, T., Norton, S.J. 1993. Purification and characterization of glutathione peroxidase from *Aloe vera* plant. Enzyme Prot., 47: 92-98.
18. Salin, M.L. 1987. Toxic oxygen species and protective system of the chloroplast. Physiologia Plantarum, 72: 681-689.
19. Singh, M. and Singh, N. 1978. Selenium toxicity in plants and its detoxication by phosphorus. Soil Science, 126: 255-261.
20. Singh, R.A., Roy, N.K. and Haque, M.S. 2001. Changes in growth and metabolic activity in seedling of lentil (Lens culinarix Medic.) genotypes during salt stress. Indian J. Plant Physiol., 6(4): 406-410.
21. Zayed, A., Lytle, C.M. and Terry, N. 1998. Accumulation and Volatilization of different chemical species of selenium by plants. Planta, 206: 284-292.
22. Zhang, C., Shuokui, H. and Zhonogbo, W. 2002. Effect of selenium on the response of active oxygen scavenging system in the leaves of paddy rice under the stress of paddy rice under the stress of herbicide. Huanjing Kexue., 23(3): 347-355.

Table-1 - Effect of different concentrations of selenium (di-sodium selenite/di sodium selenate) on soluble leaf protein contents (mg g^{-1}) Vigna unguiculata (L.) Walp during different stages of growth (Percentage increase/decrease over the control also given in parenthesis).

Selenium (SeO_3/SeO_4) Concentrations (ug g-1)	Vegetation		Fruiting	
	SO_3 Concentration Protein	SO_4 Concentration Protein	SO_3 Concentration Protein	SO_4 Concentration Protein
Control	13.9333 ± 1.15	13.9333 ± 1.15	13.0666 ± 0.10	13.0666 ± 1.10
0.5	12.7500 ± 0.15 (-8.49)	12.4666 ± 0.30 (-10.52)	12.9000 ± 0.90 (-1.27)	11.4000 ± 0.20 (-12.75)
1.0	12.2500 ± 0.15 (-12.08)	12.4500 ± 0.05 (-10.64)	10.3500 ± 0.25 (-0.80)	10.4166 ± 0.21 (-20.28)
2.0	13.8000 ± 0.00 (-0.95)	13.7000 ± 0.10 (-1.67)	12.2666 ± 0.46 (-6.12)	11.2000 ± 0.20 (-14.28)
4.0	13.9000 ± 0.09 (-0.23)	13.7700 ± 0.05 (-1.17)	13.2666 ± 2.30 (+1.53)	13.2000 ± 0.34 (+1.02)
8.0	14.1333 ± 0.01 (+1.43)	14.0333 ± 0.98 (+0.71)	13.6000 ± 0.20 (+4.08)	14.7000 ± 0.10 (+12.50)
16.0	14.9000 ± 0.09 (+6.93)	14.0333 ± 2.00 (+0.71)	15.3333 ± 0.11 (+17.34)	14.8000 ± 1.40 (+13.26)
SEm ±	0.259	0.552	0.605	0.404
CD (5%)	0.786	1.676	1.835	1.226
CD (1%)	1.092	2.327	2.549	1.703
r	0.71650*	0.5374	0.7725*	0.7720**
r^2	0.5506	0.2888	0.5968	0.6045
Y	13.153**+0.11165	13.185**+0.663	12.067**+0.2005*	3.047**+0.0646

* Significant at 5% ** Significant at 1%

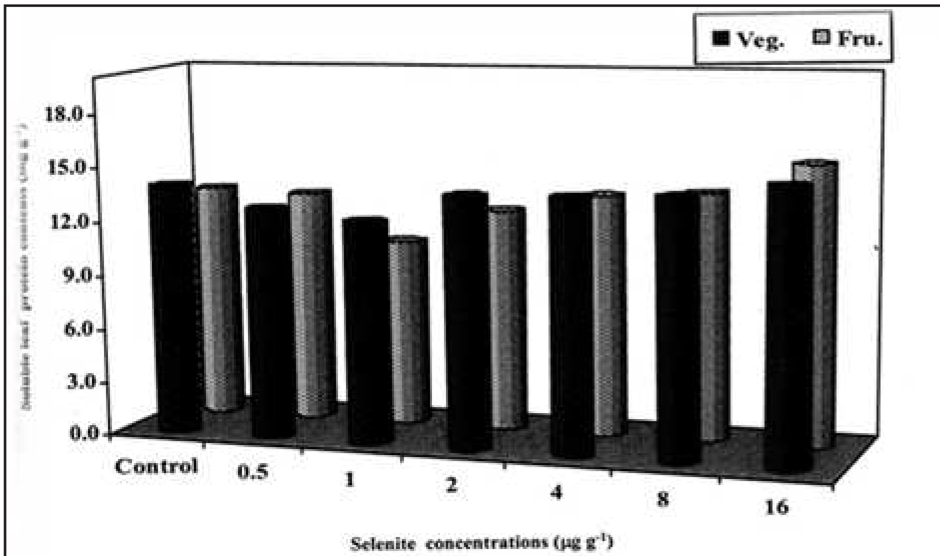

Fig. 01 : Effect of different concentrations of selenite (di sodium selenite) on soluble leaf protein contents of *Vigna unguiculata* (L.) Walp. during different stages of growth.

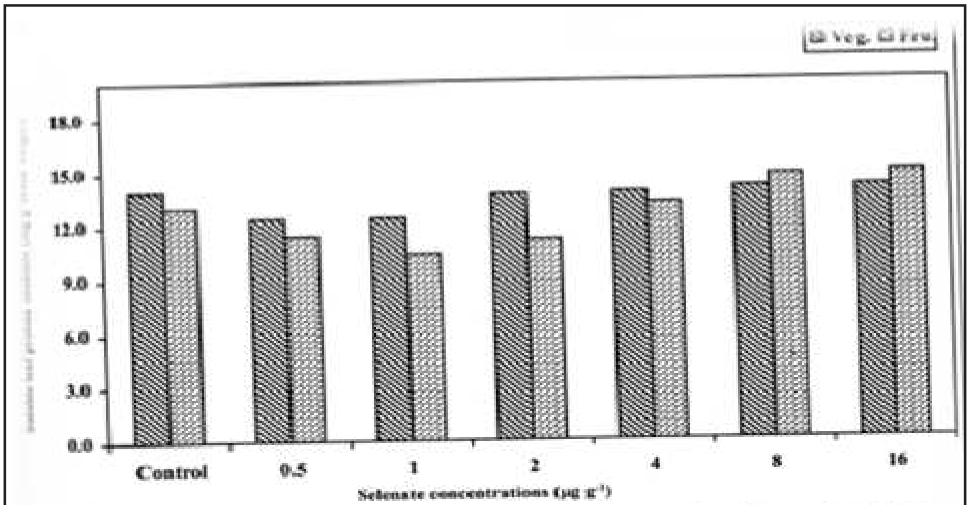

Fig. 02 : Effect of different concentrations of selenate (di sodium selenate) on soluble leaf protein contents of *Vigna unguiculata* (L.) Walp. during different stages of growth.

Table - 2 - Showing the effect of various concentrations of Selenite (di sodium selenite) and selenate (di sodium selenate) on the activity of certain enzymes of *Vigna unguiculata* (L.) Walp. (Percentage increase/decrease over the control also given in parenthesis).

Selenium Concentrations (ug g-1)	Selenite application		Selenate application	
	Acid phosphatase	Peroxidase	Acid phosphatase	Peroxidase
Control	6.4000 ± 0.00	2.5600 ± 0.36	6.4000 ± 0.00	2.5600 ± 0.36
0.5	4.8000 ± 1.38 (-25.00)	2.4600 ± 0.06 (-3.90)	4.0800 ± 0.14 (-36.25)	2.4600 ± 0.34 (-3.90)
1.0	5.6333 ± 1.38 (-11.97)	2.5600 ± 0.34 (-0.80)	4.6700 ± 1.15 (-27.03)	2.4800 ± 0.05 (-3.12)
2.0	6.9333 ± 0.92 (+8.33)	2.6666 ± 0.17 (+4.16)	6.8000 ± 0.00 (+2.50)	2.7000 ± 0.10 (+5.46)
4.0	9.2000 ± 1.20 (+43.73)	2.6933 ± 0.60 (+5.20)	8.6000 ± 0.60 (+34.37)	2.7173 ± 0.08 (+6.14)
8.0	12.0000 ± 0.00 (+87.50)	3.4875 ± 0.11 (+36.23)	9.4440 ± 0.38 (+47.56)	3.0933 ± 0.60 (+20.83)
16.0	12.4000 ± 0.69 (+93.75)	3.6100 ± 0.15 (+41.01)	9.8666 ± 0.07 (+54.16)	3.2333 ± 0.15 (+26.30)
SEm ±	0.561	0.179	0.298	0.176
CD (5%)	1.702	0.544	0.905	0.533
CD (1%)	2.364	0.755	1.256	0.740
r	0.8975**	0.9332**	0.8283**	0.9438**
r^2	0.8055	0.8708	0.6861	0.8908
Y	6.046**+0.4765**	2.520**+0.0768**	5.515**+0.3347**	2.528**+0.0493

* Significant at 5% ** Significant at 1%

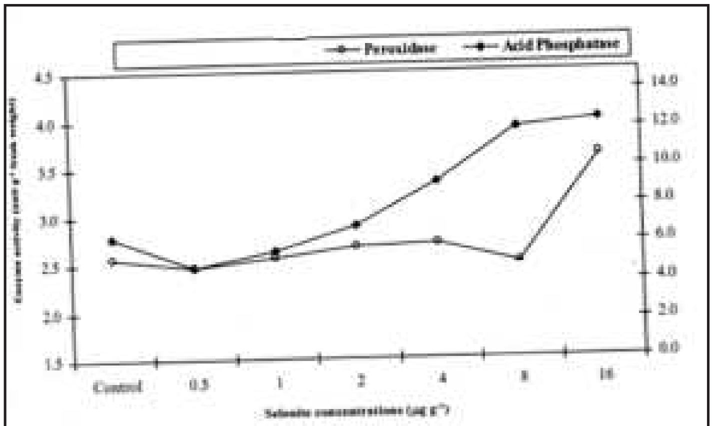

Fig-03 : Effect of different concentrations of selenite (di sodium selenite) on the activity of certain enzymes of Vigna unguiculata (L) Walp.

Peroxidase unit = A min/g fresh weight of leaf
Acid phosphatase unit = u moles p-nitrophenol released /min/g/fresh weight of leaf.

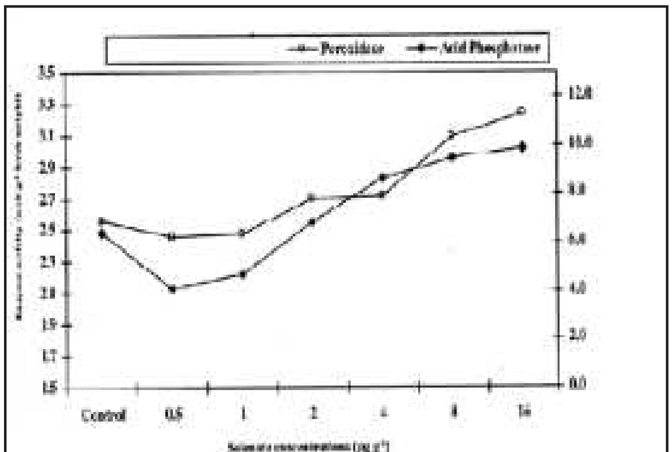

Fig-05 : Effect of different concentrations of selenate (di sodium selenate) on the activity of certain enzymes of Vigna unguiculata (L) Walp.

Peroxidase unit = A min/g fresh weight of leaf
Acid phosphatase unit = u moles p-nitrophenol released /min/g/fresh weight of leaf.

****

Effect of Lead Nitrate on Kidney of *Anabas testudenius* of Shahdol district, Madhya Pradesh, India

Anoop Sen *

Abstract - This research work was conducted during about mounts of June 2008 – April 2010 in Shahdol district. This research work included one species of fish that is, *Anabas testudenius*, Bloch. The study of polluted water speeded by factory and their bed effect on fish and its various internal parts Kidney. The wide usage of heavy metal salt ultimately pollutes the aquatic environment, thereby affecting the aquatic fauna, mainly fishes which constitute the major economy of the country and a valuable sources of protein .progressive development of field industries led to the pollution of water bodies by heavy metal salts as lead, zinc, copper, mercury, cadmium, and nickel, etc, through various sources. Fish is very important part of ecosystem, so this study is done to study the damage on the vital organs of Fish. This research aims at emergence of new ideas to save fish generations, as our country has most population and mostly people who depends on fishes for food.
Keywords – Impact of Lead Nitrate, on kidney of *Anabas testudenius*, Bloch.

Introduction - Shahdol district is situated in Maikal Plateau at an altitude of 489 mt above the sea level between 23.15^0 - 24.3^0 N Latitude and 18^{0} - 81.45^0 E Longitude. Shahdol situated on SER- South Eastern Railway Katni-Bilaspur. The district enjoys tropical monsoon average rainfall ranging from 309.33 to 1005.10 mm. per annum. The district has total population 10, 66,063 and areas 14028 Sq. Km. (Data Source District Shahdol: Statical book- 2011). Progressive development in the field of mining and industries led to the pollution of river by heavy salts such as lead zinc, copper, mercury, cadmium and nickel etc. through various sources. These are harmful to fish either directly or indirectly by depleting dissolved oxygen, change carbon dioxide level and significantly increasing or decreasing in PH value of the water. The water pollutant with the heavy metal salts upsets the normal metabolism of the fish. Lead is present in the effluents associated with the manufacture of accumulators and lead paints, cooper is present in an effluents associated with the mines and trade waste. The toxic effects of the salts of these metals (i.e. lead nitrate and copper sulphate) on the physiology of fish respiration have long been recognized

The paper mills textiles, tanneries,sugar, distilleries and petrochemical are the main industries, which are discharging their effluents into the river causing pollution.The effluents of these industries contain salts of heavy metal such as mercury, zinc,lead, copper, cobalt, nickel and cadmium etc. These salts affect the life of the fishes directly and indirectly.

The elevation of somatic pressure, variation in PH, depletion of oxygen contents and injury to the gills are the main effects produced by these metal salts. Shrivastva and Tiwari (1987) reported his to patholological changes in liver of *Hetropneustes fossilise* induced by industrial effluents., Chronic toxicity of distillery effluent to fresh water Sastry and Kamat chiamal (1988). studied acute toxicity of reactive textile dyes to eggs early life history stages of *Cyprinus carpio*.

The toxicity of various heavy metal salts on the reproduction fish has been studied extensively but the work is still not sufficient and requires some more investigation .it is essential to investigate its effects on physiology of fish reproduction to obtain the maximum sustained yield of fish from water and assure a recurring harvest of fish without depleting the resources and wastage of fishing of effects. The study of the effect of heavy metal salt on fish physiology is helpful in fishery management.

Important contribution in this field has been made by Bakthavathsalam et al. (1984) Rajnaryan et al. (1984) Bono (1985) and goel et al. (1985). Rangnekar and Sheila (1975), observed that the activities of liver enzyme, succinic dehydrogenase and malic dehydrogenase declined when Tilapia mossombica were exposed to copper sulphate solution. The activities of xanthinic oxidase, however, increased, Gupta and Rajbanshi (1978), found pathological effects in the liver and **kidney** of *Heteropneustes* ***fossillis*** when they were exposed to a lethal concentration of capper. In the liver, capsular and sub-capsular irregularities were observed and hypoxic necrosis noticed at intracellular level. Here specially discussed on effect of heavy metals in liver of ***Anabas testudenius*, fish**.

Kidney tissue developed tubular hexes as a result of copper poisoning. Pant, Kumar and Khanna (1980) have reported acute toxicity of zinc sulphate and copper sulphate to Punitius conchonius reducing hardness water markedly increased toxicity of zinc and copper to Punitius conchonius.

* **Deptt. of Geology, Govt. P.G. College, Shahdol (M.P.) INDIA**

Singh and Singh (1992) observed marked changes in the various blood parameters of Mystic vitiates after exposure to various concentration of copper and zinc sulphate. The perusal of available literature show that not much more work has been done on the affect of heavy metal salts on liver kidney and gonads of fishes. In the present study effect of lead nitrate (pub (no3)2) and copper Sulphate (cuso4, 5h2o) has been observed on the liver kidney and gonads.

Study Site - For study site were selected in different place of Sone river of Shahdol district as Block Jaisinghnagar, Beohari, Burhar and Sohagpur Block for the collection of fishes. These areas were selected on the basis of varied polluted water and richness or poorness of species, which also comprise number of diversity.

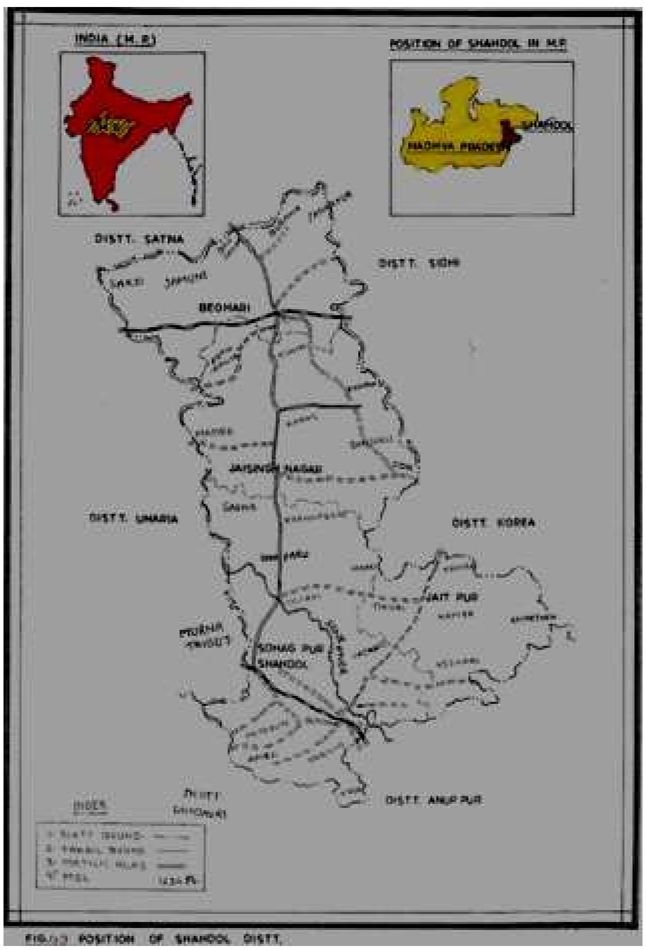

Fig. 4.3 Map Of Position And Study Site Of Shahdol Distt.

Material and Methods - To study the effect of pollutant (heavy metal salts lead nitrate) on kidney experiment were conducted in two phases. In the first phase of experiment, lethal concentration and sub-lethal concentration of the pollutants was calculated. In second phase of experiment, the fishes were kept in sub-lethal concentration of pollutants over a period of Forty-five days

For the first phase of experiment, eight adult fish of *Anabas testudenius* ranging between 12to13 cm in length were caught in the month of February and were acclimatized in different aquarium for seven days at a temperature of 23+-3c. The fishes were kept in different strong concentration of pollutants and their overturning time (i.e. the time at which the fish loses its sense of balance and floats on its side or upside down) was noted which is 18 hrs in 100 ppm lead nitrate solution, keeping these observations in mind rest of the fishes were divided into different grades of more diluted solutions of pollutants and their survival time was noted.

It has been found that at sub-lethal concentrations of 10 ppm of lead nitrate fishes survive for a long period of more than forty-five days and such these concentrations were taken for the second phase of experiments.

For the second phase of experiment, thirty adults acclimatized male and thirty adults acclimatized females fishes ***Anabas testudenius*** were selected.

Five females and five males were sacrificed at the onset of experiment; liver kidney and gonads were dissected out and fixed in aqueous bouin and Hollander' modified bouin. The length of the fish, body weight, gonad's weight and gonad's volume was also recorded. Ten adult females and ten adult males were kept in fresh water as control fishes in aquarium for forty –five days. The remaining 20 adult females and 20 adult males were separated in four aquarium (each have been either five females or five males) in above mentioned concentrations of different pollutants. The solution of the pollutants was changed daily so as to maintain the level of concentrations. The fishes were aerated properly and were fed with the fish food and earthworm pieces on alternate days. The fishes from different experimental groups were sacrificed either on thirty days and forty days of experiment, Kidney were obtained and fixed, At the time of dissection total length, the fish body weight, gonad's weight and gonad's volume was recorded. Blood glucose serum proteins and blood urea were estimated by the method of Nelson and Simonyi (19510, Lowry et al. (1951) and Oser (1954) respectively.

The mercury bromophenol blue stain was used for liver as a general staining technique for tissue sections by Mazea, brewer and Albert (1953) Statistical analysis of all the data was carried out by student's test (Fisher,1950).

Observation - IN The present studies experimental fish have some remarkable reduction in the protein content in the **kidney of *Anabas testudenius*** initially the protein content of Degeneration in central lobular region is very prominent significant decreases in protein level were noticed after fifteen, thirty and forty-five days of exposure to sub lethal dose of lead nitrate is shown **Kidney** all the fish exposed to toxicants showed increased number of interregnal cell up to fifteen days of exposure after 30 days of exposure the number of interregnal cells slightly decreased. In lead nitrate treated fishes hyperplasia was also observed in the interregnal cell. On the contrary the cells exhibited shrinkage in lead nitrate treated fish, chromo fin cells showed hyperplasia and were less affected morphologically. In all the exposure groups an increase in blood glucose level was observed. Significant in blood glucose level by 16.65% and 28.46% over the control

was evident on days 1 and 15 respectively, lead nitrate treatment caused an elevation in blood glucose level on 1day (5.37%) 15 days (18.47%)30 days (36.25%) serum protein content decreased after 45 days by 31.08% in nitrate treated fish. Thus it was observed that the serum protein content was much more pronounced in lead nitrate exposed fish blood urea level increased until the termination of the experiment by 45 days in the present study the lead nitrate showed an alteration in glucose in kidney, suggesting disturbance in the physiological activity of the fish ***Anabas testudenius*(Bloch.)**

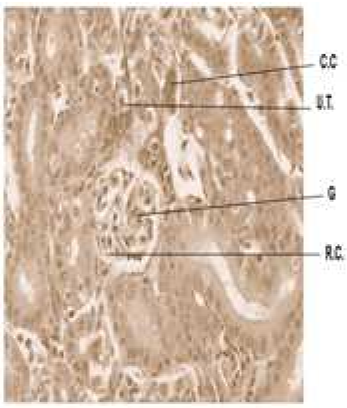

Fig1- Treated kidney

Fig2- Treated kidney

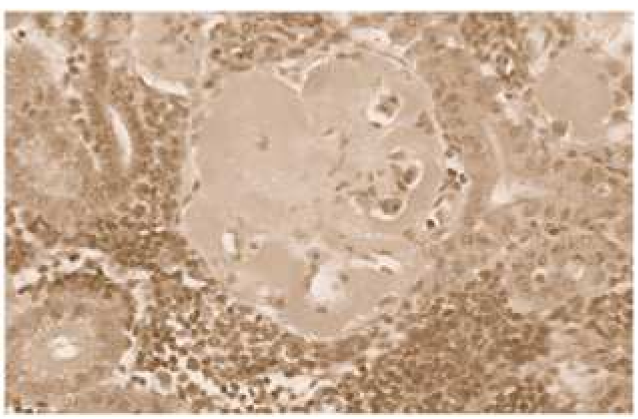

Fig.3- Untreated kidney of Treated and Untreated kidney of ***Anabas testudenius* (Bloch.)***

Discussion - Kidney– The kidney of the fishes shows rapture of the renal epithelium , collapase of the renal tubules shrinkage of glomeruli and swelling of the nuclei (Ahsan and Ahsan 1974 Arora 1983)

The hormone cortisol secreted by internal cell (Balm, 1986) promotes tissue catabolism, which lead to hyperglycaemia and increased nitrogen excretion. Chaturvadi and Saxena (1978) *found the degeneration of epithelial* cells of urniferous tubules necrosis cytoplasmic shrinkage and vacuoltion in the kidney of Channa punctatus after short and long term exposure to lindane. The steep desline in glycogen in muscles, liver and kidney of the fish is the result of prevalent anaerobic conditions arising from the pesticide stress (Kabeer et. al. 1978) Baigh (1991) also reported marked decrease in glycogen, protein, lipid and pyruvic acid in *Channa punctatus* when exposed to heptachlor. In present study lead nitrate treated fish have shown remarkable ultra structural change in the kidney of *Anabas testudineus*.

Acknowledgements - The research scholar expresses his gratitude to the Dr. Bharat Sharan Singh Ph. D. guide, and Dr. S. K. Saxena, Principal, Govt. P.G. College Shahdol who not only provided their valuable facilities but also landed their immense moral support and guidance for research work**,** and Dr. Binay Kumar Singh, for granting permission to use the departmental library and other facilities. Dr. K. Kumar, Dr. Sangita Masi,are kind cooperation and Dr. P. D. Rawat and also thankful to lab teacher and attendants Deptt., of Zoology are their moral support.

References :-

1. **Affleck, R. J. (1952)** –Zinc poisoning in a trout hatchery'. Aust. J. Mar. Fresh water Res; 3.
2. **Agrawal, S. L. And Gautam,A.K. (1988)** – 'Chronic toxicity of distillery effluent to fresh water fish *Channa panctatus'.* Acta. Ecologica. 10 (1).
3. **Banerjee, V. and Banerjee, M. (1988**)- Effect of heayy metal poisoning on peripheral hemogram in *Hetropneustes fossilis* (Bloch)'. Merccury, Chromium and Zinc chlorides (Lc50). Physic. Eco., 13 (2)
4. **Bakthavathsalam, R. and Reddy Srinivas ,Y. (1984**)- 'Importance of protein metabolism during acute exposure of *Anabas testudineus* to lindane', Erw. Eco., 2 (3)
5. **Bano, Y. (1985)** – 'Sub-lethal stress of D.D.T. on biochemical composition of catfish, *Clarias batrachus'* . Indian J. Enu. Hlth. L., 27 (3)
6. **Beena , S. And Viswarajan, S (1987)** – 'Effect of cadmium and mercury on the haematological parameters of the fish *Cyprinus carpio'*. Env. Eco., 5 (4)
7. **Carpentar, K.E. (1926)-** 'The lead mine as an active agent in river pollution'. Ann. Appl.Biol., 13
8. **Gautum, A.K. and agrawal, S.L. (1987)-** 'Acute zinc toxicity to fresh water fish *Cirrhius mrigala* (Ham)'. Acta. Ecologica., 9 (1&2)
9. **Gupta, A. K. (1988**) – ' Accumulation of cadmium in the fishes *Hetropneustes fossilis* and *channa panctatus'*. Env. Eco., 6 (3)
10. **Rajnarayan, R. And Sathyanesan, A.G. (1984**)- Mercuric chioride induced changes in the protein, liver, and cholesterol levels of the liver and ovary of the fish *Channa punctatus*'. Enu. Eco., 2 (2)
11. **Shivraj, k. M. Patil, H.S. (1988)-** 'Toxicity of cadmium and coppar to a fresh water fish'.Env Eco., 6 (1)
12. **Shrivastava and Tiwari (1987)** –'Reported histopatholgical changes in liver of *Hetropneustes fossilis,* induced by industrial effuents'.

****

Butea monosperma (Lam.) Kuntze - A Traditional Medicinal Plant - An Overview

Dr. Shail Bala Sanghi *

Abstract - The traditional systems of medicine together with folklore medicine continue to play a significant role in our health care system. Butea monosperma (Lam.) kuntze, (Palash) frequently known as flame of forest, belong to family Fabaceae. In traditional medicine, there are many natural crude drugs that have the prospective to take care of many diseases; one of them is Butea monosperma (Palash) this plant is highly used by rural and tribal community in curing diverse disorders. The present article enumerates various traditional and medicinal utility of the plant. In this review an attempt has been done to highlight the work on Butea monosperma having pharmacological potential.
Key words - Butea monosperma, palash, traditional medicinal uses.

Introduction - Butea monosperma is commonly known as flame of forest because of its vibrant red colour flower (Patil etal. 2006) its Belongs to family Fabaceae. It is locally called as palash, dhak Tesu, bijasneha, khakara, chichra, cheola etc. by local persons and tribes (kirtikar & Basu 1935). About the tree it is said that the tree is a form of agnidev, the god of fire. This tree grows up to 50 ft. height with cluster of flowers. It loses it leaves as the flowers develop in the month of January-March (Kirtikar & Basu 1935, Kapoor 2005). The flowers yield an orange dye used in Holi festival. It is also used to worship during Shivratri and is believed that the tree is a form of Agnidev, god of fire (Burlin etal 2007) the leaves of Butea monosperma are also used for preparation of cheap plates (Pattal) and cups (Donas) for rural feasts. In some parts of India these are used for biddies manufacturing by wrapping tobacco leaf. The leaves are good have astringent, depurate, Diuretic and aphrodisiac in pharmacological properties . It stimulates and promotes diuresis and menstrual flow. The seed is good in anthelmintic property.

Botanical classification - Taxonomic position of Butea monosperma (Lam.) kuntze.

Kingdom	– Plantae
Sub kingdom	– Tracheobionta
Division	– Magnoliophyta
Class	– Magnoliopsida
Order	– Fabales
Family	– Fabaceae
Genus	– Butea
Species	– monosperma

Botanical description -

Morphology - It is an erect, medium sized, 12-15m high deciduous tree with irregular branches. Its wood is greenish white in color and soft. The bark is ash color.

Leaves - The leaves are compound with three leaflets. The leaves have three foliate, large and stipulate, 10-15 cm long petiole. Leaflets are obtuse, glabrous, above finely silky with reticulate vein.

Flower - Flower starts appearing in February and stay on nearly up to the end of April. Calyx is dark, olive green to brown in color and densely velvety outside. The corolla is long with silky silvery hairs outside (Agrawal 1976.). The color of flower is red, orange or salmon colour. Flowers yield a reddish orange dye which is used as dying fabric.

Fruits - The fruit of Butea monosperma is a flat legume Pods are stalked 12.5 – 20.0 by 2.5 – 5.0 cm, thickened at the sutures. Young pods have a lot of hair a velvety cover and mature pods hang down.

Seed - The seeds are flat from 25 to 40 mm long , 15 to 25 mm wide , and 1.5 to 2 mm thick. The seed coats is reddish brown in colour, glossy and wrinkled and enclose two large leafy, yellowish cotyledons.

Phyto constituents -

Leaves - The leaves of Butea monosperma contain Glucoside, Kino oil containing oleic and linoleic acid, palmitic and Lignoceric acid. (Nad karnis 2002, Mishra etal 2000).

Bark - Kino- tanic acid, Gallic acid , Pyrocatechin, The plant also contains palastrin, and major glycosides as Butrin, Butolic acid, cyanidin, histidine Lupeol, palasimide and shellolic acid (schoeller etal 1938, Nadkarni 2002 Mishra etal 2000)

Stem - Stigma sterol –e-D- glucopyranoside and nano cosanoic acid, 3-Z hydroxyeuph -25-ene and 12 dimethyle-8 oxo-octadec 11 encyclohexane. (Gunakkunru etal ,2005, Agrawal etal .1994)

Gum - Tannin, mucilagenous material, Pyrocatechin. (Guha etal 1990, Shukla etal,2000)

Flower - Monospermoside, and isomonospermoside, chalkiness, Flavonoids and steroids, triterpene, butein, butin, isobutrin, Coreopsin ,isocoreopsin, sulphurein. (Gupta etal 1970, Lavhale et.al. 2007)

* Deptt. of Botany, Govt. M.L.B. P.G. Girls College, Bhopal (M.P.) INDIA

Seed - A nitrogenous acidic compound along with palasonin is present in seed. It also contain monospermo side, and isomonospermoside, oil proteolytic and Lypolytic enzyme, plant proteinase and polypetidase. (Singh etal 1974, Jawahar lal etal 1978).

Sap - Colourless isomeric flavanone and its glucosides, butrin chalcones, butin, (wagner et al 1986).

Ethno medicinal uses of plant -

Flower - Flower of B.monosperma is traditionally used as diuretic, antioxidant, antistress, anti inflamatory, antigout, antiulcer, astringent, and antihepetotoxic. (Burlia et al 2007). Flower is also used to treat enlarged spleen, manustrual disturbance burning Sensation, skin disease, leprosy, inflammation and Gonorrhoea, (Ambasta 1994). Flowers are crushed in milk and sugar is added, 3-4 spoons in drunk Per day for a month help to decrease body heat and chronic fever. Flowers are soaked in water overnight and a cup of this infusion is drunk every morning against Leucorrhoea till cure. (Bhargava 1986)

Leaf - Leaf of Butea monosperma is traditionally used as carminative anti inflammatory, antitumor, antidiabetic, antimicrobial, appetizer and aphrodisiac. These are also used to care for stomach disorder, diabetic, sore throat irregular bleeding during menustruation,cough&cold . Leaf powder about 2 spoons per day for a month is drunk mixed with a cup of water to cure diabetes. Leaf extract is used as gargle in case of sore throat. Leaf extract about 3-4 spoons is drunk at night fo 2-3 months. Its checks unbalanced bleeding during menustruation. (Mengi et al, 1995).

Stem - Stem bark is traditionally used as aphrodisiac, antidysentery, antiulcer , antitumor, antifungal , antipyretic, blood purifier and antiasthmatic. It is also used in bleeding hemorrhoid disorder, dysmenorrheal , hydrocele, liver disorder wound worm infections, scropion sting , cough & cold (Kirtikar et al 1935 , Kala, 2004).

Paste of stem bark is applied in case of body swelling. Bark is acrid, bitter appetiser, anthelmintic useful in fractures of bone. The ash of young branched is used in treatment of scorpion Sting (cherdshe wasart et al.2003.)

Root - Root is used in night blindness, elephantiasis, and impotency in snake bite . It is also used in piles, ulcers, tumors and dropsy. Root pieces are heated and then 2-3 spoons of extract are advised at night as a remedy against impotency. Spoonful of root powder mixed with water is drunk as antidote for snake bite. (Nadkarni's 2002).

Seed - Seed of B.monosperma is used in inflammation skin & eyes disease,bleeding piles, urinary stones , abdominal troubles ,Intestinal worms and tumour.(Bhalla et al, 1999, Nadkarni's 2002)

Fruit - Fruit & seeds are digestible cure 'Vata 'and 'Kapha', skin disease, tumours and abdominal troubles . As per Ayurveda are given for scorpion sting. (Bandara et al. 1990)

Gum - Gum is used in stomatitis, ring worm, septic sore throat, diarrhoea (Kirtikar et al 1935) 2 spoons of diluted gum are advised for dysentery until cure (Bhalla et al 1999)

Conclusion - From the time immemorial, plants have been used as curative agent for variety of ailments. In every ethnic group there exists a traditional health care system, which is culturally patterned. In rural communities health care seems to be the first and for most line of defense. Butea monosperma is one of the vital multipurpose trees used for medicine, food, fibers, dyes and other miscellaneous purposed. The present review reveals that the plants B. monosperma is used in treating various ailments. It is also remarkable to note that all parts of this tree are employed for a variety of purposes by the rural folks and aborigines in the region. It is very essential to have a proper documentation of medicinal plants and to know their potential for the improvement of health and hygiene through an ecofriendly system. However various studies are carried out , and authenticated comparative study will explore much depth about this plants used in the name "flame of the forest".

References:-

1. Patil MV, Pawar's, Patil DA (2006). Ethnobotany of Butea monosperma
a. (Lam.) kuntez in North Maharashtra ,India .Nat prod Rad .5(4): 323-325
2. Kirtikar KR Basu BD (1935). Indian medicanal plants, Allahabad, India Vol 1, 785-788.
3. Kapoor LD (2005).Handbook of Ayurvedic medicinal plants, Herbal Reference Library Edition (Replica press pvt.Ltd., India) PP.86
4. Burlia D.A., khadeb A.B.,(2007). comprehensive review On Butea monosperma (Lam.) kuntze Pharmacognosy ReviewsS .1(2):333-37
5. Agarwal VS (1976) Drug plants of India (kalyani publishers New Delhi) 1976, vol.1:52.
6. Nadkarni K.M.(2002). Indian Materia medica, vol-1 223-225.
7. Nadkarni's K.M.,(2002)Indian Meteria Medica (Bombay popular prakashan) 1:223-225
8. Mishra M, shukla YN, Kumars. (2000) . Euphane triterpenoids and lipid constituents from Butea Mpnosperma. Phytochemistry. 54 (8):835-836.
9. Schoeller W, Dohrn M, Hohlweg W.,1938. Estrogenic products patent: US 2 (2) : 112,712.
10. Gunakkunru A., padmanabank.,Thirumals P., Pritila J., Parimala G.,
11. Vengateran N. (2005) Anti-diarrhoel activity of Butea monosperma in
12. experimental animals. J.Ethnophamacol.98 (3-26):-241-244.
13. Agarwal AK., Singh M. Gupta N., Saxena R., Puri A, Verma AK., 1994. Management of giadiasis by an Immunomodulatory herbal drug Pippali rasayana. J.Ethnopharmacol. 44(3) : 143-146.
14. Guha PK., Pot R., Bhattacharyya A., 1990. An imide from the pod of Butea monosperma .Phytochemistry 29(6) : 2017.
15. Shukla YN, Mishra M., Kumar S 2000. Euphane triterpenoid and Lipid constituents from Butea

monosperma .Phytochemisty.54(8) : 835-836.

16. Gupta SR. , Ravindranath B. , Seshadri T. , 1970. The glucosides of Butea monosperma , phytochemistry. 9(10) : 2231-2235.
17. Lavhale MS , Mishra SH , 2007 Evaluation of free radical scavenging activity of Butea monosperma Lam . Indian . J. Exp. Biol . 45 : 376-384
18. Singh AN, Upadhye AB , Mhaskar VV , Dev S. .(1974) Components of soft resin . Tetrahedron 30 (7) : 867-874
19. Jawaharlal., Chandra S. , Sabir M, (1978) Modified method for isolation of palasonin. the Anthel mintic principal of Butea frondosa seeds. Indian J. pharma . sciences . 40 : 97-98.
20. Ambasta BP .1994 . The useful plants of India, (publication and information Directorate , CSIR , New Delhi) PP.91.
21. Bhargava , S.K. 1986. Estrogenic and postcoital anti conceptive in rats of butin isolated from Butea monosperma , J of Ethnopharmacology , 18 , 95-101.
22. Bhalla V , walter H. 1999. Research Bulletin of the Punjab University , Sciecne 48, 87-94
23. Mengi S.A . , Deshpande S.G ,1995 J. of phamacy and pharmacology . 47 : 997-1001 . 38 .
24. Kala C ,(2004) Prioritization of medicinal plants on the basis of available knowledge, existing practices and use value status in Uttaranchal , India. Biodivers and conserv . 13:459.
25. Cherdshewasart , W., Nimsakul, (2003) . N. Asian J. of Andrology , 5, 243-246.
26. Bandara B.M.R. , Kumar, N.S. , Wimalasiri , K.M.S. , 1990. Constiments of stem bark from Butea monosperma (leguminosae). J.Natn. Sci. coun. SriLanka.18 (2) : 97 -103.
27. Wagner H., Geyer B, Fiebig M. Kiso Y , Hikno H., 1986. Iso putrin and Butrin ,The Antihepatotoxic principals of Butea monosperma flowers . plants Med. 52 (2): 77-79.

****

Carbon Nanotubes : Means of Water Purification

Dr. Meena Swamy * Dr. U.K. Jain **

Abstract - One of the most pervasive problems afflicting people throughout the world is Water pollution and the lack of fresh water availability. Water pollutants have huge impacts on the entire living systems including terrestrial, aquatic, and aerial flora and fauna. It threatens the health and well beings of humans, plants and animals. The newly emerging micro/nano-pollutants are major threats to the fresh water availability and also increasing global warming and consequent climate changes. This has made it urgent to invent an appropriate water treatment technology that not only removes macro-, micro- and nano-pollutants but also desalinates water to a significant extent. Carbon nanotube (CNT) membranes have a bright future in addressing the world's growing need to purify water.The discovery of carbon nanotubes (CNTs) has attracted researchers worldwide. To reduce environmental problems, the CNTs are promising candidates for the adsorption of heavy metals. CNTs have great potential as a novel type of adsorbent due to their unique properties such as chemical stability, mechanical and thermal stability, and the high surface area, which leads to various applications including hydrogen storage, protein purification and water treatment. Present study gives an overview of the use of carbon nanotubes in water purification and future challenges in water treatments.
Keywords - *Carbon nanotubes; Membranes; Pollutants; Global warming.*

Introduction - Over 75% of the Earths surface is covered in water. 97.5% of this water is salt water, leaving only 2.5% as fresh water. Nearly 70% of that fresh water is frozen in the icecaps and most of the remainder is present as soil moisture, or lies in deep underground water, not accessible to human use. Less then 1% of the world's fresh water (~0.007% of all water on earth) is accessible for direct human uses. This is the water found in lakes, rivers, reservoirs and underground sources.

Sources of waters are "Polluted" by human activities, atmospheric deposition and from several other causes. Climate changes due to increasing global warming are bringing variation in natural systems, leading to ice-melting, sea level rise, soil, & fresh water submergence and increasing evaporation. These are collectively making the fresh water polluted and decreasing the availability of existing fresh water. While it is difficult to control or significantly reduce global warming, climate changes and other forms of water pollutions. Thus, a cost-effective water purification technology is a need of the day.

Various water treatment technologies have been proposed and applied at experimental and field levels. These technologies are commonly fall into primary (screening, filtration, centrifugation, separation, sedimentation, coagulation & flocculation); secondary (aerobic and anaerobic treatments); and tertiary (distillation, crystallization, evaporation, ion exchange, reverse osmosis (RO), nanofiltration (NF), ultrafiltration (UF), microfiltration (MF)) level water treatment technologies [23]. However, the most of these technologies are not capable of fixing water pollutants in an effective way. This situation has compelled scientists to search for novel membranes such as carbon nanotubes (CNTs) for cost-effective water purification and desalination technologies.

Carbon Nanotubes - Carbon nanotubes (CNTs) are nanoscale allotropes of carbon with a cylindrical hollow fibers, comprised of a single sheet of pure graphite,in which carbon atom have sp2 hybridized state. It has a diameter of 0.7 to 50 nanometers with lengths generally in the range of 10's of microns and constructed with length-to-diameter ratio of up to 132,000,000:1. Being a hollow tube comprised entirely of carbon, they are also extremely light weight. Configurationally it is two dimensional grapheme sheet rolled up with continuous unbroken hexagonal mesh into a cylindrical tube.

Carbon nanotubes (CNTs) have some exceptional properties such as high mechanical strength, high aspect ratio and large specific surface area. To exploit these properties for membranes, macroscopic structures need to be designed with controlled porosity and pore size.

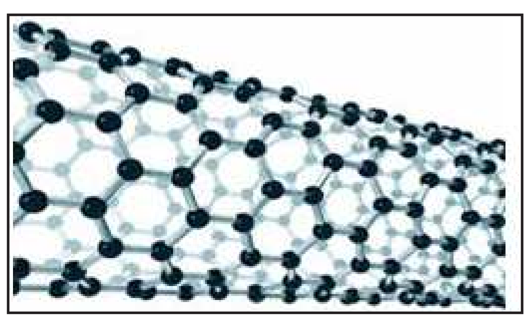

* H.O.D. & Asst. Prof. (Zoology) Govt. Auto. P.G. College, Chhindwara (M.P.) INDIA
** H.O.D. & Asst. Prof. (Physics) Govt. Auto. P.G. College, Chhindwara (M.P.) INDIA

Structure of Carbon Nanotubes (CNTs) - CNT membrane is a novel excellent membrane technology for water purification. CNTs are composed of cylindrical graphite sheets (allotropic form of carbon) rolled up in a tube like structure with the appearance of latticework fence. Single-walled carbon nanotubes (SWCNTs) have cylindrical shape consisting of a single shell of graphene. On the other hand, multi-walled carbon nanotubes (MWCNTs) are composed of multiple layers of graphene sheets. Both SWCNTs and MWCNTs have been used for direct water desalination, and or indirectly to remove trouble making compounds that complicate the desalination processes.

Properties of CNTs Membrane :

Strength - Carbon nanotubes are the strongest and stiffest materials yet discovered in terms of tensile strength and elastic modulus respectively. This strength results from the covalent sp^2 bonds formed between the individual carbon atoms. CNT shells have strengths of up to ~100 gigapascals (15,000,000 psi), which is in agreement with quantum/ atomistic models.

Hardness - Standard single-walled carbon nanotubes can withstand a pressure up to 25 GPa without [plastic/ permanent] deformation. They then undergo a transformation to superhard phase nanotubes. Maximum pressures measured using current experimental techniques are around 55 GPa. However, these new superhard phase nanotubes collapse at an even higher, albeit unknown, pressure. The bulk modulus of superhard phase nanotubes is 462 to 546 GPa, even higher than that of diamond (420 GPa for single diamond crystal).

Wettability - The surface wettability of CNT is of importance for its applications in various settings. Although the intrinsic contact angle of graphite is around 90°, the contact angles of most as-synthesized CNT arrays are over 160°, exhibiting a superhydrophobic property. By applying a low voltage as low as 1.3V, the extreme water repellant surface can be switched into superhydrophilic.[62]

Electrical properties - The symmetry and unique electronic structure of graphene, the structure of a nanotube strongly affects its electrical properties. The nanotube is semiconducting with a very small band gap, otherwise the nanotube is a moderate semiconductor. Thus all armchair ($n = m$) nanotubes are metallic, and nanotubes etc. are semiconducting.

Because of its nanoscale cross-section, electrons propagate only along the tube's axis. As a result, carbon nanotubes are frequently referred to as one-dimensional conductors.

Kinetic properties - Multi-walled nanotubes are multiple concentric nanotubes precisely nested within one another. These exhibit a striking telescoping property whereby an inner nanotube core may slide, almost without friction, within its outer nanotube shell, thus creating an atomically perfect linear or rotational bearing. This is one of the first true examples of molecular nanotechnology, the precise positioning of atoms to create useful machines. Already, this property has been utilized to create the world's smallest rotational motor.

Optical properties - The optical properties of carbon nanotubes refer specifically to the absorption, photoluminescence (fluorescence), & Raman spectroscopy of carbon nanotubes. Spectroscopic methods offer the possibility of quick and non-destructive characterization of relatively large amounts of carbon nanotubes. ptical absorption, photoluminescence and Raman spectroscopies allow quick and reliable characterization of this "nanotube quality" in terms of non-tubular carbon content, structure (chirality) of the produced nanotubes, and structural defects.

Thermal properties - All nanotubes are expected to be very good thermal conductors along the tube, exhibiting a property known as "ballistic conduction", but good insulators laterally to the tube axis.

Water Purification By Cnt Membranes - Water purification is the removal of contaminants from raw water to produce drinking water that is pure enough for human consumption or for industrial use. CNT Membrane technologies, including microfiltration, ultrafiltration, nanofiltration and reverse osmosis, constitute vital units of many water treatment systems. CNTs owing to the several merits: strong antimicrobial activity, higher water flux than other porous materials of comparable size, tunable pore size and surface chemistry, and electrical conductivity, are promising materials for filtration and separation.

The major advantage of CNTs is that water passes through them in a nearly frictionless manner due to hydrophobicity (i.e. preference to be away from water). But if CNTs are hydrophobic, it might wonder why water would even come near or enter them in the first place. This is an important point because water is a polar molecule and CNTs are non-polar, meaning they typically don't want to mix together. One option for overcoming this is to coat the top of each tube with specific molecules that will initially attract water to the opening. Then, when water enters the nanotube, it flows through very quickly because it is being repelled by the hydrophobic tube walls. The nano-tubes act as a kind of molecular filter, allowing water molecules to pass through the tubes, while contaminants are too large to pass through due to their electronic configuration.Conversely, most salts, ions, and pollutants won't flow through the nanotube because they are attracted to and captured by the coating at the opening. Therefore CNTs have potential to be a great solution for water purification because water passes through the CNTs so easily and pollutants do not.

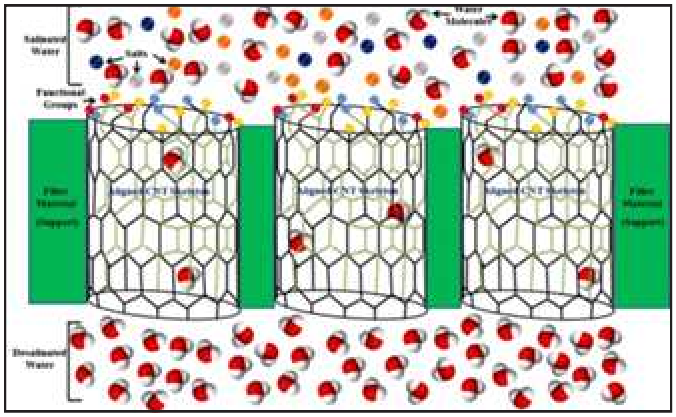

Water Purification By Cnt Membranes

Conclusion - Improving water purification really is a global issue. The importance as well as impact of application of carbon nanotube (CNT) membranes in the area of water technology development is tremendous. These tiny, flexible, and surprisingly resilient materials may very well be new direction in sustainable, large-scale water purification. If we're able to use CNTs in the next generation of water purification technology, then we may be able to both desalinate (get rid of salt) and remove pollutants.

References :-

1. A.T. Nasrabadi, M. Foroutan Ion-separation and water-purification using single-walled carbon nanotube electrodes Desalination, 277 (1) (2011), pp. 236–243.
2. A.T. Nasrabadi, M. Foroutan Ion-separation and water-purification using single-walled carbon nanotube electrodes Desalination, 277 (1) (2011), pp. 236–243.
3. E.T. Thostenson, Z. Ren, T.W. Chou Advances in the science and technology of carbon nanotubes and their composites: a review Compos. Sci. Technol., 61 (13) (2001), pp. 1899–1912
4. H. Li, L. Zou Ion-exchange membrane capacitive deionization: a new strategy for brackish water desalination Desalination, 275 (1) (2011), pp. 62–66
5. K. Dai, L. Shi, D. Zhang, J. Fang NaCl adsorption in multi-walled carbon nanotube/active carbon combination electrode Chem. Eng. Sci., 61 (2) (2006), pp. 428–433.
6. Kallista Sears, Ludovic Dumée "Recent Developments in Carbon Nanotube Membranes for Water Purification and Gas Separation" *Materials* 2010, *3*(1), 127-149; doi:10.3390/ma3010127
7. *Peng, B.; Locascio, Mark; Zapol, Peter; Li, Shuyou; Mielke, Steven L.; Schatz, George C.; Espinosa, Horacio D. (2008). "Measurements of near-ultimate strength for multiwalled carbon nanotubes and irradiation-induced crosslinking improvements".* Nature Nanotechnology ***3** (10): 626–631.* doi*:*10.1038/nnano.2008.211*.*
8. *Popov, M.; Kyotani, M.; Nemanich, R.; Koga, Y. (2002).* "Superhard phase composed of single-wall carbon nanotubes" *(PDF). Phys. Rev. B **65** (3): 033408.* Bibcode*:*2002PhRvB..65c3408P*.* doi*:*10.1103/PhysRevB.65.033408*. Archived from* the original *(PDF) on 20 July 2011.*
9. *Sanders, R. (23 March 2003).* "Physicists build world's smallest motor using nanotubes and etched silicon" *(Press release).* UC Berkeley.
10. Rasel Das , Md. Eaqub Ali,Sharifah Bee Abd Hamid, Seeram Ramakrishna, Zaira Zaman Chowdhury "Carbon nanotube membranes for water purification: A bright future in water desalination" 2013 Elsevier B.V. Desalination 336 (2014) 97–109
11. The Water Information Program. Water Facts. http://www.waterinfo.org/resources/water-facts.
12. United Nations Environment Program. Vital Water Graphics, retrieved from http://www.unep.org/dewa/vitalwater/article141.html.
13. Wikipedia, the free encyclopedia*: Carbon nanotube.*
14. V.K. Gupta, I. Ali, T.A. Saleh, A. Nayak, S. Agarwal "Chemical treatment technologies for waste-water recycling—an overview RSC Advances", 2 (16) (2012), pp. 6380–6388
15. *Wang, Zuankai; Ci, Lijie; Chen, Li; Nayak, Saroj; Ajayan, Pulickel M.; Koratkar, Nikhil (2007). "Polarity-dependent electrochemically controlled transport of water through carbon nanotube membranes". Nano Letters **7**: 697–702.* Bibcode*:*2007NanoL...7..697W*.* doi*:*10.1021/nl062853g*.* PMID 17295548*.*
16. *Yu, M.-F.; Lourie, O; Dyer, MJ; Moloni, K; Kelly, TF; Ruoff, RS (2000). "Strength and Breaking Mechanism of Multiwalled Carbon Nanotubes Under Tensile Load". Science **287** (5453): 637–640.* Bibcode*:*2000Sci...287..637Y*.* doi*:*10.1126/science.287.5453.637*.* PMID 10649994*.*

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

Antibacterial Activity of Extracts from Murraya koenigii against Different Bacterial strains

Shobha Shrivastava *

Abstract - The principal objective of the present research work was to determine the antibacterial potential of Murraya koenigii against gram positive and gram negative bacteria. To evaluate antibacterial activity the disc diffusion assay was used. Ethanolic leaf extracts of Murraya koenigii were found to be more active towards the bacterial species as compared to aqueous extract.
Keywords - Murraya koenigii, Antibacterial activity, Disc diffusion assay.

Introduction - According to World Health organization, medicinal plants are the best source to obtain a variety of newer herbal drugs. About 80% of individuals from developed .countries use traditional medicine, which has compounds derived from medicinal plants. Therefore, such plants should be investigated to better understand their properties, safety and efficacy. Over the last few years, research has aimed at identifying and validating plant-derived substances for the treatment of various diseases. There are more than 35,000 plant species being used in various human cultures around the world for medicinal purpose. This revival of interest in plant derived drugs is mainly due to the current widespread belief that "green medicine" is safe and more dependable than the costly synthetic drugs, many of which have adverse side effects[1]. Search for newer drugs from plant has been increasing day by day due to the emergence of new diseases and alarming side-effects of synthetic drugs.[2]

Antibacterial properties of various plants part like root, stem, leaves, seeds, flowers, fruits have been well documented for some of the medicinal plants for the past two decades.[3] Medicinal plants are rich source of novel drugs that form the ingredients in traditional systems of medicine, modern medicines, nutraceuticals, food supplements, folk medicines, pharmaceutical intermediates, bioactive principles and lead compounds in synthetic drugs.[4]

Murraya koenigiiis one of the medicinal plant belongs to the family Rutaceae, and is popularly known as curry patta/mithi neem.[5] Its medicinal properties has been described in the ancient medical treatise in Sanskrit, Charaka Samhita. Curry leaves are extremely useful for treating diabetes, jaundice, cholera and asthma other parts like fruits stem and roots at all stages of maturity are used as ethno medicines against various human ailments.[6] The main aim of the present research work is to determine the antibacterial potential of Murraya koenigiiis

Method and Material :

Plant material and Preparation of extract - The leaves of were collected. Fresh leaves of Murraya koenigiis were air dried in shade and powdered. 10 g of leaf powder was mixed with 100 ml of distilled water and stirred. It was kept overnight at 4^oC. The supernatant was collected and evaporated to dryness. This was used as the crude leaf extract to study the antibacterial activity.

Test Organisms - Two strains of Gram positive bacteria- Lactobacillus bulgaris, Streptococcus faecalils, and two strains of Gram negative bacteria- Escherichia col*i* and Pseudomonas aeruginosa were used to evaluate the antibacterial activity.

Antibacterial activity - The bacterial strains were cultured in nutrient broth for 12 hrs. By following the disc diffusion method (Bauer et al., 1966) the sterile discs were dipped in the plant extract of concentration 1 mg/ml and were placed over the spreaded agar media. The Nutrient Agar plates used for testing bacterial susceptibility were incubated at 37^0C for 24 hours. Ampicillin is used as positive control for antibacterial tests.

Antibacterial activity was determined by measuring the diameter of the zone of inhibition (mm in diameter) surrounding the bacterial growth.

Result and discussion - In the present study ethanolic leaf extract of Murraya koenigiis*,* showed more inhibition against Gram- positive and Gram-negative bacteria than aqueous extract. The antibacterial activity of leaf extract may be due to the presence of cuminaldehyde and eugenol because

* **S.N.G.G.P.G. (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA**

these compounds have already shown their activities against various bacterial strains.[8-9]

Although this study investigated the preliminary screening of antibacterial activity, the results showed that the extracts from *Murraya koenigii* posses good antibacterial activity which might be helpful in preventing the progress of various diseases and can be used in alternative system of medicine.

Anti- bacterial activity of Murraya koenigii extracts.

S.	Strain Used	Aqueous Zone of inhibition	Ethanolic Zone of inhibition
1.	Lactobacillus bulgaris	No inhibition	No inhibition
2.	Streptococcus faecalis	12	11
3.	Escherichia coli	10	19
4	Pseudomonas aeruginosa	11	13

References :-

1. Maity P, Hansda D, Bandyopadhyay U, Mishra D K: Biological activities of crude extracts and chemical constituents of Bael, Murraya koenigii(L.) Corr. Indian Journal of Experimental Biology 2009;47:849-861.
2. Meenakshi Singh Sayyada Khatoon,[1] Shweta Singh,[1] Vivek Kumar, [2] Ajay Kumar Singh Rawat, [1] and Shanta Mehrotra [3] Antimicrobial screening of ethnobotanically important stem bark of medicinal plants Pharmacognosy Res. 2010 Jul-Aug ; 2(4): 254-257.
3. Leven, M., Vanen Berghe, D. A. and Mertens, F. (1979). Medicinal plants and its importance in antimicrobial activity. J. Planta Med. 36: 311-321.
4. Ncube NS, Afolayan AJ and Okoh A (2008) Assessment techniques of antimicrobial properties of natural compounds of plant origin: current methods and future trends. African Journal of Biotechnology 7(12): 1797-1806.
5. Gamble JS (1935) Flora of the Presidency of Madras. Adlard and Son's Ltd, London, UK. Matthew KM (1983) The Flora of Tamil Nadu Carnatic. In The Rapinat Herbarium. St. Joseph's College, Tiruchirapalli , India.
6. Badam L, Bedekar S S, Sonawane K B and Joshi S P, In vitro antiviral activity bael (Murraya koenigiiCorr) upon human coxsackievirus B1-B6, J Common Dis 34 (2002)88.
7. Duke J A, handbook of biologically active phytochemicals and their activities (CRC Press) 1992.
8. Katayama T and Nagai I. Chemical significance of the volatile components of spices from the food preservation food point, IV structural and antibacterial activity of some terpenes. Nippon suisan Gakkaishi 26(1960)29.

****

A Study Of Chemical Pesticides - Hazards To Human Health

Dr. Pramod Pandit *

Abstract - The use of pesticides to protect crops from pests have been recorded when man switched over from food gatherer to food grower. In the present times, with the increase in human population and shortage of agricultural land, modern agricultural practices demand an increase in the use of pesticides and fertilizers for crop production. Application of pesticides on crops creates an environmental concern due to the toxic residue it leaves behind. The term 'pesticides 'is today very much familier to all of us.Although we speak very commonly and use this term/word in a lightway, but these 10 letter word has very serious and deep long term effects not only to those for which these has been discovered and used but also to those who are innocent and silently caught by their serious poisonous effects.

Although the consumption of pesticides in India is very low as compared to the other develpoing countries as India using nearly 85000 tonnes annually in which 77.8% of this pesticides are insecticides. Pesticides are used in about 25% of our total cultivatated land. The use of insecticides for crop production/ protection has become biased upon the economic importance.

This paper is an attemp to study the type of pesticides thier consumption, essecially in india, thier hazardous effect on human and animal health and also thier associated toxicities.

Keywords - Pesticides, Hazardous, Human Health, Agricultural,Chemicals etc.

Introduction - The use of pesticides to protect crops from pests have been recorded when man switched over form food gatherer to food grower. In the present times, with the increase uin human population and shortage of agriculture land, modern agriculture practices demand an increase in the pesticides and fertilizers for crop production. Application of pesticides on crop creates an environmental concern due to the toxic residue it leaves behind. The term 'pesticides ' is today very much familier to all of us.Although we speak very commonly and use this term/word in a lightway , but these 10 letter word has very serious and deep long term effects not only to those for which these has been discovered and used but also to those who are innocent and silently caught by their serious poisonous effects.

Pesticides → pest = crop damaging harmfull insects
cides = insects killer etc.

Pests – Organism (insects, weeds, micro organism, bacteria, fungi, rodents, mites, nematodes etc.) that cause economic loss or damage to the physical well being of human beings are known as pest. They may damage crops, cause disease in them or in human beings.

Cides – These are chemicals natural or synthetic substances or mixture of substances used for destroying, preventing, repelling or mitigating pests.

The earlist attempts to control pest chemically included use of naturally occuring toxic substances, such as mercury, sulphur or plant exlracts such as necotine, pyrethrum or derris. The era of modern synthetic pesticides largely dates from 1939 when insecticidal propertes of DDT were discovered.

Question arises – Why pesticides came into existance?

Actully the problem of crop protection is as old as agriculture, so the chemicals were discovered and synthesized for the puepose.

The Indian Scenario – Although the consumption of pesticides in India is very low as compared to the other develpoing countries as India using nearly 85000 tonnes annually in which 77.8% of this pesticides are insecticides. Pesticides are used in about 25% of our total cultivatated land. The use of insecticides for crop production/ protection has become biased upon the economic importance. **(Table See in the last page)**

India Years	Quantity of Consumption
1960-61	8000 tones.
1980-81	65000 tones.
1990-91	1,19000 tones.
2000-01	1,44000 tones.

Today 143 pesticides are registered for use in India out of which 57 manufactured in the country itself. These sold by a network of 70000 dealers in the cuontry.

S.No.	States	% Consumption of Pesticides
1	Andhra Pradesh	33.6%
2	Karnataka	16.2%
3	Gujrat	15.2%
4	Punjab	11.4%
5	Maharastra	5.1%
6	Rest	18.5%

Athough Indias pesticides consumption is very low even then India has much highly polluted environment ? This question can be answered by following arguments-

1 Indiscriminate use of pesticides.

* **H.O.D. (Chemistry) S.B.N. Govt. P. G. College, Barwani (M.P.) INDIA**

2 Disproportionate use of pesticides.
3 Lack of safer pesticides.
4 Use of banned pesticides.
5 Anticipation of better production & profits.
6 Inadequate literature supplied by the manufactures.
7 Lack of education.
8 Lack of extension activites.

Classification of pesticides – pesticides can be classified on number of grounds as follows-

1. On the basis of origin –

	Origin	Examples
1	Natural	Nicotine, Pyrethrum,Allethrin
2	Synthetic	BHC, Parathion ,Dicamba, Aldrin

2. On the basis of chemical group –

1	Organophosphates	Esters, amides, phosphonic, phosphanothionic, TEPP (Tetraethypurophosphate),
2	Organochlorines	Arathion, DEP (diasopropylflouro phosphosphate).
3	Carbamate	Esters of carbamic acid.

3. On the basis of their physical form –

1	Liquid	Ethylene dibromidle, CCl_4, CH_2Cl_2 (Carbon tetrachloride,Diethyl dichloride).
2	Solid	Aluminium phosphide, Napthalene etc.
3	Gaseous	Methyl bromide, Chloropicrin.

4. On the basis of their persistence in environrnment and food chain. –

1	Malthion	Degrade rapidly
2	Atrazine	Moderatly persistent
3	Aldrin	Persistent
4	Meycuric	Chloride Permanent
5	TEPP	Instable in water

5. On the basis of their use and application –

1	Acaricides	Mites, Lice	Parathion, Phoxim, Bromophos ets.
2	Algicides	Algaes	Dichlorophen, Endohal, Fentin.
3	Avicide	Birds	Endrin, Fenthion, Chloralose, Strychnine.
4	Bactericides	Bacteria	Chloramphenicol, Nitroprin, Tetracycline, Streptomycin.
5	Fungicides	Fungi	Thiram, Nabam, Carbendazim, Allyl alcohol.
6	Herbicides/ Weedicides	Herbs/ Weeds	Tricamba, Disul, Phenobenzuron, Vernolale, Fenoprop.
7	Insecticides	Insects	DDT, Fenthion, Aldrin, Heptachlor, Menazon.
8	Molluscicides	Mollucs	Fentin Acetate, Mexacarbate, Niclosamide.
9	Nematocides/ Nematicides	Nematodes	Mentham, Telone Carbondisulfide, Ethylen dibromide, Diazinon.
10	Rodenticides	Rodents (Rats type)	Fumarin, DDT, BHC,Zinc-Phosphide, Aluminium Phosphide.
11	Virucides	Viruses	Imanin, Ribavirin.

General pesticide kinetics in the enviornment – (See in the last page)

Hazards Associated with pesticides – The severity and level of toxicity and adverse effects resulting from exposure to a pesticide depends on the -

1 Dose
2 The route of exposure absorbed.
3 Amount of absorbed.
4 Types of effect.
5 Its accumulation and persistence in the body.
6 Its metabolites and stored in the body.

Toxicities in human and animals –

1. Skin effects – Contact dermitities and allergic sensitization are causes by eg. Barban, Benomyl, Captafol, DDT, Lindane, Malathion, Zineb.

2. Neurotoxicity – Some pesticides produce acute neurological effects among agriculture workers. e.g. organophosphorus comps, Chlorinated hydrocarbon (Chlorde come).

3. Bone marrow effects – Causes aplastic anaemia and blood dyscrasias.

4. Cytogenetic effects – Effects related to cell and tissue ultimate causes genolical changes to next generations.

5. Reproductive effects – Many of them decreases reproductive performance, creat infertility and reduce productivity (in animals).

6. Enzyme induction – It was seen, few pesticides causes induction of liver microsomal enzymes, e.g., DDT, Lindane and Chordane.

7. Cancer – Pesticides has also carcinogenicity for human beings as long term effects, e.g. Phenoxy acid, Chlorophenol, 2.4-D and 2,4,5-T.

Inspite of these pesticides not only pose a potential hazards to human but also to other animals eg. Fishes, Livestocks, soil and food crops in many ways –

1**. Contaminate enviornment through soil, water and air.**

(i) Reduce soil fertility.
(ii) Reduce crop quality.
(iii) Reduce crop yield.
(iv) Pesticides retained in soil concentrates in crops, vegetables, fruits, cereals, milk and eggs to such an extent that they are not useable. Through food material they enter into the food chain and makes a long term serious effects.
(v) **Water** bodies receives pesticide residues mainly in rainy season and thes water directly used by human and animals which creates a lots of digestive system problems.
(vi) **Air** gets pesticides which are evaporisable at normal temperature and this air inhaled by living being, causes respiratory problems.

(vii) Pesticides also kill the natural predators of the pests thus disturb the ecosystem.

(viii) According to WHO report more than '50000' thousand people in developing countries are poisoned every year and about '5000-10000' thousand die as a result of the toxic peslicides and other chemicals used in agriculture.

(xi) pesticides also affect the natural structure of soils I.e. soil texture, its organic contenls, its alkalinity ,salinity and thus functioning of soil.

(x) Not only the use of pesticides is harmful but the production of these chemical pesticides creats a great pollution problem.Like Bhopal Gas tragedy.

2. **Occupational hazards –** Factory workers, distributors, transporters, employees and labourers are continually exposed to pesticides poisioning during manufacture and subsequent handling. The safety measures in manufaturing or in formulation plants are for from adequate.
3. **Accidental poisoning –**

(i) Due to accidents in manufacturing plants.

(ii) Childran drink by mistake.

(iii) Containers used for pesticides are also used for storage of food and water by users.

4. **Direct toxic effects on Non-tarqet Animal life –** Pesticides not only kill the pest but also to other living being like fishes, prawns, other insects, birds due to a cute poisoning.
5. **Pest Resistance –** Repeated use of the same or similar pesticides will creat the resistance towards it for a perticular genotype.
   e.g DDT is resistance among some species of mosquitoes.

Legal Legislation and Regulatory Action for pesticides use-

1. Insecticide Act. 1968 inforced from 1971 regulate import, manufacture, sale, transport, distrbution and use.

a) Central Insecticide Board.
b) Pesticides Registration Committee.
c) Pesticide Enviornment Pollution Advisory committee.
d) Central Insecticide Laboratory.
e) Committee to Ban/ Restrict the use of Pesticides.

2. Water Act. (Prevention & Pollution control) -1974.
3. Factories Act. 1948.

Conclusion - Thus in conclusion it can be said that most of the pesticides have systemic effects. Following preventive measures should be taken into account to avoid the hazardous effects of pesticides-

- Controlled use of pesticides.
- Avoiding use of banned pesticides.
- Proper instruction manual should be used while using pesticides.
- Use of pesticides at the most susceptible stage of life cycle of the pest.
- Practicing better sanitation practice.
- Avoid use of more toxic pesticides.
- Using non-chemical methods of pest control- mechanical and biological methods.
- Proper cleaning of fruits and a vegetables and cereals while using them.
- To educate the farmers and Agriculture workers regarding the pesticide properties and using techniques.
- Integrated pest management schemes should be adopted to avoid hazardous effects of agro-chemicals.
- Cultivating proper seasonal varities.
- Cultivateng the locally developed varities.
- Use of degradable/ short lived chemical pesticides.
- Biological methods – using natural predators of pest.
- Using resistant seed varities.
- Adopting crop rotation, inter cropping.
- Annual desctruction of pest egg/ larve and weeds.
- Natural pesticides should be used.

References:-

1. Me combie and sanders 1946-Details of pesticide residue in vegetable and agriculture producls.
2. Eto M 1974 – Organophosphorus pesticides: Organic and Biological chemistry.
3. Cremlyn R – 1978 – Pesticides : preparation and mode og Action, John wiley and sons.
4. Adam S 1983 pesticides pest control and their future. Mir pulblishers.
5. Savage 1988 – Neurological and physiological effects of organophosphorus insecticides. Mir publlshers.
6. Rajamani R. 1985 effects of organophosphorus pesticides on aqualic animals.
7. Corbett J.R. 1974 – The biochemical mode of Action of pesticides.

S.No.	Crop	Area-	Position	% of pesticides	Position
1	Cotton	5.5%	III	52.2%	I
2	Rice	24%	II	17.2%	II
3	Vegetable and Fruits	3%	IV	13.2%	III
4	Cereals	58%	I	6.7%	IV
5	Rest	-	-	-	-

General pesticide kinetics in the enviornment

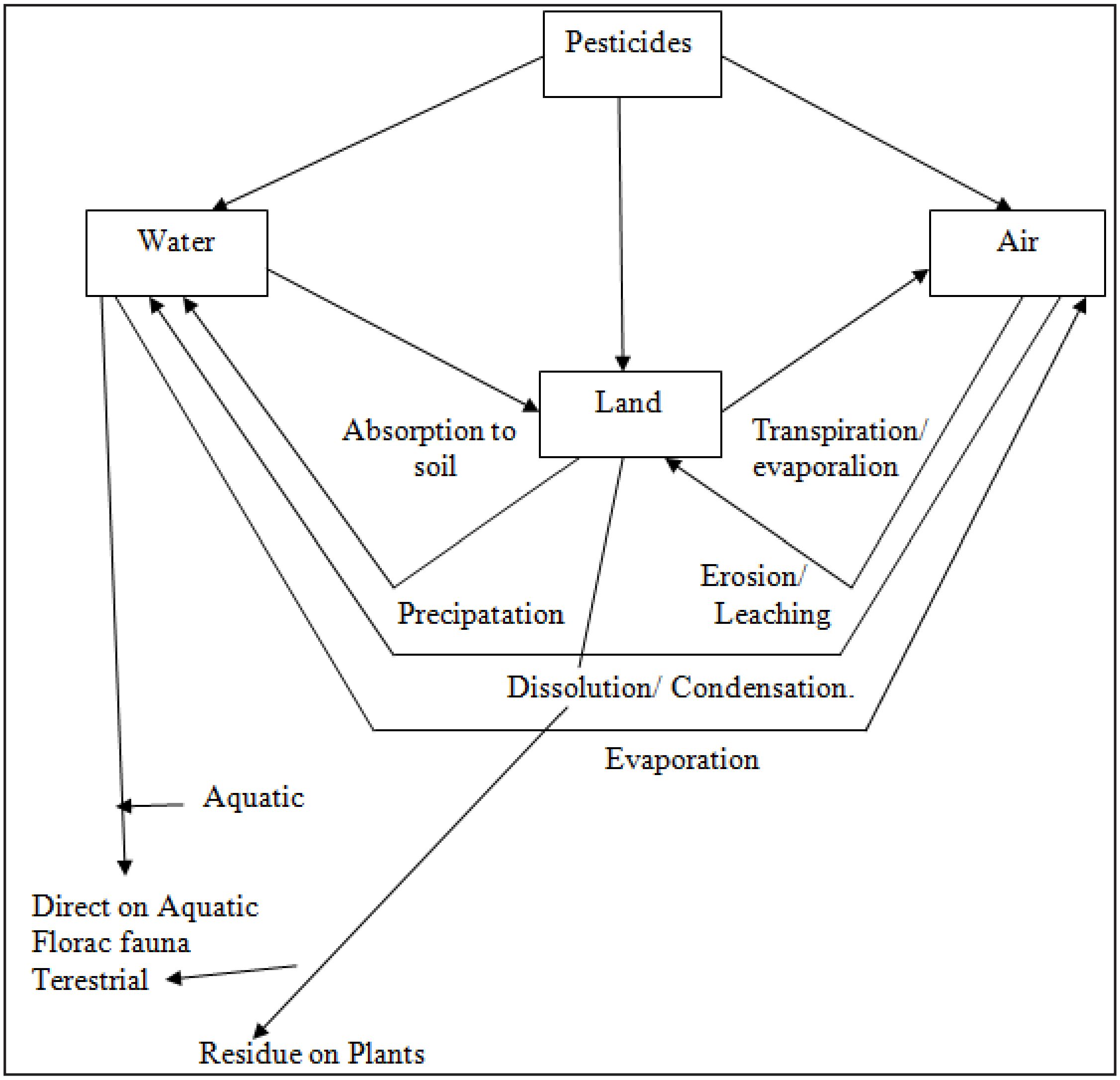

****

Anti Cancer Approved Drugs

Dr. Sushama Singh Majhi*

Abstract - The drug discovery research strategies to identify drug. The new drug discovery has been emphasized, imphying that rationale oriented drug discovery. I focused only an approved drugs that involved academic researchers in there in the discovery. Terrestrial plants, especially higher plants, have a long history of use in the treatment of human diseases. Several well-known species, including licorice (Glycyrrhiza glabra), myrrh (Commiphora species), and poppy capsule latex (Papaver somniferum), were referred to by the first known written record on clay tablets from Mesopotamia in 2600 BC, and these plants are still in use today for the treatment of various diseases as ingredients of official drugs or herbal preparations used in systems of traditional medicine. Furthermore, morphine, codeine, noscapine (narcotise), and papaverine isolated from P. somniferum were developed as single chemical drugs and are still clinically used. Hemisuccinate carbenoxolone sodium, a semi-synthetic derivative of glycyrrhetic acid found in licorice, is prescribed for the treatment of gastric and duodenal ulcers in various countries.
Keyword - Human diseases, licorice, Mesopotamia, ingredients, gastric, ulcers.

Introduction - Historical experiences with plants as therapeutic tools have helped to introduce single chemical entities in modern medicine. Plants, especially those with ethnopharmacological uses, have been the primary sources of medicines for early drug discovery. In fact, a recent analysis by Fabricant and Farnsworth showed that the uses of 80% of 122 plant-derived drugs were related to their original ethnopharmacological purposes. Current drug discovery from terrestrial plants has mainly relied on bioactivity-guided isolation methods, which, for example, have led to discoveries of the important anticancer agents, paclitaxel from*Taxus brevifolia* and camptothecin from *Camptotheca acuminate*. Other NCEs discovered or modified from terrestrial plants between 2000-2005 are summarized below.

Apomorphine hydrochloride a short-acting dopamine D, and D2 receptor agonist, is a potent dopamine receptor agonist used to treat Parkinson's disease, a chronic neurodegenerative disease caused by the loss of pigmented mesostriatal dopaminergic neurons linking the substantia nigra (pars compacta) to the neostriatum (caudate nucleus and putamen). Apomorphine is a derivative of morphine isolated from poppy (Papaver somniferum). Subcutaneous apomorphine is currently used for the management of sudden, unexpected and refractory levodopa-induced off states in fluctuating Parkinson's disease.

Tiotropium bromide has been approved by the United States Food and Drug Administration (FDA) for the treatment of bronchospasm associated with chronic obstructive pulmonary disease (COPD). Tiotropium, a derivative of atropine from Atropa belladonna (Solanaceae) and related tropane alkaloids from other solanaceous plants, is a potent reversible nonselective inhibitor of muscarinic receptors. Tiotropium is structurally analogous to ipratropium, a commonly prescribed drug for COPD, but has shown longer-lasting effects.

Nitisinone is a derivative of leptospermone, an important new class of herbicides from the bottlebrush plant (Callistemon citrinus), and exerts an inhibitory effect for phydroxyphenylpyruvate dioxygenase (HPPD) involved in plastoquinone synthesis. This drug has been used successfully as a treatment of hereditary tyrosinaemia type 1 (HT-1), a severe inherited disease of humans caused by a deficiency of fumaryl acetoacetate hydrolase (FAH), leading to accumulation of fumaryl and maleyl acetoacetate, and progressive liver and kidney damage.

Galantamine hydrobromide is an Amaryllidaceae alkaloid obtained from Galanthus nivalis that has been used traditionally in Bulgaria and Turkey for neurological conditions, and was launched onto the market as a selective acetylcholinesterase inhibitor for Alzheimer's disease treatment, slowing the process of neurological degeneration by inhibiting acetylcholinesterase as well as binding to and modulating the nicotinic acetylcholine receptor.

Arteether an antimalarial agent, has been developed from artemisinin, a sesquiterpene lactone isolated from Artemisia annua (Asteraceae), a plant used in traditional Chinese medicine as a remedy for chills and fevers. Other derivatives of artemisinin are in various stages of clinical development as antimalarial drugs in Europe.

Micafungin sodium is an antifungal agent of the echinocandin type obtained from the culture both broth of the fungus *Coleophoma empetri*, and inhibits D-glucan

*Asst. Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

synthase of fungi. Micafungin exhibited good antifungal activity against a borad range of *Candida* species, including azole-resitant strains and *Aspergillus* species, during in vitro and animal studies.

Tigecycline is the 9-t*ert*-butyl-glycylamido derivative of minocycline, which is a semi-synthetic product of chlortetracycline isolated from *Streptomyces aureofaciens*. Tigecycline exhibited antibacterial activity typical of other tetracyclines, but with more potent activity against tetracycline- resistant organisms. Tegecycline is only utilized in an injectable formulation for clinical use, unlike currently marketed tetracyclines that are available in oral dosage forms.

Everolimus (15, Certican, Norvatis, 2004) is an orally active 40-0-(2-hydroxyethyl) derivative of rapamycin, originally produced from Streptomyces hygroscopicus. Everolimus exhibits its immunosuppressive effect by blocking growth factor (interleukin (IL)-2 and IL-15) mediated proliferation of hematopoietic (T cells and B cells), and non-hematopoietic (vascular smooth muscle cells) cells through inhibiting p70 S6 kinase, leading to arrest of the cell cycle at the GI/S phase.

Telithromycin is a semi-synthetic derivative of the 14-membered macrolide, erythromycin A, isolated from Saccharopolyspora erythraea, and retains the macrolactone ring as well as a D-desosamine sugar moiety. It inhibits protein synthesis by interacting with the peptidyltransferase site of the bacterial 50S ribosomal subunit, and exhibits antibacterial effect on respiratory tract pathogens resistant to other macrolides.

Miglustat has been approved for patients unable to receive enzyme replacement therapy as a therapeutic drug for type I Gaucher disease. Miglustat, an analog of nojirimycin isolated from the broth filtrate of *Streptomyces lavendulae*, reversibly inhibits glucosylceramide synthase, a ceramide-specific glucosyltransferase that catalyzes the formation of glucocerebroside, and thereby decreases tissue storage of glucosylceramide. Gaucher disease is a progressive lysosomal storage disorder associated with pathological accumulation of glucosylceramide in cells of the monocyte/ macrophage lineage. Enzyme replacement therapy using human placenta-derived alglucerase (Ceredase) has been available for type I Gaucher disease since 1991.

Mycophenolate sodium is a selective, noncompetitive, reversible inhibitor of inosine monophosphate dehydrogenase (IMPDH), the rate-limiting enzyme in the de novo pathway of guanosine nucleotide synthesis. Thus, mycophenolic acid, originally purified from *Penicillium brevicompactum,* has a selective antiproliferative effect on lymphocytes that rely on the de novo synthesis of purine and is used for the prophylaxis of organ rejection in patients 'receiving allogeneic renal transplants treated with ciclosporin (cyclosporin A) and corticosteroids.

Rosuvastatin calcium an inhibitor of hydroxy-methylglutaryl coenzyme A (HMG-CoA) reductase and a derivative of mevastatin isolated from Penicillium citrinum and P. brevicompactum, is an effective lipid-lowering agent approved internationally (in most of Europe, the United States, and Canada) for the management of dyslipidemias. Like other available HMG-CoA reductase inhibitors (atrovastatin, fluvastatin, lovastatin, pravastatin, and simvastatin), rosuvastatin competitively inhibits the rate-limiting step in the formation of endogenous cholesterol by HMG-CoA reductase. Consequently, hepatic intracellular stores of cholesterol are reduced, which results in reduced serum levels of low- density lipoprotein-cholesterol (LDL-C) and triglycerides, and increased serum levels of high-density lipoprotein-cholesterol (HDL-C), and thus improves the overall lipid profile of patients.

Pitavastatin an analog of mevastatin like rosuvastatin, has been approved for the treatment of dyslipidemia in Japan. **Daptomycin** is a cyclic lipopeptide antibacterial agent derived from Streptomyces roseosporus, which has been approved for the treatment of complicated skin and skin structure infections (cSSSIs).' Daptomycin binds to bacterial cell membranes and then disrupts the membrane potential, leading to blocking of the synthesis of proteins, DNA, and RNA.

Amrubicin hydrochloride is a completely synthetic 9-aminoanthracycline and converts to its active form in the body. Amrubicin, a derivative of doxorubicin isolated from *Streptomyces peucetius* var *caesius*, demonstrated activity comparable to that of doxorubicin on transplantable animal tumors, including P388 leukemia, sarcoma 180, and Lewis lung carcinoma, and more potent antitumor activity against human tumor xenografts of breast, lung, and gastric cancer.

Biapenem is a new analog of carbapenem based on thienamycin, isolated from Streptomyces *cattleya*, an antibacterial agent effective against both Gram-negative and Gram-positive bacteria including species producing â-lactamases. Biapenem is more stable to hydrolysis by human renal dehydropeptidase-I than imipenem, meropenem, and panipenem. The early carbapenems (eg, imipenem) are not stable to hydrolysis by human renal dihydropeptidase-I (DHP-1) and consequently are coadministered with a DHP-I inhibitor (eg, cilastatin). Biapenem can be administered as a single agent without a DHP-1 inhibitor.

Cefditoren pivoxil is an oral prodrug of Cefditoren, a derivative of cephalosporin isolated from Cephalosporium species, and is rapidly hydrolyzed by intestinal esterases to the microbiologically active form. Cefditoren has a broad spectrum of activity against both Gram-positive and Gram-negative bacteria, and is stable to hydrolysis in the presence of a variety of P-lactamases. This drug was approved in 2001 for acute bacterial exacerbation of chronic bronchitis (AECB), group A beta-hemolytic streptococcal pharyngotonsillitis, and uncomplicated skin/skin structure infections in adult and adolescent patients.

Caspofungin aceta is a semisynthetic lipopeptide derived from pneumocandin B a fermentation product of *Glarea lozoyensis*. It inhibits the synthesis of the glucose homopolymer D-glucan, which is an essential component

of the cell wall of many fungi but is absent in mammals. The noncompetitive inhibition of D-glucan synthase by caspofiangin interferes with fungal cell wall synthesis, leading to osmotic instability and death of the fungal cell.

Ertapenem is a new -methylcarbapenem based on thienamycin, isolated from *Streptomyces cattleya*, with broad-spectrum antibacterial activity and improved stability to hydrolysis by renal dehydropeptidase enzymes located in the brush border of the kidneys. Ertapenem exhibits excellent antibacterial activity against clinically relevant Enterobacteriaceae including *Escherichia*. coli, *Klebsiella* species, *Citrobacter* species, *Enterobacter* species, *Morganella morganii*, *Proteus species*, and *Serratia marcescens*.

Pimecrolimus is a novel analog of ascomycin, isolated as a fermentation product of *Streptomyces hygroscopicus* var *ascomyceticus*. Its mechanism of action involves blocking T cell activation via the pimecrolimus-macrophilin complex that prevents the dephosphorylation of the cytoplasmic component of the nuclear factor of activated T cells (NF-AT). This drug was approved for the treatment of inflammatory skin diseases such as allergic contact dermatitis and atopic dermatitis.

Gemtuzumab ozogamicin is a prodrug of calicheamicin bound to anti-CD33 monoclonal antibody. The calicheamicins (also known as the LL-E3328 antibiotics) were discovered from fermentation products produced by *Micromonospora echinospora* ssp. *calichensis*. Lysosomes in the cells cleave the covalent link between the monoclonal antibody and calicheamicin, allowing calicheamicin release. Calicheamicin is a hydrophobic member of the enediyne family of DNA-cleaving antibiotics and effective in treatment of patients with acute myeloid lymphoma.

References :-

1. S.S.Tafur, W.E.Jones, D.E.Dorman, E.E.Logsdon and G.H. Svoboda, *J.Pharm Sci.,* 64, 1953 (1975).
2. R.Z.Andriamialisoa, N.Langlois, P.Potier, A.Chiaroni and C.Rich, *Tetrahedron,* 34, 677 (1978).
3. N.Neuss, M.Gorman, H.E.Boaz and N.Cone, *J.Amer.Chem.Soc.*, 84, 1509 (1962).
4. N.Neuss, M.Gorman, N.J.Cone and L.L.Huckstep, *Tetrahedron Lett*. 783 (1968) .
5. W.E.Jones and G.J.Cullinan, U.S. Patent 3, 887, 565; CA 84, 5230 (1976) .
6. G.H.Svoboda, A.J.Barnes, *Jr., J.Pharm.Sci*, 53, 1227 (1964).
7. M.Gorman, G.H.Svoboda and N.Neuss, *Proc.Amer. Soc. Pharmacog., Lloydia,* 28, 259 (1965).
8. U.Renner and P.Kernweisz, *Experientia*, 19, 244 (1963).
9. B.Gilbert, A.P.Duarte, Y.Nakagawa, J.A.Joul, S.E.Flores, J.A.Brissolese, J., Campello, E.P.Carazzoni, *Tetrahedron,* 21, 1141 (1965).
10. J.A.Joule, H.Monteiro, L.Durham, B.Gilbert and C.Djerassi, *J.Chem. Soc.* 4773 (1965).

****

Increasing Climate Change Impact On Environment Pollution

Reena Dhurve* R. B. Markam**

Abstract - This research show the harmful effects of environmental pollution, Which is dangerous for every human being, and living organisms pollution results in climate changes such as uneven rain, droughts, extreme heat is summer, and cold in winter, Hence it is the responsibility or duty of every citizen to control or reduce the environmental pollution and help in its conservation.
Key Wards - CFC (Chloro fluoro Carbon), Montreal Protocol,Kyoto Protocol.

Introduction - The beginning of Universe or nature took place in pleasing environment. When Gods greatest Creation man opened his eyes, he found himself in an environment having Sky touching deoden, chir trees and lovely green forest While on the other hand with Silvery Mountains Covered with sheets of ice & Snow, deep Sea, Valleys with Colourful flowers, flowing rivers, living organisms, plants, different Seasons. But Unfortunately Slowly and gradually This Picture changed,Man in the name of development progress destroys or destruct the precious heritage of environment. Industrial revolution increases the mans power while on the other hand added the poisonous substances in the environment i.e. pollutions. The harmful changes taking place in nature or the entrance of various toxic substances in environment causes unbalance in nature. Addition of undesirable substances in air, Water & Soil pollutes it and adversely effects the living-being According to Indian environment Act-1986 any Solid, Liquid or gas which is present in such a concentration which is harmful for environment is called pollutant. Today air, water, Soil, Noise pollutions is present in every sphere of life. Air pollution Co,So_2,CFC, and NO_2 emitted from industries & Motor vehicles, dust particles enters through breathing into the lungs creates many diseases. Domestic sewage & Untreated Chemical containing water, which contains Pb, Hg, Ag, Organo-Metallic compounds etc increases the water pollution which affects the living organisms, plants & humans. Solid waste, Waste discharged from chemical industries, Sprayed insecticides, plastic, ceramics, cement caused soil pollution. Atomic power generation causes radioactive pollution.

Affects - Air pollution causes many dangerous diseases like skin disease, heart diseases, low visibility or fog during winter. Emission of CO_2 reaches upto- 400 PPM and concentration of other green house gases also increases which results in Global warning, due to which glacier starts melting. Increasing sea level increases the danger of tsunami pollution depletes the Ozone layer, which allows the uv, ray to enter on Earth causing skin cancer, Eye problems. Air pollution results in genetic changes & changes in hereditary, Acid rain which contains a mixture SO_2 & NO_2 whose effects can be seen on fishes, Monumental buildings. In this way, Air pollution is a problem for living world on entire Earth (Globe).

The heavy metals (Pb,Hg,Cd,Zn,As,Cu) [present in water causes oxidative stress Redox imbalance, which effects the functioning of enzymes & hormones in body. The toxic effect of these metals causes many disorders like skin diseases, cough, cold, heart diseases, intestine kidney related diseases muscular & neurological disorders. Oil Spills on water does not allow Exchange of air, which causes deficiency of O_2 on sea water, due to low concentration of O_2 aquatic organisms are affected, water pollution causes several diseases like Typhoid, Joundice, Cholera, Soil pollution decreases the fertility of soil.

Methodology - The proposed study is based on secondary data which are published in the Books, Journals, News paper, Articles, Websites and summary of different souvenirs of this particular topic.

Measures to control environmental pollution -

1. Rules or lows made by government for controlling environmental pollution should be strictly followed. Industries should help in improving the environment, tree plantation, afforestation, recycling of waste products (Polythene waste) to make them useful.
2. Drive the euro measurement Vehicles and use of lead free petrol, sulphur diesel, for environment conservation clean fuel like CNG (Compressed natural gas) should be used.
3. Instead of disposing excreta in water/river, it can be used for growing Jal kumbhi which has an enormous ability to absorb the heavy metals. In the same way, waste obtained from leather Industries, paper industries

* Deptt. of Chemistry, Chandrashekhar Azad Govt. P.G. College, Sehore (M.P.) INDIA
**Deptt. of History, Govt. College, Ichhawar (M.P.) INDIA

to grow its, Jal kumbhi can be to generate biogas.

4. Use Chemicals in Agriculture to Lesser extent. Practice organic forming use organic manure. Waste should be used to produce biogas vermin. Composting can be done to make organic manure.
5. Be Eco friendly. Use things which have eco-marks on them, which can be easily made, used and disposed/ degrade.
6. Green Chemistry should be taught specially in College to provide or give basic information about Pollution & to check the Pollution at Molecular stage.
7. Due to geographical location/position of India solar energy, Wind energy, Geothermal energy, Traditional energy & Biogas can be generated & used at large scale.

Treaties for Environment Conservation -

1. Stock Home conference 1972 of Human Environment. The main aim of this conference is to guide & direct the peoples of the world in the preservation & enhancement of the human environment.
2. Montreal protocol It was an international treaty signed in Vienna in 1985 for Ozone layer.
3. The Kyoto protocol was negotiated on 11 Dec.1997 at the city of Kyoto in Japan. It is a legally binding agreement under which industrialized countries will reduced their collective emission of green houses gases, Nitrous Oxide, Sulphur Hexafluoride and two group of gases (Hydro Fluoro Carbon Perflouro Carbon).

Conclusion - The first Zero-Carbon city “Masdar” is built in UAE near Abu Dhabi, which is natural Environment friendly. If we will not aware & try to reduce/eradicate Environmental Pollution, then success in Environment conservation would be impossible. Today, we become two unconscious about Environmental values, that our future generations will not spare for give us for this. Only Government lows / rules & Policies are not enough to reduce Environmental Pollution. It is challenging to all humans. Our condition is better than western countries. It is necessary to make people aware of the reasons & consequences of this, so that instead of harming the Environment they will protect the Environment & use the natural resources Judiciously or prudently.

References :-

1. Dr. Usha Singh, Dr. Pratibha Singh, Smt. Anita Singh, Article in Rachna Aug-2013.
2. Dr. Neelam Richharia, Chemical and Toxicity of Environment Rachna Aug-2013.
3. Dr. Anil Kumar, Naveen Shodh Sansar Journal.
4. Maliean Dubois, Kyoto Protocol in Climate Change.
5. The Ozone hole Montreal protocol www.website.
6. www.encyclopedia.
7. News paper.
8. Pratiyogita darpan.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Reduction Of Hazardous Substances Emissions Through Green Chemistry

Dr. Basanti Jain *

Abstract - The term “Green” involves, it refers to the environment friendly objects. Green Chemistry may be defined as environment-friendly chemical synthesis or the alternative synthetic pathways through which it reduces or eliminates the generation of hazardous substances.

The four process of Integrated Waste Management are reduce, recycling, reuse and recover :

Source Reduction → Green Chemistry
Recycling → Green Building
Reuse → Green Product
Recover → Green Energy

Green building refers to the use of recycled content materials and products in new construction. Green product refers to the use of same waste material with some modification to get zero waste products. Green Energy is the energy obtained from the waste material without producing any toxic waste materials.

Key Words - Hazard, Exposure, Green Energy.

Introduction - The Pollution Prevention Act of 1990 was the first Act to focus on preventing the formation of pollutants. Maximum pollution to the environment is contributed by numerous chemical industries and other industry where many chemicals and chemical synthesis are involved. Therefore, attempts have been made in terms of Green Chemistry to follow environment - friendly chemical synthesis thorough alternative methods. Science and advance technologies have also contributed to alternative pathways of synthesis to reduce or eliminate pollutants.

Basic Principle of Green Chemistry - Atmosphere and hydrosphere (Particularly Oceans and Seas) are the largest sink for air pollutants and water pollutants believing that “Dilution is the best solution to pollution”. By diluting the pollutants the risk factors related to health may be reduced, substantially for a particular species, but it may be hazardous to other species. The risk associated with various chemicals is a function of both hazard and exposure as -

Risk = f [hazard , exposure]

The green Chemistry believes on the principle that an environment-friendly substance or product poses no risk to any species regardless of exposure even if for a longer period. Thus, green chemistry believes on the theory that prevention is better than cure. Green chemistry is an approach dealing with the environmental pollution prevention for safer and habitable environment.

Tools of Green Chemistry - The tools are -

- Green Starting materials.
- Green reagent
- Green reactions
- Green Chemicals Products
- Green Methodologies / Analysis

Green Starting Materials - Starting material for any chemical synthesis purpose is said to be green only when its use or overuse will not deplete the natural resources and degrade the environmental quality. For example ; natural polymers or biopolymers are more preferable because they produce little waste products and these waste products are easily biodegradable. Therefore, it gives environment friendly product and it is also a renewable source. Substances like polysaccharides which are renewable natural (biological) resources for many polymer synthesis activities because it produces no hazard chemicals and waste products are easily biodegraded.

Green Regents - The reagent for any chemical synthesis or manufacture processes are said to be green when they satisfy the following conditions :

(a) These reagents must be incorporated maximum into the final products without producing any hazardous waste by-products.
(b) They must increase the efficiency of the concerned reaction process.
(c) These reagents must be readily available preferably natural renewable sources.
(d) If there is any waste by-products they must be non-toxic and easily biodegradable. For example : phosgene was used to prepare polyurethanes which is very toxic to humans. Monsanto company has developed a method to prepare the same product without using phosgene like ,

*Professor (Chemistry) Govt. Girls M.L.B. College, Bhopal (M.P.) INDIA

Process without using Phosgene-

$$RNH_2 + CO_2 \rightarrow RNCO + H_2O \xrightarrow{R'OH} RNHCOOR'$$

Amine Isocyanate Urethane

Earlier it was

$$RNH_2 + COCl_2 \rightarrow RNCO + 2HCl \rightarrow RNHCOOR'$$

Amine Phosgene Isocyanate Urethane

Green Reactions - A particular reaction is said to be green only when almost all the reactants are incorporated to the end product without producing any toxic or hazardous by products. For example, Diels -Alder reaction and Aldol condensation reaction are good examples of green reactions as they produce little or no by-products.

Green Methodologies / Analysis - To save the environment from toxic pollutants, in many organic synthesis processes Biocatalysts are used as enzymes. Bio catalytic reactions generally carried out in aqueous phases and it involves only one or two steps. Protection of selective group in biocatalytic reaction is not necessary. Biocatalysts are also readily available and it saves energy.

Another example of green methodologies is the method in which the chemical reactions are carried out in aqueous phase rather than using any other chemical solvents. For example, Diels - Alder reaction in water. It was found that the rates of reaction and selectivity can be increased in an aqueous system. This methodology has found a number of applications in chemical and Pharmaceutical industries like, heterocyclic compounds with nitrogen or oxygen-containing dienophiles are synthsised from a hetero Diels-Alder reaction.

Green Chemical Products - Since green reagents , green reactions, green starting materials and green methodology is applied for a chemical synthesis then its product obviously will be green product, for example : The product Poly Acrylic Acid (PAC) is used in many industrial applications but these polymers are non-biodegradable. Instead of PAC, Thermal Poly Aspartate (TPA) is used to improve the performance characteristics of the reaction. It is also biodegradable and non toxic.

Significance Of Green Chemistry -

It gives the advantage that natural biological products are biodegradable, therefore, these waste products generally not create any environmental problem. Even by using the biological system, biopolymers and bioplastics can be prepared which are environment friendly products.

Biodiesel is a renewable sources of energy which can replace the non-renewable fossil fuel. Biodiesel does not emit sulphur and carbondioxide (CO_2) on its burning which is environment - friendly. Biodiesel can be prepared from vegetable oil.

References :-

1. Pani Balram, **"Environmental Chemistry",** I.K. International Publishing house Pvt. Ltd., New Delhi, 2007.
2. Ahluwalia V.K., Kidwai M. **"New Trends in Green Chemistry"** published by Kluwer Academic Publishers with Anamaya Publishers, New Delhi - 2004.
3. Ahluwalia, V.K., **"Green Chemistry Environmentally Benign Reaction"** published by Ane Books Pvt. Ltd., Daryaganj, New Delhi, 2009.
4. Lancaster Mike, **"Green Chemistry, An Introductory Text",** published by The Royal Society of Chemistry, Cambridge, UK, 2010.

****

Impact Of Maternal Occupation On The Nutritional Status Of 6-30 Months Children In Jodhpur City Of Rajasthan

Neelima Panwar * Dr. Meenakshi Mathur **

Abstract - Mothers are the principal caregivers to the infants including breastfeeding, preparing food, taking care of basic needs, seeking medical care etc. In the modern era, mothers are also involved in the work force of the country to assist the family financially. The role of mothers as care givers and working for income has a significant effect on the welfare of children. The assessment and comparison of the nutritional status of 30 children of the age group of 6-30 months of working and non-working mothers was carried out in Jodhpur district of Rajasthan. The children of the age group of 10-15months and 21-25 months were found as mild malnourished and more susceptible to malnutrition as compared to other age group revealing that they are not getting adequate amount of nutrition or they are disease prone. Higher percentage of (53.33%) mild malnourished children was recorded from the non-working mothers whereas (16.66%) moderate malnourished children from the group of working mothers. The educational status of mothers under present study showed that (43.3%) mother was graduate, while 11.7% mothers were illiterate. The children of graduate mothers were more malnourished. The study reveals that due to time constraints the working mothers were unable to give adequate attentions to their children.
Key words - Nutritional status, malnutrition, working mother, non-working mother.

Introduction - Mothers play important roles in nurturing their children for a proper development and upbringing and well-being of family members as well (Bianchi 2006). They are the primary caregivers to the infants and children (UNDP 1995) including breastfeeding, preparing food, collecting water, fuel and seeking medical care. But in the modern era, mothers have also become part of the labour force that influences child feeding practices and reflects nutritional status of children (Farhana and Naleena 2012). In developing countries like India it is essential to family survival in some cases. The situation of women in current era is very difficult, they have to face many challenges, some have their own choice while other are forced to work (Almani et al., 2012). However, their role as care givers and working for income conflict with one another especially for the welfare of children.

It has been reported that working mothers lack the time to adequately breastfeed or prepare nutritious meals for their young children (Glick 2002) and the weight of children was found to be closely related to mother's body mass index (BMI) Johannsen et al. (2006). The children of working mothers have poor dietary habits and spent more time engaging in sedentary activity compared to children of non-working mothers (Hawkins et al., 2009). The major part viz., cognitive, nutritional, psychomotor development of children takes place at early age of three years. The focus of the present study is based on the following objectives:

- To assess the nutritional status of young children of age group of 6-30 months.
- To compare the nutritional status of the children of working and non-working mothers.
- To assess the nutritional status of young children in relation to educational status of mothers.

Methodology - It is a comparative, observational and analytic study conducted in Jodhpur city of Rajasthan.

A total number of 60 young female children (30- whose mothers were working and 30- whose mothers were non-working) in the age group of 6-30 months were selected. Data was collected using a self- designed questionnaire and every section of questionnaire was explained by the mothers. The weight and height measurements were taken using proper scale and standard techniques. The social status of mothers was recorded including their education, employment and family structure on the basis of depth interview.

The questionnaire was divided into following sections to collect the information:

General information - It includes the name, age, sex and maternal history of the sample their variables i.e., age, qualification, occupation, monthly income, working hours etc. The information about the nutritional awareness of mothers was also taken in to account.

Anthropometric measurements - It includes the weight and height of the young children. The weight of the sample was taken on a paediatric beam balance in kilograms whereas; the height was recorded as length (recumbent heel to crown)

Statistical analysis: The data obtained was subjected to necessary statistical computation and nutritional status was

*Scholar (Home Science) Jai Narayan Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA
**HOD (Home Science) Jai Narayan Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

assessed by Gomez classification of malnutrition. The formula for calculation of malnutrition is as follows:

% of reference weight of age = (actual weight / weight of normal child of same age) x 100)

Results and discussion - The data showed that there was no any normal child as per the Gomez classification between the age group of 26-30 months (Table 1). This group of children were more susceptible to malnutrition as compared to other age group revealing that they are not getting adequate amount of nutrition or they are disease prone. There was 13.33% of normal child in the category of 21-25 months followed by 11.66% in the age group of 10-15 months. The children of the age group of 16-20 and 26-30 months were recorded as moderately malnourished whereas, children of 10-15 and 21-25 were found as mild malnourished (Table 1). There was drastic change in the feeding pattern of the age group of children from 10-30 month. The children of this age group were introduced to weaning and supplementary food to cope up their nutritional requirement. The data reveals that almost mothers of children of this age group were not aware about the nutritional input in terms of quantity and quality. The studies showed that children of the age group of 11 and 18 months were malnourished due to the fact that the mothers of these children did not follow appropriate infant feeding practices (Laure et. al. 2014).

Table1 - (See in the last page)

Graph 1 - Nutritional status of young children in relation to educational status of their mother **(See in the last page)**

The educational status of mothers under present study showed that 43.3% mother were graduate, 20% were holders the education of IX to XII level and 25% were between classes V to VIII while 11.7% mothers were illiterate. The children of graduate mothers were more malnourished as compared to the children of mothers having education to the level of class V-XII (Table 2). At the same time number of normal children was higher (38.46%) in the category of graduate mothers as compared to other categories. Higher number (61.53%) of malnourished children in the group of graduate mothers may be due to the reason that most of them were working and could not devote much time to take care of their infants. Although the financial condition of mothers in this group was better but due to time constraints they were unable to give required attention to their children as far as the food is concern. Their children have to depend upon the second care givers (grandparents, maid or sibling) who were not much aware about the nutritive food etc. resulting into the reduce appetite of the children. Sometimes children get exposed to unhygienic environments and episodes of diarrhoea and vomiting was also reported. Although the children of working mothers were malnourished but they was not cognitive degenerated. Shams et. al. (2012) showed that growth status of children of housewife mothers in their second year of life was better than that of children with working mothers. Toyoma et. al. (2009) also reported that the weight of children of unemployed mothers was significantly higher and the children were taller than the children of employed mothers. Similarly, Yeleswarapu and Nallapuit (2012) observed that the children of the working mothers from a low socio- economic background were under weight and shorter than those of the non-working mothers. Ukwuani and Suchindran (2003) examined the relationships between women's work and nutritional status (stunting and wasting) of their children and reported more episodes of diarrhoea and shorter breast-feeding duration in the case of children of employed mothers. Although they observed positive effect on the income of working mother but more incidence of wasting was also reported with this group. Studies revealed negative association between maternal employment and children's cognitive outcomes of children (Waldfogel et. al. 2002) supporting our results.

Table 3 - (See in the last page)

The children of working mothers were found to be normal (46.66%) as compare to the children of non-working mothers, as according to weight for age (Gomez classification of malnutrition). The study reports that there was not any child that was severely malnourished out of both the groups of mothers. Higher percentage of mild malnourished children was recorded from the non-working mothers whereas moderate malnourished children from the group of working mothers (Table 3). The overview of the data shows that the nutritional status of the children of working mothers was better as compare to the children of non-working mothers. The working mothers are qualified and have the knowledge about the quality and quantity of nutritive food. Beside this they have money to procure supplementary food at their own whereas, the non-working mothers have to dependent on the supplementary food provided by the government agencies (aganwardies). Nakahara et.al (2006) examined the association between availability of childcare support and the nutritional status of children of both non-working and working mothers and reported increased risk of malnutrition among children of working mothers. Rastogi and Dwivedi (2014) examined the impact of maternal employment on the nutritional status of children and reported that the maternal employment was associated with higher risk of children being underweight. They also observed that maternal employment, slums dwellers and maternal education significantly affected the nutritional status of children.

Conclusion - The financial condition of working mothers was better to nourish their children but due to time constraints they were unable to give required attention in terms of quality and quantity of nutritive food. The non-working mothers have to depend on the governmental agencies/NGOs for the supplementary foods to be given to their children. The unawareness and availability of nutritive food is major concern associated with the non-working mothers.

References :-

1. Almani AS, Kazi E, Abro A, Iqra and Mugheri RA (2012). Study of the effects of working mothers on the development of children in Pakistan. International Journal of Humanities and Social Science 2(11):164
2. Bianchi, S. (2006). Effects of working mothers on

children. Budapest: Hybro Press.
3. Farhanah S and Naleena DM (2012). The association of maternal employment status on nutritional status among children in selected kindergartens in Selangor, Malaysia. Asian Journal of Clinical Nutrition, 4: 53-66.
4. Ukwuani FA and Suchindran CM. (2003). Implications of women's work for child nutritional status in sub-Saharan Africa: a case study of Nigeria. Social Science & Medicine 56(10):2109–2121.
5. Glick P. (2002). Women's employment and its relation to children's health and schooling in developing countries: conceptual links, Empirical Evidence and Policies 4-10.
6. Hawkins SS, Cole TJ and Law C (2009). Examining the relationship between maternal behaviours in 5-years-old British children. J. Epidemiol. Commun. Health 63: 999-1004
7. Johannsen, D.L., Johannsen N.M. and Specker B.L. 2006. Influence of parent's eating behaviours and child feeding practices on children's weight status. Obesity, 14: 431-439.
8. Laure NJ, Christelle MM, Bilkha L, Desire MH, Julius O .2014 Nutritional Status and Risk Factors of Malnutrition among 0-24 Months Old Children Living in Mezam Division, North West Region, Cameroon. J Nutr Disorders Ther 4:150. doi: 10.4172/2161-0509.1000150.
9. Nakahara S, Poudel KC, Lopchan M, Ichikawa M, Poudel-Tandukar K, Jimba M and Wakai S 2006. Availability of childcare support and nutritional status of children of non-working and working mothers in urban Nepal. Am J Hum Biol. 18(2):169-81.
10. Rastogi S and Dwivedi LK (2014). Child nutritional status in metropolitan cities of India: Does maternal employment matter? Social Change 44(3): 355-370.
11. Shams B, Golshiri P, Saleki A, Isfagani MR and Najimi A 2012. Comparison of growth and nutritional evolution stages in infants with working mothers and infants with housewife mothers in Isfaha. J. Educ. Health. Promot. 1:16 doi: 10.4103/2277-9531.98574.
12. Toyama N, Wakai S, Nakamura Y and Arifin A. (2001). The mothers' working status and the nutritional status of the children who were under the age of 5 in an urban low-income community, in Surabaya, Indonesia. Trop Pediatr 47(3):179–81.
13. UNDP (1995). Human Development Report. New York: Oxford University Press.
14. Waldfogel J, Han WJ and Brooks-Gunn J 2002. The effects of early maternal employment on child cognitive development. Demography 39(2):369-392.
15. Yeleswarapu, B. K. and Nallapuit, S.S .R. (2012). A comparative study on the nutritional status of the pre-school children of the employed women and the unemployed women in the urban slums of Guntur. J. Clin. Diagn. Res., 6 (10):1718–1721.

Table -1 Classification of malnutrition in different age groups of children

Age (months)	Number	Grade			
		Normal	Mild	Moderate	Severe
6-9 months	8	3 (13.33%)	3 (13.33%)	2(3.33%)	_
10-15 months	16	7 (11.66%)	7 (11.66%)	2(3.33%)	_
16-20 months	10	3 (5%)	3 (13.33%)	4(6.66%)	_
21-25 months	17	8 (13.33%)	7 (11.66%)	2(3.33%)	_
26-30 months	9	_	5(8.33%)	4(6.66%)	_

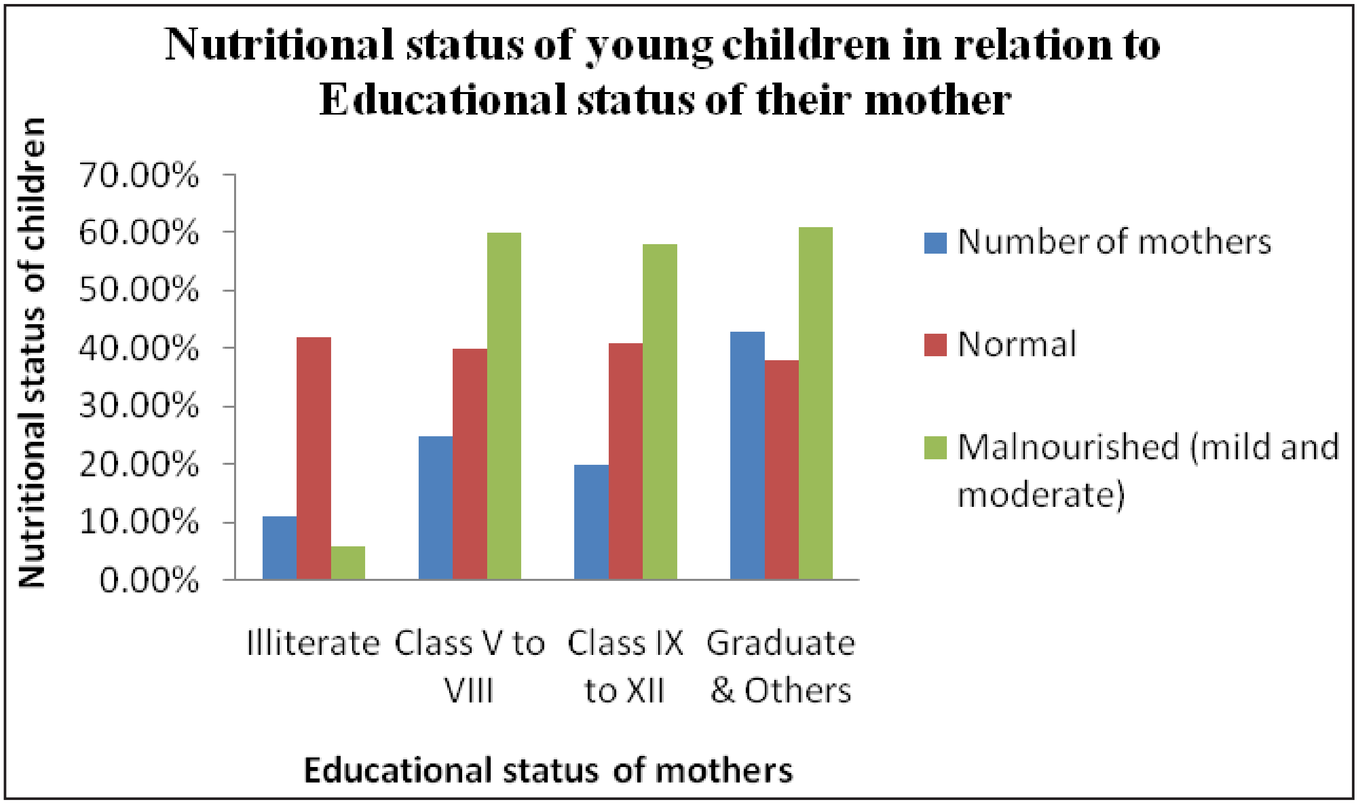

Table - 3 Comparison of the nutritional status of the children of working and non-working mothers

Grade of malnutrition	Working mother		Non-working mothers	
	Number	%	Number	%
Normal	14	46.66	12	40
Mild	11	36.66	16	53.33
Moderate	5	16.66	2	6.66
Severe	—	—	—	—

****

ग्रामीण महिला बाँस कारीगरों द्वारा अपनायी गयी हस्तकलाओं एवं उनकी आर्थिक महत्ता के संदर्भ में अध्ययन - गोरखपुर जिले के विशेष संदर्भ में

डॉ. दीपशिखा पाण्डेय *

प्रस्तावना - 'किसी भी समाज में स्त्रियों की आर्थिक भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है और कोई भी कौम इसे नजर अंदाज नहीं कर सकती है। स्त्रियों की शक्ति का समुचित उपयोग करने पर, उनका सही नियन्त्रण करने पर साथ ही उनके साथ आदर का बर्ताव करने पर वे ऐसी महान और प्रबल शक्ति रूप धर लेती हैं, जिसका राष्ट्र के लाभ और उसके विकास के लिए उपयोग किया जा सकता है।'

'राष्ट्रीय समिति रिपोर्ट' -

लोक पारम्परिक हस्तकलाएँ - 'सम्पूर्ण हस्तकलाएँ हाथों द्वारा निर्मित वह पारम्परिक एवं कलात्मक वस्तुएँ हैं, जिन्हें सजावट एवं उपयोगिता की दृष्टि से साधारण यंत्रो द्वारा तैयार किया जाता है।' (http// en.wikipedia.org.)

महिलाओं के आर्थिक विकास में हस्तकला का योगदान - ग्रामीण महिलाओं की स्थिति भी पहले की अपेक्षा काफी सुधरी है। वे पढ़-लिख रही हैं, वे रुढ़ियों एवं बेड़ियों को तोड़ने को आतुर हैं और संगठित होकर आर्थिक एवं सामाजिक अधिकारों के लिए संघर्ष कर रही हैं। जागरुकता बढ़ने से वे देश की प्रगति में भी अपना योगदान दे रही हैं'(विजय लक्ष्मी ,2008)।

हस्तकला निर्माण के क्षेत्र में महिलाओं के योगदान को निम्न रुप में देखा जा सकता है -

- राजस्थान के भरतपुर जिले के डीग तहसील के बहताना गाँव में पिछले कुछ वर्षो में महिलाओं ने तुलसी माला निर्माण कार्य शुरु किया है वर्तमान समय में महिलाएँ 150 तुलसी माला बनाकर प्रतिमाह 4-5 हजार रुपए आसानी से प्राप्त कर रही हैं।
- राजस्थान के उदयपुरिया ग्राम की महिलाओं ने मोजड़ी बनाने के लोक पारम्परिक कार्य को व्यवसाय के रुप में अपना कर मासिक आय 1500 से 2000 रुपये प्राप्त कर रही है। (प्रेरणा अग्रवाल, 2008)
- इसी प्रकार तलवाड़ा गाँव (सोनपुर) में 70 परिवार मूर्ति बनाने की हस्तकला निर्माण का कार्य कर लगभग 8000-10,000/माह तक प्राप्त कर रही हैं
- उत्तर प्रदेश के मगहर जिले में गाँव की 80 परिवार की सभी महिलाएँ खादी के वस्त्र निर्माण कर अपने परम्परागत व्यवसाय से लगभग 10,000-20,000/माह आय प्राप्त कर रही हैं

गोरखपुर जिले की हस्तकलाओं के विशेष संदर्भ में यदि देखा जाय तो - गोरखपुर पूर्वी उत्तर प्रदेश का एक विस्तृत क्षेत्र माना जाता है, जहाँ की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या छोटे-छोटे गाँवों एवं कस्बो में निवास करती हैं और इन गाँवों में महिलाएँ हस्तकलाओं का प्रयोग लोक परम्पराओं के रूप में करती हैं। परन्तु इन हस्तकलाओं से आर्थिक लाभ मिलने की कम सम्भावनाएँ देखने को मिलती हैं। गोरखपुर के कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जैसे- **'बरहट का टेराकोटा, दोहरी घाट के गलीचे, पाण्डेअहाता के खिलौने'** जहाँ निर्मित हस्तकालाओं को वर्ष भर प्रयोग में लाया जाता है और इन सामग्रियों को एक बेहतर बाजार भी उपलब्ध है, जबकि अधिकांश क्षेत्रों में की जाने वाली बाँस की हस्तकलाएँ इस लाभ से पूर्णतः वंचित हैं।

गोरखपुर के करीमनगर में कार्य कर रही एक दुबली-पतली कमजोर महिला बाँस कारीगर ने बताया कि शादी-विवाह के अवसर पर कुछ आमदनी हो जाती है, परन्तु अवसर समाप्त होने पर परिवार को मुश्किल से 200 रुपये भी मिल पाता है। कभी-कभी रात में सोने पर मुझे यह सोचकर बड़ी बेचैनी होती है कि मेरे बच्चों को खाली पेट सोना पड़ेगा। (अमित यादव, 2011) अत: इस समस्या को देखते हुए हस्तकला के रुप में बाँस से निर्मित वस्तुओं के संदर्भ में कुछ विशेष मुददों पर यह विचार किया गया कि-

- हस्तकलाएँ महिलाओं की शक्ति के अनुसार कितना लाभ दे पाती हैं ?
- क्या निर्मित हस्तकलाएँ उपभोक्ताओं की मांग को पूर्ण कर पाती हैं ?
- क्या महिलाएँ निर्मित सामग्रियों को सही स्थान पर बेच पाती हैं ?

क्योंकि **के. सी. सैयदन** के ये शब्द सुभाषित से कम नहीं है कि **'ज्ञान अच्छा है, बौद्धिक सम्पन्नता भी अच्छी है और विवेक और भी अधिक मूल्यवान गुण है परन्तु साधन के अभाव में जीवन की रचना को पूर्ण नहीं बनाते, उसमें संघटित नहीं हो जाते और किसी महिला को इस योग्य नहीं बनाते कि उसका जीवन कलाकृति बन जाये तो उसका कोई महत्व नहीं।'**

अध्ययन का उद्देश्य -

- ग्रामीण महिला बाँस कारीगरों द्वारा अपनायी गयी हस्तकलाओं एवं उनकी आर्थिक महत्ता के सन्दर्भ में अध्ययन करना।

शोध आकल्पन - अध्ययन हेतु उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले के **सात क्षेत्रों** का चयन किया गया। प्रस्तुत शोध कार्य की प्रकृति **'क्रियात्मक अनुसंधान'** पर आधारित है।

न्यादर्श एवं इकाईयों का चयन है प्रत्येक क्षेत्र से 50 ग्रामीण महिलाओं का चयन **उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन विधि** द्वारा किया गया है। इस प्रकार कुल 350 ग्रामीण महिला बाँस कारीगरों का चयन न्यादर्श के रूप में किया गया है। **तथ्य संकलन** हेतु **साक्षात्कार विधि** का प्रयोग किया गया है। **सांख्यिकीय विश्लेषण** हेतु शोधकार्य में आवृति, मध्यमान ,एवं प्रतिशत विधि का प्रयोग किया गया है।

* वरिष्ठ प्रवक्ता (गृह विज्ञान) चंद्रकांति रमावती देवी आर्य महिला स्नातकोत्तर कालेज, गोरखपुर (उ.प्र.) भारत

प्रदत्त प्रस्तुतिकरण एवं विश्लेषण

तालिका 1.1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका संख्या 1.2

महिलाओं द्वारा व्यवसाय चयन के प्रति दृष्टिकोण

प्र0– आप अपने व्यवसाय चयन का क्या आधार मानती हैं ?

क्र. सं.	कथन	कुल n=350
1.	रुचिवश	18 (5.14%)
2.	परम्परागत व्यवसाय होने के कारण	332 (94.0%)
3.	खाली समय के सदुपयोग हेतु	275 (78.0%)
4.	अन्य किसी कार्य का ज्ञान न होने के कारण	337 (96.0%)
5.	कौशल के सदुपयोग हेतु	327 (93.0%)
6.	कौशल के विकास हेतु	33 (9.4%)
7.	आने वाली पीढ़ी को हस्तकला सिखाने के लिए प्रेरणास्वरुप	161 (46.0%)
8.	पारिवारिक आय में वृद्धि हेतु	347 (99.0%)
9.	पुरुष सदस्यों को व्यवसाय में पड़ने वाली आवश्यकताओं में सहयोग करने हेतु	343 (98.0%)
10.	बच्चों के बेहतर भविष्य हेतु	297 (84.0%)
11.	आत्मनिर्भर बनने हेतु	6 (2%)
12.	उच्च जीवन स्तर की प्राप्ति हेतु	21 (6.0%)
13.	व्यवसाय को पहचान दिलाने हेतु	10 (3%)
14.	मजबूरी वश	319 (91%)

- तालिका संख्या 1.2 के आधार पर यह स्पष्ट है कि कुल 94% महिला कारीगर चयनित हस्तकला व्यवसाय का कारण परम्परागत है। 99% महिला कारीगर अपने पारिवारिक आय को बढ़ाने के लिए ,98% महिलाएँ परिवार के पुरुष सदस्यों को व्यवसाय में सहयोग प्रदान करने हेतु एवं 84% महिलाएँ अपने बच्चों के उज्ज्वल भविष्य हेतु इस व्यवसाय का चयन करती हैं।
- महिला कारीगरों में प्रत्येक क्षेत्र में जागरुकता का अभाव हैं जिसके कारण सर्वाधिक कम महिलाएँ आत्मनिर्भरता के लिए व्यवसाय चयन के सन्दर्भ में स्वीकार करती हैं।
- 96% महिलाओं के पास कोई शिक्षा एवं कला का ज्ञान एवं अन्य कोई रोजगार का साधन न होने के कारण । 5.14% महिलाएँ रुचिवश अपने व्यवसाय के चयन को स्वीकार करती हैं। इस प्रकार यह देखा गया कि हस्तकला का रोजगार के रुप में प्रमुख साधन होने के पश्चात भी महिलाएँ अपनी हस्तकला निर्माण के व्यवसाय से पूर्णत:असन्तुष्ट हैं जो इस तथ्य से परिलक्षित है कि 91% महिला कारीगरों द्वारा इस व्यवसाय का चयन मजबूरी वश किया गया है।

तालिका 1.3

ग्रामीण महिलाओं द्वारा कच्चे माल की प्राप्ति के सन्दर्भ में प्राप्त जानकारी

क्र. सं.	कथन	कुल n=350
1.	आपको कच्चा माल आसानी से प्राप्त हो जाता है ?	
	हाँ	76 (22%)
	नहीं	274 (78%)
2.	आप कच्चा माल शहर से लाती है अथवा गाँव से ?	
	शहर से	279 (80%)
	गाँव से	71 (20%)
3.	क्या आप बाँस स्वयं उगाती है ?	
	हाँ	3 (0.85%)
	नहीं	347 (99.14%)
4.	क्या आपको कच्चा माल खरीदने हेतु किसी प्रकार का ऋण लेना पड़ता है ?	
	हाँ	0 (0%)
	नहीं	350 (100%)
5.	आप कच्चा माल खरीदने में कितना मूल्य व्यय करती है ?	
	50–100 रुपये	50 (14.28%)
	100–150 रुपये	170 (48.57%)
	150 रुपये से अधिक	130 (42.85%)
6.	कच्चा माल थोक में खरीदती हैं अथवा फुटकर खरीदती हैं ?	
	थोक में	40 (11.42%)
	फुटकर	310 (88.57%)
7.	आपको कच्चा माल खरीदने में कौन सी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है ?	
	मध्यस्थों पर निर्भरता–	336 (96%)
	कच्चा माल लाने में वाहन संबंधी कठिनाईयाँ –	172 (50%)
	कच्चे माल प्राप्ति का निश्चित स्थान नहीं होना –	340 (97%)

साक्षात्कार के अन्तर्गत यह पाया गया कि 78% महिला कारीगर यह बताती है कि कच्चे माल की प्राप्ति अत्यन्त कठिनाई पूर्वक होती है। 96% महिलाएं कच्चे काल की प्राप्ति हेतु मध्यस्थों पर निर्भरता, 50% महिलाएं वाहन संबंधी कठिनाई एवं 97% निश्चित बाजार न होने जैसी कठिनाईयों को स्वीकार करती है।

- 100% महिलाएँ यह स्वीकार करती हैं कि कच्चे माल की प्राप्ति हेतु उन्हें अपनी आय पर ही निर्भर रहना पड़ता है। 0.85% महिलाएँ ही स्वयं बाँस उगाने के कथन को स्वीकार करती हैं। 80% महिला कारीगरों द्वारा कच्चा माल शहर से प्राप्त किया जाता है। 42.85% महिलाएँ 150 रुपये से अधिक मूल्य पर एक बाँस की प्राप्ति तथा 88.57% महिलाएँ यह स्वीकार करती हैं कि उनके द्वारा कच्चा माल फुटकर खरीदा जाता है।

तालिका 1.4 – ग्रामीण महिलाओं द्वारा निर्मित हस्तकलाओं की अधिकतम बिक्री के सन्दर्भ में प्राप्त जानकारी

प्र0– आपके द्वारा निर्मित किन हस्तकलाओं की बिक्री सर्वाधिक होती है ?

क्र. सं.	कथन	कुल n=350
1.	बेना (पंखा)	32 (9.14%)
2.	डाल मउर (शादी में पहनने वाली पगड़ी एवं उपहार देने वाला डलिया)	96 (27.42%)
3.	सूप (गेहूँ फटकने के लिए)	67 (19.14%)
4.	डगरा (चावल फटकने के लिए)	38 (10.85%)
5.	टोकरी	49 (14%)
6.	झपोली (फल, मिठाईयों को रखने वाली टोकरी)	48 (14%)
7.	सजावटी वस्तुएँ	20 (5.7%)

- सक्षात्कार के दौरान यह भी ज्ञात हुआ कि 42% महिलाएँ स्वीकार करती डाल मउर का परम्परागत एवं अनिवार्य रुप से प्रयोग अधिक होने के कारण अधिकतम बिक्री जबकि 9.14% महिला कारीगर ही यह स्वीकार करती हैं कि बेने की बिक्री कम हो पाती है। सजावटी सामग्रियों के संदर्भ में देखा जाय तो 57% महिलाएँ ही यह बताती हैं कि उनके द्वारा निर्मित सजावटी वस्तुओं की बिक्री केवल शहरी क्षेत्रों में ही होती है। 19.14% महिलाएँ सर्वाधिक सूप की बिक्री को स्वीकार करती हैं।

तालिका 1.5

हस्तकलाओं के मूल्य निर्धारण के संबंध में ग्रामीण महिलाओं द्वारा प्राप्त जानकारी

प्र0 - आप हस्तकलाओं की बिक्री के लिए मूल्य निर्धारण किस प्रकार करती हैं ?

क्र. सं.	कथन	कुल n=350
1.	बाँस की लागत के आधार पर	345 (98%)
2.	मेहनत के आधार पर	16 (5%)
3.	माँग के आधार पर	342 (98%)
4.	अन्य कारीगरों द्वारा लगाये गये मूल्य के आधार पर	227 (65%)
5.	उपभोक्ताओं के आधार पर	179 (51%)
6.	स्थान के आधार पर	225 (64%)
7.	हस्तकला निर्माण में व्यय होने वाले समय के आधार पर	3 (0.85%)

- 98% महिलाएँ यह स्वीकार करती हैं कि हस्तकलाओं के मूल्य का निर्धारण अपनी लागत से दो रुपये ही अधिक मूल्य लगाती हैं।

तालिका 1.6

विभिन्न हस्तकलाओं से प्राप्त होने वाले मूल्य के संदर्भ में ग्रामीण महिलाओं द्वारा प्राप्त जानकारी

क्र.	कथन	कुल n=350
1.	**आप एक बेने की बिक्री से कितना मूल्य प्राप्त करती हैं ?**	
	10-20 रुपये (लागत से 1 रुपया अधिक)	265 (75%)
	20-30 रुपये 85 (25%)	
2.	**आप एक डाल एवं मउर की बिक्री से कितना मूल्य प्राप्त करती हैं ?**	
	100-200 रुपये (लागत से 5 रुपया अधिक)	131 (37%)
	200-400 रुपये	216 (61%)
	400 से अधिक	3 (2%)
3.	**आप एक सूप की बिक्री से कितना मूल्य प्राप्त करती हैं ?**	
	50-100 रुपये (लागत से 2 रुपया अधिक)	274 (78%)
	100-150 रुपये	76 (22%)
4.	**आप एक डगरे की बिक्री से कितना मूल्य प्राप्त करती हैं ?**	
	50-100 रुपये (लागत से 2 रुपया अधिक)	306 (87%)
	100-150 रुपये	44 (13%)
5.	**आप एक झपोली टोकरी की बिक्री से कितना मूल्य प्राप्त करती हैं ?**	
	50-100 रुपये (लागत से 2 रुपया अधिक)	240 (68%)
	100-150 रुपये	110 (32%)
6.	**आप एक सजावटी सामग्री की बिक्री से कितना मूल्य प्राप्त करती हैं ?**	
	20-50 रुपये (लागत से 1 रुपया अधिक)	331 (95%)
	50-100 रुपये	19 (5%)

- 75% महिलाएँ यह स्वीकार करती हैं कि बेने से उन्हे प्रति इकाई 1 रुपये के लाभ से 10-20 रुपये की ही प्राप्ति होती है। 61% महिलाएँ डाल-मउर के सन्दर्भ में यह स्वीकार करती हैं कि विशेष अवसरों पर बनाये जाने वाले डाल-मउर से प्रति इकाई 5 रुपये के लाभ से 200-400 रुपये तक प्राप्ति होती है। सूप, डगरा एवं झपोली टोकरी से मात्र प्रति इकाई 2 रुपये के लाभ से 50-100 रुपये तक की प्राप्ति हो पाती है।

महिलाएँ यह बताती हैं कि आज बाजार में धातु एवं प्लास्टिक से बनी वस्तुओं की माँग अधिक होने के कारण उपभोक्ता बाँस से बनी वस्तुओं पर अधिक मूल्य देना नहीं पसन्द करते हैं।

तालिका 1.7

हस्तकलाओं द्वारा आर्थिक लाभ प्राप्त न हो पाने के सन्दर्भ में ग्रामीण महिलाओं का दृष्टिकोण

प्र0-आप हस्तकलाओं से आर्थिक लाभ न मिल पाने का क्या कारण मानती हैं ?

क्र. सं.	कथन	कुल n=350
1.	केवल विशेष अवसरों पर ही माँग अधिक होती है	346 (98%)
2.	नयी पीढ़ी के अनुरूप नहीं होती हैं	247 (70.57%)
3.	आधुनिक उपकरणों के बढ़ते प्रयोग के कारण	233 (66.57%)
4.	उपभोक्ताओं की असंतुष्टि के कारण	314 (90%)
5.	अत्यधिक मोल-भाव की मानसिकता	309 (88.28%)
6.	उपभोक्ताओं द्वारा उपेक्षित	291 (83.14%)
7.	प्लास्टिक एवं धातुओं का बढ़ता प्रयोग	286 (81.71%)
8.	निश्चित बाजार का अभाव	330 (94.0%)
9.	मध्यस्थों का अधिक वर्चस्व	3191.0%)32

- 98% महिलाएँ यह बताती हैं कि मात्र विशेष अवसर जैसे शादी-विवाह में डाल-मउर, छठ पूजन में सूप एवं टोकरी, तिलक एवं फलदान के समय झपोली की माँग अधिक होती है। 81.71% महिला कारीगर मानती है वर्तमान समय में प्लास्टिक एवं धातुओं के बढ़ते प्रयोग एवं कम मूल्य में आसानी से उपलबध हो जाने के कारण उनके द्वारा निर्मित हस्तकलाओं की बिक्री अधिक नहीं हो पाती है।
- 94% महिला कारीगर यह स्वीकार करती हैं कि अपने हस्तकलाओं की बिक्री के लिए उन्हें कोई निश्चित बाजार उपलब्ध नहीं होता हैं I 90% महिलाएँ यह मानती हैं कि उनके द्वारा निर्मित हस्तकलाओं से उपभोक्ता संतुष्ट नहीं होते हैं एवं मोल भाव की अधिक मानसिकता के कारण हस्तकलाओं का अधिक मूल्य देने के लिए तैयार नहीं होते हैं।

निष्कर्ष -ग्रामीण महिला बाँस कारीगरों द्वारा अपनायी गयी हस्तकलाओं एवं उनकी आर्थिक महत्ता के सन्दर्भ में प्राप्त निष्कर्ष-

- ग्रामीण महिला कारीगरों का व्यवसाय परम्परागत होने के कारण उनके पीढ़ी दर पीढ़ी चला आ रहा है साथ ही महिलाओं लिए पारिवारिक व्यवसाय का एक मात्र साधन है। महिलाओं का सामाजिक एवं आर्थिक स्तर निम्न होने एवं परिवार में रोजगार का अन्य कोई विकल्प न होने के कारण महिलाएँ अपनी जीविका चलाने हेतु व्यवसाय के रुप में मजबूरीवश हस्तकला का निर्माण कर रही हैं।
- महिलाओं के शैक्षिक स्तर एवं जागरुकता में कमी होने के कारण

मध्यस्थों द्वारा पूर्णतः शोषण किया जाता है । ग्रामीण महिला बाँस कारीगरों द्वारा निर्मित वस्तुएँ अनाकर्षक, कम सजावटी एवं परम्परागत अधिक होने के कारण उपभोक्ताओं द्वारा उनकी माँग अधिक नहीं रहती है।

इस प्रकार उपभोक्ताओं की बदलती माँग एवं नवीनता के अभाव के कारण महिलाओं को हस्तकलाओं द्वारा आर्थिक लाभ प्राप्त नहीं हो पाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, प्रेरणा (2009) 'मोजड़ी का काम – मनचाहे दाम', कुरूक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अंक 5, 21 मार्च ,पृ0सं0 25–28
2. अग्रवाल, उमेश चन्द्र (2008) 'ग्रामीण रोजगार में हस्तशिल्प का योगदान', कुरूक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अंक 4, 22 फरवरी, पृ0सं0 13–18
3. बैरवा, एस0 एल0 (2008) 'आर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान, कुरूक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अंक 7, 6 अक्टूबर, पृ0सं0 8–13
4. भारती, ममता (2008) 'महिलाओं की स्थिति पर वैश्वीकरण का प्रभाव', कुरूक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, अंक 4, 19 जनवरी, पृ0सं0 11–12
5. चौहान, श्याम सुंदर सिंह (2007) ' हस्तकलाएँ भारत की सांस्कृतिक धरोहर का संवाहक', योजना, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, अंक 10, जून, पृ0सं0 19–21

तालिका 1.1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1.1

ग्रामीण महिला बाँस कारीगरों का पृष्ठभूमि के आधार पर वितरण

क्र. स.	सामान्य जानकारी	सहजनवा	करीमनगर	चरगाँवा	रजई	डोमिनगढ़	चौरी चौरा	बालापार	कुल n=350
1.	**आयु**								
	15-30 वर्ष	15 (30%)	10 (20%)	10 (20%)	16 (32%)	10 (20%)	25 (50%)	9 (18%)	95 (27%)
	30-45 वर्ष	25 (50%)	28 (56%)	32 (64%)	34 (68%)	37 (74%)	22 (44%)	36 (72%)	214 (61%)
	45-60 वर्ष	10 (20%)	12 (24%)	8 (16%)	0 (0%)	3 (6%)	3 (6%)	5 (10%)	41 (12%)
2.	**वैवाहिक स्तर**								
	विवाहित	32 (64%)	38 (76%)	40 (80%)	36 (72%)	48 (96%)	37 (74%)	46 (92%)	277(79%)
	अविवाहित	10 (20%)	9 (18%)	3 (6%)	10 (20%)	0 (0%)	5 (10%)	2 (4%)	39(11%)
	अन्य	8 (16%)	3 (6%)	7 (14%)	4 (8%)	2 (4%)	8 (16%)	2(4%)	34(10%)
3.	**शैक्षिक स्तर**								
	अनपढ़	50 (100%)	47 (94%)	50(100%)	50(100%)	50(100%)	50(100%)	50(100%)	347 (99%)
	प्राथमिक	0 (0%)	3 (6%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	3 (1%)
	माध्यमिक	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)
4.	**निवास स्थान**								
	शहरी	5 (10%)	32 (64%)	30 (60%)	10 (20%)	19 (38%)	7 (14%)	2 (4%)	105(30%)
	ग्रामीण	45 (90%)	18 (36%)	20 (40%)	40 (80%)	31(62%)	43 (86%)	48 (92%)	245(70%)
5.	**कार्य पर प्रति घण्टा व्यय**								
	1-5 घण्टा	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	1 (2%)	0 (0%)	0 (0%)	1 (1%)
	5-10 घण्टा	7 (14%)	0 (0%)	25 (50%)	21 (42%)	22 (44%)	26 (52%)	0 (0%)	101(29%)
	10-15 घण्टा	43 (86%)	50(100%)	25 (50%)	29 (58%)	27 (54%)	24 (48%)	50(100%)	248 (70%)
6.	**परिवार का स्वरुप**								
	संयुक्त	29 (58%)	30 (60%)	27 (54%)	29 (58%)	37 (74%)	18 (36%)	39 (78%)	209(60%)
	एकल	20 (40%)	7 (14%)	20 (40%)	10 (20%)	13 (26%)	32 (64%)	3 (6%)	105 (30%)
	अन्य	1 (2%)	13 (26%)	3 (6%)	11 (22%)	0 (0%)	0 (0%)	8 (16%)	36 (10%)
7.	**परिवार में बच्चों की संख्या**								
	2-4	22 (44%)	5 (10%)	20 (40%)	2 (4%) 23	(46%)	45 (90%)	19 (38%)	136(39%)
	4-6	25 (50%)	25 (50%)	30 (60%)	20 (40%)	23 (46%)	5 (10%)	26 (52%)	154(44%)
	6-8	3 (6%)	20 (0%)	0 (0%)	28 (56%)	4 (8%)	0 (0%)	5 (10%)	60 (17%)
8.	**बच्चों की शैक्षिक स्थिति**								
	अनपढ़	50 (100%)	47(94%)	50(100%)	50(100%)	50(100%)	42 (84%)	49(98%)	338 (96%)
	प्राथमिक	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	7 (14%)	1 (2%)	8(2.28%)
	माध्यमिक	0 (0%)	3 (6%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	1 (2%)	0 (0%)	4(1.14%)
9.	**पारिवारिक आय**								
	500-1000 /माह	40 (80%)	42 (84%)	50(100%)	46 (92%)	47 (94%)	42 (84%)	49 (98%)	316(90%)
	1000-2000 /माह	10 (20%)	8 (16%)	0 (0%)	4 (8%)	3 (6%)	7 (16%)	1 (2%)	33 (9%)
	2000-अधिक	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	0 (0%)	1 (2%)	0 (0%)	1 (1%)
10.	**परिवार में निर्णय प्रक्रिया**								
	स्वयं	0 (0%)	0 (0%)	2 (4%)	0 (0%)	3 (6%)	7 (14%)	0 (0%)	12 (4%)
	पुरुष सदस्यों द्धारा	48 (96%)	39 (78%)	36 (72%)	42 (84%)	45 (90%)	38 (76%)	50(100%)	298 (85%)
	समूह के सदस्यों के द्धारा	2 (4%)	11 (22%)	12 (24%)	8 (16%)	2 (4%)	5 (10%)	0 (0%)	40 (11%)

****

बालक, बालिकाओं के कुपोषण स्तर का अध्ययन (छतरपुर शहर के संदर्भ में)

डॉ. कनुप्रिया चौबे *

प्रस्तावना – स्वस्थ एवं सशक्त शरीर का निर्माण उचित पोषण पर निर्भर करता है। पोषण शरीर की आकृति एवं आकार को प्रभावित करता है। अत: शरीर के पोषण का स्तर भोजन द्वारा प्राप्त पोषण पर निर्भर करता है। जिस प्रकार के पोषक तत्वों का समावेश भोजन में किया जाता है, उसी के आधार पर ही पोषण की स्थितियाँ देखी जाती हैं।

कुपोषण – गलत एवं दोषपूर्ण पोषण को ही कुपोषण के अंतर्गत रखा जाता है यह स्थिति तब उत्पन्न होती है, जब भोजन की दैनिक प्रस्तावित मात्राएँ नहीं ली जाती हैं। कई बार संतुलित भोजन लेने के बाद भी दोषपूर्ण पाचन, अवशोषण के कारण सभी पोषक तत्व उचित मात्रा में शरीर को प्राप्त नहीं हो पाते हैं एवं कुपोषण की स्थिति निर्मित होती है, यह पोषण की वह स्थिति है जिसके कारण व्यक्ति के स्वास्थ्य में गिरावट आने लगती है। यह एक या एक से अधिक पोषक तत्तवों की कमी, अधिकता या असंतुलन के कारण होती है, जिसके कारण शरीर रोग ग्रस्त एवं निर्बल हो जाता है। कुपोषण के अंतर्गत तीन स्थितियाँ आती हैं –

1. **अति पोषण –** जब व्यक्ति के आहार में कुछ पौष्टिक तत्वों की अधिकता हो जाती है और यह अधिकता लम्बे समय तक चलती रहती है, तो यह स्थिति अति पोषण कहलाती है इससे मोटापा, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग आदि हो जाते हैं।
2. **अल्प पोषण –** जब व्यक्ति के भोजन में एक या एक से अधिक पोषक तत्वों की निरंतर कमी बनी रहती है, तो यह स्थिति अल्प पोषण को जन्म देती है। इसमें मैरास्मस, क्वाशियोरकर, स्कर्वी, रिकेट्स, रक्त अल्पता, बेरी–बेरी आदि बीमारियाँ आती हैं।
3. **असंतुलित पोषण –** जब व्यक्ति के आहार में कुछ पोषक तत्वों की कमी तथा कुछ पोषक तत्वों की अधिकता हो जाती है तो यह स्थिति असंतुलित पोषण कहलाती है।

पाण्डेय श्रीमती सुनीता (2007) – ने बताया कि बालक, बालिकाओं के पोषण संबंधी आवश्यकताएं माता–पिता की आवश्यकताओं से भी अधिक हो जाती हैं, परंतु उचित पोषण आहार के अभाव में बालिकाएं कमजोर हो जाती हैं और उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास बाधित हो जाता है। इसलिए बालिकाओं के पोषण आहार पर विशेष ध्यान देना चाहिए, परंतु अक्सर उसे अपने भोजन में यह संतुलित पोषणाहार पूर्ण रूप से नहीं मिल पाते हैं और परिणामस्वरूप बालक, बालिकाएं कुपोषण का शिकार हो जाते हैं।

मेहरा एवं अग्रवाल (2004) – ने बताया कि एनीमियां की घटना लड़कों की तुलना में लड़कियों में अधिक होती है जिसका मुख्य कारण माता की शिक्षा में कमी निम्न सामाजिक, आर्थिक स्थिति, मातृपोषण में कमी, एवं मातृत्व स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं की सीमित पहुंच आदि है। इसकी पुष्टि अन्य अध्ययनों के द्वारा भी हुई है।

सीमा कदम – ने शालेय बालक की भोजन संबंधी आदतों के कारण निर्मित कुपोषण के स्तर का मापन किया।

क्लेरा व हैरीसन (1971) – स्वास्थ्य व बीमारी एक लगातार होने वाली प्रक्रिया है और जो एक समुदाय के स्वास्थ्य से जुड़ीं होती हैं। इन्होंने मनुष्य के हेल्थसीकिंग बिहेवियर को प्रभावित करने वाले बहुत से फेक्टर को रिपोर्ट किया।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बालक, बालिकाओं के कुपोषण स्तर का अध्ययन करना है।
2. परिवार के सदस्यों को कुपोषण सम्बन्धी जानकारी प्रदान करना एवं कुपोषित बच्चों की संख्या ज्ञात करना।

परिकल्पना – कुपोषण का बालक, बालिकाओं के शारीरिक एवं मानसिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव पाया जाता है।

प्रतिदर्श प्रारूप – प्रस्तुत अध्ययन में कुपोषण का स्तर ज्ञात करने हेतु साक्षात्कार द्वारा दो आयु समूह एवं लैंगिक भिन्नता के आधार पर 200 पूर्व शालेय बालकों के कुपोषण के स्तर का मूल्यांकन 24 घण्टे के अंतराल द्वारा लिये गये भोजन की जानकारी द्वारा किया गया। कुपोषण की गणना के लिए वाटर लास वर्गीकरण एवं आई0ए0पी0 वर्गीकरण का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन केवल छतरपुर शहर तक ही सीमित है। जिसमें 01–03 एवं 04–06 वर्ष के आयु के आधार पर 100 बालक एवं 100 बालिकाओं का चयन किया गया।

व्याख्या एवं विश्लेषण –

तालिका क्र. 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 02 व तुलनात्मक ग्राफ (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

प्रस्तुत अध्ययन में 1–3 वर्ष एवं 4–6 वर्ष के आयु समूह के बालक, बालिकाओं के पोषण मूल्यांकन की जो स्थिति सामने आयी उसे तालिका क्र. 01 में दर्शाया गया है। 1–2 वर्ष के कुल 22 बालक, बालिकाओं के पोषण मूल्यांकन करने में पाया गया कि 01 बालक, 01 बालिका वेस्टेड श्रेणी व 03 बालक एवं 03 बालिकाएं स्टण्टेड श्रेणी व 03 बालक, 02 बालिकाएं सामान्य श्रेणी में हैं। तालिका के अनुसार 03 से 04 वर्ष के आयु के बालक, बालिकाओं की पोषण स्थिति सर्वाधिक दयनीय है, जबकि 05 से 06 वर्ष के बालक, बालिकाएं इससे कम प्रभावित हैं। उपरोक्त तालिका से विदित होता है कि कुल वेस्टेड बच्चों की संख्या 19 है, जिसमें 10 बालक एवं 09 बालिकाएं हैं। 57 बच्चे स्टण्टेड श्रेणी में है, जिसमें 24 बालक तथा 33 बालिकाएं हैं। तथा सामान्य श्रेणी में केवल 46 बच्चे देखे गये। जिसमें 30 बालक एवं 16 बालिकाएं ही पूर्ण रूप से सामान्य पायी गयी।

* अतिथि विद्वान, शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

इसी तरह तालिका क्र. 02 में शाला, लिंग एवं कुपोषण का पारस्परिक सम्बन्ध ज्ञात किया है, जो वाटर लास क्लासिफिकेशन के आधार पर निकाला गया है। तालिका से स्पष्ट होता है कि केवल 19 प्रतिशत बालक एवं 27 प्रतिशत बालिकाएं सामान्य श्रेणी में है, जबकि 31 प्रतिशत बालक व 47 प्रतिशत बालिकाएं श्रेणी–I तथा 24 प्रतिशत बालक व 33 प्रतिशत बालिकाएं श्रेणी–II तथा 07 प्रतिशत बालक एवं 12 प्रतिशत बालिकाएं श्रेणी–III कुपोषण के शिकार पाये गये।

प्रस्तुत अध्ययन में कुपोषण श्रेणी–I में नर्सरी शाला के 46 प्रतिशत तथा आंगनवाड़ी केन्द्र के 32 प्रतिशत, श्रेणी–II नर्सरी शाला के 19 प्रतिशत, आंगनवाड़ी के 38 प्रतिशत, श्रेणी–III में कुपोषण के अंतर्गत नर्सरी शाला में 06 प्रतिशत जबकि आंगनवाड़ी केन्द्र के 13 प्रतिशत बच्चे पाये गये।

निष्कर्ष –

1. प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि लिंग के आधार पर बालिकाओं की वजन प्रोफाइल बालकों की अपेक्षा निम्न स्तर की है। अतः कुपोषण की श्रेणी I, II, III[rd] में भी बालिकाओं का प्रतिशत अधिक है।
2. प्रस्तुत अध्ययन में IAP वर्गीकरण के आधार पर गणना के द्वारा यह पाया गया कि नर्सरी शाला में 29 प्रतिशत बालक, बालिकाएं सामान्य श्रेणी के पाये गये, जबकि आंगनवाड़ी केन्द्र में मात्र 17 प्रतिशत बच्चे सामान्य श्रेणी में थे।
3. अध्ययन में यह भी पाया गया कि आंगनवाड़ी केन्द्र के बच्चों में कुपोषण का स्तर तुलनात्मक रूप में अधिक तो है। पर नर्सरी शाला की तुलना में बहुत अधिक विसंगतपूर्ण नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शरीर रचना क्रिया विज्ञान एवं आधारीय पोषण – शिवा प्रकाशन – डॉ0 आर0बी0 अग्रवाल, श्रीमती अनुराधा जैन
2. आहार विज्ञान – ऊषा टण्डन
3. चांदेकर रमेश (2009) सामाजिक अनुसंधान – सत्य प्रकाशन संचार केन्द्र इंदौर
4. Health and Development Rawat Publication Jaipur – Narayan K.V. 1977
5. Status of National Institute of public Cooperation and Child development – Paul P. Kaut. – 1989
6. Journal of nutrition.

तालिका क्र. 01 – आयु के आधार पर बच्चों में कुपोषण की स्थिति

Age in Year	Total 200 No.		Wasted 19 No.		Stunted 57 No.		Wasted & Stunted 78 No.		Normal 46 No.	
	Boys 100	Girls 100	Boys	Girls	Boys	Girls	Boys	Girls	Boys	Girls
1-2	10	12	01	01	03	05	03	04	03	02
1-3	26	28	03	02	05	09	09	11	09	06
1-4	28	30	05	04	06	08	12	16	05	02
1-5	21	17	01	01	06	06	06	05	08	05
1-6	15	13	00	01	04	05	06	06	05	01
Total	**100**	**100**	**10**	**09**	**24**	**33**	**36**	**42**	**30**	**16**

तालिका क्र. 02 – शाला के प्रकार, लिंग एवं कुपोषण का पारस्परिक संबंध

विवरण	बालक N = 100	बालिकाएं N = 100	कुल योग N = 200	नर्सरी स्कूल N = 100	आंगनवाड़ी केन्द्र N = 100	कुल योग N = 200
Normal Wt fro Age > 90%	19 19%	2727% 27%	46	29 29%	17 17%	46
Grade I Wt for Age > 75-90%	31 31%	47 47%	78	32 32%	46 46%	78
Grade II Wt for Age > 60-75%	24 24%	33 33%	57	19 19%	38 38%	57
Grade III Wt for Age < 60%	07 07%	12 12%	19	06 06%	13 13%	19

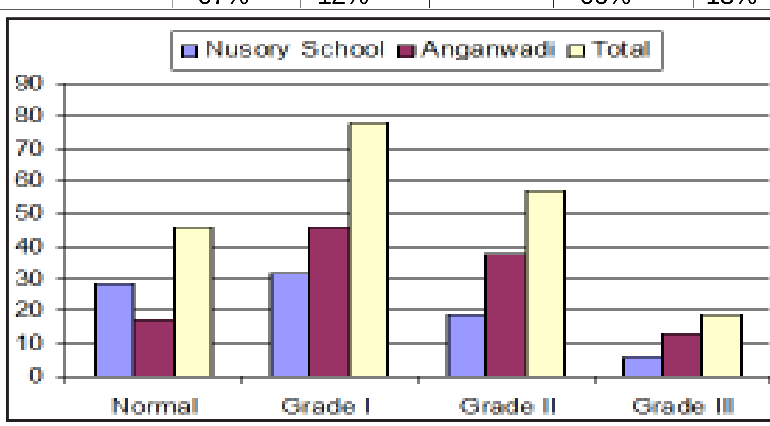

****

भारत में महिलाओं की स्थिति

डॉ. कृष्णा शर्मा *

प्रस्तावना – भारत में महिलाओं की स्थिति ने पिछली कुछ सदियों में कई बड़े बदलावों का सामना किया है, प्राचीन काल में पुरूषों के साथ बराबरी की स्थिति से लेकर मध्य युगीन काल के निम्न स्तरीय जीवन और साथ ही कई सुधारकों द्धारा समान अधिकारों को बढ़ावा दिये जाने तक भारत में महिलाओं का इतिहास काफी गतिशील रहा है। आधुनिक भारत में महिलाएं राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष, प्रतिपक्ष की नेता आदि जैसे शीर्ष पदों पर आसीन हुई है।

हिन्दु समाज में महिलाओं को ज्ञान, शक्ति और सम्पत्ति का प्रतीक माना जाता है, इनके रूप में सरस्वती, दुर्गा, एवं लक्ष्मी की पूजा की जाती है। महिला को समाज ने पुरूष का आधा हिस्सा माना है, और अर्द्धांगिनी के रूप में स्थान दिया है। महिला के वास्तविक महत्व की इस प्रकार व्याख्या की गई है। नारी परिवार की नींव है, परिवार समुदाय की तथा समुदाय राष्ट्र की , इससे स्पष्ट है कि महिला राष्ट्र की नींव है।

मुख्य धर्मः स्मृतिषु विहितो भार्तृषुश्रुषानम हिः:

'स्त्री का मुख्य कर्त्तव्य उसकी पति की सेवा से जुड़ा हुआ है।

विद्धानों का मानना है कि प्राचीन भारत में महिलाओं को जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरूषों के साथ बराबरी का दर्जा हासिल था, हालांकि कुछ अन्य विद्धानों का नजरिया इसके विपरीत है। पतंजलि और कात्यायन जैसे प्राचीन भारतीय व्याकरणविद्धों का कहना है कि प्रारंभिक वैदिक काल में महिलाओं को शिक्षा दी जाती थी। ऋग्वैदिक ऋचाएं यह बताती है कि महिलाओं की शादी एक परिपक्व उमर में होती थी। सम्भवतः उन्हें अपना पति चुनने की भी आजादी थी।

विभिन्न युगों में महिलाओं की स्थिति –

- **वैदिक युग –** वैदिक काल में भारतीय समाज ने नारी को पुरूषों के समान शिक्षा , धर्म, राजनीति और सम्पत्ति में अधिकार प्राप्त थे। वैदिक साहित्य से पता चलता है कि उस समय का आदर्श नारी पुरूष की प्रकृति है, रहा था। जिसके बिना उसका जीवन सम्भव न था, पत्नि के रूप में उनकी स्थिति बहुत ऊंची थी। 'ऋग्वेद के मतानुसार नारी ही घर है।' अथर्ववेद में कहा गया है कि नव वधु तू जिस घर में जा रही है वहां की तू साम्रज्ञी है। यजुर्वेद से स्पष्ट होता है कि नारी को संध्या करने तथा उपनयन संस्कार के अधिकार प्राप्त थे। इस काल में नारी को शिक्षा एवं साहित्य के अध्ययन करने की पुरूषों के समान स्वतंत्रता थी, धर्म एवं अनुष्ठान के कार्य बिना नारी के पूर्ण नहीं किये जाते थे।
- **उत्तर-वैदिक काल –** वैदिक काल में जो महिलाओं को सम्मान व पुरूषों के समान बराबर का दर्जा प्राप्त था वह उत्तरोत्तर कम होता चला गया। उत्तर-वैदिक काल में धर्म सूत्रों में बाल-विवाह का निर्देश दिया गया है। जिसके फल-स्वरूप महिलाओं की शिक्षा में बाधा पहुंची एवं शिक्षा का स्तर गिरता चला गया।
- **धर्म-शास्त्र युग –** तीसरी शताब्दी से लेकर ग्यारवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध तक का काल धर्म-शास्त्र कहलाता है। स्त्रियां इस काल की सामाजिक एवं धार्मिक संकीर्ण विचार धारा का शिकार बनी। वैदिक काल की गृह लक्ष्मी, माता एवं शक्ति प्रदायनी देवी अब याचिका, सेविका व निर्बलता के प्रतीक के रूप में दिखाई देने लगी। वैदिक काल की वह महिला जो अपने प्रबल व्यक्तित्व के द्धारा देश के साहित्य व समाज के आदर्शो को प्रभावित करती थी। अब परतंत्र, पराधीन, निसहाय और निर्बल बन चुकी थी।
- **मध्य-कालीन युग –** सोलहवीं शताब्दी से अठारवीं शताब्दी तक का समय मध्य काल नाम से जाना जाता है। इस युग में विशेषकर मुगल साम्राज्य की स्थापना के बाद महिलाओं की स्थिति का जितनी तीव्र गति से पतन हुआ है, वह हमारे सामाजिक इतिहास में कलंक के रूप में सदैव याद रहेगा। ग्याहरवीं शताब्दी के प्रारंभ से ही भारतीय समाज का मुसलमानों का प्रभाव बढ़ने की वजह से हिन्दु संस्कृति की रक्षा करना जरूरी हो गया था, इसलिये ब्राम्हणों ने संस्कृति की रक्षा, महिलाओं की रक्षा के लिये महिलाओं के संबंध में नियमों को अधिक कठोर बना दिया गया था।

स्वतंत्रता के पूर्व महिलाओं की स्थिति – अठारवीं शताब्दी से अंत से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक जब अंग्रेज लोग यहां शासन करते थे, इस काल में भारतीयों द्धारा समय – समय पर भारतीयों द्धारा अनेक सुधार किये गये। लेकिन अंग्रेजी सरकार के द्धारा इन सुधारों को विशेष एवं व्यावहारिक सहयोग प्राप्त नहीं हुआ। महिलाओं का शोषित बना रहना ही उनके प्रशासन के हित में था।

महिलाओं की निम्न स्थिति के कारण – उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि वैदिक काल के पश्चात् एवं स्वतंत्रता के पहले महिलाओं का सामाजिक स्तर निरंतर गिरता चला गया। वैदिक काल के पश्चात् महिलाओं के अधिकार कम होते चले गये। उसकी स्थिति एक साम्रज्ञी से घटकर दासता के स्तर तक आ गई महिलाओं के स्तर में इस प्रकार की गिरावट के निम्नलिखित कारण रहे।

- **अशिक्षा –** मनु के अनुसार, महिलाओं के लिये विवाह ही ऐंसा संस्कार है जो वेद मंत्र के साथ किया जाता है, उनके लिये पति सेवा एवं गृह कार्य ब्रम्हचार्य द्धारा किया जाने वाला अग्नि होम है। इससे पति की स्थिति एवं स्तर और ऊंची उठी और वह देवता बन गया, मगर इन सबका मूल कारण महिलाओं के स्तर में गिरावट के लिये रहा , वह उनकी अशिक्षा थी। अशिक्षा के कारण महिलाएं बिना किसी तर्क के इन धार्मिक विधानों को स्वीकार करती थी, और अपने अधिकारों से वंचित रह जाती थी।
- **पुरूषों पर आर्थिक निर्भरता –** उत्तर – वैदिक काल के बाद से महिलाओं के सम्पत्ति संबंधी अधिकार समाप्त गये तो वे अपनी

* विभागाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये पूर्ण रूप से पुरूषों पर आश्रित हो गयी। इस स्थिति में महिलाओं का शोषण होने पर भी वे परिवार की सदस्यता नहीं छोड़ सकती थी और उन्हें पति से आर्थिक सहयोग प्राप्त करने के लिये समर्पण करना पड़ता था।

- **कन्या दान का आदर्श –** वैदिक काल से ही हिन्दू संस्कृति में कन्या दान का एक आदर्श कर्त्तव्य रहा है। उस काल में परम्पराओं के परिष्कृत होने के परिणामस्वरूप इसका दुरूपयोग संभव ना था, उस समय कन्या दान का आदर्श अच्छे वर के ढूंढने से संबंधित था। वर के चुनाव में महिला को जो छूट वैदिक काल में थी, उसके पीछे मुख्य कारण इस भावना का होना ही था, परंतु स्मृति काल में इसका अर्थ दूसरे प्रकार लिये जाने लगा, जैसे कन्या एक वस्तु है, जिसका दान किया जाता है, जिस प्रकार दान में दी गई वस्तु पुन: वापिस नहीं ली जाती और न ही पुन: दान में दी जाती है।
- **संयुक्त परिवार व्यवस्था –** के.एम. पणिक्कर का कहना है कि संयुक्त परिवार प्रणाली के कारण भी महिलाओं की सामाजिक स्थिति निम्न रही है। संयुक्त परिवार प्रणाली में महिलाओं को सम्पत्ति संबंधी अधिकार प्रदान करके इसे सुरक्षित नहीं रखा जा सकता, इसलिये यह जरूरी हो जाता है कि महिला को घर में दबा के रखा जाये, और यह धारणा में विश्वास दिलाया गया कि पुरूष चाहे कितना भी क्रोधी, दुराचारी, पापी क्यों न हो उसे देवता मानना महिला का परम कर्त्तव्य है।
- **बाल – विवाह –** बाल – विवाह प्रथा का अधिक प्रचलन महिलाओं की स्थिति के पतन में महत्वपूर्ण कारक रहा है। छोटी उम्र में विवाह हो जाने के कारण महिलाओं की शिक्षा का स्तर गिरा, फलस्वरूप अज्ञानता बढ़ी, जिससे वह समाज की मौलिक स्थिति को समझकर समाज से अपने अधिकारों की मांग न कर सकी, फलस्वरूप उसे छोटी सी उम्र में ग्रहस्थी की समस्याओं से जूझना पढ़ा।
- **स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की स्थिति –** भारत में महिलाएं अब सभी तरह की गतिविधियों जैसे की शिक्षा, राजनीति, मीडिया, कला व संस्कृति, सेवा क्षेत्र, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आदि में हिस्सा ले रही है। इंदिरा गांधी जिन्होंने 15 वर्षो तक भारत के प्रधानमंत्री के रूप में सेवा की। भारत का संविधान सभी भारतीय महिलाओं को समान अधिकार, राज्य द्वारा कोई भेदभाव नहीं करने, अवसर की समानता, समान कार्य के लिये समान वेतन की गारंटी देता है, इसके अलावा यह महिलाओं और बच्चों के पक्ष में राज्य द्वारा विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति देता है। महिलाओं की गरिमा के लिये अपमान जनक प्रथाओं का परित्याग करने और साथ ही काम की उचित एवं मानवीय परिस्थितियां सुरक्षित करने और प्रसूति सहायता के लिये राज्य द्वारा प्रावधानों को तैयार करने की अनुमति देता है।

भारतीय समाज में स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की सामाजिक स्थिति में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये है। इसका प्रमुख कारण यह है कि महिलाओं ने आज हिन्दू जीवन के परम्परागत सिद्धांतो को केवल अस्वीकार ही नहीं किया बल्कि उसे एक चुनौती भी दी है। वह भी इस रूप में की वे उस सिद्धांतो को परिवर्तित करके रहेंगी, जो उनकी सामाजिक स्थिति गिनाने में सहयोगी सिद्ध होते हैं।

सभी कारकों के प्रभाव से जो परिवर्तन महिलाओं की स्थिति में जो देखने को मिलते उन्हें निम्न लिखित क्षेत्रों में स्पष्ट कर सकते है।

- **महिलाओं में शिक्षा का प्रसार –** महिलाएं जिस तेजी के साथ शिक्षा के क्षेत्र में उन्नति कर रही है इसकी पूर्व कल्पना भी नहीं की गई थी, स्ववंत्रता से पूर्व जबकि न तो शिक्षा की सुविधाएं उपलब्ध थी न ही माता–पिता चाहते थे, उनकी लड़कियां शिक्षा ग्रहण करें इसके विपरीत स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इस क्षेत्र में व्यापक प्रगति हुई है।
- **आर्थिक जीवन में बढ़ती हुई स्वतंत्रता –** कुछ रूढिवादी लोग आज भी महिलाओं की आर्थिक स्ववतंत्रता के विरूद्ध हैं, परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा, औद्योगिकीकरण और नवीन विचारधारा के कारण पुरूषों पर से महिलाओं की आर्थिक निर्भरता लगातार कम होती जा रही है।
- **परिवार अधिकारों में वृद्धि –** जिस महिला को पुरूष अपनी दासी मानता था, वह ही आज उसके सहयोगी और मित्र है। आजकल शिक्षित महिला किसी भी दशा में अपने अधिकारों का बलिदान करके संयुक्त परिवार के द्वारा पोषित नहीं की जा सकती,आज स्त्रियां अपने पारिवारिक अधिकारों के लिये अंतर जातीय विवाहों को प्राथमिकता दे रहे है। परिवार में महिलाओं के इन बढ़ते हुये अधिकारों से कुछ लोग चिंतित हो उठे है। पारिवारिक जीवन के विघिटित हो जाने का उन्हें डर है।
- **राजनैतिक चेतना में वृद्धि –** आज राजनैतिक क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति में जिस प्रकार उन्नति हो रही है और यह जिस तेजी से उंची उठ रही है, वह एक आश्चर्य का विषय है।
- **सामाजिक जागरूकता –** स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महिलाओं के सामाजिक जीवन में काफी परिवर्तन हुआ। आज उसका सामाजिक जीवन में काफी परिवर्तन हुये है। आज उसका सामाजिक जीवन स्वतंत्रता पूर्व के सामाजिक जीवन से बिल्कुल भिन्न है। आज उन परिवारों में भी स्त्रियां खुली हवा में सांस ले रही है। जहां कुछ वर्ष पूर्व तक महिलाओं को पर्दे में रहना जरूरी था।
- **अफलाकन –** अफलाकन ने लिखा है कि समाज में नारी का स्थान व महत्व क्या है? वही जो पुरूष का है न कम न अधिक। महिला व पुरूष दोनों रथ के पहियों के समान है। यदि एक कमजोर और घटिया हुआ तो समाज का रथ निर्विघ्न आगे नहीं बढ सकता। महिला और पुरूष नभ में उड़ने वाले पक्षी के पंख समान है यदि एक पंख छोटा और अषक्त हुआ तो पक्षी नभ में विचरण नहीं कर सकता।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. एम.एम. लावानिया, शशि प्रभा जैन – भारतीय सामाजिक व्यवस्था।
2. आर.सी. मिश्रा – टू वर्डस जेन्डर इक्यूलिटी।
3. पृथी राजकुमार, रामेश्वरी देवी – स्टेटस एण्ड पॉजीशन ऑफ वूमन।
4. डॉ. डी.एस. बघेल – भारतीय समाज।
5. के. एम. पानीकर – हिन्दू समाज – निर्णय के द्वार पर।

****

Impact Of Job Stress On Performance Of Employees- A Study Of Government Organizations In Jhalawar City

Prof. N. S. Rao* Perry Jain**

Abstract - "Being in control of your life and having realistic expectations about your day-to-day challenges are the keys to stress management, which is perhaps the most important ingredient to living a happy, healthy and rewarding life ."

Marilu Henner

In today's scenario job plays a vital role in everyone's life. Even a slight element of Stress in the job truly has an effect on the efficiency and effectiveness of an individual and because of that, job stress has become an integral element of each and every aspect of life whether it is related to office or home. In the era of globalization and privatization, the competition has been intensifying day by day, due to which job stress is nowadays, a very common word in the employees' dictionary. We cannot say that stress only has negative effects but stress has positive effect also. Stress not only affects the employees but it has an impact on employer also.

The purpose behind publishing this paper is to analyze the impact of job stress on the performance of the employees of various government organizations of Jhalawar city including colleges, banks, offices etc.

Objective of the study - A wide range of research has been conducted in the area of job stress and its effect on the job performance of employees. The purpose of this paper is to deeply study the area of job stress and especially its effect on performance and satisfaction level of the employees. And also the various divers which are responsible for causing stress among employees.. With this attempt the paper also provide the suggestions on how to remove the stress and increase the performance of employees.

Introduction - Halkos and Bousinakis, 2010 said, " Job stress from the past many years seen as an unpleasant emotional state of affairs which an worker expertise once the necessity of work related or not connected can't be counter balance with the power to resolve them."

The reason for employees job stress is the different varieties of work situations which become more difficult when the employees have the feeling of insecurity and enjoy less or no support from their supervisors and colleagues.

Types of Stress - There are different forms of stress and people experience it in different forms for different reasons and people reactions depends on how they perceive the various situations. If a person's read the situations adversely or in negative form he/she will seemingly feel **Distressed-** overwhelmed, demoralized.

And when the person reads the situation in positive form then it is known as **Eustress**.

Causes of Stress -

The most common causes because of which people fall under stress are put into three categories:

1. The disturbing result of change.
2. The intense feeling of challenging external force.
3. The sensation that they missing their personal control.

Factors responsible for Job Stress - Various factors which are responsible for the stress are categorized on the basis of work contents in different categories, listed below:

1. Job Contents
2. Work Load
3. Working hours
4. Career Development, Status and Pay
5. Role within the Company
6. Interpersonal Relationships
7. Organizational Culture
8. Home-Work Interface

Effects of Stress on Employees and on Organization -

Effect of stress on the employees - The effects of stress can be seen different on different employees. Because of stress the behavior of the employees becomes abnormal which also have an effect on the physical and mental conditions of the employees. When the employee is under stress they are not able to maintain a healthy balance between their work and personal life. The various effects of stress on employees are:

1. Employees become anxious and short-tempered.
2. Employees not being able to concentrate on their work.
3. Poor decision making.
4. Employees do not enjoy their work and feel less committed to their work.
5. Insomnia.
6. Suffering from various health problems like -

*Dean and Director, F.M.S, J.R.N.R.V.N. (Raj.) INDIA
**Research Scholar, Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA

Effect of stress on the organization - If large numbers of employees are under stress in the organization then it will definitely affect the performance of the organization.

1. Increase in the rate of absenteeism of employees.
2. Lower level of commitment towards work.
3. Higher level of turnover within the organization.
4. Decrease in the productivity and performance.
5. Increase in rate of accidents and insecure working environment or conditions.
6. Various complaints from the clients.

Review of literature - According to **Arnold and Feldman (2000),** "Stress is the reaction which an individual shows towards new and frightening situations and factors which individual faces in their working environment."

Stamper and Johlke, 2003 was of the opinion that employees stress can be increased and reduced only through the support of management.

Rose 2003 was of the opinion that employees desire of better performance has been diminished due to employees propensity towards elevated level of stress concerning time and working for longing hours.

Selye, 1956 describes stress as various reactions which an individual shows towards the various environmental factors which affect the individual performance.

From the point of view of **Rose, 2003** one can infer that a considerable average level of stress is found in most of the organizations at each level of management having an impact on employees job performance.

Methodology - My study is based on the survey of 50 employees of the different government organizations (Colleges, Banks, offices) in Jhalawar city. The survey is done and information is collected with the help of questionnaire which shows the opinion of the employees regarding job stress and its impact on their performance and satisfaction with their job and also tender suggestion on how to remove stress from the job by adopting the various strategies and technique to satisfy their employees and increase the productivity and performance of the employees and to make the work culture and environment of the organization healthy.

Analysis - The data collected was analyzed and discussed in following:

1. All the employees which are under study respond that 70 percent of employees are under stress and only 30 percent of employees are stress free in their job.
2. From above we found that maximum number of employees is under stress. The various reasons for stress vary from person to person. From the graph 2 it is clear that reason for stress of maximum number of employees is salary, 22 percent of employees say they are under stress because of their working environment, 14 percent of employees are under stress because of their job task/target, 10 percent of employees say they have too much of work load and 10 percent employees are under stress because of their colleagues.
3. Stress affects the mental and physical behavior of the employees. 44 percent of employees suffered from stress indicate decrement in their performance. 20 percent feel there is a declining motivation factor in their job, 16 percent employees were of the opinion that they have lack of concentration , 12 percent employees feel that it impacts turnover of the organization, 4 percent of employees suggested that stress increases the level of absenteeism and 4 percent feel that their decision making power decreases.
4. As stress is increasing day by day among the employees it becomes very necessary to organize various stress reliving program for the employees to make the employees stress free. From the graph 5 it is clear that 14 percent of employees strongly agree that their organizations organize such programs for them on a regular basis, 30 percent feel that company is doing enough to remove the level of stress whereas 32 percent employees showed neutral behavior towards this question, 18 percent employees feel no need of such programs to be organized by their organization and 6 percent employees strongly feel that the organization completely ignores the need of such programs.
5. Various strategies and methods are adopted for minimizing the job stress among employees. When in taking survey of selected organization 46 percent of employees were of the opinion that improving the organization culture is the strategy adopted for minimizing the job stress among employees and other 20 percent is in favor of implementing various stress management program, 16 percent suggest that their organization should change their work schedule while another 10 percent feel stress as their work design has been changed, only 4 percent is in favor of strategy supervising the employees.
6. After taking survey of selected organizations my observation on employees after implementing stress management program is that 22 percent of employees say their job satisfaction level increases multiple times after implementation of stress removing programs, 16 percent employees feel there is gradual increase in their performance, 8 percent employees admitted they are nowadays less absent from their job, 6 percent employees are in favor of lack of burnout and 48 percent employees are positive towards all the above positivity in them.
7. As it very common perception that sharing your internal feelings with other decreases the stress and you feel comfortable and very light. Same question I asked to the employees, 64 percent employees say they did not share their stress with others and 36 percent employees say yes to this question.
8. Employee's satisfaction with the job is very important for the employer as well as for the organization. If employees are not satisfied they leave the job and employer is not able to retain the talented and intelligent

employees in the organization because of which the performance also decreases. After asking this to the employees 60 percent employees showed neutral reaction, 8 percent are highly satisfied, 22 percent are satisfied, 8 percent employees are dissatisfied and 2 percent employees are highly dissatisfied with their job.

10. It is very important within the organization that work load and responsibilities are allocated fairly and equally to satisfy the employees and to make the employees motivated to perform better with consistency and constantly. Within the organization under study 60 percent employees agreed about work load and responsibility being distributed fairly and equally, 28 employees responded no and 12 percent employees are neutral to this question.
11. In today's world it has become very necessary for the employees to have job security, job security is such that the employees have low chance of being unemployed. From the graph 11 it is very clear that 58 percent employees have their job security, 28 percent employees say they do not know whether their job is secured or not and 14 percent employees feel their job is not secure, they have high chance of getting unemployed.
12. Employees working environment play a significant role in reducing the stress. If there is positive working environment less number of employees are under stress because they get positive feelings from the environment. On asking this to the employees of 74 percent employees say they are satisfied with their environment and 26 percent employees say no, they are not satisfied.
13. Resolving the existing conflicts is as important as paying salary to the employees. If conflicts exist among the employees their performance decreases, their motivation to work hard gets reduced and overall the productivity decreases and this all depends on the way in which conflicts are resolved. 58 percent employees say they are satisfied with the way in which conflicts are resolved, 32 percent employees are not in that favor and 10 percent employees are neutral.

Findings -

1. As the level of stress increases among the employees their performance decreases so we can say that there is an inverse relationship between the job stress and the job performance.
2. Within the organization under study most of the employees are under stress.
3. A major reason behind their stress is salary and the working environment, after that job task and work load and at last is their colleagues.
4. Stress affects the performance of the employees, motivation, decision making power of the employees get poor, they show lack of concentration on their job, they and show abseentism from the job.
5. Times to time employees are benefited by organizing various stress reliving program, so that employees get out of stress and perform better.
6. Different strategies and methods are adopted by the organization for reliving the stress, which depends on the level and type of stress employed suffered from.
7. After implementing various strategies and methods drastic changes has been seen in the behavior and performance of the employees.
8. Employees are satisfied because they have their job security, have proper working environment to work in, roles and responsibility are equally and fairly allocated and most important the employer way of resolving the conflicts and stress among the employees.

Suggestions of removing stress from the job - My purpose behind publishing this paper is to find out the relationship between job stress and performance of the employees. My suggestions through which the employer can reduce the job stress and increases the performance of the employees are-

1. Redesigning the job and reduces the employees feelings of underestimate.
2. Reduces the employee's fear of joblessness.
3. Providing better work-home flexibility.
4. Ensuring the employees about his/her economic instability.
5. By changing organizational policies by developing better support system, decision making pathway, by improving team work, working environment, by providing the feeling of importance in the team etc.
6. By quarterly rewarding employees which increases the morale and motivate the employees.
7. By providing better career development opportunities.
8. By time to time redesigning the job of the employees and setting goal for them to achieve
9. Employees must prioritize their priority.
10. Focusing on the job by doing one work at one time.

Conclusion - On the basis of the survey conducted it was found that most of the employees are under stress, main reason behind this is their salary and working environment which effect the performance of the employees so we can conclude that there is an inverse relationship between job stress and employees performance. It is not possible for anyone to completely remove stress from the job. So therefore the organization time to time organizes various stress relieving program by using various methods and strategies and employees are satisfied with that.

So the conclusion from the study is that -

- Most of the employees are under stress.
- Employees performance decreases as level of stress increases.
- Employees are satisfied with their job because time to time stress relieving program is organized by the organization.

References :-

1. http://iieom.org/ieom2014/pdfs/516.pdf
2. http://jbsq.org/wp-content/uploads/2012/03/March-2012-D.pdf
3. globaljournals.org/GJMBR_Volume11/1-Impact-of-Stress-on-Employees-Job-Performance.pdf

4. Bashir, Asad 2007, Employees' Stress and Impact on Their Impact on their performance, First Proceedings of International Conference on Business and Technology, Pages 156-161, Iraq University, Islamabad.
5. Arnold, H.J and Feldman, D.C (2000).Handbook of psychology, Industrial and Organizational psychology, p 304
6. Kahn, R. L., Wolfe, D. M., Quinn, R. P., Snoek, J. D., & Rosenthal, R. A. (1964). Organizational stress: Studies in role conflict and ambiguity. New York: Wiley

Table 1 -
Showing percentage of employees under stress

S.No	Type	No. of respondent	Percentage
1.	Yes	35	70
2.	No	15	30

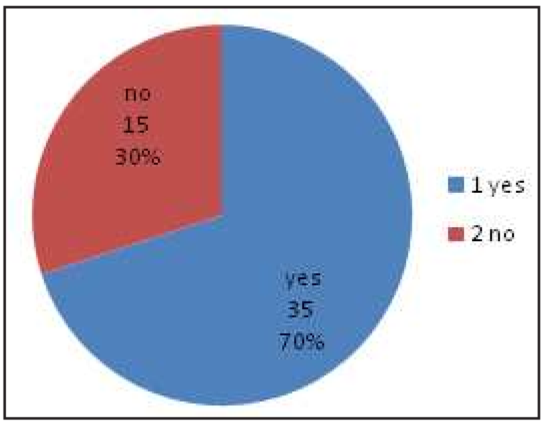

Graph 1

Table 2
Showing Reasons of Stress

S.No	Reasons for Stress	No. of respondent	Percentage
1.	Salary	21	42
2.	Job task	7	14
3.	Work environment	11	22
4.	Colleagues	5	10
5.	Work load	6	12

Graph 2 (See in the last page)

Table 3 - Showing attributes of stress

S.No	Attributes of stress	No. of respondent	Percentage
1.	Communication gap	8	16
2.	Lack of skill	2	4
3.	Work life imbalance	20	40
4.	Work environment	10	20
5.	Unmatched expectation	3	6
6.	Economic status	4	8
7.	Resource inadequacy	3	6

Graph 3 (See in the last page)

Table 4 - Showing effect of stress on job satisfaction

S.No	Effect of stress on job satisfaction	No. of respondent	Percentage
1.	Decrease in performance	22	44
2.	Increase in level of absenteeism	2	4
3.	Turnover	6	12
4.	Poor decision making	2	4
5.	Lack of concentration	8	16
6.	Burnout	0	0
7.	Decrease in motivation	10	20

Graph 4 (See in the last page)

Table 5
Does organization organize stress reliving program

S.No	Type	No. of Respondents	Percentage
1.	Strongly agree	7	14
2.	Agree	15	30
3.	Neutral	16	32
4.	Disagree	9	18
5.	Strongly disagree	3	6

Graph 5 (See in the last page)

Table 6
Strategies for minimizing job stress

S.No	Strategies for minimizing job stress	No. of Respondents	Percentage
1.	Change in work design	5	10
2.	Change in work schedule	8	16
3.	Improving organization culture	23	46
4.	Implementing various stress management program	10	20
5.	Supervising the employees	4	8

Table 7 - Observation after implementing stress management program

S.No	Observations	No. of respondents	Percentage
1.	Increase in job satisfaction	11	22
2.	Increase in performance	8	16
3.	Lack of abseentism	5	10
4.	Lack of burnout	3	6
5.	All of the above	23	46

Graph 7 (See in the last page)

Table 8

Share your stress with coworkers

S.No	Share stress with coworkers	No. of respondents	Percentage
1.	Yes	18	36
2.	No	32	64
3.	Neutral	0	0

Graph 8 (See in the last page)

Table 9

Level of satisfaction with job

S.No	Level of satisfaction with job	No. of Respondents	Percentage
1.	Highly Satisfied	4	8
2.	Satisfied	11	22
3.	Neutral	30	60
4.	Dissatisfied	4	8
5.	Highly Dissatisfied	1	2

Graph 9 (See in the last page)

Table 10

Work load and responsibility allocated fairly and equally

S.No	Type	No. of Respondents	Percentage
1.	Yes	30	60
2.	No	14	28
3.	Neutral	6	12

Graph 10 (See in the last page)

Table 11

Attitude towards current Job security

S.No	Attitude towards current job security	No. of Respondents	Percentage
1.	Satisfied	29	58
2.	Neutral	14	28
3.	Dissatisfied	7	14

Graph 11 (See in the last page)

Table 12

Satisfaction with working environment

S.No	Satisfaction with working environment	No. of Respondents	Percentage
1.	Yes	37	74
2.	No	13	26
3.	Can't say	0	0

Graph 12 (See in the last page)

Table 13 - Satisfaction with the way in which conflicts are resolved

S.No	Type	No. of Respondents	Percentage
1.	Yes	29	58
2.	No	16	32
3.	Can't Say	5	10

Graph 13 (See in the last page)

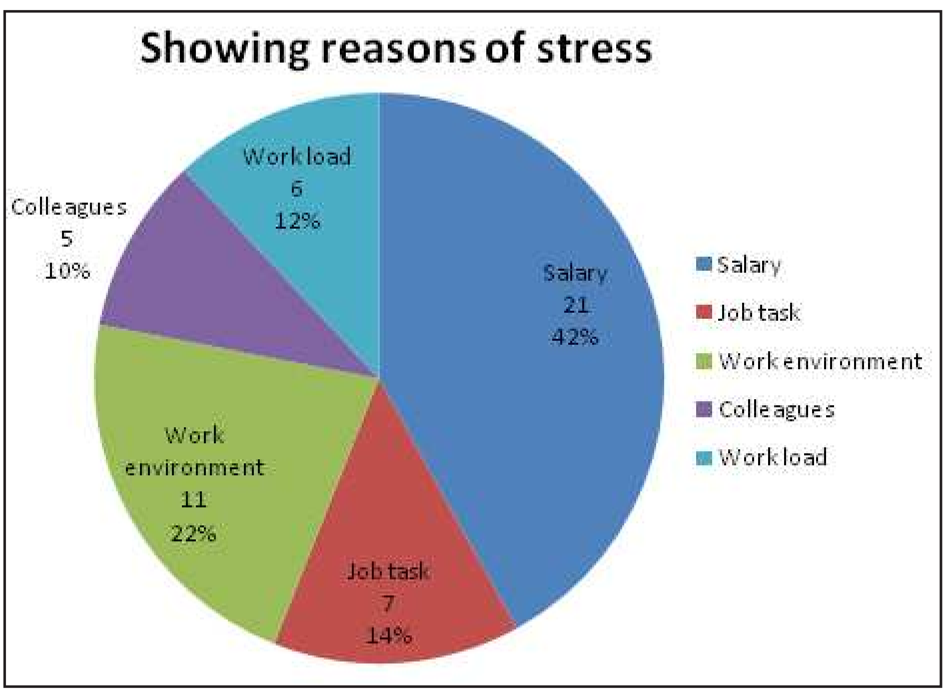

Graph 2

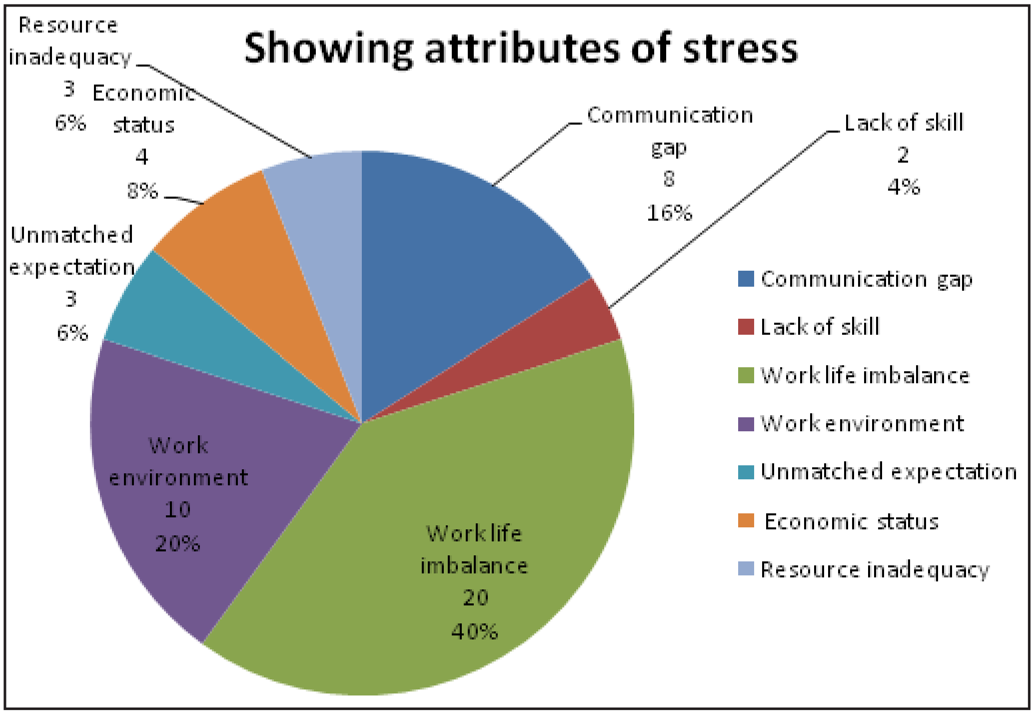

Graph 3

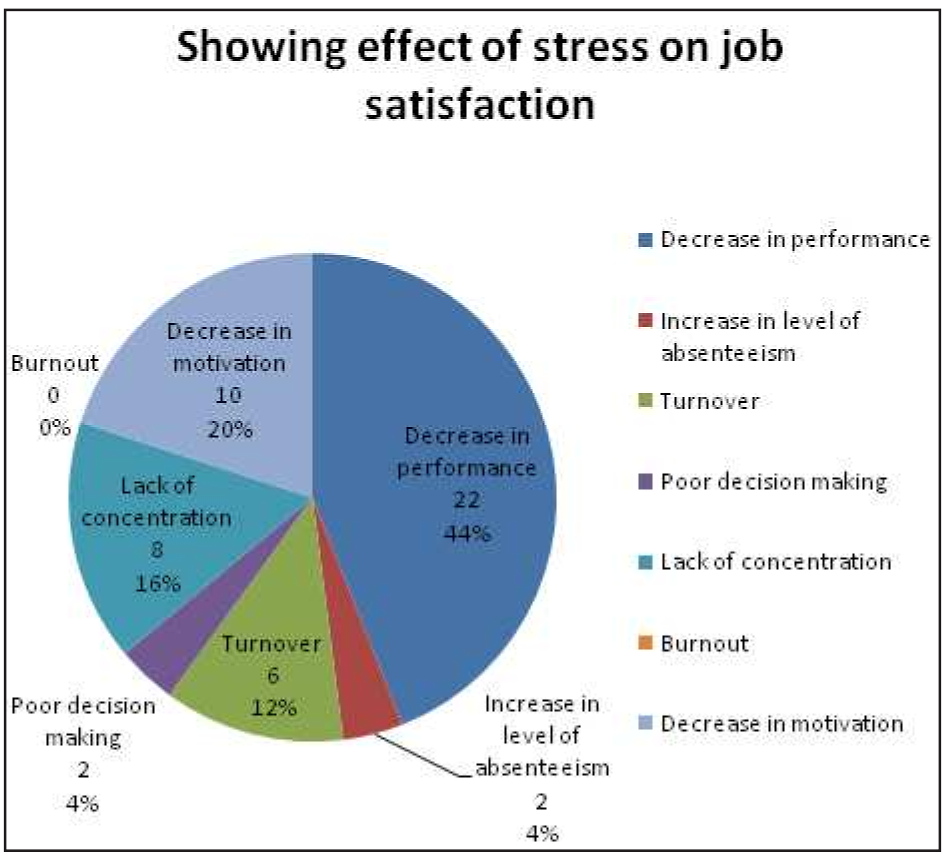

Graph 4

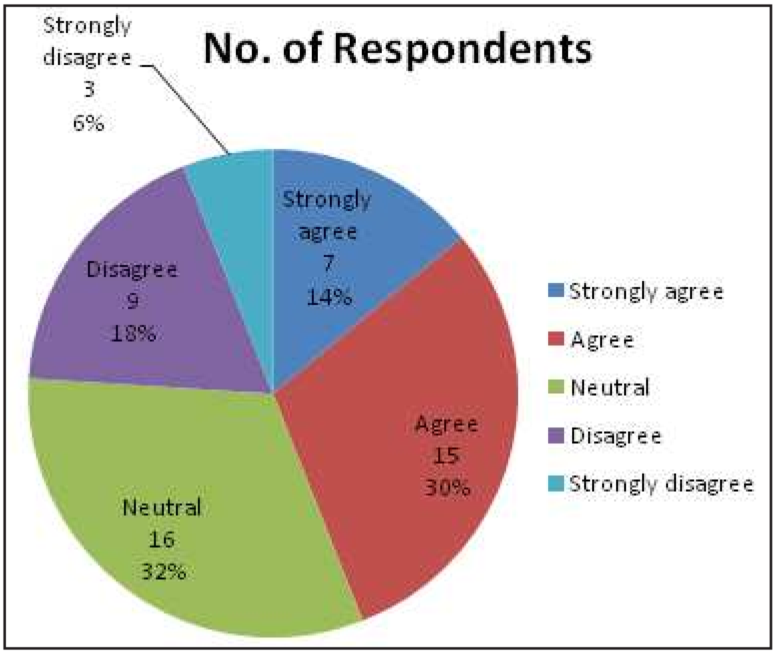

Graph 5

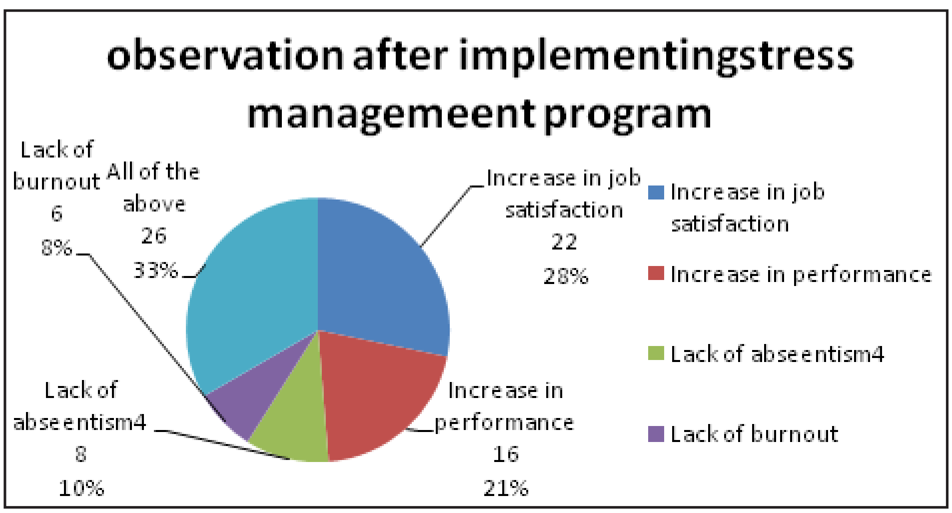

Graph 7

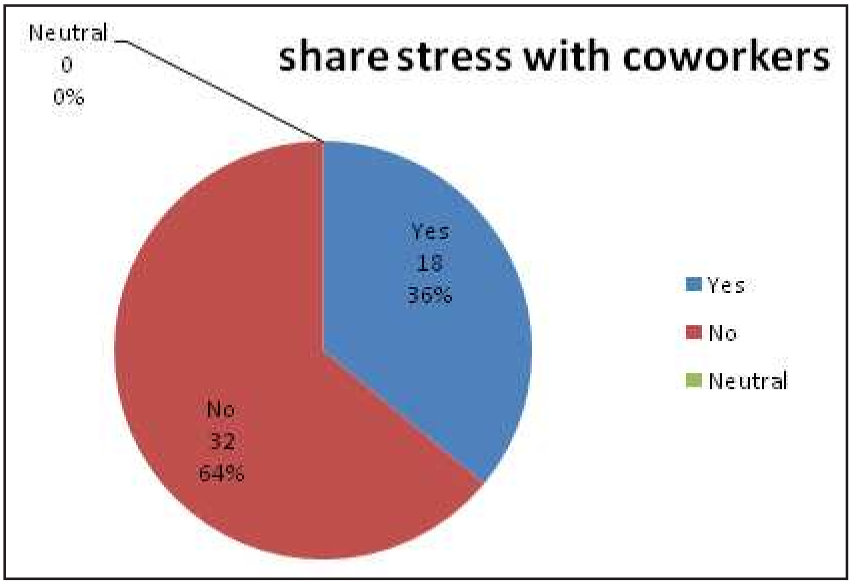

Graph 8

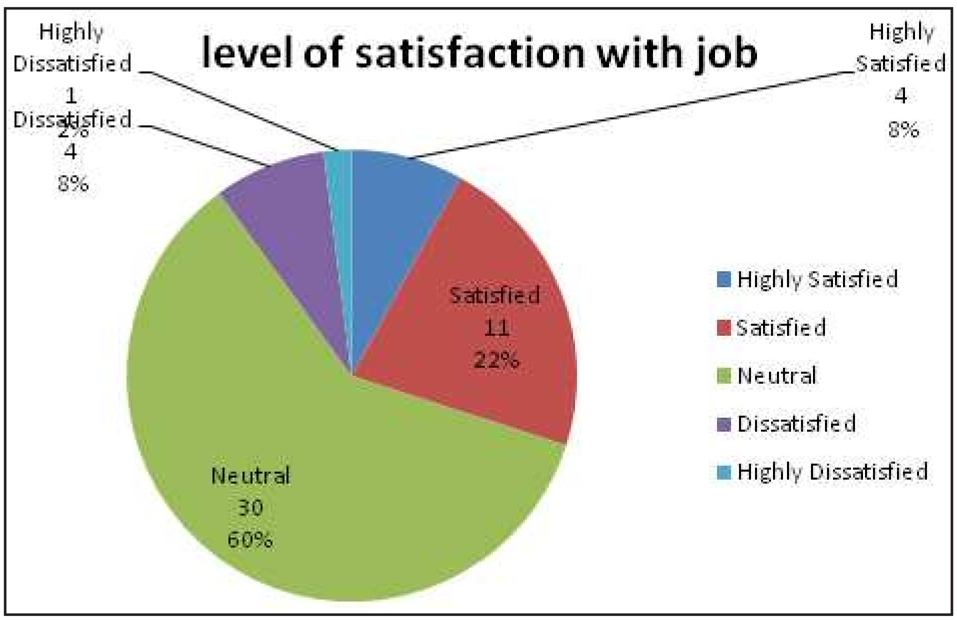

Graph 9

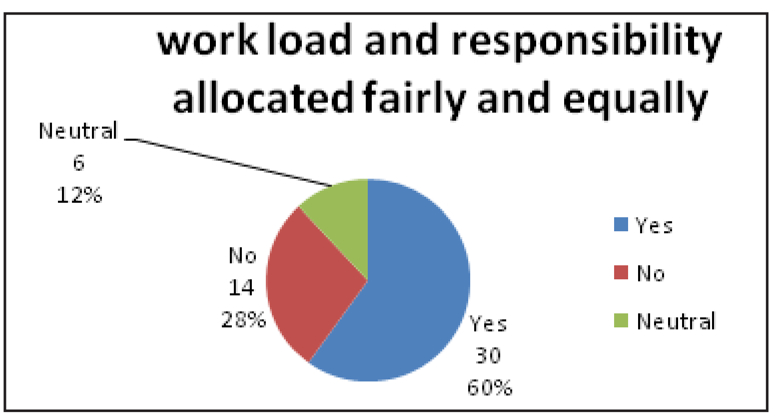

Graph 10

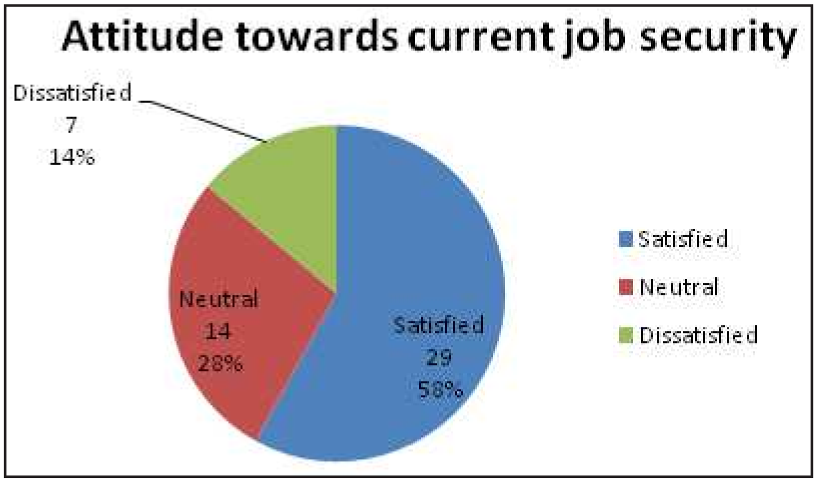

Graph 11

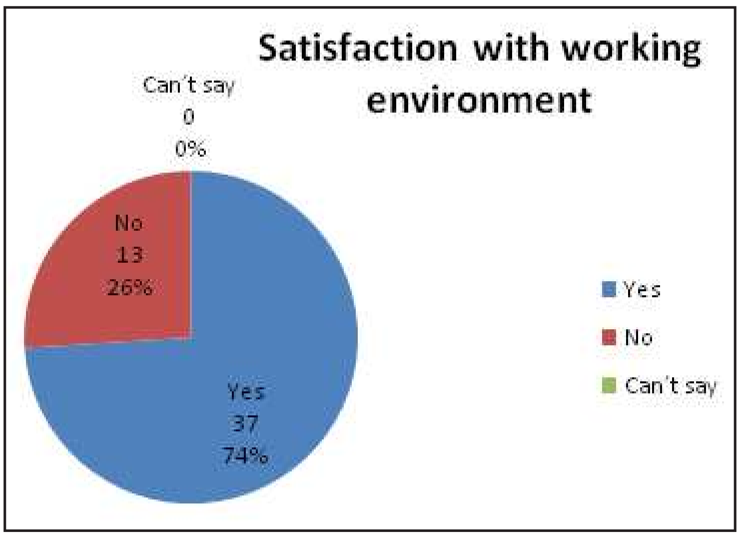

Graph 12

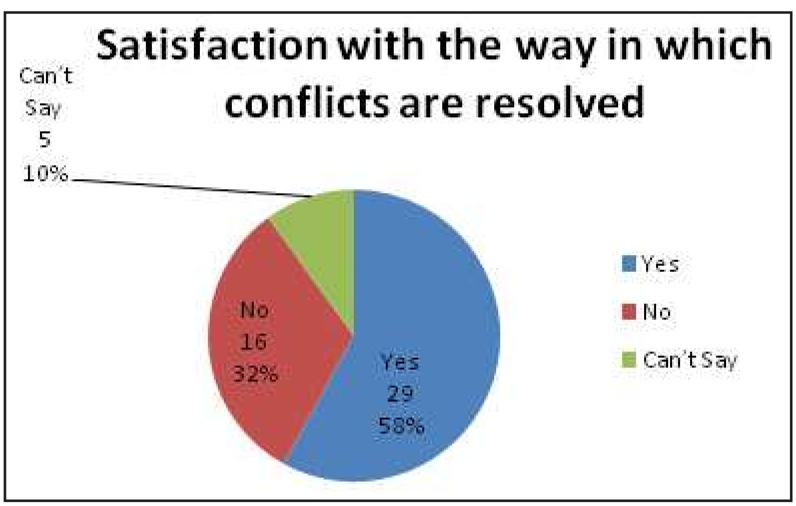

Graph 13

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

धार जिले में मनरेगा का क्रियान्वयन और सृजित मानव दिवसों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. पी. गौतम * महेश निगम **

शोध सारांश – स्वतंत्रता पश्चात् भारत में ग्रामीण बेरोजगारों को ले कर काफी चर्चा होती है, परन्तु भारत और राज्य शासन द्धारा नई–नई योजनाएं तैयार कर रोजगार देने का कई वर्षो से प्रयास किया जा रहा हैं, और इस प्रकार की योजनाएं फाईलों एवं कार्यालयों की शोभा बन कर रह जाती हैं। भारत सरकार द्धारा बेरोजगारी को देखते हुऐ हितग्राही मूलक और रोजगार मूलक योजना प्रारम्भ की गयी हैं, जो कि सम्पूर्ण देश में लागू करते हुऐं मध्यप्रदेश राज्य में भी लागू की गयी, तथा साथ ही धार जिले में भी प्रारम्भ कि गयी हैं। इस योजना को लागू करना एक भुखमरी, बेरोजगारी और पलायन को रोकना और बेरोजगार परिवारों को रोजगार देने के उद्देश्य से लागू की गई, जिससे कि ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारों को 100 दिनो का रोजगार देने तथा हितग्राहियों को रोजगार देने के साथ–साथ उनकी आर्थिक स्थिति में भी सुधारात्मक प्रयास किया जा रहा हैं। संचालित योजना में धार जिले में मनरेगा का क्रियान्वयन और सृजित मानव दिवसों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन करने के लिए चयन किया गया। अध्ययन हेतु जानकारी जिला पंचायत, जनपद पंचायत एवं जिला सांख्यिकिय विभाग से प्राप्त कि गई हैं।

प्रस्तावना – हमारे देश में संचालित रोजगार मूलक और हितग्राही मूलक योजना के प्रभावों से ग्रामीण क्षेत्र के बेरोजगार परिवारों को रोजगार के अवसर मिल रहे थे, किन्तु रोजगार चाहने वालों सभी परिवारों की आजीविका की सुनिश्चितता का अभाव सा बना ही रहा। इन्हीं अभावों को दूर करने की दृष्टि से कारगार समाधान ढूंढने के लिए विगत वर्षो से शासन द्धारा विचार किया जा रहा था। सरकार को आवश्यकता थी की इस सम्बंध में कानून बनाया जाने और उस योजना को सम्पूर्ण देश में लागू किया जावें। ग्रामीण बेरोजगारी एवं पलायन को कम करने की समस्या के निदान के प्रयास में वर्ष 2005 में भारत सरकार द्धारा 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम–2005' पारित किया गया है। यह कानून केन्द्र सरकार द्धारा अधिसूचित क्षेत्रों में लागू किया गया और अधिसूचना की तारीख के बाद **5** साल के भीतर इसे पूरे देश में लागू कर दिया जाएगा। पहले चरण में इस कानून को देश के 200 जिलों में अधिसूचित किया गया था, जिसमें मध्यप्रदेश राज्य के 18 जिलो में से धार जिला भी अधिसूचित किया गया था। अब यह अधिनियम जम्मू–कश्मीर को छोड़कर पूरे देश में लागू हो गया है। इसके प्रावधानों के अनुरूप वर्तमान में क्रियान्वित की जा रही है। मध्यप्रदेश राज्य में 02 फरवरी 2006 को 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम' लागू की गई है, अभी वर्तमान में इस योजना का नाम बदलकर 'महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना' के नाम से संचालित कि जा रही है। इस योजना से प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि के साथ –साथ रोजगार भी मिला, और महिलाओं के व्यवहार में भी काफी परिवर्तन एवं सम्मान होने लगा है और रोजगार तो मिला ही पर छोटे बड़े निर्माण से जल स्टॉप के कारण जल स्तर में भी कभी सुधार हुआ जिससे कृषि भूमि असिंचित थी पर इस योजना से पर्याप्त मात्रा में सिंचित हो गई है। इसके कारण बेरोजगारों को पर्याप्त मात्रा में रोजगार मिला है, और प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि हुई है।

अध्ययन का उद्देश्य – अध्ययन का उद्देश्य जिले में मनरेगा का क्रियान्वयन यह जानना हैं कि–

1. मनरेगा योजनांतर्गत रोजगार की मांग तथा उपलब्ध कराया गया रोजगार की भूमिका का अध्ययन करना।
2. मनरेगा योजनांतर्गत निर्माण कार्यो एवं खर्च की गई वित्तीय स्थिति का मूल्यांकन करना।
3. योजना में कुल लाभार्थियों में से महिलाओं और पुरूषों सृजित मानव दिवसों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. मनरेगा योजना के अंतर्गत बेरोजगारों को दिया गया रोजगार में पुरूषों और महिलाओं के जीवन स्तर एवं सामाजिक–आर्थिक स्थिति पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना हैं।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ – किसी विषय या सामाजिक घटनाओं के शोध अध्ययन में परिकल्पनाएँ अर्थात् पूर्व चिन्तन करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिस परिकल्पना का निर्माण उसका प्रयोग कर प्राथमिक समंक एवं द्धितीयक समंक शोध पद्धति का एक महत्वपूर्ण चरण है। समस्या के अध्ययन, समस्या के कारण और परिणाम के बारे में पूर्व चिन्तन कर लेने से शोद्यार्थी लक्ष्य से भटकने से बच जाता है। क्योंकि परिकल्पनाऍ उसकी शोध यात्रा को सही दिशा में निर्देशित करती है। शोध कार्य मुख्यत: निम्न परिकल्पनाओं पर आधारित है–

1. मनरेगा योजनांतर्गत रोजगार की मांग तथा उपलब्ध कराया गया रोजगार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं?
2. मनरेगा योजनांतर्गत निर्माण कार्यो एवं खर्च की गई वित्तीय स्थिति में पहले की अपेक्षा काफी सुधार हुआ हैं?
3. योजना में कुल लाभार्थियों में से महिलाओं और पुरूषों सृजित मानव दिवसों की तुलना में काफी सुधार हुआ हैं?

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी, जिला - बड़वानी (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, खातेगांव, जिला - देवास (म.प्र.) भारत

4. मनरेगा योजना के अंतर्गत बेरोजगारों को दिए गए रोजगार में पुरूषों और महिलाओं के जीवन स्तर एवं सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर पड़ने वाले प्रभावों में काफी सुधार हुआ हैं?

अध्ययन की पद्धति - शोध कार्य प्राथमिक एवं द्वितीयक समकों पर आधारित है। यह जानकारी पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग (जिला पंचायत) से प्राप्त की गई है तथा जिला सांख्यिकी कार्यालय एवं पत्र पत्रिकाओं आदि से प्राप्त की गई है, उनका उपयोग इस शोध में आवश्यकतानुसार किया गया। जिला पंचायत के अधिकारियों, विकासखण्ड के अधिकारियों से सीधी जानकारियाँ प्राप्त की गई हैं,

इस विषय को सरल एवं गंभीरता पूर्वक तथ्यों का पूर्ण अध्ययन के उद्देश्य से इसके क्षेत्र को सीमित रखा जायेगा। इस हेतु एक इकाई के रूप में महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी स्कीम का ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में योगदान के बारे में बताया जायेगा तथा उसके बारे में आलोचनात्मक अध्ययन भी पांच वर्षो के आधार पर किया जायेगा, एवं इस शोध में महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी स्कीम का क्रियान्वयन और सृजित मानव दिवसों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया हैं।

जिला धार की सामान्य जानकारी एवं मनरेगा की गतिविधियां - मध्य प्रदेश के कुल 3,08,252 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल जिसमें से धार जिले का क्षेत्रफल 8,153 वर्ग किलोमीटर हैं। जनगणना 2011 के अनुसार मध्य प्रदेश की कुल 72,626,809 जनसंख्या जिसमें से जिले की कुल 2,185,793 जनसंख्या है, जिसमें पुरूषों 1,112,725 और महिलाओं 1,073,068 की जनसंख्या है। जिले में कुल जनसंख्या में से 18.90 प्रतिशत शहरी क्षेत्र और 81.10 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है जो कि लगभग 80 प्रतिशत कृषि पर निर्भर है, और बाकी के कृषिहर मजदूर और बेरोजगार है तथा कुल 54.5 प्रतिशत जनसंख्या का अनुसूचित जनजाति और 6.5 प्रतिशत जनसंख्या का अनुसूचित जाति के हैं। इस जिले में 1474 ग्राम हैं जिसमें से 761 ग्राम पंचायते तथा 13 विकासखण्ड हैं। जिले में तहसील कार्यालय 8 हैं (सन्दर्भ- जनगणना,भारत,2011)। इस जिले में अनुसूचित जनजाति व्यक्ति अधिकतर निवास करते हैं, उनकी आर्थिक-सामाजिक जीवन स्तर ठीक न होने के कारण, शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच अमीर और गरीब के बीच आय और उपभोग के स्तर में असमानता स्पष्ट दिखाई देती हैं। इस प्रकार की बेरोजगारी जिले में मालवा के पश्चिमी (निमाड़) क्षेत्र में अधिक पाई जाती है। जिसका कारण है कि कृषि जमीन अधिकतर कंकरीली मिट्टी, लाल मिट्टी तथा तल चट्टानी के रूप में चट्टानी पाई जाती हैं, और जिससे फसल उपजाऊ कम होती है, जिसके कारण बेरोजगारी अधिकतर पाई जाती है तथा रोजगार तलाशते हुऐं पास के राज्यों में पलायन करने को मजबूर हो जाते हैं। जब से महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना प्रारम्भ की गई तब से धार जिले में भी बेरोजगारों को रोजगार देने एवं पलायन को रोकना सरकार ने आवश्यक समझा और योजना प्रारम्भ के समय से रोजगार देने के लिए कुल पंजीकृत परिवारों की संख्या 366697 दर्ज की गई। जिसमें से पंजीकृत संख्या कुल 352017 जॉबकार्ड वितरित किया गया, वितरित किये गए जॉबकार्डो की संख्या में से 90261 अनुसूचित जाति परिवार, 156574 अनुसूचित जनजाति के परिवारों तथा 105182 अन्य परिवारों को भी साथ ही वितरित किया गया हैं। जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार शासन के सर्वे के अनुसार 144089 अभी भी निवास करते हैं। मध्य प्रदेश शासन द्वारा जिले में महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना के द्वारा बेरोजगारों को रोजगार देने के लिए प्रारम्भ की गयी हैं, जो रोजगार प्रदाय करने में जिले कितनी अहम भूमिका निभा रही हैं।

जिले में रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की स्थिति - मनरेगा के अंतर्गत जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले कुल 144089 परिवारों में से रोजगार की मांग की गयी तथा साथ ही उपलब्ध भी कराया गया परिवारों को रोजगार, इसके अनुसार सम्पूर्ण जिले में परिवारों में से वयस्क सदस्यों कि कुल मांग संख्या के अनुरूप शत् प्रतिशत रोजगार उपलब्ध कराया गया है जो निम्न तालिका के अनुसार है :-

तालिका क्रमांक-1 व ग्राफ (देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका में मनरेगा के अंतर्गत बेरोजगार परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की स्थिति को प्रदर्शित किया गया हैं। योजना प्रारम्भ के वर्ष 2006-07 में रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 199543 और उसमें से रोजगार उपलब्ध कराये गये वयस्कों की संख्या 788880 थी, जो बढ़कर वर्ष 2007-08 में रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 202133 और उसमे से रोजगार उपलब्ध कराये गये वयस्कों की संख्या 777705 घटकर रह गई है, इन दो वर्षो में रोजगार की मांग करने वालो एवं उपलब्ध कराये परिवारों और वयस्को में कोई वृद्धि या कमी अंतर ज्यादा नहीं रहा है। वर्ष 2008-09 में घटकर रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 185978 और उसमें से रोजगार उपलब्ध कराये गये वयस्कों की संख्या 598183 बेरोजगारी रह गयी, इस प्रकार वर्ष 2009-10 में घटकर रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 172912 और उसमें से रोजगार उपलब्ध कराये गये वयस्कों की संख्या 558290, वर्ष 2010-11 में घटकर रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 168212 और उसमें से रोजगार उपलब्ध कराये गये वयस्कों की संख्या 595670, वर्ष 2011-12 में घटकर रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 176319 और उसमे से रोजगार उपलब्ध कराया गया वयस्कों की संख्या 534972, वर्ष 2012-13 में घटकर रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 149011 और उसमे से रोजगार उपलब्ध कराया गया वयस्कों की संख्या 385098, वर्ष 2013-14 में घटकर रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 113910 और उसमे से रोजगार उपलब्ध कराया गया वयस्कों की संख्या 271002, वर्ष 2014-15 में घटकर रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या 113384 और उसमे से रोजगार उपलब्ध कराये गये वयस्कों की संख्या 280833, बेरोजगारी रह गयी। इन नौ वर्षो में रोजगार की मांग करने वाले परिवारों और वयस्कों संख्या एवं उपलब्ध कराये परिवारो और वयस्कों में कोई वृद्धि या कमी अंतर ज्यादा नहीं रहा है।

मनरेगा योजनांर्तगत यह पता चलता है कि इन नौ वर्षो में रोजगार की मांग करने वाले परिवारों और वयस्कों की संख्या एवं उपलब्ध कराये परिवारों और वयस्कों में कमी आई है परन्तु बेरोजगारों द्वारा रोजगार की मांगों में भी ज्यादातर कमी नहीं आयी है।

तालिका क्रमांक-2 व ग्राफ (देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट होता है कि धार जिले को मनरेगा के अंतर्गत प्राप्त कुल राशि में निरंतर बढ़ती घटती रही है। यहाँ के बेरोजगारों को रोजगार देने के लिए वर्ष 2006-07 में कुल व्यय राशि 13892.30 (लाख में) में से अकुशल श्रमिकों पर कुल व्यय 60.50 प्रतिशत एवं अन्य(मटेरियल और कुशल श्रम) पर कुल व्यय 39.50 प्रतिशत किया गया है। वर्ष 2007-08 में कुल व्यय राशि 20342.98 (लाख में) में से अकुशल श्रमिकों पर कुल व्यय 60.15 प्रतिशत

एवं अन्य(मटेरियल और कुशल श्रम) पर कुल व्यय 39.85 प्रतिशत किया गया है, जो कि वर्ष 2006-07 की कुल व्यय से 46.43 प्रतिशत वृद्धि हुई। वर्ष 2008-09 में कुल व्यय राशि 14443.49 (लाख में) में से अकुशल श्रमिकों पर कुल व्यय 60.62 प्रतिशत एवं अन्य(मटेरियल और कुशल श्रम) पर कुल व्यय 39.38 प्रतिशत किया गया है, जो कि वर्ष 2007-08 की कुल व्यय से 29.00 प्रतिशत कमी हुई। इस प्रकार वर्ष 2009-10 में वृद्धि 7.44 प्रतिशत, वर्ष 2010-11 में कुल वृद्धि 24.90 प्रतिशत, वर्ष 2011-12 में वृद्धि 4.27 प्रतिशत, वर्ष 2012-13 में कमी 21.23 प्रतिशत, वर्ष 2013-14 में कमी 29.40 प्रतिशत और वर्ष 2014-15 में भी 9.66 प्रतिशत की कमी का स्तर रहा है।

जिले में संचालित मध्य प्रदेश शासन द्धारा महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना के अंतर्गत बेरोजगारों को रोजगार देने के उद्देश्य से कार्य प्रारम्भ किया गया। इस योजना में अकुशल श्रमिकों को रोजगार देने के लिए कुल राशि का 60.00 प्रतिशत तथा अन्य (मटेरियल और कुशल श्रम) पर कुल व्यय 40.00 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया था। जिसके अंतर्गत तालिका क्रमांक-2 के अनुसार वर्ष 2007-08, 2009-10, 2010-11 और वर्ष 2011-12 में कुल व्यय में वृद्धि रही है और वर्ष 2008-09, 2012-13, 2013-14 और 2014-15 में कुल व्यय में निरन्तर कमी आई है।

सृजित मानव दिवस में महिलाओं एवं पुरूषों की भागीदारी तालिका क्रमांक-3 **व ग्राफ (देखें अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक - 3 के अनुसार जिले में मनरेगा के अंतर्गत वर्ष 2006-07 से 2014-15 तक रोजगार उपलब्ध कराये गए परिवारों को सृजित मानव दिवस में महिलाओं एवं पुरूषों की भागीदारी में तुलनात्मक अध्ययन करने के उनके मध्य रोजगार के अन्तरों की सार्थकता कि गई है, जो निम्न प्रकार है- **(देखें अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका के अनुसार जिले में मनरेगा के अंतर्गत वर्ष 2006-07 से 2014-15 तक रोजगार उपलब्ध कराये गए परिवारों को सृजित मानव दिवसों में महिलाओं एवं पुरूषों की भागीदारी में सहसम्बन्ध का परिमाण 0.88 है, जो धनात्मक सहसम्बन्ध गुणांक का मान उच्च स्तर का रहा है। टी-परीक्षण से भी पता चलता है कि प्रति वर्ष बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध कराया, जिससे बेरोजगारों की संख्या में काफी सुधार हुआ है, जिसका कारण यह है कि मनरेगा के अंतर्गत निर्माण कार्य जैसे तालाब, स्टॉप डेम, बोरिबंधान डेम,रोड और उपयोजनांतर्गत कपिलधारा कुप, निर्मल वाटिका, सहस्त्रधारा, मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना, कामधेनू, नहर सुधार, ग्रामीण क्रीडांगन, शांतिधाम, भूमि षिल्प, निर्मल नीर एवं वन अधिकार पट्टा प्रदाय और तालाबों पर मत्स्य पालन पट्टे प्रदाय कर स्थाई रूप से शासन द्धारा रोजगार दिया गया।

निष्कर्ष - उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता हैं कि कुछ आंशिक अपवादों को छोड़ कर, एक निश्चित ही महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना से बेरोजगार परिवारों पर काफी प्रभावशील रही हैं, क्योंकि इस योजना के अन्तर्गत बेरोजगार परिवारों को रोजगार दे कर उनके परिवारों की आय में वृद्धि हुई है।

उन ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार परिवारों के व्यक्तियों रोजगार प्राप्त करने में काफी समस्याओं का सामना करना पढ़ता था। जिससे उनका आय का स्त्रोत निम्न स्तर पर था और जिसके कारण अन्य स्थानों पर पलायन करने को मजबूर हो जाते थे, परन्तु महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना से आय और कृषि उत्पादन में भी काफी वृद्धि हुई हैं। योजना के कारण बेरोजगार परिवारों को रोजगार प्राप्त कर आय में वृद्धि होने से जीवन यापन हेतु पलायन करने में बदलाव आया है अर्थात् रोजगार वृद्धि के साथ ही शासन द्धारा स्टापडेम, तालाब, कुंओं आदि छोटे-बड़े पानी के स्टॉपडेम हेतु स्थाई संपत्तियो का निमार्ण कर जमीन के जल स्तर में सुधार हुआ और किसानों को कृषि भूमि के लिए पर्याप्त मात्रा में पानी उपलब्ध होने से कृषि भूमि की भी सिंचाई होने लगी, जिसके कारण बेरोजगार किसानों की आय स्तर में भी काफी सुधार हुआ हैं।

इसके परिणाम स्वरूप रोजगार की मांग करने वाले परिवारों की भी प्रतिवर्ष कमी आई है जैसे-जैसे बेरोजगार परिवारों के व्यक्तियों की आय में वृद्धि होती गई, उसी के आधार पर स्वयं का व्यवसाय एवं कृषि भूमि पर निर्भर होकर अपना आय का मुख्य स्तर हो गया है।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना के अंतर्गत जिले में रोजगार उपलब्ध कराये गए परिवारों को सृजित मानव दिवसों में महिलाओं एवं पुरूषों की भागीदारी में तुलनात्मक अध्ययन करने से स्पष्ट हो गया हैं कि सृजित मानव दिवसों में पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं की भागीदारी ज्यादा रही हैं, जिससे पता चलता है कि बेरोजगार परिवारों के व्यक्तियों में पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं में ज्यादा रूचि हैं। इसी प्रकार शासन द्धारा संचालित योजना से काफी बेरोजगार परिवारों को रोजगार मिला है, जो ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार व्यक्ति, खेतिहर मजदूर और अन्य स्थान पलायन करने से बचे ही नहीं बल्कि क्षेत्र के जमीन का जलस्तर सुधार हुआ और कृषि भूमि बंजर थी, जो आज उपजाऊॅ हो गई। इस प्रकार शासन द्धारा संचालित महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना जिले में बेरोजगार परिवारों को रोजगार देने में उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योजना प्रगति(वार्षिक2007से2014)महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना, जिला पंचायत धार, मध्य प्रदेश।
2. संजय एवं सिंह, ग्रामीण गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम - मणिपुर में मनरेगा के एक अध्ययन, आई.जे.एस.एस.आई., 9 सितम्बर, 2013, 39-43.
3. कर, एक रोजगार गारंटी, महिलाएं एवं चाईल्ड केयर, साप्ताहिक अर्थशास्त्र एवं राजनीति, (43)9, 1 मार्च, 2009,10-13.
4. पाण्डियन एम., रोजगार और भारत एक मूल्यांकन गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, नई दिल्ली, डॉमिनेन्ट प्रकाशन, 2008, 722.
5. पाल एवं काकाली, सतत् ग्रामीण विकास की दिशा में पंचायतों की भूमिका,ग्रामीण विकास और पर्यावरण,दिल्ली,दीप एवं दीप प्रकाशन, 2006.
6. शैलेन्द्र, उभारते शासन प्रतिमान गरीबी उन्मुलन और इक्विटी के लिए इसके निहितार्थ, आनन्द: विभाग रूरल मेनेजमेंट, 2004,182.
7. जामोद एस.एस.,जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, सरकारी समितियों की अंशपूंजी का विवेचनात्मक विश्लेषण, नीमच, नवीन शोध संसार प्रकाशन,2014, 99.
8. मण्डलोई आर.एस., ग्रमीण क्षेत्रों से जनसंख्या के पलायन के कारण: एक अध्ययन, नीमच, नवीन शोध संसार प्रकाशन,2014,116.
9. Home: Official Website of District Administration Dhar
10. hhttp://www.dharzila.panchayat-net
11. hhttp://www.nrega.nic.in/netnrega/home.aspx

रोजगार की मांग और उपलब्ध की स्थिति तालिका क्रमांक-1

वर्ष	रोजगार की मांग करने वाले परिवारों की संख्या	रोजगार उपलब्ध कराये गये परिवारों की संख्या	रोजगार की मांग करने वाले वयस्क सदस्यों की संख्या	रोजगार उपलब्ध हुए वयस्कों की संख्या
2006-07	199543	199543	788880	788880
2007-08	202133	202133	777705	777705
2008-09	185978	185978	598183	598183
2009-10	172912	172912	558290	558290
2010-11	168212	168212	595670	595670
2011-12	176319	176319	534972	534972
2012-13	149011	149011	385098	385098
2013-14	123741	113910	299197	271002
2014-15	126515	113384	320656	280833

(स्त्रोत -विभाग, जिला पंचायत धार)

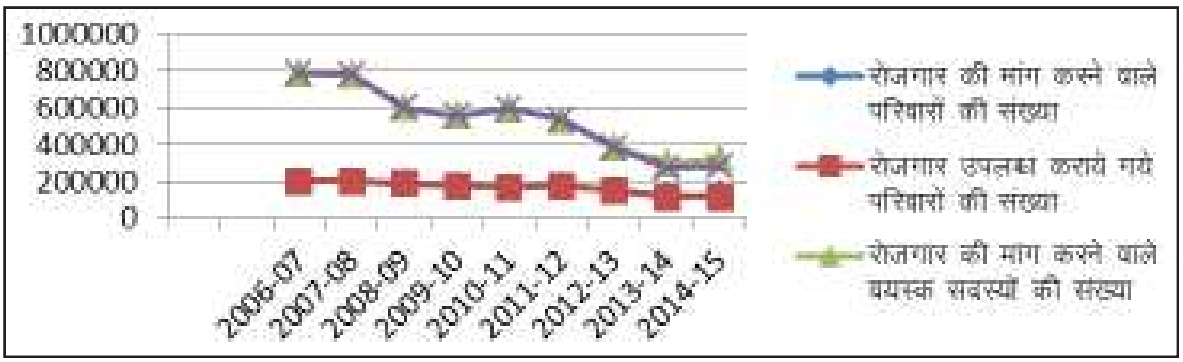

जिले में मनरेगा के अन्तर्गत उपलब्ध कराये गए रोजगार की वित्तीय स्थिति का विश्लेषण -
वित्तीय स्थिति की तालिका क्रमांक-2

वर्ष	वर्ष में कुल उपलब्ध आबंटन (लाख में)	वर्ष में व्यय राशि (लाख में)	वर्ष में व्यय प्रतिशत व्यय	अकुशल श्रम (लाख में)	अकुशल श्रम व्यय प्रतिशत	अन्य (मटेरियल/श्रम व्यय (लाख में)	अन्य (मटेरियल/श्रम) व्यय प्रतिशत
2006-07	18559.96	13892.30	74.85	8,404.84	60.50	5,487.46	39.50
2007-08	16001.75	20342.98	127.13	12,236.30	60.15	8,106.68	39.85
2008-09	23943.16	14443.49	60.32	8,755.64	60.62	5,687.85	39.38
2009-10	22822.34	15517.60	67.99	9,310.56	60.00	6,207.04	40.00
2010-11	25132.43	19381.79	77.15	11,640.70	60.06	7,741.09	39.94
2011-12	25500.80	20209.52	79.25	12,125.71	60.00	8,083.81	40.00
2012-13	17654.33	15918.92	90.17	10,028.92	63.00	5,890.00	37.00
2013-14	12309.88	11238.60	91.30	7,642.25	68.00	3,596.35	32.00
2014-15	11117.79	12136.91	108.26	8356.58	75.25	3779.91	34.00

(स्त्रोत -विभाग, जिला पंचायत धार)

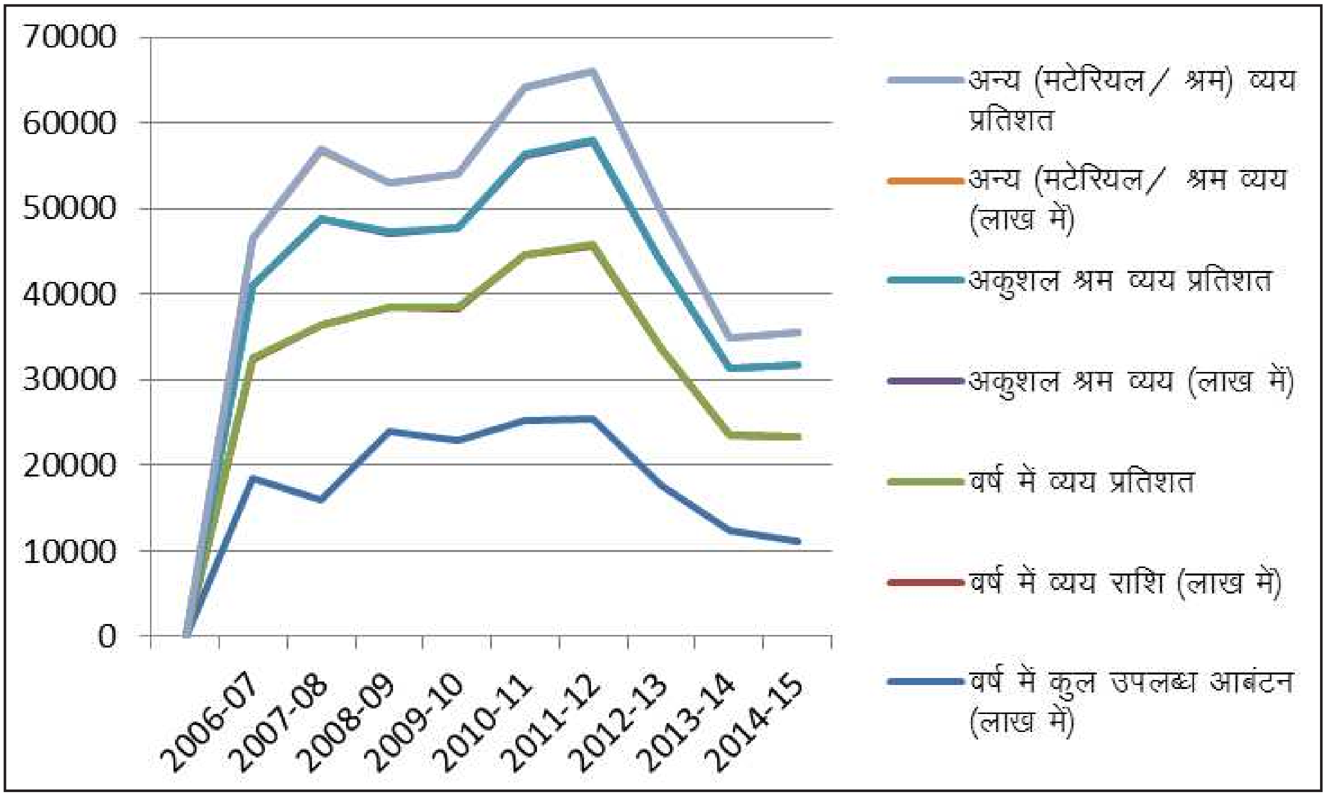

जिले में कुल रोजगार उपलब्ध कराये गए परिवारों में से महिलाओं एवं पुरूषों का सृजित मानव दिवसों की भागीदारी में तुलनात्मक अध्ययन करने पर –

सृजित मानव दिवस में महिलाओं एवं पुरूषों की भागीदारी क्रमांक–3

वर्ष	सृजित मानव दिवस संख्या	सृजित महिला दिवस संख्या	रोजगार सृजन में महिलाओं का प्रतिशत	सृजित पुरूष दिवस संख्या	रोजगार सृजन में पुरूषों का प्रतिशत	100 दिवस का रोजगार उपलब्ध कराये गए परिवारों की संख्या
2006-07	174.38	88.93	**51.00**	85.45	**49.00**	28265
2007-08	188.69	105.67	**56.00**	83.02	**44.00**	62244
2008-09	140.65	72.13	**51.28**	68.52	**48.72**	40522
2009-10	141.15	85.47	**60.55**	55.68	**39.45**	50385
2010-11	142.07	86.66	**61.00**	55.41	**39.00**	52525
2011-12	130.35	78.94	**60.56**	51.41	**39.44**	32790
2012-13	71.49	43.61	**61.00**	27.88	**39.00**	8038
2013-14	54.86	25.24	**46.00**	29.62	**54.00**	11363
2014-15	48.44	23.25	**48.00**	25.19	**52.00**	10271

(स्त्रोत–विभाग, जिला पंचायत धार)

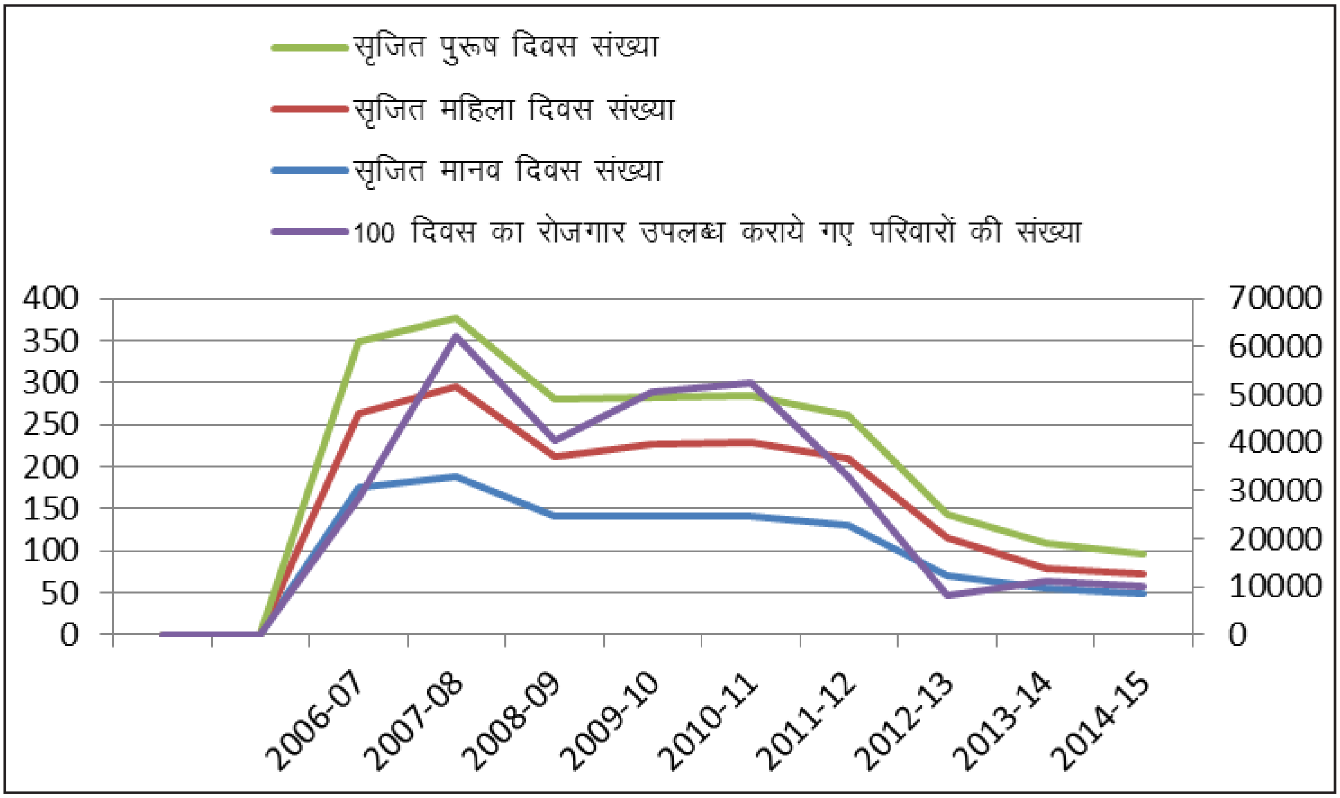

Man day's Female	88.93	105.67	72.13	85.47	86.66	78.94	43.61	25.24	23.25
Man day's Male	85.45	83.02	68.52	55.68	55.41	51.41	27.88	29.62	25.19

Practical steps involved in testing the significance of the difference between the means of two independent random samples:

Paired Statistics	Man days Female	Man day's Male
Standard Deviation	28.03	21.50
Carl Pearson's Correlation Coefficient	0.886	
We set Hypothesis	H□ : $\mu_1 = \mu_2$	H1: $\mu_1 = \mu_2$
Specify the test-statistic to be used since both the samples are small and independent, Fisher's t statistic is to be used.		
Calculation the mean of each sample as follows	67.77	53.57
Calculation the combined standard deviation (S) of both the samples as follows	26.49	
Compute the value of t as follows (t-test)	1.14	
Calculate the degrees of freedom(V) n1+n2-2	9+9-2=16	
Table value of t at 5% level of significance for 16 d.o.f.	2.12	
Interpretation- Since the computed value of t is less than the table value of t (i.e. 2.12) at 5% level of significance, we accept H' and conclude that the man days **Woman** and **Man** do not differ significantly with regard to their effect in increasing man days.		

****

केन्द्र सरकार के लोक-ऋणों की प्रवृत्ति का अध्ययन व विश्लेषण

डॉ. चन्द्रप्रकाश पंवार *

प्रस्तावना – सामान्यत: ऋण की प्रकृति दीर्घकालीन होती है, फलस्वरुप भविष्य में बोझ बनती है और आर्थिक संकट का कारण भी बनती हैं किंतु जब लोक-ऋणों के संदर्भ में अध्ययन किया जाये तो यह आवश्यक नहीं कि वे सदैव बुरे हो। सब्र का फल व लोक कल्याण निहित लोक-ऋणों का फल मीठा होता है। योजनाबद्ध व्यय और पूंजी निवेश के रुप में ऋण दीर्घकाल में फायदेमंद साबित होते है।

लोक-ऋण (Public Debts) किसी देश की सरकार द्वारा आम जनता अथवा वित्तीय संस्थाओं से लिया गया बाजार उधार [1] है जिसे सरकारी ऋण (Government Debts) भी कहते है। भारत सरकार के लोक-ऋण के दो अंग है – आंतरिक ऋण (Internal Debts) तथा बाहय ऋण (External Debts)। आंतरिक ऋणों में मुख्यत: दैनांकित प्रतिभूतियाँ (Dated Securities) तथा कोषागार विपत्र (Treasury Bills) शामिल है, जबकि बाह्य ऋणों में मुख्यत: बहुपक्षीय एवं द्विपक्षीय संस्थाओं एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से लिया गया ऋण सम्मिलित है। लोक-ऋण केन्द्र सरकार के वित्तीय प्रबंधन का महत्वपूर्ण अंग है, जिसका मापन सकल घरेलु उत्पाद (Gross Domestic Product) के एक निश्चित प्रतिशत से किया जाता है। लोक ऋण वस्तुत: राजकोषीय घाटे की उपज है। चक्रवर्ती समिति [2] की अनुषंसानुसार भारत सरकार के वर्ष 1997-98 के बजट से हिनार्थ प्रबंधन (Deficit Financing) की पारम्परिक अवधारणा का परित्याग करके राजकोषीय घाटे (Fiscal Deficit) की अवधारणा को अपनाया गया। सरकार राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजटरी प्रबंधन अधिनियम, 2003 (Fiscal Responsibility and Budget Management Act, 2003, FRBM ACT) के लक्ष्यों के अनुसार राजकोषीय समेकन करती है तथा राजकोषीय घाटे को सकल घरेलु उत्पाद के 3 प्रतिशत तक लाने की ओर अग्रसर है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य केन्द्र सरकार द्वारा लिये गये लोक-ऋणों की स्थिति का विभिन्न पैमानों यथा सकल घरेलु उत्पाद, राजकोषीय घाटा, सरकार की कुल देनदारियां, ब्याज अदायगी, आयोजना एवं आयोजनेत्तर व्ययों आदि के आघार पर तथा विभिन्न आयोगों, समितियों, कमेटियों, राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों व इससे संबंधित अधिनियमों के आधार पर केंद्र सरकार की वित्तिय कार्य कुशलता का अध्ययन करना व कुछ ठोस निष्कर्ष निकालना रहा है।

अध्ययन अवधि – ठोस एवं तथ्यपरक निष्कर्ष निकालने के लिये शोध पत्र में वर्ष 2008-09 से 2014-15 तक 07 वर्षो के ऑकड़ों को सम्मिलित किया गया है।

प्रयुक्त चल – सकल घरेलु उत्पाद, ब्याज भुगतान, आयोजना एवं आयोजनेत्तर व्यय, राजकोषीय घाटा, प्राथमिक घाटा, राजस्व घाटा आदि।

साहित्य सर्वेक्षण – हिरा निसार खान [3] **(2014)** ने अपने शोध पत्र में पाकिस्तान सरकार द्वारा लिये गये विगत 35 वर्षो की अवधि (1980 से 2014) के लोक-ऋणों की प्रवृत्ति का अध्ययन करते हुए पाया कि बढ़ते हुए लोक-ऋणों के बोझ से पाकिस्तान की विकास, विनियोग तथा रोजगार की दर में निरन्तर गिरावट परिलक्षित हुई है, जिसे ऋण परिसीमन नियम, 2005 (Debt Limitation Law, 2005) के अंतर्गत नियंत्रित किया जाना चाहिये।

अतिक रब्बानी [4] **(2015)** अपने लेख में रेखांकित करते है कि मिल्टन फीडमैन का मौद्रिकवाद (Monetarism) इस अवधारणा को मानता है कि किसी भी अर्थव्यवस्था में दीर्घावधि में होने वाले धन की आपूर्ति और आर्थिक गतिविधियों के बीच गहरा संबंध है। अत: वैश्विक मंदी के दौर में सरकारों का उद्देश्य प्रभावी राजकोषीय उपाय अपनाकर अर्थव्यवस्था में प्रभावी मांग पैदा करना है न कि राजस्व घाटा नियंत्रण करना।

अनिरुद्ध बारिक [5] **(2011)** ने अपने शोध पत्र में वर्ष 1981-2011 की अवधि के भारत सरकार के लोक-ऋणों की भूमिका का अध्ययन करते हुए पाया कि देश की आर्थिक वृद्धि में लोक-ऋणों का प्रयोग प्रत्यक्ष आर्थिक वृद्धि दर तथा अप्रत्यक्ष रुप से विनियोग दर को प्रोत्साहित करता है। इनका अध्ययन सांख्यिकीय तकनीक (Regression) व आर्थिक संवृद्धि में नवशास्त्रीय मॉडल (Neoclassical) पर आधारित था।

प्रो.जाधव [6] **(2015)** ने अपने शोध पत्र में राज्यों की लोक-ऋणों की वर्ष 1980-81 से 2013-14 तक की स्थिति का अध्ययन विभिन्न पैमानों के आधार पर करते हुए पाया कि लोक-ऋणों का हिस्सा निंरतर कम हुआ। जबकि प्रोविडेन्ट फण्ड एवं छोटी बचत योजनाओं के हिस्से में वृद्धि पाई गई।जो कि कम लागत से उंची लागत वाली प्रतिभूतियों में परिवर्तन को दर्शाता है।

रमेश सिंह [7] **(2013)** ने घाटे के वित्त पोषण के क्रमश: चार साधन बताये है। प्रथमत: निम्न ब्याज के साथ विदेशी सहायता एवं विदेशी अनुदान, दूसरे क्रम पर सस्ते एवं लम्बी अवधि के विदेशी ऋण, तृतीय क्रम में आंतरिक ऋण तथा अंतिम क्रम में हिनार्थ प्रबंधन।

केन्द्र सरकार के लोक-ऋणों की स्थिति का विश्लेषण – योजना आयोग के तय लक्ष्यों के अनुरुप आर्थिक विकास करने हेतु सरकारों लोक-ऋणों के माध्यम से वित्ता प्रबंधन करती है। **तालिका** 01 केंद्र सरकार के

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

लोक-ऋणों की कुल देनदारियों से तुलनात्मक स्थिति को प्रदर्शित करती है। वर्ष 2008-09 में केन्द्र सरकार की कुल देनदारियों में लोक-ऋणों का प्रतिशत 80.1 था, जो वर्ष 2014-15 में बढ़कर 87.9 प्रतिशत हो गया अर्थात आर्थिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये केंद्र सरकार की लोक-ऋणों पर निर्भरता बढ़ी है। कुल लोक-ऋणों में आंतरिक लोक-ऋणों का हिस्सा सर्वाधिक रहा, जो वर्ष 2008-09 में 70.5 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2014-15 में 80.8 प्रतिशत तक पाया गया। इसके विपरीत बाह्य ऋणों पर निर्भरता निरंतर कम हुई है, जो भारतीय अर्थव्यवस्था के लिये अच्छा संकेत है। बाह्य ऋण वर्ष 2014-15 में कुल लोक-ऋणों के 7.5 प्रतिशत तक सीमित रहे। **तालिका** 1.1 लोक-ऋणों की प्रवृत्ति प्रतिशत को प्रदर्शित करती है। अध्ययन अवधि के दौरान कुल लोक-ऋण 2203836 करोड़ रुपये से बढ़कर 5134224 करोड़ रुपये हो गये, अर्थात लोक-ऋणों के आकार में 2.3 गुना वृद्धि परिलक्षित हुई परंतु आंतरिक व बाह्य लोक ऋणों के आकार में यह वृद्धि दर समानान्तर न रहकर क्रमश: 2.45 गुना व 1.45 गुना तक सीमित रही अर्थात बाह्य लोक-ऋणों की अपेक्षा आंतरिक लोक-ऋणों में तेजी से बढ़ने की प्रवृत्ति रही। जैसा कि **रेखाचित्र** क्रं. 01 द्वारा प्रदर्शित है कि आंतरिक लोक-ऋण की रेखा अपेक्षाकृत रुप से ऊँचाई की ओर प्रवृत्त हो रही है। आंतरिक लोक-ऋण विपणन योग्य एवं गैर विपणन योग्य प्रतिभूतियों में विभाजित किये गये है। जिसमें विपणन योग्य प्रतिभूतियों के प्रतिशत में निंरतर वृद्धि परिलक्षित हुई, जो वर्ष 2008-09 में कुल देनदारियों के 57.2 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2014-15 में 74 प्रतिशत तक दर्ज हुई। विपणन योग्य प्रतिभूतियों में भी दैनांकित प्रतिभूतियॉ जो कि दीर्घकालीन ऋण का स्त्रोत है, के आकार में सर्वाधिक वृद्धि दर्ज की गई जो कि अध्ययन अवधि के दौरान 277 प्रतिशत तक रही जैसा कि **तालिका** 1.1 में स्पष्ट है। अल्पकालीन ऋणों के स्त्रोत के रुप में कोषागार विपत्रों में भी समानान्तर वृद्धि परिलक्षित हुई किंतु गैर विपणन योग्य प्रतिभूतियों में वृद्धि दर अल्प रही।

तालिका 01 , 1.1(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

रेखाचित्र 01: आंतरिक लोक-ऋण एवं बाह्य लोक-ऋण की प्रवृत्ति

रेखाचित्र 02 : आयोजना व्यय एवं ब्याज भुगतान की प्रवृत्ति

(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

केन्द्र सरकार के बजट घाटों की प्रवृत्ति का विश्लेषण - डॉ. डी.एन. गुर्टू के अनुसार [8] 'घाटे की वित्त व्यवस्था का पश्चिम देशों में प्रयोग उस वित्तीय प्रबंध के लिये किया जाता है, जिसमें लोक आय और लोक व्यय के मध्य जानबूझकर रखे अंतर अथवा बजट घाटे को लोक ऋण से पूरा किया जाता है। परिणामस्वरुप राष्ट्रीय आय एवं व्यय में वृद्धि होती है तथा बैंकों एवं निजी व्यक्तियों के पास पड़े फालतू धन का उपयोग होने लगता है।'

सार्वजनिक व्ययों का सार्वजनिक आय पर अधिशेष बजट घाटा कहलाता है। केन्द्र सरकार के बजट में इसे तीन रुप में प्रदर्शित किया जाता है (1) राजस्व घाटा (Revenue Deficit) (2) राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit) तथा (3) प्राथमिक घाटा (Primary Deficit)

तालिका 02 अध्ययन अवधि के दौरान केंद्र सरकार के बजट की प्रमुख मदों व बजट घाटों की प्रवृत्ति को प्रदर्शित करती है। राजस्व घाटा राजस्व व्ययों का राजस्व प्राप्तियों पर अधिशेष है। वर्ष 2008-09 में **राजस्व घाटा** 253538 करोड़ रुपये था। जो वर्ष 2015-16 में लगभग 50 प्रतिशत बढ़कर 394471 करोड़ रुपये हो गया। यह स्थिति प्रदर्शित करती है कि सरकार चालू वर्ष के राजस्व व्यय को चालू वर्ष की राजस्व प्राप्तियों से पूरा करने में विफल रही। इसका प्रमुख कारण यह रहा कि सरकार का वर्ष 1970-80 के दशक का राजस्व अतिरेक का उद्देश्य धीरे धीरे समाप्त हो गया और राजस्व व्ययों मुख्यत: योजना भिन्न व्ययों का निरंतर विस्तार होता गया जैसा कि **तालिका 02** में प्रदर्शित है कि राजस्व व्ययों में सर्वाधिक हिस्सा ब्याज के भुगतान के रुप में था, जिसमें अध्ययन की अवधि के दौरान 2.37 गुना बढ़ोत्तरी दर्ज की गई। इसी प्रकार ब्याज भुगतान वर्ष 2015-16 में बढ़कर कुल राजस्व प्राप्तियों का लगभग 40 प्रतिशत तक दर्ज था। ब्याज भुगतान की यह प्रवृत्ति दर्शाती है कि सरकार भारी भरकम कर्ज के बोझ से लदी हुई है, जो कि संचित ऋणों का प्रतिफल है। **राजस्व घाटे** का दूसरा प्रमुख कारण कुल व्ययों में आयोजन व्ययों (Planned Expenditure) की अपेक्षा आयोजनेत्तर व्ययों (Non-Planned Expenditure) मे भारी मात्रा में वृद्धि दर्ज हुई। अध्ययन अवधि के दौरान आयोजना व्यय में 1.69 गुना वृद्धि दर्ज हुई, जबकि आयोजना व्यय में 2.16 गुना वृद्धि दर्ज हुई। आयोजना व्यय एवं ब्याज भुगतान के आकार की तुलना करने पर पाया कि आयोजना व्ययों की प्रवृत्ति दीर्घकाल में गिरावट की रही। जबकि ब्याज भुगतान में निंरतर वृद्धि की प्रवृत्ति रही जैसा कि रेखाचित्र 2 से प्रदर्शित होता है।

राजकोषीय घाटा यह दर्शाता है कि कुल प्राप्तियाँ (राजस्व व पूँजी प्राप्तियाँ) कुल व्ययों (राजस्व व पूँजी व्यय) से कम है, जिसकी पूर्ति सरकार बाजार उधार एवं अन्य देनदारियों से करती है। दूसरे शब्दों में, राजकोषीय घाटा सरकार की उधार एवं अन्य देनदारियों के बराबर है। वर्ष 2008-09 में सरकार का राजकोषीय घाटा 336991 करोड़ रुपये था जो वर्ष 2015-16 में 1.65 गुना बढ़कर 555648 करोड़ रुपये हो गया। राजकोषीय घाटे में वृद्धि मुख्यत: निंरतर बढ़ते हुए आयोजनेत्तर व्यय के कारण हुई। राजकोषीय घाटे का मात्रात्मक रुप सकल घरेलु उत्पाद के प्रतिशत के रुप में दर्शाया जाता है। वर्ष 2008-09 में राजकोषीय घाटा सकल घरेलु उत्पाद का 6 प्रतिशत था, जिसमें वर्ष 2015-16 तक निंरतर गिरावट की प्रवृत्ति दर्ज होकर यह 3.9 प्रतिशत तक सीमित रही जो कि सरकार की राजकोषीय नीति की सुदृढ़ता का परिचय देता है।

प्राथमिक घाटा राजकोषीय घाटे में से ब्याज भुगतान घटाने पर प्राप्त होता है। सरकार का असली वित्त प्रबंधन तो उसका प्राथमिक घाटा ही दिखाता है क्योंकि ब्याज भुगतान तो पुराने ऋणों का भार है जिसे संचित कर्मो का फल भी कह सकते हैं। वर्ष 2008-09 में प्राथमिक घाटा 144787 करोड़ रुपये था जो वर्ष 2011-12 तक 1.68 गुना बढ़कर 242841 करोड़ रुपये हो गया । इसके पश्चात इसमें निरंतर गिरावट की प्रवृत्ति दर्ज होकर वर्ष 2015-16 में यह 99503 करोड़ रुपये तक नियंत्रित रहा । वर्ष 2012-13 व उसके पश्चात निंरतर प्राथमिक घाटे का नियंत्रण में रहना भारत सरकार की कुशल वित्तीय प्रबंधन एवं राजकोषीय नीति का परिचायक है।

लोक-ऋण एवं सकल घरेलु उत्पाद - लोक-ऋण एवं सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात किसी देश की भविष्य की शोधन क्षमता की माप को प्रदर्शित करता है। केंद्र सरकार का लोक-ऋण व सकल घरेलू उत्पाद का प्रतिशत अध्ययन के वर्षो में 39 से 41 प्रतिशत के बीच रहा जो कि तालिका 03 से प्रदर्शित होता है। इसी प्रकार आकार की दृष्टि से सकल घरेलू उत्पाद की प्रवृत्ति लोक-ऋण की तुलना में अपेक्षाकृत ऊँची दर से वृद्धि हुई। जो कि **रेखाचित्र 03** द्वारा प्रदर्शित है।

तालिका 02, 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

रेखाचित्र 03 : लोक-ऋण व सकल घरेलू उत्पाद की प्रवृत्ति(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

अध्ययन के निष्कर्ष :

1. सरकार के राजस्व व्यय मुख्यत: आयोजना भिन्न व्यय में तीव्र वृद्धि दर्ज हुई, जैसा कि चौदहवें वित्त आयोग ने भी अपने प्रतिवेदन में स्पष्ट किया है।
2. अध्ययन अवधि के दौरान राजस्व घाटे में 1.56 गुना की वृद्धि परिलक्षित हुई। जो निंरतर बढ़ती हुई ब्याज अदायगी (2.37 गुना) तथा आयोजनेत्तर व्ययों में वृद्धि (2.16 वृद्धि) के कारण रही।
3. सकल घरेलु उत्पाद के प्रतिशत के रुप में राजकोषीय घाटा निरंतर नियंत्रित होकर वर्ष 2015-16 में सकल घरेलू उत्पाद का 3.9 प्रतिशत रहा जो कि FRBM अधिनियम के 3 प्रतिशत के लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर है।
4. सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि दर की तुलना में लोक-ऋण में वृद्धि दर की प्रवृत्ति धीमी रही जो यह प्रदर्शित करती है कि भारत सरकार की ऋण नीति सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात में लोक-ऋणों को धीरे धीरे कम करने के सिद्धांत पर आधारित है तथा यह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मजबूत शोधन क्षमता व विवेकपूर्ण ऋण प्रबंधन का परिचय देती है।
5. अध्ययन अवधि के दौरान कुल ऋणों में बाह्य ऋणों का अनुपात निंरतर कम होकर वर्ष 2014-15 में 7.5 प्रतिशत तक सिमित रहा जिसके कारण अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय बाजारों की जोखिम न्यूनतम हुई है।
6. आंतरिक लोक-ऋण में दैनांकित प्रतिभूतियों एवं कोषागार विपत्रों का हिस्सा क्रमश: 84 प्रतिशत तथा 8 प्रतिशत रहा। शेष राशि गैर विपणन योग्य प्रतिभूतियों द्वारा जुटाई गई।
7. अध्ययन के वर्षो में केंद्र सरकार के राजस्व घाटे व राजकोषीय घाटे में क्रमश:में 50 प्रतिशत तथा 65 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई जबकि प्राथमिक घाटे में वर्ष 2008-09 की अपेक्षा 31 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई।
8. केंद्र सरकार के कुल राजस्व व्यय में सर्वाधिक हिस्सा ब्याज भुगतान का रहा जो कि 30 प्रतिशत था। इसके पश्चात शेष हिस्सा क्रमश: प्रमुख सब्सिडियॉ व रक्षा व्यय के रुप में था।
9. ब्याज भुगतान में अध्ययन के वर्षो में 2.37 गुना वृद्धि की प्रवृत्ति प्रदर्शित हुई। जबकि केन्द्र सरकार द्वारा दी जाने वाली सब्सिडियों के आकार में वर्ष 2012-13 से गिरावट युक्तियुक्तकरण की प्रवृत्ति को दर्षाती है।

अध्ययन के प्रमुख सुझाव :

1. गैर योजनागत व्ययों को नियंत्रित करने हेतु एक युक्तिसंगत व्यय नीति बनाने की आवश्यकता है।
2. राजस्व व्यय की तुलना में पूँजीगत व्ययों व गैर योजनार्गत व्ययों की तुलना में आयोजना व्यय में वृद्धि की जाये।
3. सरकार की वित्त-पोषण नीति बाजार उधार की अपेक्षा प्रत्यक्ष निवेश के माध्यम से पूँजी विकास की होनी चाहिये।
4. निजी क्षेत्र की तरह दीर्घकालीन ऋणों का युक्तियुक्तकरण करके समता पूंजी (Equity Capital) में परिवर्तित करने पर भी विचार करना चाहिये ताकि भारी भरकम ब्याज अदायगी का भार कम हो सके।
5. आयोजना व्ययों में सार्वजनिक-निजी साझेदारी (Public Private Partnership) मॉडल को बढ़ावा देना चाहिये।
6. अर्थव्यवस्था में मजबूती तथा वित्तीय समेंकन की दृष्टि से FRBM अधिनियम के अंतर्गत निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति पर बल दिया जाना चाहिये।
7. ऋणों के बेहतर प्रबंधन के लिये एक स्वतंत्र ऋण प्रबंधन एजेंसी गठित होनी चाहिये, जैसा कि वित्तिय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग 2013 ने अपने प्रतिवेदन में स्पष्ट किया है।
8. राजकोषीय नीति एवं मौद्रिक नीति में समन्वय होना चाहिये क्योंकि एक अच्छी राजकोषीय नीति मौद्रिक नीति को प्रभावित करती है तथा एक अच्छी मौद्रिक नीति मुद्रा-स्फीति एवं ब्याज दरो को संतुलित रखती है।
9. सार्वजनिक व्यय प्रबंधन बेहतर बनाने के लिये आयोजना व्यय एवं आयोजनेत्तर व्ययो को राजस्व व्यय और पूंजीव्यय में वर्गीकृत किया जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भाटिया, एच.एल. (2013), **'लोक वित्त'**, विकास पब्लिशिंग हाऊस प्रा. लिमि.: नई दिल्ली ।
2. दत्ता एवं सुन्दरम (2016), **'भारतीय अर्थव्यवस्था'**, एस.चांद एण्ड कम्पनी प्रा. लिमि.: नई दिल्ली ।
3. Khan, Hira Nisar (2014), “Effects of Public debt on Economic Growth, Investment and Unemployment” : (https://hiranisarkhanhnk.files.wordpress.com/2014/06/6.jpg.).
4. रब्बानी, अतिक, (2015), **'नीति का पाखण्ड'**, जनसत्ता, मई 30, 2015
5. Barik, Anirudha (2012), “Government Debt anf Economic Growth in India”, Centre for Economic Studies and Planning: JNU, New Delhi.
6. Prof. Jadhav, Amit Uttam (2015), “Burden of Public Debts on the State Government in India”: (“ASM`s INTERNATIONAL E-Journal on Ongoing Research in Managemnet and IT”).
7. सिंह रमेश (2013), **'भारतीय अर्थव्यवस्था'**, मेग्राव हिल्स एजुकेशन इण्डिया प्रा. लिमि.: नई दिल्ली ।
8. डॉ. पन्त, जे.सी. (2014), **'राजस्व'**, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल.: आगरा ।
9. Statistical Year Book of India, 2015.
10. The Status Paper on Government Debt, 2014, Ministry of Finance, India.
11. आर्थिक समीक्षा 2012-13 से 2015-16.
12. केन्द्रीय सरकार के बजट प्रतिवेदन वर्ष 2008-09 से 2015-16.
13. तेरहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट ।
14. चौदहवें वित्त आयोग की रिपोर्ट ।
15. वित्तिय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग की रिपोर्ट 2013 ,वित्त मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली ।

तालिका 01 : केन्द्र सरकार के लोक-ऋणों की कुल देनदारियों से तुलनात्मक स्थिति (प्रतिशत में)

क्रं.	मदें	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15
1	**लोक-ऋण**	**80.1**	**81.8**	**83.6**	**85.6**	**87.0**	**87.9**	**87.3**
1.1	**आंतरिक लोक-ऋण**	**70.5**	**73.9**	**75.7**	**77.8**	**80.0**	**80.8**	**80.8**
a	विपणन योग्य प्रतिभूतियां	57.2	62.2	64.9	68.9	71.4	73.3	74.0
(i)	आवधिक प्रतिभूतियां	52.1	58.0	61.1	62.5	65.0	66.8	67.6
(ii)	कोषागार विपत्र	5.1	4.3	3.8	6.4	6.4	6.5	6.4
b	गैर विपणन योग्य प्रतिभूतियां	13.3	11.6	10.8	8.9	8.6	7.5	6.8
1.2	**बाह्य लोक-ऋण**	**9.6**	**7.9**	**7.9**	**7.8**	**7.1**	**7.1**	**6.5**
2	अन्य दायित्व	19.9	18.2	16.4	14.4	13.0	12.1	12.7
3	**कुल देनदारियां**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**

स्त्रोत : The Status Paper on Government Debt-2014, Ministry of Finance,India

तालिका 1.1 : केन्द्र सरकार के लोक-ऋणों का प्रवृत्ति प्रतिशत

क्रं.	मदें	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15
1	**लोक-ऋण**	**100**	**117**	**134**	**161**	**186**	**210**	**233**
1.1	**आंतरिक लोक-ऋण**	**100**	**120**	**138**	**167**	**194**	**219**	**245**
a	विपणन योग्य प्रतिभूतियां	100	125	146	182	213	245	276
(i)	दैनांकित प्रतिभूतियां	100	128	150	181	214	245	277
(ii)	कोषागार विपत्र	100	95	95	189	212	243	267
b	गैर विपणन योग्य प्रतिभूतियां	100	101	105	101	111	108	109
1.2	**बाह्य लोक-ऋण**	**100**	**94**	**106**	**122**	**126**	**142**	**145**
2	अन्य दायित्व	100	105	106	109	112	116	137
3	**कुल देनदारियां**	**100**	**115**	**128**	**151**	**171**	**191**	**214**

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा वर्ष 2015-16

रेखाचित्र 01: आंतरिक लोक-ऋण एवं बाह्य लोक-ऋण की प्रवृत्ति

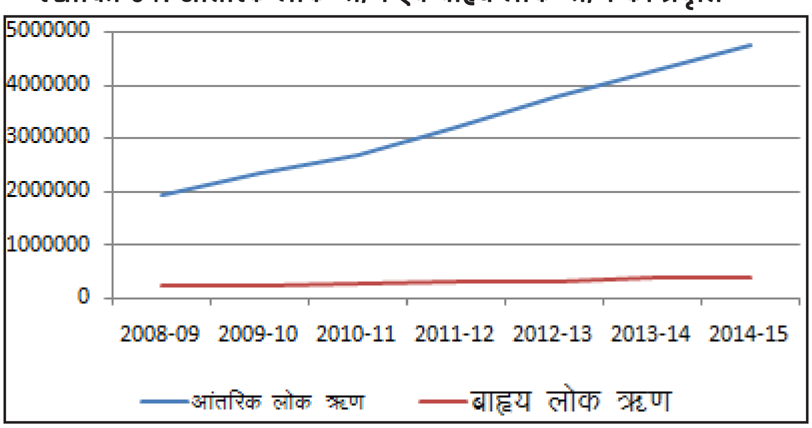

रेखाचित्र 02 : आयोजना व्यय एवं ब्याज भुगतान की प्रवृत्ति

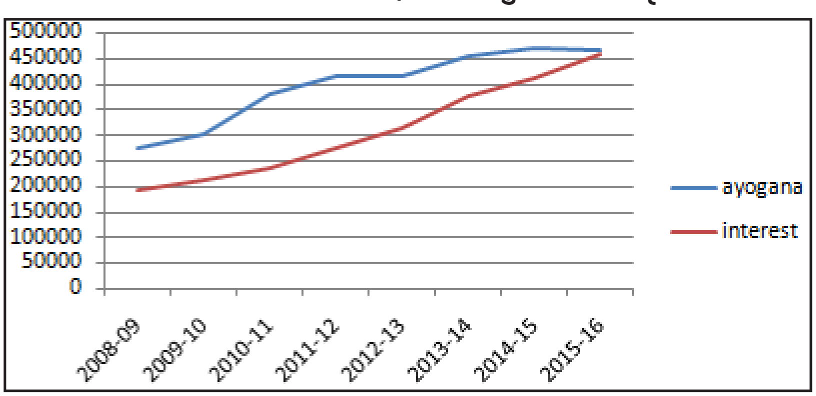

तालिका 02 : केन्द्र सरकार के बजट की मदें व वित्तिय घाटों की प्रवृत्ति प्रतिशत की तुलनात्मक स्थिति

क्रं.	मदें	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16
1	राजस्व प्राप्तियां	100	106	146	139	163	188	208	211
2	राजस्व व्यय	100	115	131	144	157	173	188	194
(क)	ब्याज भुगतान	100	111	122	142	163	195	214	237
(ख)	प्रमुख सब्सिडीयॉ	100	109	*134*	172	201	199	206	185
(ग)	रक्षा व्यय	100	124	126	141	152	170	192	208
3	राजस्व घाटा	100	134	99	156	144	141	143	156
4	पूंजी प्राप्तियां	100	131	119	161	155	158	161	185
(क)	ऋणों की वसूली	100	140	202	307	245	204	177	175
(ख)	विनिवेश से प्राप्तियां	100	4343	4036	3196	4574	5189	5539	12279
(ग)	उधार एवं अन्य देनदारियां	100	124	111	153	145	149	152	165
5	पूंजी व्यय	100	125	174	176	185	208	213	268
6	कुल ऋणेत्तर प्राप्तियां	100	111	151	144	168	193	214	223
7	कुल व्यय	100	116	135	148	160	176	190	201
(क)	आयोजना व्यय	100	110	138	150	150	165	170	169
(ख)	आयोजनेत्तर व्यय	100	118	134	147	164	182	199	216
8	राजकोषीय घाटा	100	124	111	153	145	149	152	165
9	प्राथमिक घाटा	100	142	96	168	122	89	70	69
10	राजकोषीय घाटा/सकल घरेलु उत्पाद प्रतिशत	6	6.5	4.8	5.9	4.9	4.5	4.1	3.9

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा 2015-16

तालिका 03 : केन्द्र सरकार के लोक-ऋण व सकल घरेलु उत्पाद के तुलनात्मक अनुपात

क्रं.	मदें	2008-09	2009-10	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15
1	लोक-ऋण	2203836	2583616	2954700	3553519	4096570	4624780	5134224
2	सकल घरेलु उत्पाद	5630063	6477827	7784115	9009722	10113281	11355073	12876653
3	सकल घरेलु उत्पाद से प्रतिशत	39.14	39.88	37.96	39.44	40.51	40.73	39.87
4	आंतरिक लोक-ऋण/स.घ.ड	34.5	36	34.4	35.9	37.2	37.4	36.9
5	बाह्य लोक-ऋण/स.घ.ड	4.7	3.8	3.6	3.6	3.3	3.3	3.0

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा 2015-16

रेखाचित्र 03 : लोक-ऋण व सकल घरेलु उत्पाद की प्रवृत्ति

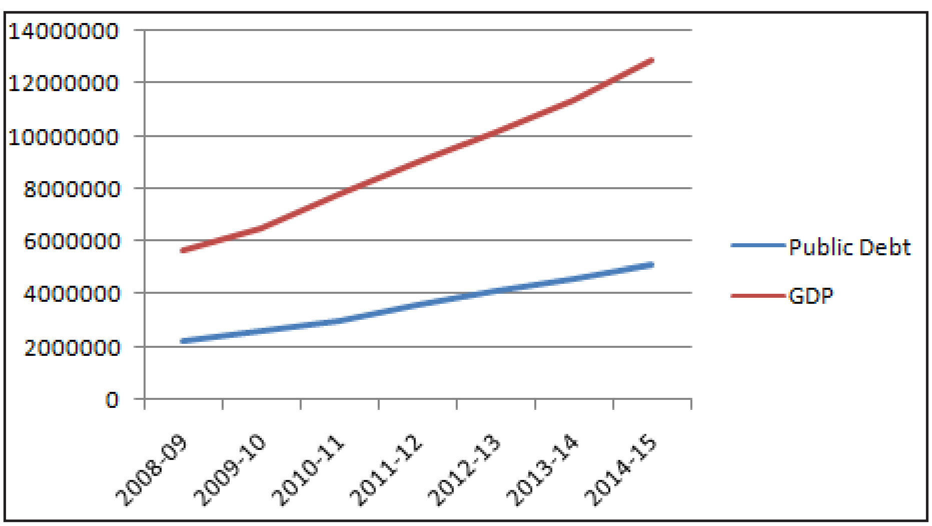

Annexure 01

केन्द्र सरकार के लोक–ऋणों की तुलनात्मक स्थिति

क्रं.	मदें	2008–09	2009–10	2010–11	2011–12	2012–13	2013–14	2014–15
1	**लोक–ऋण**	**2203836**	**2583616**	**2954700**	**3553519**	**4096570**	**4624780**	**5134224**
1.1	**आंतरिक लोक–ऋण**	**1939776**	**2334310**	**2675823**	**3230622**	**3764566**	**4250297**	**4751602**
a	विपणन योग्य प्रतिभूतियां	1575036	1966687	2292428	2860805	3360932	3858187	4353945
(i)	दैनांकित प्रतिभूतियां	1433720	1832145	2157559	2593770	3061127	3515028	3976233
(ii)	कोषागार विपत्र	141316	134542	134869	267035	299805	343159	377712
b	गैर विपणन योग्य प्रतिभूतियां	364740	367623	383395	369817	403635	392109	397657
1.2	**बाह्य लोक–ऋण**	**264059**	**249306**	**278877**	**322897**	**332004**	**374483**	**382622**
2	अन्य दायित्व	547527	576068	579249	599265	611516	636671	749638
3	**कुल देनदारियां**	**2751363**	**3159683**	**3533950**	**4152784**	**4708085**	**5261451**	**5883862**

स्त्रोत : The Status Paper on Government Debt-2014, Ministry of Finance,India

Annexure 02

केन्द्र सरकार के बजट की मदें व वित्तिय घाटों की तुलनात्मक स्थिति

क्रं.	मदें	2008–09	2009–10	2010–11	2011–12	2012–13	2013–14	2014–15	2015–16
1	राजस्व प्राप्तियां	540260	572811	788471	751436	879232	1014723	1126296	1141576
2	राजस्व व्यय	793798	911809	1040723	1145785	1243514	1371772	1488780	1536047
(क)	ब्याज भुगतान	192204	213093	234022	273150	313170	374254	411354	456145
(ख)	प्रमुख सब्सिडीयॉ	123206	134658	164516	211319	247493	244717	253913	227388
(ग)	रक्षा व्यय	73305	90669	92061	103011	111277	124374	140405	152139
3	राजस्व घाटा (2–1)	253538	338998	252252	394349	364282	357049	362484	394471
4	पूंजी प्राप्तियां	343696	451676	408856	552929	531140	544724	554862	635901
(क)	ऋणों की वसूली	6139	8613	12420	18850	15060	12497	10886	10753
(ख)	विनिवेश से प्राप्तियां	566	24581	22846	18088	25890	29368	31350	69500
(ग)	उधार एवं अन्य देनदारियां	336991	418482	373590	515991	490190	502859	512626	555648
5	पूंजी व्यय	90158	112678	156604	158580	166858	187675	192378	241430
6	कुल ऋणेत्तर प्राप्तियां	546965	606005	823737	788374	920182	1056588	1168532	1221829
7	कुल व्यय	883956	1024487	1197327	1304365	1410372	1559447	1681158	1777477
(क)	आयोजना व्यय	275235	303391	379029	412375	413625	453327	467934	465277
(ख)	आयोजनेत्तर व्यय	608721	721096	818298	891990	996747	1106120	1213224	1312200
8	राजकोषीय घाटा7 –(1+4 क,ख)	336991	418482	373590	515991	490190	502859	512626	555648
9	प्राथमिक घाटा8–(2क)	144787	205389	139568	242841	177020	128605	101272	99503

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा 2015–16

****

म.प्र. सरकार के राजस्व के लक्ष्य एवं प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. एल. एन. शर्मा *

प्रस्तावना – अर्थशास्त्र में जो स्थान उत्पादन का है ठीक वही स्थान राजस्व या लोक वित्त में सार्वजनिक आय का है। कारण यह है कि जिस प्रकार उपभोग के लिये उत्पादन आवश्यक है उसी प्रकार सार्वजनिक व्यय के लिये आय आवश्यक है। सार्वजनिक आय के स्त्रोत सामान्यत: लोगों को कष्टदायी होते है और उन्हें प्रदान करने के लिये त्याग करना होता है। नागरिक त्याग इसलिये करते है कि उन्हें सार्वजनिक व्यय से सामूहिक लाभ प्राप्त होने की आशा रहती है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि वर्तमान में राज्य के कार्य क्षेत्र में तेजी से वृद्धि हो रही है और परिणामस्वरुप सरकारी व्यय की राशि निरंतर बढ़ती जा रही है। यही कारण है कि सार्वजनिक आय प्राप्त करने के स्त्रोतों में भी विस्तार हो गया है। अब सरकारे अनेक प्रकार से अपने आय के स्त्रोतों को बढ़ाने में लगी है। आय के स्त्रोतों में (अ) प्रत्यक्ष आय जिसमें सार्वजनिक उद्योगों, उपहारों एवं जप्तियों से प्राप्त होती है। (ब) व्युत्पन्न आय जिसमें सरकार के करों, शुल्कों, जुर्माना आदि से प्राप्त होती है (स) प्रत्याशित आय जिसमें राजकोषीय विपत्रों एवं अन्य प्रकार के ऋणों से प्राप्त होती है। प्रो. सैलिंग मैन के अनुसार सार्वजनिक आय के तीन आधार बताये गये है। (अ) अनिवार्य आय जिसमें सरकार के कर, दण्ड एवं अन्य सार्वजनिक सम्पत्तियों से प्राप्त होती है। (ब) नि: शुल्क आय जिसमें राज्य को उपहार स्वरुप प्राप्त होती है। (स) अनुबंधीय आय जिसमें सरकारी उद्योगों, भूमि व खानों से प्राप्त होती है। जबकि प्रो. टेलर के अनुसार सार्वजिनक आय में (अ) कर (ब) प्रशासनिक आय (स) व्यापारिक आय (द) अनुदान व उपहार सम्मिलित है। प्रो. डाल्टन के अनुसार सार्वजनिक आय में (1) कर (2) ऋण (3) सार्वजनिक सम्पत्ति से आय (4) फीस एवं अन्य भुगतान (5) सार्वजनिक उपक्रमों से प्राप्त आय (6) फीस एवं अन्य भुगतान (7) स्वेच्छा से दिये गये उपहार (8) विशेष निर्धारण से प्राप्त होने वाली आय (9) सार्वजनिक उद्योगों से आय (10) न्यायालय द्वारा लगाये गये दण्ड से आय (11) उपहार एवं क्षतिपूर्ति शामिल है। भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार सार्वजनिक आय के स्त्रोतों में (अ) कर संबंधी आय में (1) प्रत्यक्ष कर जिसमें आयकर, सम्पत्ति कर व उपहार कर शामिल है।(2) अप्रत्यक्ष कर जिसमें उपभोग कर, उत्पादन कर, बिक्री कर आदि शामिल है। (ब) गैर कर संबंधी आय में लोक सम्पत्ति से आय, उपहार, अनुदान, वस्तुओं एवं सेवाओं के विक्रय आदि शामिल है।

शोध का उद्देश्य – मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व की प्राप्तियों में बजट प्रस्ताव में बजट अनुमान को प्रस्तुत किया जाता हैं एवं वर्ष पूर्ण होने पर बजट में रखे गये बजट अनुमान से वास्तविक राजस्व प्राप्तियों का मिलान किया जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में यह ज्ञात करना है कि मध्यप्रदेश सरकार ने राजस्व प्राप्तियों के लक्ष्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया है तथा शत-प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त करने में क्या कठिनाईयाँ हो रही है एवं शत-प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त करने से क्या उपाय हो सकते है। यह ज्ञात करना शोध का उद्देश्य है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र में मध्यप्रदेश सरकार के बजट अनुमान एवं लेखा बजट के प्रकाशित द्वितीयक संमकों का उपयोग किया गया है एवं वर्ष 2012-13, 2013-14, 2014-15 तथा 2015-16 के बजट का अध्ययन किया गया है, साथ ही मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व के लक्ष्य एवं प्राप्तियों का छत्तीसगढ़ सरकार एवं राजस्थान सरकार से तुलनात्मक अध्ययन भी किया गया है। ताकि यह ज्ञात हो सके कि राजस्व लक्ष्य की प्राप्ति में मध्यप्रदेश सरकार, छत्तीसगढ़ व राजस्थान सरकार से कितनी आगे या पीछे है।

शोध व्याख्या – मध्यप्रदेश सरकार के बजट अनुमान एवं लेखा बजट के अध्ययन से यह ज्ञात किया जा रहा है कि राजस्व लक्ष्य एवं लक्ष्य प्राप्ति का विवरण इस प्रकार है जो तालिका क्रं. 01 से स्पष्ट है।

तालिका क्रं. 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 01 के निष्कर्ष इस प्रकार है –

1. कुल प्राप्तियों में म.प्र. सरकार ने 98.6 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 85.8 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 105 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 12.8 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 6.4 प्रतिशत पीछे है।
2. राज्य कर में म.प्र. सरकार ने 108 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 107 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 124 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 01 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 16 प्रतिशत पीछे है।
3. केन्द्रीय करों में हिस्से में म.प्र. सरकार ने 96 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 96 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 80.6 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है इस प्रकार म.प्र. राजस्थान सरकार से 15.4 प्रतिशत आगे है।
4. कर भिन्न राजस्व में म.प्र. सरकार ने 95.5 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 86 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 135.5 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 9.5 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 45.5 प्रतिशत पीछे है।
5. केन्द्र से सहायता अनुदान में म.प्र. सरकार ने 95 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 74 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 74 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है ।इस प्रकार म.प्र.,

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 21 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से भी 21 प्रतिशत आगे है।

6. आधार एवं अग्रिम की वसूली में म.प्र. सरकार ने 74 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 98 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 728.6 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 24 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 654.6 प्रतिशत पीछे है।
7. शुद्ध लोक ऋण में म.प्र. सरकार ने 55 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 27 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 79.7 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 2.8 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 27.7 प्रतिशत पीछे है।
8. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों में म.प्र. सरकार ने 617.6 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने -45 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 2514 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 662.6 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 1896.4 प्रतिशत पीछे है।

तालिका क्रं. 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 02 के निष्कर्ष इस प्रकार है -

1. कुल प्राप्तियों में म.प्र. सरकार ने 94 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 92 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 98.8 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 02 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 4.8 प्रतिशत पीछे है।
2. राज्य कर में म.प्र. सरकार ने 100.5 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 93.7 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 95.3 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 6.8 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 5.2 प्रतिशत आगे है।
3. केन्द्रीय करो के हिस्सा में म.प्र. सरकार ने 96 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 91.7 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 96.6 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 4.3 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 0.6 प्रतिशत पीछे है।
4. कर भिन्न राजस्व में म.प्र. सरकार ने 101.6 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 84 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 107 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 17.6 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 5.4 प्रतिशत पीछे है।
5. केन्द्र से सहायता अनुदान में म.प्र. सरकार ने 78.8 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 168.5 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 86 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 89.7 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 7.2 प्रतिशत पीछे है।
6. आधार एवं अग्रिम की वसूली में म.प्र. सरकार ने 105.6 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 103.9 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 165 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 1.7 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 59.4 प्रतिशत पीछे है।
7. शुद्ध लोक ऋण में म.प्र. सरकार ने 46.7 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 72.8 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 93.9 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 26.1 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 47.2 प्रतिशत पीछे है।
8. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों में म.प्र. सरकार ने 22.2 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है,जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 20 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 237 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 2.2 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 214.8 प्रतिशत पीछे है।

तालिका क्रं. 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 03 के निष्कर्ष इस प्रकार है -

1. कुल प्राप्तियों में म.प्र. सरकार ने 91.6 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है,जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 84 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 91 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 7.6 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 0.6 प्रतिशत आगे है।
2. राज्य कर में म.प्र. सरकार ने 93.8 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 87.6 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 82 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 6.2 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 11.8 प्रतिशत आगे है।
3. केन्द्रीय करो के हिस्सा में म.प्र. सरकार ने 87 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 84.6 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 111 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 2.4 प्रतिशत आगे है, परंतु राजस्थान सरकार से 24 प्रतिशत पीछे है।
4. कर भिन्न राजस्व में म.प्र. सरकार ने 153.5 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 78.8 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 88 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है। इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 74.7 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 65.5 प्रतिशत आगे है।
5. केन्द्र से सहायता अनुदान में म.प्र. सरकार ने 58.5 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 61.3 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 71 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 2.8 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 12.5 प्रतिशत पीछे है।
6. आधार एवं अग्रिम की वसूली में म.प्र. सरकार ने 5569 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 66.7 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 663 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 5502.3 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 4906 प्रतिशत आगे है।
7. शुद्ध लोक ऋण में म.प्र. सरकार ने 94 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 98 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 95 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 04 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 01 प्रतिशत पीछे है।

8. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों में म.प्र. सरकार ने 56 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है, जबकि छत्तीसगढ़ सरकार ने 577 प्रतिशत व राजस्थान सरकार ने 197 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त किया है इस प्रकार म.प्र., छत्तीसगढ़ से लक्ष्य प्राप्ति में 1.7 प्रतिशत तथा राजस्थान सरकार से 141 प्रतिशत पीछे है।

सुझाव –

1. मध्यप्रदेश सरकार राजस्व के लक्ष्यों के निर्धारण एवं लक्ष्य प्राप्ति में वर्ष 2012-13, 2013-14 एवं 2014-15 में छत्तीसगढ़ सरकार की तुलना में आगे नहीं है, जो शुभ संकेत है, परंतु राजस्थान सरकार से पीछे रही है, जो चिन्ता का विषय है। अत: उक्त अवधि में मध्यप्रदेश सरकार ने 100 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया है। अत: 100 प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु निम्न सुझाव प्रस्तुत है –
2. राजस्व लक्ष्य का निर्धारण करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिये कि लक्ष्य में वृद्धि उसी सीमा तक की जाये जितना की उसे प्राप्त किया जा सके। क्योंकि वर्ष 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य में 15 प्रतिशत की वृद्धि की गई। जबकि वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 27 प्रतिशत लक्ष्य में वृद्धि हुई अर्थात् 12 प्रतिशत लक्ष्य को बढ़ाया गया। परिणाम वर्ष 2013-14 में 94 प्रतिशत व 2014-15 में 91.6 प्रतिशत ही राजस्व लक्ष्य को प्राप्त किया जा सका।
3. राजस्व लक्ष्य को शत-प्रतिशत प्राप्त करने हेतु जन जागरण की आवश्यकता है। कर प्रोत्साहन हेतु योजनाऐं बनाना एवं कर देयता को प्रदेश के विकास से जोड़ना अति आवश्यक है एवं उन्हें इस बात से भी अवगत कराना चाहिये कि उनके कर भुगतान का उपयोग कहाँ एवं किस रुप में किया जा रहा है।
4. प्रदेश में राज्य करों में वृद्धि करने हेतु मध्यप्रदेश के पड़ोसी राज्यों में कर ढ़ांचें का अध्ययन करना भी आवश्यक है। क्योंकि पड़ोसी राज्यों में कर की दरे कम होने के कारण मध्यप्रदेश के सीमावर्ती निवासी राजस्थान, छत्तीसगढ़, गुजरात, महाराष्ट्र आदि प्रांतो वस्तुओं का क्रय करते है। इसमें प्रदेश को राजस्व की हानि होती है। अत: यह प्रयास किया जाये कि कर ढांचा पड़ोसी राज्यों के समान अथवा कम हो तथा सीमावर्ती निवासी प्रदेश से ही वस्तुओं का क्रय करके प्रदेश को कर का भुगतान करें एवं अन्य राज्यों के उपभोक्ता भी प्रदेश में आकर वस्तुओं का क्रय करें एवं प्रदेश के राजस्व में वृद्धि हो।
5. देश एवं प्रदेश में एक ही पार्टी की सरकार होने के कारण केंद्र से सहायता एवं अनुदान का अधिकतम फायदा उठाया जाना चाहिये एवं इस बात का अध्ययन करके कि किन -किन मदों पर केंद्र से सहायता व अनुदान प्राप्त हो सकता है, उसका शत-प्रतिशत लाभ लिया जाना चाहिये। क्योंकि वर्ष 2012-13, 2013-14, एवं 2014-15 में इस मद में लक्ष्य प्राप्ति का ग्राफ लगातार गिर रहा है। वर्ष 2012-13 में प्रदेश ने 95 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त किया था जो वर्ष 2014-15 में गिरकर 58.5 प्रतिशत ही रह गया । इस प्रकार 36.5 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्ति में गिरावट चिंता का विषय है। इस पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. लोकवित्त सिद्धांत एवं व्यवहार – डॉ. डी. एन. गुर्टू ।
2. अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र एवं राजस्व – डॉ. वी.सी. सिन्हा ।
3. उच्च आर्थिक विश्लेषण – डॉ. पी.डी. माहेश्वरी, डॉ. शीलचंद गुप्ता ।
4. आर्थिक विकास के सिद्धांत – डॉ. विमल कुमार जैन, डॉ. नैनी, आर.के. जैन ।
5. शोध प्रणाली तथा सांख्यिकीय तकनीके – शर्मा, जैन, पारीख ।
6. सांख्यिकी के सिद्धांत – डॉ. एस.एम. शुक्ल, डॉ. एस.पी. सहाय ।
7. कर नियोजन एवं प्रंबध – श्रीपाल सकलेचा, अमित सकलेचा ।
8. मौद्रिक अर्थशास्त्र – डॉ. ममता जैन, डॉ. दिनेश त्रिपाठी ।
9. भारत की मौद्रिक नीति – डॉ. ममता जैन, डॉ. दिनेश त्रिपाठी ।
10. बजट अनुमान 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2016-17
11. नवीन शोध संसार (अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) ISSN 2320-8767
12. द्विव्य शोध समीक्षा अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) ISSN 2394-3807
13. Research in Finance – A. Rahman & A. Bhojwani.
14. Financial Crisis and Stability in Global Economy – M.A. Patel.
15. Tax System in India – M.M. Sury.
16. Financial Inclusion in India – N. Mani.
17. Direct Tax Planning and Management- K.K. Agarwal.
18. www.finance.mp.gov.in.

मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व लक्ष्य एवं प्राप्तियों का छत्तीसगढ़ एवं राजस्थान सरकार से तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 1 **(करोड़ में)**

वर्ष 2012-13

क्रं.	मद	मध्यप्रदेश			छत्तीसगढ़			राजस्थान		
		बजट अनुमान	लेखा बजट	%	बजट अनुमान	लेखा बजट	%	बजट अनुमान	लेखा बजट	%
1	कुल प्राप्तियाँ	80031	78963	98.6	37189	31918	85.8	7707185	8118568	105
2	राज्य कर	28312	30582	108	12175	13034	107	2683231	3333283	124
3	केंद्रीय करों में हिस्सा	21604	20805	96	7494	7218	96	1770685	1427267	80.6
4	कर भिन्न राजस्व	7327	7000	95.5	5345	4616	86	895113	1213359	135.5
5	केंद्र से सहायता अनुदान	12670	12040	95	6362	4710	74	965653	717392	74
6	आधार एवं अग्रिम की वसूली	99	73	74	1571	1547	98	15118	110156	728.6
7	शुद्ध लोक ऋण	9460	5207	55	3772	1018	27	1249788	996312	79.7
8	लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ	527	3255	617.6	500	-225	-45	12759	320799	2514

स्त्रोत - बजट प्रस्ताव 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व लक्ष्य एवं प्राप्तियों का छत्तीसगढ़ एवं राजस्थान सरकार से तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 2 **(करोड़ में)**

वर्ष 2013-14

क्रं.	मद	मध्यप्रदेश			छत्तीसगढ़			राजस्थान		
		बजट अनुमान	लेखा बजट	%	बजट अनुमान	लेखा बजट	%	बजट अनुमान	लेखा बजट	%
1	कुल प्राप्तियाँ	92020	86198	94	43976	40478	92	9520848	9415018	98.8
2	राज्य कर	33382	33552	100.5	15300	14343	93.7	3405313	3247096	95.3
3	केंद्रीय करों में हिस्सा	23694	22715	96	8593	7880	91.7	2036090	1967981	96.6
4	कर भिन्न राजस्व	7583	7705	101.6	6072	5101	84	1265443	1357525	107
5	केंद्र से सहायता अनुदान	14945	11777	78.8	7479	12606	168.5	1015214	874436	86
6	आधार एवं अग्रिम की वसूली	125	132	105.6	1579	1642	103.9	19119	31553	165
7	शुद्ध लोक ऋण	11841	5536	46.7	4453	3242	72.8	1544523	1450171	93.9
8	लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ	4781	1062	22.2	3535	707	20	205144	486256	237

स्त्रोत - बजट प्रस्ताव 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व लक्ष्य एवं प्राप्तियों का छत्तीसगढ़ एवं राजस्थान सरकार से तुलनात्मक अध्ययन

तालिका क्रं. 3 **(करोड़ में)**

वर्ष 2014-15

क्रं.	मद	मध्यप्रदेश			छत्तीसगढ़			राजस्थान		
		बजट अनुमान	लेखा बजट	%	बजट अनुमान	लेखा बजट	%	बजट अनुमान	लेखा बजट	%
1	कुल प्राप्तियाँ	116582	106813	91.65	4660	46120	84	12827600	11663039	91
2	राज्य कर	38990	36567	93.81	7926	15707	87.6	4065496	3318643	82
3	केंद्रीय करों में हिस्सा	27681	24107	87	9881	8363	84.6	2275554	2530348	111
4	कर भिन्न राजस्व	6759	10375	153.5	6184	4875	78.8	1493861	1322950	88
5	केंद्र से सहायता अनुदान	30063	17591	58.51	4662	8988	61.3	2777556	1960750	71
6	आधार एवं अग्रिम की वसूली	122	6794	5569	294	196	66.7	15143	100444	663
7	शुद्ध लोक ऋण	10776	10148	94	5211	5106	98	1903717	1815539	95
8	लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ	2191	1231	56	500	2885	577	296272	584365	197

स्त्रोत - बजट प्रस्ताव 2012-13, 2013-14, 2014-15 एवं 2015-16

****

छिन्दवाड़ा जिले की कृषि एवं विपणन

डॉ. नोखेलाल साहू *

शोध सारांश – हमारा देश कृषि प्रधान देश है यहाँ कि कुल जनसंख्या का लगभग 52 प्रतिशत लोग कृषि कार्य में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रुप से रोजगार प्राप्त करते है। देश के तीव्र आर्थिक विकास के लिये देश में पंचवर्षीय योजनाओं को लागू किया गया, जिसके अन्तर्गत कृषि क्षेत्र के विकास के लिये प्रत्येक पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि विकास का लक्ष्य निर्धारित किये गये, जिससे कृषि क्षेत्र में विकास तो अवश्य हुआ है। आज कृषि जीवनोपार्जन का साधन न रहकर व्यवसायमुखी बन गई है। कृषकों ने उन्नत बीजों, रासायनिक खादों एवं उन्नत तकनीक का प्रयोग कर प्रति हेक्टेयर उत्पादन में वृद्धि की है।

वर्तमान समय में कृषि उत्पादन में वृद्धि के साथ साथ इसके उचित वितरण की व्यवस्था कर कृषकों को उचित मूल्य प्रदान करना एक चुनौती पूर्ण कार्य हो गया। किसान वर्ग अब जागरुक होने के कारण वह अपनी उपज को नियमित मण्डियों में विक्रय करने लगा, जिससे सरकार द्वारा घोषित समर्थन में मूल्य का लाभ प्राप्त करने लगा। सरकार द्वारा किसानों के हितो की रक्षा के लिये विभिन्न लाभकारी योजनाये संचालित की जा रही है।

प्रस्तावना – वर्तमान दौर उदारीकरण का दौर है। हमारे देश में सन् 1991 में आर्थिक सुधारों की नीति के अन्तर्गत उदारीकरण, वैश्वीकरण एवं निजीकरण की नीति को लागू किया गया है। उदारीकरण के दौर में देश के कृषकों के हितो की रक्षा करना अंत्यन्त आवश्यक हो गया है। उदारीकरण के विभिन्न क्षेत्रों में लाभ तो पहुचाँ है, इसके नुकसान भी सामने आने लगे है। उदारीकरण के प्रभाव कृषि उपज एवं कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में देखने को मिल रहे है। अब कृषि कृषि उपज एवं कृषि संबंधी उत्पादो को अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में विक्रय कर अधिक लाभ कमाया जा रहा है।

थॉमसन के अनुसार – कृषि विपणन के अध्ययन में वे सभी कार्य एवं संस्थाएँ सम्मिलित होती है, जिनके द्वारा कृषकों के खेत पात उत्पादित खाद्यान्न, कच्चा माल एवं उनसे निर्मित माल का फार्म से अंतिम उपभोक्ताओ तक संचालित होता है, विपणन क्रियाओं का कृषकों, मध्यस्थो एवं उपभोक्ताओं पर होने वाले प्रभावों का अध्ययन भी कृषि विपणन के अन्तर्गत आता है।

इस शोध पत्र का कार्य प्रारम्भ करते समय जिससे की जानकारी दो प्रकार से प्राप्त की गई –

1. संगणना पद्धति – जब किसी समस्या से संबंधित पूरे समय यह समूह की प्रत्येक व्यक्तिगत ईकाई का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया जाता है।
2. निदर्शन पद्धति – निदर्शन पद्धति उस अनुसंधान को कहते है, जिसके अनुसार समग्र में से किसी आधार पर कुछ प्रतिनिधि ईकाईयाँ चुनी जाती है और उन चुनी हुई इकाईयों के गहन अध्ययन से निष्कर्ष निकाले जाते है।

   प्रस्तुत शोध पत्र की व्यापक योजना के पश्चात् निम्न रीति द्वारा संमकों का संकलन किया गया

1. प्राथमिक संमक
2. द्वितीयक संमक

छिन्दवाड़ा जिले की कृषि एवं विपणन – छिन्दवाड़ा जिला कृषि प्रधान जिला है, यहॉ कि अधिकांश जनसंख्या का प्रमुख व्यवसाय कृषि है। जिले का कुल क्षेत्रफल 11824 वर्ग कि. मी. है, जिसमें से लगभग 19871 हेक्टेयर भूमि कृषि, कृषि कार्य में उपयुक्त होती है, जिले में खाद्य, रेशेदार, व्यापारिक प्रमुख फसले उत्पादित की जाती है, जिले में आरम्भ से पुरानी पद्धती से कृषि की जाती थी, जिसके कारण कृषि लागत बहुत अधिक थी। परन्तु वर्तमान समय में कृषि में नवीन तकनीक का प्रयोग कर प्रति हेक्टेयर लागत न्यूनतम करने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे कृषि लाभ का विषय बन गया। सन 2002-03 में 280117 कृषि उपकरणो का प्रयोग किया गया, जो सन् 2008-09 में बढ़कर 306300 उपकरण हो गये जिससे जिले में प्रति हेक्टेयर उत्पादन में वृद्धि हुई। छिन्दवाड़ा जिले में वर्ष 2002-03 में चावल 805, गेहूँ 1378, ज्वार 995, मक्का 956, मूँगफली 759, तथा सोयाबीन 879 किलोग्राम प्रति हेक्टर था, जो वर्ष 2009-10 में बढ़कर चावल 1257, गेहू 1726, ज्वार 1290, मक्का 2810, मूँगफली 1295 तथा सोयाबीन 1330 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हो गया। जिले में खाद्य एवं व्यापारिक फसलों का उत्पादन अधिक किया जाता है। खाद्य फसलों में प्रमुख गेहूँ, मक्का, ज्वार आदि है।

तालिका क्र. 01 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

छिन्दवाड़ा जिले में वर्ष 2002-03 में कुल खाद्यन्न का उत्पादन 339409 टन हुआ था, जिसमें गेहूँ एवं मक्का का योगदान 98318 व 143921 टन था। जो वर्ष 2002-03 में कुल खाद्यन्न का उत्पादन 373574 टन हुआ जो विगत वर्ष की अपेक्षा 10.06 प्रतिशत अधिक था , जिसमें गेहूँ एवं मक्का का सार्वधिक योगदान क्रमश: 124414, 125610 टन था। वर्ष 2009-10 में खाद्यान्न का उत्पादन 604942 टन हुआ जिसमें गेहूँ 261785 टन व मक्का 204782 टन था।

रेशेदार फसलों का उत्पादन जिले के सौसर एवं पाण्ढुर्णा क्षेत्र में अधिक होता है,रेशेदार फसलो में प्रमुख कपास है –

तालिका क्र. 02
रेशेदार फसलों के उत्पादन की स्थिति

(टन में)

क्र.	वर्ष	कपास	सन्
1	2002-03	13679	109
2	2003-04	18660	183

* शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला - छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

3	2004-05	18764	181
4	2005-06	20112	143
5	2006-07	16170	84
6	2007-08	20529	142
7	2008-09	20207	126
8	2010-10	21274	120

स्त्रोत – कृषि कार्यालय छिन्दवाड़ा (म0 प्र0)

उपरोक्त आकंड़ो से स्पष्ट होता है कि कपास का उत्पादन सन् 2002-03 में 13679 टन हुआ, जो 36 प्रतिशत बढ़कर 2003-04 में 18604 टन को दर्शाता है। वर्ष 2002-03 की तुलना में वर्ष 2009-10 में 55.32 प्रतिशत वृद्धि के साथ 21274 टन उत्पादन हुआ। वर्ष 2002-03 में सन् का उत्पादन 109 टन था, जो वर्ष 2009-10 मे बढ़कर 120 टन हो गया। अन्तर्राष्ट्रीय एवं देशी बाजार कपास की मॉग अधिक होने के कारण कृषक कपास उत्पादन में रुचि लेने लगा एवं कपास उत्पादन से कृषक को अधिक लाभ होने लगा।

हरित क्रान्ति एवं उदारीकरण के दौर में व्यापारिक फसलों के उत्पादन पर अधिक जोर दिया जा रहा है। जिले की व्यापारिक फसलों में प्रमुख सोयाबीन, मूगँफली एवं गन्ना (गुढ़) है।

तालिका क्र. 03 (देखे अगले पृष्ठ पर)

जिले में सोयाबीन उत्पादन पर अधिक बल दिया जाता है, सन् 2002-03 की तुलना में सन् 2009-10 में सोयाबीन का उत्पादन 132 प्रतिशत बढ़कर 205640 टन हुआ व्यापारिक फसलों में दूसरी प्रमुख फसल मूगँफली है। जो वर्ष 2002-03 मे मूगँफली का उत्पादन 21187 टन था वर्ष 2009-10 में 53.15 प्रतिशत वृद्धि के साथ 32449 टन हुआ जिले में गन्ना का उत्पादन वर्ष 2002-03 में 68330 टन था जो सन् 2009-10 में 71494 टन हो गया, जो 4.63 प्रतिशत वृद्धि दर्शाता है। जिले में शक्कर मिल होने के कारण भी गन्ना उत्पादन में आवश्यक उत्तरोत्तर वृद्धि नहीं हुई इसका प्रमुख कारण एक वर्षीय फसल का होना जिसमें वर्ष भर पानी की आवश्यकता होती है।

कृषि एवं कृषि विपणन में सुधार के लिये सरकार द्वारा विभिन्न प्रकार की नीति एवं योजनाये संचालित की जा रही है, जिनमें प्रमुख 22 दिसम्बर 1992 में बनी कृषि नीति है। 1 जुलाई 2000 में नई राष्ट्रीय कृषि नीति घोषित की गई, इस नीति का प्रमुख उद्देश्य तीव्रतर कृषि विकास को बढ़वा देना है। कृषि उत्पादकों को कृषि उपज मण्डियों में विपणन प्रोत्साहित करने के लिये मुख्यमंत्री कृषक जीवन कल्याण योजना 25 सितम्बर 2008 से लागू की गई तथा साथ में म. प्र. में 17 मार्च 2004 से सविदा खेती प्रारम्भ की गई। जिसके अन्तर्गत कृषक और विपणन फर्मो के मध्य ऐसा अनुबन्ध होता है जिसमें कृषि उपज के मूल्य पहले ही तय कर लिये जाते है।

समास्याएँ एवं सुझाव

1. मध्यस्थो की संख्या का बहुल्य होना।
   इस समस्या के समाधान के लिये सरकार अधिक से अधिक नियंत्रित मण्डियों की स्थपाना करे। जिससे कृषि विपणन में मध्यस्थों की संख्या मे कमी आयेगी।
2. आधुनिक कृषि करने के कारण कृषकों पर कृषि ऋण का शिकंजा कसना।
   इस समस्या के समाधान के लिये सरकार छोटे किसानों तक अपनी ऋण संबंधी योजनाए उपलब्ध कराये जिससे वह साहूकारो से ऋण न ले।
3. कृषि लागत में वृद्धि होन से कृषकों के लाभ में कमी आना।

इस समस्या के समाधान के लिये सरकार खाद्य एवं बीजों तथा उन्नत कृषि उपकरणो पर अधिक से अधिक अनुदान प्रदान करें, जिससे कृषक वर्ग बीज खाद्य एवं उपकरण सरकारी नीति के तहत खरीद सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. एन. एल. अग्रवाल, भारतीय कृषि अर्थतंत्र,राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमिक जयपुर।
2. सावन्त मल माथुर, कृषि उपज मंडी, बाफना पब्लिकेशन हाउस जयपुर।
3. डॉ एस. सी. जैन,विपणन प्रंबंध, साहित्य भवन पाब्लिक आगरा।

तालिका क्र. 01
छिन्दवाड़ा जिले में खाद्य पदार्थ का उत्पवादन

(टन में)

क्र.	वर्ष	गेहूँ	चावल	चना	मक्का	ज्वार	बजरा	तुअर	मूगँफली	योग
1	2002-03	98318	20472	13948	143921	60757	44	1425	524	339409
2	2003-04	124414	24641	21264	125610	53773	36	22998	808	373574
3	2004-05	111696	25284	26505	145979	88568	61	21099	1128	420320
4	2005-06	116849	20016	24534	137476	46971	37	18689	524	365096
5	2006-07	146417	19097	27786	161070	43502	38	9491	368	407769
6	2007-08	192674	23569	30744	198255	53079	48	16374	675	515418
7	2008-09	137450	24169	26480	241492	49551	19	10420	654	490235
8	2010-10	261785	20945	41580	204782	58059	33	17758	665	604942

स्त्रोत – जिला सांख्यिकी पुस्तिका , जिला सांख्यिकी कार्यालय छिन्दवाड़ा

तालिका क्र. 03

छिन्दवाड़ा जिले मे व्यापारिक फसलों के उत्पादन की स्थिति

क्र.	वर्ष	मूँगफली	सोयाबीन	अलसी	सरसो	सूरजमुखी	गन्ना (गुढ़)	कुल योग
1	2002-03	21187	88522	192	126	16	68330	178373
2	2003-04	25761	110715	412	221	42	68549	205702
3	2004-05	24933	117909	306	190	35	69105	212478
4	2005-06	25215	120270	571	198	35	89652	235941
5	2006-07	28237	147487	416	154	07	84626	260932
6	2007-08	31179	156740	182	240	02	84287	272630
7	2008-09	31405	169803	165	150	32	68725	270280
8	2010-10	32449	205640	279	156	18	71494	310036

स्त्रोत – कृषि कार्यालय छिन्दवाड़ा (म0 प्र0)

****

भोपाल जिले के औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश वित्त निगम का योगदान एवं संभावनाऍं

डॉ. एन. के. पाटीदार * डॉ. वी. के. जैन ** दीपक शाक्यवार ***

शोध सारांश – औद्योगिक विकास की दृष्टि से म.प्र. में मध्यप्रदेश वित्त निगम की स्थापना के बाद तीव्र गति से विकास हुआ है। तालिका क्रंमाक –1 से स्पष्ट है कि विगत पाँच वर्षो की तुलना के अध्ययन से पता चलता है कि स्वीकृत आवेदन पत्रों में 86.09 प्रतिशत वृद्धि हुई है तथा स्वीकृत ऋण राशि में 2014–15 तक 99 प्रतिशत वृद्धि हुई है, वहीं ऋण वितरीत राशि में वर्ष 2014–15 तक 122.7 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई एवं ऋण वसूली राशि में भी वर्ष 2014–15 तक 86.प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई अत: आकडों से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश वित्त निगम द्धारा औद्योगिक विकास में उल्लेखनिय योगदान किया जा रहा है। तथा मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास की अत्यधिक संभावनाऍं है।

प्रस्तावना – भारत जैसे विकासशील राष्ट्र के औद्योगिक विकास के लिये आवश्यक वित्त्त की पूर्ति करना असंभव नही तो कठिन कार्य अवश्य है वित्त की पूर्ति के लिये भारत का राजतंत्र प्रयत्नशील है। इस दिशा में भारतीय संविधान में भी राज्य सरकारों को अपने अधिकार क्षेत्र में उधोग और कृषि को बढावा देने की प्रर्याप्त स्वायतता प्रदान की गयी है। जिसका उद्देश्य प्रत्येक राज्य को प्रतिस्पर्धी प्रयासों द्धारा उद्योगों और कृषि को अपने राज्य में विकसित करना है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक राज्य इस और विशेष प्रयास करें।

राज्यों में औद्योगिक विकास से जन सहयोग एवं जान भावना को प्रोत्साहन मिलेगा। इससे क्षेत्रिय जनता भी औधोगिक विकस की और आकृष्ट होगी। क्षेत्रीय रोजगार अवसरों में वृद्धि होगी। आर्थिक विकास में संतुलन स्थापित होगा। राष्ट्रीय स्तर पर औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना के बाद लघु माध्यम स्तरीय उद्योगों को अल्प एवं मध्यमकालीन वित्त प्रदान करने के लिये क्षैत्रीय वित्त निगमों की आवश्यकता अनुभव की गयी है।

मध्यप्रदेश वित्त निगम का परिचय–भारत सरकार तात कालिक वित्त मंत्री सन्मुख चटटी ने औद्योगिक वित्त निगमों की स्थापना के बाद विदेशो का हवाला देते हुये कहा था कि यहॉ बड़े पैमाने के उद्योगों तथा लघु एवं मध्यम आकार की इकाइयों के लिये वित्त प्रदान करने के लिये अलग–अलग वित्तीय संस्थायें होती है।

अत: उपरोक्त सुझावों एवं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुये भारतीय संसद ने 28 सितम्बर 1951 को राज्य वित्त अधिनियम पास किया जिसके अनुसार विभिन्न राज्यों को अपने अपने राज्य में वित्त निगम स्थापित करने का अधिकार प्रदान किया गयाहै। भारत में राज्य वित्त निगम अधिनियम पारित हो जाने के पश्चात भारत के प्रत्येक राज्य में राज्य वित्त निगम की स्थापना के प्रयास प्रारभ्भ हो गये । सर्वप्रथम सन्1953 में पंजाब वित्त निगम की स्थापना की गई। वर्तमान समय में देश भर में 18 राज्य वित्त निगम की स्थापना की जा चुकी है।

भारत में तिथिवार स्थापित राज्य वित्त निगम

क्र	राज्य वित्त निगम	मुख्य कार्यालय	स्थापना दिनांक
1	तमिलनाडु औद्योगिक एवं विनियोग निगम लिमिटेड मद्रास	मद्रास	24.03.1949
2	पंजाब वित्त निगम	चंडीगढ	01.02.1953
3	केरला वित्त निगम	त्रिवेन्द्रम	23.11.1953
4	महाराष्ट्र राज्य वित्त निगम	बम्बई	30.11.2953
5	पश्चिम बंगाल वित्त निगम	कोलकाता	01.03.1994
6	आसाम वित्त निगम	गोहाटी	01.03.1954
7	उत्तर प्रदेश वित्त निगम	कानपुर	25.08.1954
8	बिहार राज्य वित्त निगम	पटना	02.11.1954
9	राजस्थान राज्य वित्त निगम	जयपुर	17.01.1955
10	मध्यप्रदेश वित्त निगम	इन्दौर	30.06.1955
11	आन्ध्रप्रदेश वित्त निगम	हैदाराबाद	01.11.1956
12	उडीसा राज्य वित्त निगम	कटक	20.03.1956
13	कर्नाटक राज्य वित्त निगम	बंगलौर	30.03.1956
14	जम्म कश्मीर राज्य वित्त निगम	जम्मू एण्ड कश्मीर	01.12.1956
15	गुजरात राज्य वित्त निगम	अहमदाबाद	01.05.1960
16	दिल्ली वित्त निगम	नई दिल्ली	01.04.1967
17	हरियाणा वित्त निगम	चंडीगढ	01.04.1967
18	हिमाचल प्रदेश वित्त निगम	शिमला	01.04.1967

मध्यप्रदेश वित्त निगम की स्थापना राज्य वित्त निगम अधिनियम 1951 के अन्तर्गत मध्यभारत सरकार द्यारा प्रसारित विज्ञप्ति क्रंमाक 3728/13/दिनांक 01–07–1955 को हुई । किन्तु नवम्बर में मध्यभारत शासन के राज्य वित्तीय निगम अधिनियम की धारा 3(1) के अन्तर्गत प्रदत्त सुविधाओं के अधीन मध्यभारत वित्त निगम का नाम परिवर्तित कर मध्यप्रदेश

*प्राध्यापक व विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला – मन्दसौर (म.प्र.) भारत
**प्राध्यापक व विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जिला – नीमच (म.प्र.) भारत
***शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

वित्त निगम कर दिया गया तथा इसका कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण मध्यप्रदेश है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1 मध्यप्रदेश में लघु उद्योगों के विकास के लिये किये गये प्रयासों का विश्लेशण करना।

2 भोपाल जिले के औद्योगिक विकास में मध्यप्रदेश वित्त निगम के योगदान का मूल्यांकन करना।

3 भोपाल जिले के उद्योगों के विकास के लिये संभावनाओं का पता लगाना।

4 औद्योगिक विकास की दृष्टि से मध्यप्रदेश वित्त निगम कार्य प्रणाली का अध्ययन करना।

5 भोपाल जिले के उधमियों को वित्त उपलब्ध कराने वालें स्त्रोतों की सेवा शर्तो का अध्ययन करना ।

संबंधित साहित्य समीक्षा – प्रवीण शर्मा औद्योगिक प्रगति में संस्थागत वित्त की भूमिका 2004–औद्योगिक प्रगति में राष्ट्रीयकृत बैंकों /संस्थागत वित्त का क्या महत्वपूर्ण योगदान है। और औद्योगिक विकास किस तरह से हो रहा है। इस पर ध्यान दिया है।

शैलेन्द्र मिश्रा– म.प्र. वित्त निगम की ऋण नीति की उपादेयता का विश्लेशणात्मक अध्ययन –2005 से 2010 में किया इनके शोध ग्रंन्थ में मध्यप्रदेश वित्त निगम की वित्तीय स्थिति ऋण की मांग की तुलना में कमजोर बतलाई गई है। इसकी वजह दर और व्याज की ऋण राशि को मंहगा बनाते है।

अध्ययन की शोध प्रविधि– किसी भी कार्य की सफलता उसकी शोध प्रविध पर पूर्णत: निर्भर होती है। शोध यदि उचित विधियों द्वारा किया जाता है तो अनुसंधान के निष्कर्ष सही होने की प्रमाणिकता हो जाती है। विश्वनीय तथा सभी दृष्टि से परिपूर्ण समंक अनुसंधान को मौलिकता प्रदान करते है। प्रस्तुत शोध कार्य मुख्य रूप से द्वितीयक समंको पर आधारित है। अत: प्राथमिक समंको का भी यथा समय प्रयोग किया गया है शोध शीर्षक भोपाल जिले के औद्योगिक विकास में म.प्र. वित्त निगम का योगदान एवं संभावनाएँ विषय पर शोध कार्य केवल भोपाल जिले तक ही सीमित रखा है।

तालिका क्रंमाक –1(देखे अगले पृष्ठ पर)

1 वर्ष 2010–11 में मध्यप्रदेश वित्त निगम द्वारा स्वीकृत आवेदन पत्रो की सख्यां 175 थी, जिनको स्वीकृत ऋण राशि 246.35 करोड रूपये थी। और वितरित ऋण राशि 151.25 करोड़ रूपये तथा निगम द्वारा वर्ष 2010–11 में ऋण वसूली राशि 147.06 करोड रूपये थी।

2 वर्ष 2011–12 में निगम द्वारा स्वीकृत आवेदन पत्रों की संख्या 210 थी जो कि 2010–11 की तुलना में 20 प्रतिशत वृद्धि हुई है। तथा 2011–12 में स्वीकृत ऋण राशि 260.03 करोड़ रू. थी जो कि 2010–11 की तुलना में 5.55 प्रतिशत वृद्धि हुई है। एवं 2011–12 में निगम द्वारा ऋण वितरीत राशि 163.03 करोड़ रूपये है। जो कि 2010–11 की तुलना में 7.79 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। और ऋण वसूली राशि 181.15 करोड रू. है।जो 2010–11 की तुलना में 23.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

3 वर्ष 2012–13 में निगम द्वारा स्वीकृत आवेदन पत्रों की संख्या 287 थी। जिसमें 2011–12 की तुलना में 36.67 प्रतिशत वृद्धि हुई है। तथा 2012–13 में ऋण स्वीकृत राशि 324.41 करोड रू. थी। जिसमें 2011 –12 की तुलना में 24.76 प्रतिशत वृद्धि हुई है। तथा 2012–13 में निगम द्वारा ऋण वितरीत राशि 209.58 करोड़ रू. है। जिसमें कि 2011 –12 की तुलना में 28.55 प्रतिशत वृद्धि हुई है और ऋण वसूली राशि 202.82 करोड रू. है। जिसमें 2011–12 की तुलना में 11.96 प्रतिशत वृद्धि हुई है।

4 वर्ष 2013–14 में निगम द्वारा स्वीकृत आवेदन पत्रों की संख्या 272 थी। जिसमें कि 2012–13 की तुलना में 5.23 प्रतिशित की कमी हुई है। तथा 2013–14 में स्वीकृत ऋण राशि 403.53 करोड़ रू. थी। जिसमें कि 2012–13 की तुलना में 24.4 प्रतिशत वृद्धि हुई है। तथा 2013–14 में ऋण वितरित राशि 287.79 करोड़ रू. थी। जिसमें 2012–13 की तुलना में 33.32 प्रतिशत वृद्धि हुई है और ऋण वसूली राशि 2013–14 में 226.58 करोड़ रू. है। जिसमें 2012–13 की तुलना में 11.7 प्रतिशत वृद्धि हुई है।

5 वर्ष 2014–15 में निगम द्वारा स्वीकृत आवेदन पत्रों की संख्या 326 है। जिसमें 2013 –14 की तुलना में 19.85 प्रतिशत वृद्धि हुई है। तथा 2014 15 में ऋण स्वीकृत राशि 490.29 करोड़ रू. है। जिसमें 2013–14 की तुलना में 25.05 प्रतिशत वृद्धि हुई है। तथा 2014–15 में ऋण वितरीत राशि 336.77 करोड़ रू. है। जिसमें कि 2013 – 14 की तुलना में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। ऋण वसूली राशि 2014–15 में 273.45 करोड़ रू.है। जिसमें कि 2013–14 की तुलना में 20.68 प्रतिशत वृद्धि हुई है।

शोध निष्कर्ष – अध्ययन से पता चलता है कि मध्यप्रदेश वित्त निगम का औद्योगिक विकास मैं उल्लेखनीय योगदान रहा है। निगम द्वारा उद्यमियों का उधोग स्थापित करने के लिये ऋण उपलब्ध करने के साथ ही पिछले वर्षों में निरन्तर स्वीकृत आवेदन पत्रों की संख्या, स्वीकृत ऋण राशि, वितरित ऋण राशि, एवं वसूली राशि में लगातार वृद्धि दर्ज की गई हैं जो कि 2010–11 से वर्ष 2014–15 की तुलना में आवेदन पत्रों की संख्या 175 से 326 हो गई जिसमें 86.9 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है।

इस प्रकार स्वीकृत ऋण राशि भी 2010 –11 में 246.35 करोड रू0 थी। जो 2014–15 में 490.29 करोड़ रू. हो गई। इसमें भी 99 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है। व ही ऋण वितरीत राशि 2010–11 में 151.25 करोड़ रू. थी जो बडकर 2014.–15 में 336.77 करोड़ रू. हो गई ऋण वितरीत राशि में 122.7 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई एवं ऋण वसूली राशि वर्ष 2010 –11 में 147.06 करोड़ रू0 थी जो 2014–15 में बढकर 273.45 करोड़ रू. हो गई इसमे भी 86 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है। सभी मदों में लगतार वृद्धि होना इस बात का प्रतीक है। कि औद्योगिक विकास तीव्र गति से हो रहा है। जिसमें मध्यप्रदेश वित्त निगम का उल्लेखनिय योगदान है।

सुझाव–वित्त निगम की ऋण निति भारतीय रिर्जव बैंक भारतीय औद्योगिक विकास बैंक तथा राज्य शासन द्वारा निर्धारित की जाती है। निगम को घोशित निति के अन्तर्गत ही ऋण प्रदान करने होते है। निगम को ऋण नीति में स्वायत्तता दिये जाने की आवश्यकता है।

वित्त निगम को ऋण प्रक्रिया में किसी भी प्रकार के राजनीतिक एवं आर्थिक दबाओं से मुक्त रहते हुए करना होगा। दबाव में रहकर कोई भी व्यक्ति या संस्था अच्छी तरह से कार्य सम्पन्न नहीं कर सकती है।

वित्त निगम की ऋण प्रक्रिया का सरलीकरण करके उद्यमियों को उधोगों की स्थापना एवं विकास के लिये अधिक प्रोत्साहित किया जा सकता है। वित्त निगम को अंश पुंजी के माध्यम से वित्त के स्त्रोत में वृद्धि करना चाहिऐं जिससे निगम का ऋण समान अनुपात भी संतुलित होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश वित्त निगम के वार्षिक प्रतिवेदन - 2010-11
2. मध्यप्रदेश वित्त निगम के वार्षिक प्रतिवेदन - 2011-12
3. मध्यप्रदेश वित्त निगम के वार्षिक प्रतिवेदन - 2012-13
4. मध्यप्रदेश वित्त निगम के वार्षिक प्रतिवेदन - 2013-14
5. मध्यप्रदेश वित्त निगम के वार्षिक प्रतिवेदन - 2014-15
6. मध्यप्रदेश वित्त निगम की मासिक एवं वार्षिक पत्रिकाऐं
7. सांख्यिकी के सिद्धान्त लेखक -डॉ,एस,एम, शुक्ल
8. रिसर्च मैथ्योंलोजी - लेखक डॉ,आर,एन,त्रिवेदी, एवं डॉ0 डी,पी,शुक्ला
9. शोघ पत्रिका दिव्या शोध समीक्षा- प्रकाशन नीमच,
10. www.mp.industry.org.com
11. www.mpfc.org.com
12. internet.

तालिका क्रंमाक -1

रूपये करोड़ो में

गत पॉच वर्ष के आकड़े

वर्ष	स्वीकृत आवेदन पत्रो की संख्या	स्वीकृत ऋण राशि	वितरित ऋण राशि	वसूली राशि
2010-11	175	246.35	151.25	147.06
2011-12	210	260.03	163.03	181.15
2012-13	287	324.41	209.58	202.82
2013-14	272	403.53	287.79	226.58
2014-15	326	490.29	336.77	273.45

स्त्रोत्- मध्यप्रदेश वित्त निगम के वार्षिक प्रतिवेदन 2010-11 से 2014-15 अब तक

****

वाणिज्यिक वाहनों का मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में योगदान

डॉ. पी. एल. पाटीदार * सुस्मिता हिरवे **

प्रस्तावना - आधुनिक सभ्यता आधुनिक परिवहन के साधनों की पुत्री है। परिवहन के साधनों के विकास के साथ-साथ संस्कृति व सभ्यता का विकास हुआ है, इस बात का इतिहास साक्षी है। पृथक रहने वाले समाज में नागरिक भाव तब तक जागृत नहीं हुआ, जब तक कि वह दूसरों के सम्पर्क में नहीं आया। परिवहन के सुविकसित साधन आधुनिक जीवन का एक आवश्यक अंग है। आर्थिक क्षेत्र में तो आधुनिक वाणिज्यिक वाहनों का प्रयोग सर्वाधिक रहा है, यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि सस्ती ढुलाई ही एक ऐसा आधार स्तम्भ है, जिस पर कि उन्नीसवीं व बीसवीं शताब्दी के आर्थिक विकास की नींव खड़ी हुई है।

किसी भी देश के आर्थिक विकास में परिवहन के साधनों में वाणिज्यिक वाहनों की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है। विकसित वाणिज्यिक वाहनों की व्यवस्था के कारण राष्ट्रीय आय का बड़ा अंश उत्पादित होता है तथा इससे राष्ट्रीय आय का अनुकूलतम प्रयोग भी सम्भव होता है। इससे कृषि विकास तथा औद्योगिकरण को भी बढ़ावा मिलता है। वाणिज्यिक वाहनों के पर्याप्त विकास के परिणाम स्वरूप देश के सामाजिक जीवन में भी अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगते है। जिससे आर्थिक विकास की दृष्टि से अनुकूल वातावरण का निर्माण होता है।

मध्यप्रदेश के अल्पविकसित होने का एक प्रमुख कारण यह भी है कि यहाँ विकसित प्रदेशों की तुलना में वाणिज्यिक वाहनों के साधनों का अभाव था। किसी भी प्रदेश की उन्नति उसके वाणिज्यिक वाहनों के साधनों के विकास की अवस्था से मानी जा सकती है। वाणिज्यिक वाहनों के साधन किसी प्रदेश में उतना ही महत्व रखते है, जितना मानव शरीर में धमनियाँ। वाणिज्यिक वाहनों के परिवहन के साधनों के प्रसार से प्रदेश में उद्योग एवं व्यवसाय की भी उन्नति होती है। वाणिज्यिक वाहनों के विकास से विश्व का आकार संकीर्ण हो गया है। प्राय: वाणिज्यिक वाहनों के परिवहन के साधनों का पर्याप्त विकास होने पर देश के सामाजिक जीवन में कुछ ऐसे परिवर्तन होते है, जिनसे आर्थिक विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार होता है।

आर्थिक विकास में वाणिज्यिक वाहनों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। देश व प्रदेश का वाणिज्य-व्यापार, वाणिज्यिक वाहनों के चक्कों पर ही घुमता है।

शोध विषय का चयन एवं उद्देश्य - हमारे भारत देश में कई प्रकार के वाहन है। जिनका उपयोग अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग प्रकार से आवश्यकतानुसार किया जाता है। परन्तु जैसे-जैसे देश प्रगति की ओर अग्रसर हो रहा है। वैसे-वैसे उसमें कई परिवर्तन हो रहे है। सम्पूर्ण देश की प्रगति प्रत्येक राज्य व प्रत्येक शहर की प्रगति पर निर्भर करती है। और यह प्रगति तभी संभव है, जब परम्परागत साधनों को छोडकर नवीन एवं लाभदायक साधनों का अधिक से अधिक उपयोग किया जायेगा। प्रत्येक राज्य उन्हीं वाणिज्यिक वाहनों का प्रयोग करते है, जो उनके राज्य के लिए लाभदायक हो। वाणिज्यिक वाहनों के क्षेत्र में दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रही है। इनका उपयोग उद्योगों में कारखानों में मीलों में खदानों से खनिज निकालने में अस्पतालों में व कन्सट्रक्शन का कार्य करने में किया जाता है। हमने इस क्षेत्र का चयन मध्यप्रदेश के विकास व उस पर पड़ने वाले प्रभाव व परिवर्तन को जानने के लिए किया है।

प्रस्तावित शोध का विषय का उद्देश्य निम्नानुसार है।

1. मध्यप्रदेश में वाणिज्यिक वाहनों की संरचना एवं ढाँचागत स्थिति का आकलन करना।
2. वाणिज्यिक वाहनो की लाभदायकता का अध्ययन करना।
3. वाणिज्यिक वाहनों का मध्यप्रदेश की प्रगति में योगदान का अध्ययन करना।
4. वाणिज्यिक वाहनों के विकास से मध्यप्रदेश के आर्थिक स्तर व आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
5. वाणिज्यिक वाहनों की संरचना में हो रहे परिवर्तनों का अध्ययन करना।

शोध का यह उद्देश्य रहा है कि मध्यप्रदेश जैसे राज्य में वाणिज्यिक वाहनों पर अनुसंधान नहीं हुए है। इस शोध के माध्यम से विगत 5 वर्षो में वाणिज्यिक वाहनों में हुए परिवर्तन का अध्ययन किया गया है।

मध्यप्रदेश के आर्थिक विकास में वाणिज्यिक वाहनों की भूमिका को निम्न बिन्दुओं से स्पष्ट किया जा सकता है।

- **अध्ययन का क्षेत्र एवं अवधि -** प्रस्तुत शोध कार्य के क्षेत्र के लिए मध्यप्रदेश का चयन किया गया है। शोध अध्ययन की अवधि 2005-06 से 2009-10 के लिए रखी गई है।
- **शोध की तकनीक -** प्रस्तुत शोध कार्य को पूर्ण करने के लिए समंकों की आवश्यकता होती है। कोई भी शोध कार्य समंकों के बिना अधूरा होता है क्योंकि समंक ही विश्लेषण का आधार होता है। अध्ययन हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों का संग्रहण कर विश्लेषण किया गया है।
- **उत्पादन के क्षेत्र में वाणिज्यिक वाहनों की भूमिका -** आर्थिक अर्थ में उत्पादन का अर्थ है। उपयोगिता का सृजन करना या उसमें वृद्धि करना। उत्पादक क्रियाओं के कई रूप है जैसे रूप परिवर्तन द्वारा उपयोगिता का सृजन, स्थान परिवर्तन द्वारा उपयोगिता का सृजन, समय परिवर्तन द्वारा उपयोगिता का सृजन, अधिकार परिवर्तन एवं सेवा द्वारा उपयोगिता का सृजन। इन सभी रूपों में वाणिज्यिक वाहनों की सहायता से ही उपयोगिता में सृजन सम्भव है। कारखानें तक कच्चा माल पहुंचाना वाणिज्यिक वाहनों का ही कार्य है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
* शोधार्थी, शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

वाणिज्यिक वाहन वस्तुओं को उत्पादन केन्द्र से उपभोक्ता तक पंहुचाकर उनकी उपयोगिता में वृद्धि करते है। अन्न की उपयोगिता खलिहान की अपेक्षा बाज़ार में अधिक है। कारखाने में निर्मित वस्तु की उपयोगिता कारखाने की अपेक्षा उपभोग केन्द्रों या बाज़ारों में अधिक है। खदानों से निकलें कोयले की उपयोगिता खदानों की अपेक्षा कारखानें, रेल स्टेशन अथवा बंदरगाह पर अधिक है। वनों की लकड़ी वनों की अपेक्षा नगरों में अधिक उपयोगी है। इस प्रकार कम उपयोगिता वाले स्थान से अधिक उपयोगिता वाले स्थान को वस्तु परिवहित करके वाणिज्यिक वाहनों की उपयोगिता का सृजन करते है।

वाणिज्यिक वाहन समय उपयोगिता भी बढ़ाते है। वाणिज्यिक वाहन और भंडार सुविधाओं की सम्मिलित सेवा द्धारा ही वस्तु ऐसे समय में उपभोक्ताओं तक पंहुचाई जाती है, जब कि उनकी आवश्यकता की उपयोगिता अधिक है।

वस्तुत: सम्पूर्ण उत्पादन का मूल उद्देश्य उपभोग है। उपभोक्ता और उत्पादक के मध्य की खाई को पाटने का कार्य वाणिज्यिक वाहन करते है।

● **वाणिज्यिक वाहन व विशिष्टिकरण –** भौगोलिक श्रम विभाजन या विशिष्टिकरण वह उत्पादन प्रणाली है। जिसमें प्रत्येक भौगोलिक क्षेत्र उन वस्तुओं के उत्पादन में विशिष्टता प्राप्त करता है। जिनके उत्पादन के लिए उपयुक्त कच्चा माल, जलवायु, श्रम आदि की सुविधांए उपलब्ध है। कुछ देशों की भूमि अन्य देशों की अपेक्षा अधिक उर्वरा है। अत: वे खेती–बाड़ी से खाद्य–पदार्थ और औद्योगिक कच्चा माल प्राप्त करने में संलग्न है। कुछ देशों में खनिज संपदा अधिक है। अत: वे औद्योगिक उत्पादन में संलग्न है। क्षेत्रीय श्रम–विभाजन ने ही अन्तर्राष्ट्रिय व्यापार को बढ़ावा दिया है। वाणिज्य के कुशल वाहन एक क्षेत्र के सस्ते और उच्च कोटि के उत्पादन को दूसरे क्षेत्र में पहुंचाकर विशिष्टिकरण को और गहन बनाने में सहयोग देते है। उपभोक्ताओं को विश्व के किसी भी कोने से सस्ती व उच्च कोटि की वस्तुएं सुलभ होना वाणिज्यिक वाहनों का ही कार्य है।

मध्यप्रदेश के वाणिज्यिक वाहन समूह इन्दौर के पास औद्योगिक विकास केन्द्र पीथमपुर में स्थित है। वाणिज्यिक वाहन समूह के आधारभूत औद्योगिक ढ़ाँचे के लिए बुनियादि सुविधाएँ जैसे, बिजली, जल आपूर्ति, दूरसंचार सेवाएँ, सड़कें आदि उपलब्ध है। पीथमपुर वाणिज्यिक वाहन समूह भारत के औद्योगिक समूहों में से एक है। इसकी पुष्टि इस बात से स्पष्ट होती है कि मध्यप्रदेश में आयशर कम्पनी, हिन्दुस्तान मोटर्स, जयहिन्द इलेक्ट्रिकल लिमिटेड़, कपारो इण्डिया, मानफोर्स ट्रक प्रायवेट लिमिटेड एवं ब्रिजस्टोन इण्डिया प्रायवेट लिमिटेड जैसी प्रतिष्ठित कम्पनियाँ विनिर्माण क्षेत्र में उत्पादन कर रही है।

● **वाणिज्यिक वाहनों से कुल राजस्व प्राप्तियाँ –** यातायात विभाग द्धारा वाणिज्यिक वाहनों से कर की प्राप्तियाँ (राजस्व) की जा रही है। शोध अवधि वर्ष 2005–06 से वर्ष 2009–10 तक लगातार कर में वृद्धि हो रही है। यह सभी कर प्राप्तियाँ वाणिज्यिक वाहनों से प्राप्त की गयी है। कर प्राप्तियों को प्राप्त करने में जो व्यय हो रहा है, उसमें कमी आ रही है। यातायात विभाग द्धारा राजस्व (कर) प्रतिमाह कर, तिमाही कर, अन्य प्राप्तियाँ, आजीवन कर यह सभी कर वाणिज्यिक वाहनों के संचालकों से वसूले गये है एवं इनमें निरन्तर वृद्धि हो रही है।

मध्यप्रदेश में यातायात विभाग द्धारा वाणिज्यिक वाहनों से प्राप्त कुल राजस्व –

क्रमांक	वर्ष	आय (कर के रुप में) (रुपये हजार में)
1	2005.06	4658682
2	2006.07	5579319
3	2007.08	6350869
4	2008.09	7091529
5	2009.10	7752051

स्त्रोत – मध्यप्रदेश यातायात विभाग वार्षिक रिर्पोट 2009–10

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि वर्ष 2005–06 में यातायात विभाग को कर के रुप में आय रुपये 465.8682 करोड़ हुई जो बढ़कर वर्ष 2006–07 में रुपये 557.9319 करोड़ हो गई। इसी प्रकार वर्ष 2007–08 में यह आय पुन: बढ़कर रुपये 635.0869 करोड़ हुई और वर्ष 2008–09 में यह आय रुपये 709.1529 करोड़ हो गई एवं अन्तिम वर्ष 2009–10 में रुपये 778.2051 करोड़ हो गई। इसी प्रकार इस तालिका से ज्ञात हो रहा है कि मध्यप्रदेश के आर्थिक विकास में राजस्व से प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है।

निष्कर्ष –

1. **मध्यप्रदेश में वाणिज्यिक वाहनों की वृध्दि :** मध्यप्रदेश में वाणिज्यिक वाहनों की वृद्धि तेज गति से हो रही है। वाणिज्यिक वाहनों में वृद्धि के प्रमुख कारण : (1) प्रदेश में कुल उत्पादन में वृद्धि, (2) सड़को का विकास, (3) कृषि के ढ़ाँचे में परिवर्तन, (4) लोगों की परिवहन सम्बन्धी आदतों में परिवर्तन आदि रहे है। उत्पादन और इसके परिणामस्वरूप कुल उपभोगों में वृद्धि ने उत्पादक व उपभोक्ता दोनों की वाणिज्यिक वाहनों की माँग को बढ़ा दिया है।
2. **म.प्र. की भौगोलिक स्थिति का आर्थिक विकास में योगदान :** मध्यप्रदेश की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि जिससे पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण जाने वाला सारा परिवहन मध्यप्रदेश से होकर गुजरता है। मध्यप्रदेश का परिवहन विकास न केवल राज्य के आर्थिक विकास से जुड़ा हुआ है, बल्कि पड़ोसी राज्यों के आर्थिक विकास से भी जुड़ा है।
3. **उद्योग एवं व्यवसाय में वाणिज्यिक वाहनों की भूमिका –** वाणिज्यिक वाहनों के सुलभ व सस्ते साधनों ने भारत ही नहीं विश्व के सभी देशों के आंतरिक व विदेशी व्यापार में आशातित वृद्धि की है। इन वाणिज्यिक वाहनों ने व्यापारिक प्रतियोगिता में भी वृद्धि दर्ज की है। आज व्यापार की दिशा व मात्रा दोनों में ही विस्तार हो रहा है। देश का वाणिज्यिक–व्यापार वाणिज्यिक वाहनों के चक्कों पर ही घुमता है, यह कहना उपयुक्त है।
4. **बैंक व बीमा व्यवसाय में वाणिज्यिक वाहनों का महत्व –** वाणिज्यिक वाहनों ने ही बैंक व बीमा व्यवसाय आदि को बढ़ावा दिया है। अपर्याप्त वाणिज्यिक वाहनों की सुविधाएँ ही अभी तक भारत में बैंकिग व बीमा सुविधाओं के अभाव का प्रमुख कारण थी। अब वाणिज्यिक वाहनों के विकास के साथ–साथ इनका भी विकास हो रहा है। जिससे बचत व पूंजी संचय को बढ़ावा मिल रहा है।
5. **बड़े नगरों का विकास –** जनसंख्या का केन्द्रीयकरण व जमघट वाणिज्यिक वाहनों की ही देन है। किसी भी देश के ये बड़े नगर सभ्यता, संस्कृति व आर्थिक उन्नति के सूचक है। यहीं पर बड़ी–बड़ी औद्योगिक, व्यापारिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक एवं चिकित्सा संस्थाएं स्थित होती है।
6. **नाशवान पदार्थो के उत्पादन को बढ़ावा –** वाणिज्यिक परिवहन के साधनों में नाशवान पदार्थो जैसे– माँस, सब्जी, दुध–दही आदि के

विशिष्टीकरण को भी प्रोत्साहित किया है। मध्यप्रदेश में ऐसे अनेक केन्द्र है, जो इन पदार्थो के उत्पादन के लिए विशेष रूप से विख्यात है। यहाँ की अधिकांश वस्तुएँ वाणिज्यिक परिवहन के साधनों से देश के विभिन्न भागों एवं विदेशों को भेज दी जाती हैं। जिससे मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास हो रहा है।

7. बड़ी मात्रा के उत्पादन को बढ़ावा – बड़ी मात्रा में उत्पादन की सफलता का श्रेय वाणिज्यिक वाहनों की सुविधाओं को ही जाता है। बड़ी मात्रा में उत्पादन संभव हो सके, इस हेतु अन्य बातों के अतिरिक्त वस्तु के लिये विस्तृत बाजार जिससे कि उसकी अधिक मात्रा में खपत हो एवं वस्तु के पर्याप्त मात्रा से उत्पादन के लिए यथेष्ठ कच्चा माल आदि की सुलभता जिससे कि उसकी पूर्ति मांग के अनुकूल रहे, इन दोनों के कार्यो में वाणिज्यिक परिवहन का महत्व स्पष्ट है। क्योंकि यदि उद्योग कच्चे माल के निकट केन्द्रित है, तो तैयार माल दूर–दूर बाजारों में भेजना पड़ता है, यदि उन्नत वाणिज्यिक परिवहन की सुविधाएँ सुलभ हो तो उत्पादन के समस्त साधन सरलता से निर्माण कार्य के लिये जुटाए जा सकते है और उत्पादन भी यथा समय आवश्यकता के अनुकूल बाजारों में पहुँचाया जा सकता है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से यातायात बडे पैमाने के उत्पादन की दशा में वस्तु का अन्तिम मूल्य कम हो जाता है, जिससे उद्योग एवं उपभोक्ताओं दोनों ही लाभान्वित होते है।

8. परिवहन एवं उत्पादन व्यय – उन्नत वाणिज्यिक वाहनों के परिवहन के द्वारा वस्तुओं के मूल्यों में भी भारी कमी आ गई है, जिससे समाज का लाभ हुआ है। उपभोक्ताओं को माल जिस मूल्य पर मिलता है, उसमें दो प्रकार के व्यय सम्मिलित रहते है – मूल उत्पादन व्यय और उपभोक्ता तक भेजने का ढुलाई व्यय। अधिक परिवहन व्यय से वस्तुओं का मूल्य अधिक और कम परिवहन व्यय से उनका मूल्य कम हो जाता है। कारखानों में बने माल का अंतिम मूल्य मुख्यत: कच्चे माल के मूल्य पर निर्भर करता है। सस्ती ढुलाई से कच्चे माल के एकत्रीकरण का मूल्य कम हो जाता है, जिसके फलस्वरूप उत्पादक उपभोक्ता को सस्ता माल दे सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. शिव ध्यानसिंह चौहान, आधुनिक परिवहन
2. डॉ. एस. एम. अग्रवाल, परिवहन के सिद्धान्त व समस्याएँ
3. डॉ. एफ. जी आटिया, रोड़ ट्रांसर्पोट
4. प्रो. रमेशचंद्र शर्मा, परिवहन आधुनिक उपयोगिता
5. C.A. Taff (1975) Commercial Motor Transportation
6- Edwards F.K. (1999), Principles of Motor Transportation
7- Dunbar (1980), Goods Vehical Operation

पत्र – पत्रिकाएँ –

1. टाटा मोटर्स (आंतरिक वितरण), ऑटोमास्टर (त्रैमासीक पत्रिका)
2. अशोक लिलेण्ड (आंतरिक वितरण), अशोक लिलेण्ड (त्रैमासीक पत्रिका)
3. आयशर (आंतरिक वितरण), क्षितिज (त्रैमासीक पत्रिका)
4. Motor Transport, Delhi
5. Automobile News, Bombay

****

मन्दसौर जिले में अफीम फसल का उत्पादन एवं लागत विश्लेषण

सारिका पारखी *

प्रस्तावना – मालवा क्षेत्र का अविभाजित मंदसौर जिला एक कृषि प्रधान क्षेत्र है। यहाँ की ग्रामीण कार्यशक्ति का लगभग 89 प्रतिशत भाग कृषक तथा कृषि श्रमिक के रूप में कार्यरत है। यहाँ खाद्यान्न तथा अखाद्यान्न दोनों ही प्रकार की फसलें बोई जाती है। इनमें गेहूँ, ज्वार, मक्का, अफीम, लहसुन, चना, उड़द तथा सोयाबीन आदि प्रमुख है। वर्तमान में सरकार द्वारा विदेशी निवेश हेतु उदारीकरण की नीति अपनाये जाने से विश्व बाज़ार के अन्य देशों को कृषि वस्तुओं का निर्यात किया जाएगा। ऐसी अवस्था में अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा में बने रहने के लिये कृषि उत्पादों के लागत-आगम विश्लेषणों का अध्ययन अनिवार्य हो जाता है।

कृषि क्षेत्र में क्षेत्रीय स्तर पर लागत-आगम सम्बन्धी शोध का अभाव रहा है। इससे कृषकों को उनके उत्पादन का उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता है। कृषकों द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली नवीनतम कृषि पद्धतियों जैसे उन्नत बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशकों, आधुनिक कृषि यंत्रों आदि की लागतें बढ़ी है तथा आधुनिक यंत्रों एवं उपकरणों के प्रयोग में भी वृद्धि हुई है। बाज़ार की अनियमितताओं तथा बाज़ार नियंत्रण के अभाव में कृषकों को उनकी उपज का पर्याप्त प्रतिफल नहीं मिल पा रहा है। इस कारण कृषि में लागत-आगम विश्लेषण अनिवार्य हो जाता है।

मंदसौर जिले का अफीम उत्पादन का इतिहास उतना ही पुराना है, जितना कि मध्य प्रदेश एवं भारत का क्योंकि भारत में सर्वप्रथम अफीम उत्पादन हेतु मालवा क्षेत्र को ही चुना गया था। इसके पश्चात धीरे-धीरे अफीम की खेती हिमाचल प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में भी की जाने लगी। जम्मू और कश्मीर में भी अत्यंत अल्प मात्रा में इसका उत्पादन किया जाता है।

भारत में प्रतिबन्धात्मक अफीम की खेती का इतिहास भी बहुत पुराना है। ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना के समय भारत एक अफीम निर्यातक देश था, जिससे विदेशी मुद्रा प्राप्त होती थी। ईस्ट इंडिया कंपनी ने अफीम की खेती का प्रबन्ध अपने हाथों में लेकर अप्रत्यक्ष नियंत्रण स्थापित कर रखा था। तत्पश्चात 1878 में अफीम अधिनियम पारित कर अफीम बोने से पहले शासन से अनुमति लेना अनिवार्य कर दिया गया। अर्थात शासन का क्षेत्र व उपज दोनों पर नियंत्रण स्थापित हो गया। इसके पश्चात देश में और भी कई कानून अफीम की कृषि के सम्बन्ध में बनाये गये किन्तु प्रत्येक नये कानून द्वारा सरकारी प्रतिबन्ध और कठोर किये गये। वर्तमान में यह कृषि पूर्णत: शासन द्वारा प्रतिबंधित है और शासन के दिशा निर्देशों के अनुसार ही इसकी खेती की जा सकती है।

अफीम की फसल जिले की प्रमुख एवं सर्वाधिक लोकप्रिय फसल है किन्तु इसका उत्पादन कृषकों द्वारा शासकीय नीतियों के अनुरूप ही किया जा सकता है। इस फसल के उत्पादन क्षेत्र का निर्धारण अन्य फसलों की तरह कृषकों द्वारा अपनी इच्छानुसार नहीं किया जा सकता है। वरन् शासन द्वारा दिये गये लाईसेंस में निर्धारित क्षेत्र के अन्तर्गत ही इस फसल को बोया जा सकता है। जिले की अफीम फसल के क्षेत्र एवं उत्पादन को निम्नांकित तालिका में दर्शाया गया है -

मन्दसौर जिले में अफीम फसल का क्षेत्र एवं उत्पादन (तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि जिले की रबी फसलों में अफीम फसल के कुल क्षेत्र में वर्ष 2007-08 को छोड़कर अध्ययन अवधि के सभी वर्षों में वृद्धि की प्रवृत्ति रही है। जिले की कृषि में इस फसल का कुल क्षेत्र वर्ष 2006-07 में 1994.47 प्रतिशत था जो 2007-08 में घटकर 951.62 हेक्टर रह गया अर्थात पिछले वर्ष की तुलना में 52.31 प्रतिशत कम हो गया। इसका प्रमुख कारण प्राकृतिक प्रकोप रहा है। किन्तु इसके बाद के वर्षों में इस फसल के क्षेत्र में निरन्तर वृद्धि हुई है। वर्ष 2007-08 की तुलना में वर्ष 2008-09 में इस फसल के क्षेत्र में 244.46 प्रतिशत की वृद्धि हो गई।

इसी प्रकार वर्ष 2009-10 में अफीम फसल का क्षेत्र बढ़कर 3929.76 हेक्टर हो गया जो पिछले वर्ष की तुलना में 19.88 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2010-11 में अफीम फसल के उत्पादन में पुन: वृद्धि हुई और यह बढ़कर 4316.71 हेक्टर हो गया, जो पिछले वर्ष की तुलना में 9.85 प्रतिशत की वृद्धि को दर्शाता है। यदि सम्पूर्ण अध्ययन अवधि को देखें तो स्पष्ट होता है कि अफीम फसल के क्षेत्र में 116.43 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

2006-07 से 2010-11 की अवधि में अफीम फसल के उत्पादन की प्रवृत्ति को देखें तो स्पष्ट होता है कि यह फसल क्षेत्र की तरह ही है। सम्पूर्ण अध्ययन अवधि में अफीम फसल के उत्पादन में 116.90 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। तालिका क्रमांक 5:3 के वर्षवार विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2006-07 में अफीम फसल का उत्पादन 124511.613 किलोग्राम था, जो वर्ष 2007-08 में घटकर 62744.711 किलोग्राम ही रह गया अर्थात 49.61 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई। इसके पश्चात के वर्षों में अफीम फसल के उत्पादन में निरन्तर वृद्धि दर्ज की गई। वर्ष 2008-09 में इस फसल का उत्पादन 181718.161 किलोग्राम हुआ, जो वर्ष 2007-08 की तुलना में 189.62 प्रतिशत वृद्धि दर्शाता है। इसी प्रकार 2009-10 एवं 2010-11 में अफीम फसल का उत्पादन क्रमश: 235027.929 एवं 270072.19 टन हुआ अर्थात पिछले वर्षो की तुलना में इन वर्षों में 29.33 एवं 14.91 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है।

अध्ययन अवधि में अफीम फसल के क्षेत्र एवं उत्पादन की प्रवृत्ति के विश्लेषण से स्पष्ट है कि शासकीय नीति इस फसल को बढ़ावा देने की रही है।

* शोधार्थी, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

अफीम फसल का लागत विश्लेषण – प्रस्तुत शोध पत्र में जिले में उत्पादित प्रमुख रबी फसल अफीम की लागत का अध्ययन किया गया है। लागत विश्लेषण हेतु वर्ष 2011 के सर्वेक्षण के आधार पर प्राप्त जानकारी को विश्लेषित कर निष्कर्ष निकाले गये है। इसके अंतर्गत सिंचित अफीम फसल का जोतवार उत्पादन लागत विश्लेषण निम्नानुसार किया गया है।

सिंचित कृषि में अफीम फसल का लागत विश्लेषण – अफीम की फसल रबी की प्रमुख फसल है। इसे किसी भी किसान द्वारा अपनी इच्छानुसार नहीं उगाया जा सकता। अत: यह एक अनुबंधित फसल है। जिसे बोने के लिऐं सरकार द्वारा लाईसेंस दिये जाते हैं। अत: जिस किसान के पास अफीम बोने हेतु लाईसेंस है, वह किसान ही इस फसल को उगा सकता है। मन्दसौर जिले की सिंचित कृषि में अफीम फसल की उत्पादन लागत को तालिका में दर्शाया गया है –

मन्दसौर जिले की सिंचित कृषि में अफीम फसल का जोतवार लागत विश्लेषण (तालिका देखें अगले पृष्ठ पर)

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि सिंचित कृषि में अफीम फसल की प्रति हेक्टर औसत उत्पादन लागत 60214 रूपये रही है, जिसमें प्रत्यक्ष लागत 50716.60 रूपये प्रति हेक्टर है, जो कुल लागत का 84.22 प्रतिशत है। प्रत्यक्ष लागत में श्रम तथा सामग्री लागत क्रमश: 31221 तथा 19495 रूपये प्रति हेक्टर रही है। जबकि अप्रत्यक्ष लागत 7473 रूपये प्रति हेक्टर रही, जो कुल औसत लागत का 12.41 प्रतिशत है। इस प्रकार कुल लागतों में से यदि वित्तीय लागत 2024 रूपये घटा दें, तो कृषि लागत कुल लागत का 96.64 प्रतिशत है। इस फसल में श्रम लागत सामग्री लागत की अपेक्षा 11726 रूपये प्रति हेक्टर अधिक रही है। श्रम लागत में भूमि की तैयारी पर 1100 रूपये, बुवाई पर 200 रूपये, दवाई के छिड़काव पर 1383 रूपये, क्यारियाँ बनाने पर 355 रूपये, सिंचाई पर 8133 रूपये, निंदाई गुड़ाई पर 2934 रूपये, लुआई चिराई पर 16933 रूपये व ढुलाई पर 183 रूपये प्रति हेक्टर व्यय हुए हैं। सामग्री लागत कुल औसत लागत की 32.37 प्रतिशत रही है। जिसमें देशी खाद, कीटनाशक, उर्वरक पर क्रमश: 5767, 4033, 7100 रूपये प्रति हेक्टर व्यय हुआ है, जो कुल लागत का क्रमश: 9.58, 6.69 एवं 11.79 प्रतिशत भाग है। सामग्री लागत में बीज पर व्यय की गई राशि कुल औसत लागत का 4.31 प्रतिशत है।

अप्रत्यक्ष लागत जो कुल औसत लागत की 12.41 प्रतिशत रही है। इसके अन्तर्गत सर्वाधिक व्यय निरीक्षण एवं प्रबन्धकीय लागतों पर 5071.66 रूपये रहा है जो कुल औसत लागत का 8.42 प्रतिशत रहा है। विक्रय एवं वितरण व्यय एवं भू–राजस्व एवं कर की प्रति हेक्टर औसत लागत क्रमश: 760 एवं 75 रूपये रही है। जो कुल औसत लागत का 1.262 प्रतिशत एवं 0.124 प्रतिशत है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अफीम फसल की सिंचित कृषि में औसत कृषि लागत कुल लागत की 96.64 प्रतिशत रही है, जबकि वित्तीय लागत 3.85 प्रतिशत रही है।

सिंचित कृषि में अफीम फसल का जोतवार लागत विश्लेषण – तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि लघु जोत में कुल लागत 62040 रूपये प्रति हेक्टर रही है, जो मध्यम जोत आकार में घटकर 59936 रूपये ही रह गई। वृहद् जोत आकार में कुल लागत 58667 रूपये रही है। अर्थात लघु जोत एवं मध्यम जोत की अपेक्षा वृहद् जोत आकार में कुल लागत में गिरावट आई है। वृहद् जोत में लागत अन्य जोतों की अपेक्षा न्यूनतम रही है। वृहद् जोत में कृषि लागत 56691 रूपये प्रति हेक्टर है जिसमें प्रत्यक्ष लागत एवं अप्रत्यक्ष लागत क्रमश: 59510 एवं 7181 रूपये शामिल है। इस प्रकार वृहद् जोत आकार में प्रत्यक्ष लागत कुल लागत की 84.39 प्रतिशत है तथा अप्रत्यक्ष लागत 12.24 प्रतिशत रही है। प्रत्यक्ष लागत में श्रम लागत का हिस्सा 52.55 प्रतिशत व सामग्री लागत 31.83 प्रतिशत है। सामग्री लागत में बीज, देशी खाद, उर्वरक एवं कीटनाशक आते हैं। इस जोत आकार में सामग्री लागत की अपेक्षा श्रम लागत पर अधिक व्यय हुआ है। सामग्री लागत में देशी खाद व कीटनाशक पर सर्वाधिक राशि व्यय की गई है। जबकि श्रम लागत में लुआई–चिराई पर सर्वाधिक व्यय हुआ है।

अफीम की कृषि में सर्वाधिक लागत लघु जोत आकार में पाई गई है। इनमें भी कृषि लागत 59960 रूपये प्रति हेक्टर अर्थात कुल लागत का 96.65 प्रतिशत के बराबर है। कृषि लागत में अप्रत्यक्ष लागत कुल लागत का मात्र 12.66 प्रतिशत ही है। वहीं प्रत्यक्ष लागत कुल लागत की 83.98 प्रतिशत पाई गई है। प्रत्यक्ष लागत में श्रम तथा सामग्री लागत क्रमश: 31700 एवं 20400 रूपये प्रति हेक्टर रही है, जो कुल लागत का क्रमश: 51.09 एवं 32.88 प्रतिशत है।

मध्यम जोत आकार में अफीम फसल की कुल लागत 59936 रूपये प्रति हेक्टर रही है। जिसमें भी प्रत्यक्ष लागत का हिस्सा 50540 रूपये रहा है, जबकि अप्रत्यक्ष एवं वित्तीय लागत क्रमश: 7379 एवं 2017 रूपये पाई गई। प्रत्यक्ष लागत के अन्तर्गत इस जोत आकार में श्रम लागत सर्वाधिक 31130 रूपये प्रति हेक्टर रही है, जो कुल लागत का 51.93 प्रतिशत भाग है। सामग्री लागत 19410 रूपये प्रति हेक्टर रही है, जो कुल लागत का 32.38 प्रतिशत है। सामग्री लागत में सर्वाधिक लागत देशी खाद व कीटनाशक की रही है। जो कुल लागत का क्रमश: 9.67 एवं 11.61 प्रतिशत है। श्रम लागत में सर्वाधिक व्यय लुआई–चिराई पर हुआ है जो कुल लागत का 28.36 प्रतिशत रहा है।

अप्रत्यक्ष लागत लघु जोत में 7860 रूपये मध्यम जोत में 7379 रूपये एवं वृहद् जोत में 7181 रूपये रही है जो कुल लागत का क्रमश: 12.66, 12.31, 12.24 प्रतिशत है। इस लागत में सर्वाधिक व्यय निरीक्षण एवं प्रबन्धकीय लागतों पर हुआ है। यह व्यय लघु जोत में 5210, मध्यम जोत में 5054 एवं वृहद् जोत में 4951 रूपये प्रति हेक्टर है। अप्रत्यक्ष लागत में न्यूनतम व्यय भू–राजस्व एवं कर पर हुआ है। यह लघु, मध्यम तथा वृहद् जोत आकार में कुल लागत का क्रमश: 0.08, 0.12, 0.17 प्रतिशत रहा है।

उल्लेखनीय है कि जोत आकार में वृद्धि के साथ–साथ प्रति हेक्टर श्रम एवं सामग्री लागत में निरन्तर कमी आई है। इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि छोटी जोतों में श्रम साधनों का अधिक अपव्यय हुआ है। साथ ही जोत आकार में वृद्धि के साथ–साथ आदानो के प्रयोग में मितव्ययिता बरती गई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

मन्दसौर जिले में अफीम फसल का क्षेत्र एवं उत्पादन

(प्रति हेक्टर/किलोग्राम)

वर्ष	कुल क्षेत्र	प्रतिशत वृद्धि /कमी	उत्पादन 70^{0}c	प्रतिशत वृद्धि /कमी
2006-07	1994.47	-	124511.61	-
2007-08	951.62	-52.31	62744.71	-49.61
2008-09	3278.07	244.46	181718.16	189.62
2009-10	3929.76	19.88	235024.93	29.33
2010-11	4316.71	9.85	2700772.19	14.91
2006-07 से	-	116.43	-	116.90
2010-11				

स्रोत - कार्यालय, उप नारकोटिक्स आयुक्त, नीमच - 2011

मन्दसौर जिले की सिंचित कृषि में अफीम फसल का जोतवार लागत विश्लेषण

(प्रति हेक्टर/रूपये में)

लागत तत्व	लघु कृषक		मध्यम कृषक		वृहद् कृषक		औसत	
	लागत	प्रतिशत	लागत	प्रतिशत	लागत	प्रतिशत	लागत	प्रतिशत
सामग्री लागत	20400	32.88	19410	32.38	18675	31.83	19495	32.37
श्रम लागत	31700	51.09	31130	51.93	30835	52.55	31221	51.85
प्रत्यक्ष लागत	**52100**	**83.98**	**50540**	**84.32**	**49510**	**84.39**	**50716**	**84.22**
अप्रत्यक्ष लागत	7860	12.66	7379	12.31	7181	12.24	7473	12.41
कृषि लागत	**59960**	**96.65**	**57919**	**96.64**	**56691**	**96.63**	**58190**	**96.64**
वित्तीय लागत	2080	3.35	2017	3.36	1976	3.36	2024	3.36
कुल लागत	**62040**	**100.00**	**59936**	**100.00**	**58667**	**100.00**	**60214**	**100.00**

स्रोत- शोध सर्वेक्षण - 2011

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

व्यावसायिक क्रोध प्रबंधन-अध्ययन

डॉ. अन्तिमबाला जैन *

शोध सारांश – व्यावसायिक प्रबंधन के क्षेत्र में नियोजित कर्मचारियों से कार्य लेने के लिये आवश्यक है, उनके मन में शांति हो और कार्य के प्रति श्रद्धा, विश्वास हो इनके अभाव में क्रोध को जन्म होता है जो प्रबंधन के साथ – साथ व्यक्तिगत जीवन के लिये भी हानिकारक है। इस क्रोध को पहचानना और शीघ्र निराकरण करना यह अच्छे प्रबंधन की पहचान है।

प्रस्तावना – मानव किसी भी संगठन का निर्माता है तथा संगठन की सफलता बहुत कुछ उसके कठिन प्रयासों का परिणाम है और क्रोध एक पूरी तरह से सामान्य मानवीय भावना है। जब यह नियन्त्रण से बाहर हो जाता है, तो विनाशकारी हो जाता है, यह क्रोध आपको बताता है कि कुछ गलत है, क्रोध एक बुरी भावना नहीं है। कुछ लोगों का मानना है कि क्रोध बुरा हैं और गुस्से को व्यक्त नहीं करना चाहिए लेकिन उनका सोचना सच नहीं हैं यह पूरी तरह से सामान्य है क्रोध को सकारात्मक बदलाव के लिए अगर आप इसे एक उपयोगी और रचनात्मक तरीके से व्यक्त कर सकतें हैं। क्रोध आप को प्रेरित करने और समस्याओं को हल करने का साधन बन सकता है क्रोध प्रबंधन 1975 में एंडरसन रेमंड Navaco मनोवैज्ञानिक द्वारा प्रतिपादन किया गया था। उन्होंने इसका अध्ययन हावर्ड मेड़िकल स्कूल में मनोचिकित्सक अपराधियों के इलाज के दौरान किया था।

व्यावसायिक दुनियॉ में तेजी से बदलते साधन जैसे – ईमेल, एस.एम.एस., वाटसएप, और उस पर त्वरित प्रतिक्रियां की उम्मीद व्यावसायिक जगत के लिए आवश्यक की गई है। उसके तहत बेहतरीन प्रदर्शन न हो पाना, उच्च वेतन न मिल पाना, लालच, डर, अनुबन्धों की शर्तो में दिन प्रतिदिन परिवर्तन, अपने प्रतिद्वंद्वी का प्रदर्शन अच्छा होना, यह सब कही कार्य स्थल, कार्यालय, कारखाना, दुकान, बीपीओ, विज्ञापन एजेंसी कहीं पर भी देखा जा सकता है। यह उच्च दबाव का माहौल हताश का परिणाम हो सकता है। रचनात्मक विभाग के लिये ये धैर्य तोड़ना, क्रोध और अन्त में नया शब्द कोर्पोरेट (व्यावसायिक) क्रोध बुलाया गया है।

व्यावसायिक क्रोध के कारण कर्मचारी हिंसक और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष नियंत्रण पर से बेकाबू हो जाता है। इसके कारण वह अपमानजनक, भेदभाव पूर्ण और संघर्ष, और अपने प्रति न्याय उपचार न हो पाना मानता है।

व्यावसायिक क्रोध के प्रमुख कारण में –

- काम का लम्बा समय होना कर्मचारी के लिए तनाव का कारण बन सकता है।
- नौकरी में अधिकारियों का दबाब होना।
- दैनिक जीवन का तनाव।
- उच्चाधिकारियों की उम्मीदों का दबाब बनना।
- लक्ष्यों की प्राप्तियों और उससे वेतन का समायोजन करना।
- कार्य दशाओं में सुधार की मांग करना।
- नवीन प्रविधियों, तकनीकों के आदि प्रयोग से कार्य मुक्त होने का डर।
- राजनैतिक, सरकारी कारण।
- वेतन, मजदूरी भत्ते, कार्मिक छंटनी, अवकाश व कार्यकक्ष अनुशासन व हिंसा भी शामिल है।
- मनोवैज्ञानिक कारण में प्रतिष्ठा, सम्मान, व्यवहार, मान्यता प्रगति विकास की आकांक्षा आदि है।

व्यावसायिक क्रोध के बुरे प्रभाव निम्न प्रकार से देखे जा सकते हैं –

- दैनिक जीवन में कर्मचारियों का व्यवहार काम के प्रति आक्रोश को व्यक्त करता है।
- क्रोध के कारण संगठनात्मक गतिशीलता प्रभावित होती हैं, जिससे काम अव्यवस्थित होने लगता हैं।
- व्यावसायिक कार्य संस्कृति पर इसका दु:परिणाम दिखने लगता है।
- कर्मचारी के नौकरी का कार्यकाल और स्थिरता प्रभावित होती है।
- सामाजिक ताना भी इसके प्रभाव से अछूता नहीं रह पाता है।
- सामाजिक व्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
- देश के आर्थिक विकास, राष्ट्रीय आय, उत्पादन पर प्रभाव पड़ता है।

इन सबसे निपटने के लिए प्रबंधको को कर्मचारियों की भावनाएं समझने की कोशिश करना चाहिए। क्रोध को हास्य में परिवर्तित कर परिस्थितियों को बदलने का प्रयास करते हुए –

- सोचने का नजरियाँ बदलना चाहिए, समस्या को नकारात्मक तरीके नहीं बल्कि सकारात्मक तरीके से हल करना चाहियें
- अपने अधीनस्थ कर्मचारी के प्रति सहानुभूति दिखाना चाहिये कि वह एक व्यक्ति है न कि एक समस्यॉ है यह समझना चाहियें।
- प्रबंधक को कर्मचारी का क्रोध कैसे कम किया जाये उसके विकल्प भी ज्ञात करना चाहिये जिससे कर्मचारी के क्रोधदाता के रूप में कार्य करेंगे तो सहायता मिलती हैं, हो सकता हैं कर्मचारी की नींद कम हो रही हैं या उसके घर की स्थिति खराब हो जिसकी हताशा की भावना से वह क्रोध कर रहा हो हम उसकी बाहरी स्थिति तो नहीं हल कर सकते परन्तु आंतरिक वातावरण को परिवर्तित कर बेहतर सामना करने के लिये सशक्त कर सकते है।

ये व्यापक रूप से माना जाता हैं कि व्यवसायी जगत में हर पॉच व्यक्ति में से एक क्रोध प्रबंधन से सम्बन्धित मुददो से प्रभावित हैं, व्यावसायिक क्रोध उत्पन्न करता हैं। क्रोध की पूर्व चेतावनी इस प्रकार हो सकती है –

- असंतोष की भावना व्यक्त करना।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य एवं प्रबंध) अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

- बैठकों में ऑखों से संपर्क न बनाना।
- टीम के सदस्यों का आपस में स्वस्थ सम्बन्ध न होना।
- कार्य स्थल पर निष्क्रिय एवं आक्रामक व्यवहार होना।
- छोटी-छोटी बातों पर इस्तीफा देने को तैयार होना।
- बार-बार काम से दूर रहना या काम नहीं करना।
- अचानक चिड़चिड़ापन हो जाना।

इस प्रकार इन संकेतो को प्रबंधकों को समझना चाहिए एवं इसका प्रबंधन करना चाहिये इन विशिष्ट समस्याओं पर विशेषज्ञों की राय लेना चाहिए और उसे हल करना चाहिये। बाहरी विशेषज्ञ भी इसमें मदद कर सकतें है।

व्यावसायिक शांति के लिये आवश्यक है कि कर्मचारी के मन में व्यवसाय द्वारा न्याय व्यवस्था, प्रमाप निर्धारण, इत्यादि व्यवस्थाओं में विश्वास होना जरूरी है। नियन्त्रण एवं नेतृत्व के आधार पर शांति, एकता एवं दक्षता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। अत: श्रम सम्बंधों, पूर्ण उत्पादन तथा आर्थिक स्थायित्व का उत्तरदायित्व प्रबंधन के कार्यो पर होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. औद्योगिक प्रबंध - डॉ. विवेक शर्मा।
2. मानव संसाधन प्रबंध - डॉ. मामेरिया एवं डॉ. दशोरा।
3. औद्योगिक शांति - डॉ. एस. डी. पुणेकर।
4. श्रम संघ प्रबंधन - डॉ. वी.बी. सिंह।
5. बिजनेस वीक - प्रबंधन डॉ. के पास दिनांक 08/12/2012.

****

किसान क्रेडिट कार्ड का कृषकों पर प्रभाव - एक विश्लेषण (उज्जैन संभाग के विशेष संदर्भ में)

डॉ. रिखबचंद जैन *

शोध सारांश - किसान क्रेडिट कार्ड योजना भारत सरकार ने सन् 1998 से कृषकों को उचित समय पर पर्याप्त वित्त बिना किसी समस्या के सहजता से उपलब्ध हो जाये के लिये योजना आरंभ की। सन् 2012 से इस कार्ड को रुपे किसान कार्ड (ए.टी.एम.) में बदलना आरंभ कर दिया है। उज्जैन सम्भाग में सर्वेक्षित 140 कृषक जिसमें लघु एवं सीमांत, मध्यम एवं वृहत कृषकों पर योजना का प्रभाव ज्ञात किया गया जिसमें पांच वर्षो में जुड़ने वाले कृषक 43.57 प्रतिशत है, 83 प्रतिशत कृषक वित्त को पर्याप्त मानते है। सीमांत कृषक वित्त को अपर्याप्त मानते है, के.सी.सी. धारक में से 90 प्रतिशत वित्त आहरण मूल बैंक शाखा से ही करते है, के.सी.सी. योजना के प्रति जागरुकता 83 प्रतिशत है, आज भी 17 प्रतिशत के.सी.सी. धारक योजना का पूर्ण लाभ नहीं ले पा रहे है। के.सी.सी. योजना की विशेषताओं में ब्याज के बोझ में कमी, वित्त की पर्याप्तता व नवीनीकरण की प्रक्रिया से कृषक अत्यधिक संतुष्ट है। के.सी.सी. योजना को केवल कृषि क्षेत्र को जीविकोपार्जन का साधन मात्र नहीं रखकर इसे एक संगठित क्षेत्र के रोजगारोन्मुख व्यवसाय के दर्जे के रुप में प्रतिष्ठित कराने के लिये जोर लगाना चाहिये।
शब्द कुंजी - ए.टी.एम., किसान क्रेडिट कार्ड, कृषि ऋण।

प्रस्तावना - देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था 'जब तक किसान खुशहाल नहीं होगे तब तक देश व समाज का पूर्ण विकास नहीं हो सकता है'। नेहरू जी के इसी मंत्र को केन्द्र सरकार ने अपनाया तथा किसानों को समृद्ध बनाने हेतु 'किसान क्रेडिट योजना' शुरू की। इसके द्वारा किसानों को समय पर पैसा उपलब्ध हो रहा है और वे अन्यत्र कहीं से सूद पर पैसा लेने से बच रहे है। विगत समय में किसान किसान क्रेडिट योजना की मदद से आर्थिक सम्पन्नता की और अग्रसर हो रहे है।

केन्द्र सरकार की और से बैंको पर आधारित यह योजना किसानों के लिए रामबाण साबित हो रही है। इसका फायदा बड़े किसानों के साथ ही लघु एवं सीमांत किसानों को भी भरपूर मिल रहा है। किसान क्रेडिट कार्ड ने न सिर्फ कृषि विकास को गति दी है बल्कि सामाजिक समस्या का भी खात्मा किया है। अब किसानों को न तो साहूकारो के जाल में फंसना पडता है और न ही पैसे के अभाव में उनकी फसल खराब होती है। वे समय पर फसल में न सिर्फ खाद -बीज की व्यवस्था कर लेते है बल्कि दूसरी आधारभूत जरूरतें भी पूरी करने में सफल हो रहे है। किसान क्रेडिट कार्ड के लिए भारतीय रिजर्व बैंक एवं नाबार्ड ने योजना तैयार की और इसे वर्ष 1998 में लागू किया। इस योजना में किसानों को उनके खेत के रकबे के हिसाब से ऋण की राशि तय की गई। जिस किसान के पास जितनी जमीन होगी, उसी हिसाब से ऋण की सीमा निर्धारित कर दी गई है। किसान जब चाहे बैंक से पैसा ले और उनका उपयोग कृषि कार्य में करे। जैसे ही उसके पास पैसा आए वह ऋण खाते में पैसा जमा कर दे और ली गई राशि पर ब्याज से मुक्ति पा ले। किसान क्रेडिट कार्ड का मूल उद्देश्य भी यही था कि किसानों को बार-बार ऋण उपलब्ध कराया जाए। इतना ही नहीं किसान क्रेडिट कार्ड में हर मौसम में मूल्यांकन की भी आवश्यकता नहीं है। किसान कोई भी पहचान - पत्र बैंको को उपलब्ध कराकर अपनी फसल के लिए आवश्यक ऋण ले सकता है। किसान जितना ऋण लेता है, उसी पर उसे ब्याज देना पड़ता है। इस योजना के तहत किसान को एक पासबुक दी जाती है। पासबुक पर किसान का नाम व पता भूमि जोत का विवरण, उधार सीमा, वैधता अवधि,पासपोर्ट आकार का फोटो लगा होता है। यह पासबुक लेनदेन के साथ ही पासपोर्ट का भी काम करती है।इतना ही नहीं किसान क्रेडिट कार्ड को राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के अधीन लाया गया है। कार्डधारक किसान की मृत्यु पर 50 हजार रूपये स्थायी पूर्ण अक्षमता पर 50 हजार रूपये दोनों अंग या दोनो आंख या एक अंग तथा एक आंख के खो जाने पर 50 हजार रूपये , अस्थायी विकलांगता पर 25 हजार रुपये की वैयक्तिक दुर्घटना बीमा रक्षा दी जाती है।

शोध उद्देश्य :

1. किसान क्रेडिट कार्ड योजना की प्रक्रिया को ज्ञात करना।
2. के.सी.सी. योजनान्तर्गत कृषकों के जुड़ने की स्थिति का आंकलन करना।
3. के.सी.सी. योजनान्तर्गत वित्त की पर्याप्तता ज्ञात करना।
4. के.सी.सी. योजना के प्रति कृषकों की जागरूकता ज्ञात करना।
5. के.सी.सी. योजनान्तर्गत प्राप्त वित्त का उपयोग ज्ञात करना।
6. के.सी.सी. योजना का बैंक और कृषकों को अधिकाधिक लाभ पहुंचे ऐसे नीतिगत सुझाव ज्ञात करना।

शोध प्रविधि - शोध प्रविधि में प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों को ज्ञात किया गया है।

द्वितीयक संमक- विभिन्न बैंकिंग संस्थाऐं, नाबार्ड के सहायक महाप्रबंधक कार्यालय, जिला अग्रणी बैंक,जिला स्तरीय तकनीकी समूह की बैठक,राज्य स्तरीय बैंकरस कमेटी का ऐजेंडा,मिटिंग एवं डेटा टेबल तथा अन्य प्रकाशित स्त्रोत।

प्राथमिक संमक - प्राथमिक संमक ज्ञात करने में प्रत्येक स्तर पर दैव निर्देशन प्रणाली का प्रयोग किया गया है।

संभाग का चयन - उज्जैन संभाग

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

जिले का चयन – नीमच, मंदसौर, रतलाम, उज्जैन, देवास, शाजापुर एवं आगर मालवा।

विकासखण्ड का चयन – प्रत्येक जिले से एक विकासखण्ड का चयन लाटरी पद्धति से किया गया है।

बैंक का चयन – प्रत्येक विकासखण्ड से व्यावसायिक बैंक की एक शाखा, सहकारी बैंक की एक शाखा तथा ग्रामीण बैंक की एक शाखा का चयन करते हुए प्रत्येक जिले से तीन बैंक शाखाओं का चयन किया गया।

हितग्राही का चयन – बैंक से प्राप्त जानकारी के आधार पर प्रत्येक जिले की एक विकासखण्ड से लघु एवं सीमांत कृषक, मध्यम कृषक, वृहत कृषक क्रमश: 14, 5 एवं 1 का चयन करते हुए 20 कृषक का चयन किया गया और इस प्रकार पूरे संभाग में 140 कृषक का चयन करते हुए उनसे प्रत्यक्ष मौखिक अनुसंधान, प्रश्नावली एवं वार्तालाप के आधार पर प्राथमिक समंकों को संकलित किया गया।

विश्लेषण उपकरण – प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों के माध्यम से तालिकाओं, आरेख, प्रतिशत, वृद्धि दर एवं औसत से निष्कर्ष ज्ञात किये गये।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना का उज्जैन संभाग के सर्वेक्षित कृषकों पर प्रभाव :

परिचय – अध्ययन के अन्तर्गत 140 किसान क्रेडिट कार्ड धारक को शामिल किया गया है, उन कृषकों में लघु एवं सीमांत कृषक मध्यम कृषक तथा वृहत कृषक का जिलेवार चयनित करके प्रत्यक्ष मौखिक अनुसंधान, प्रश्नावली एवं साक्षात्कार के माध्यम से के.सी.सी. योजना के प्रभाव को ज्ञात किया गया।

जिलावार के.सी.सी. योजनान्तार्गत के.सी.सी. धारक की स्थिति – उज्जैन संभाग के सात जिलों में कुल 140 कृषकों का सर्वेक्षण किया गया जिसमें प्रत्येक जिले से 20 कृषक का चयन किया गया जिनमें औसत रूप से पिछले पांच वर्ष 2010–11 से 2014 –15 में के.सी.सी. से जुड़ने वाले कृषक 43.57 प्रतिशत तथा 56.43 प्रतिशत 5 वर्ष से अधिक पुराने के.सी.सी.धारक है।

तालिका क्रं. 1

क्र.	जिला	नये के.सी.सी. धारक	प्रतिशत	पुराने के.सी.सी. धारक	कुल से प्रतिशत	कुल
1	नीमच	8	40	12	60	20
2	मन्दसौर	10	50	10	50	20
3	रतलाम	9	45	11	55	20
4	उज्जैन	9	45	11	55	20
5	देवास	8	40	12	60	20
6	शाजापुर	10	50	10	50	20
7	आगर मालवा	7	35	13	65	20
	कुल	61	43.57	79	56.43	140

स्त्रोत – सर्वेक्षण के आधार पर

वर्षवार स्थिति – के.सी.सी. योजनान्तर्गत नये कृषकों की स्थिति उज्जैन संभाग में पिछले 5 वर्षो से नये के.सी.सी. धारक का प्रतिशत 43.57 है, जो तालिका 2 में दर्शाया गया है। तालिका में पिछले पाँच वर्षो तक एवं पाँच वर्षो से पूर्व के.सी.सी. धारक की स्थिति है। पुराने के.सी.सी. धारक में से बहुत से डिफाल्टर होने से योजना से बाहर हो जाते है, इसलिए पिछले पाँच वर्षो के पूर्व के.सी.सी. धारक का प्रतिशत 56.42 % ही है।

तालिका क्रं. 2 : के.सी.सी. योजना में नये कृषकों की स्थिति वर्षवार (31मार्च 2015)

क्र	वर्ष	के.सी.सी. धारक की संख्या	के.सी.सी. धारक का प्रतिशत
1	Last 1 years	10	7.14
2	Last 2 years	11	7.85
3	Last 3 years	14	10
4	Last 4 years	15	10.71
5	Last 5 years	11	7.86
6	Last more than 5 years	79	56.42
	Total	140	100

स्त्रोत:– सर्वेक्षण पर आधारित

उपर्युक्त तालिका 2 में नये के.सी.सी. धारकों का प्रतिशत सबसे अधिक शाजापुर एवं मंदसौर में है, जबकि सबसे कम प्रतिशत आगर मालवा जिले का है।

वित्त की पर्याप्तता – किसान क्रेडिट कार्ड योजना में कृषकों को के.सी.सी. ऋण सीमा का आंकलन करके वित्त का आवंटन किया जाता है। के.सी.सी. वित्त का आवंटन व्यावसायिक बैंक, ग्रामीण बैंक एवं सहकारी बैंको के माध्यम से होता है। व्यावसायिक बैंक एवं ग्रामीण बैंक के अधिकांश हितग्राही के.सी.सी.वित्त सीमा को पर्याप्त मानते है, जबकि सहकारी बैंकों द्वारा आवंटित ऋण को कुछ हितग्राही अपर्याप्त मानते है।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना में के.सी.सी. धारक को ऋण सीमा का आंकलन करके वित्त आवंटन किया जाता है। वह वित्त पर्याप्त है या नहीं का अवलोकन किया गया, जिसमें पाया गया कि कुल 140 के.सी.सी. धारक में से 116 ने वित्त की पर्याप्तता में हाँ किया है, जो 83 है, जबकि 14 ने वित्त को अपर्याप्त कहा है। कृषि जोत के आकार के अनुसार 23.61 सीमान्त कृषक ने वित्त को अपर्याप्त माना है क्योंकि उनकी ऋण सीमा कम होती है, जबकि वृहत् एवं उच्च मध्यम कृषक भी ऋण सीमा को कम मानते हें क्योंकि वे उच्च ऋण लेकर ब्याज कमाना चाहते है तथा वृहत् कृषकों की भुगतान क्षमता भी उच्च होने से उन्हें डर नहीं लगता है। कुल मिलाकर सीमान्त कृषकों की ऋण सीमा को और बढ़ाने की आवश्यकता है।

तालिका क्रं. 3 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

अन्य शाखा पर वित्त आहरण की सुविधा – उज्जैन संभाग में सर्वेक्षित 140 के.सी.सी. धारक कृषकों में से मात्र 15 के.सी.सी. धारक कृषक ही बैंक की अन्य शाखा पर आहरण की सुविधा लेते है। 125 के.सी.सी. धारक अपनी मूल बैंक शाखा से ही लेन–देन करते है। के.सी.सी. धारक इस सुविधा की मांग बहुत कम करते है। उन्हें अन्य शाखा पर आहरण से कमीशन का डर भी लगा रहता है। हालाँकि पिछले 2 वर्षो से कृषक रूपे डेबिट कार्ड का भी उपयोग करने लगे है। कृषकों का अन्य शाखा पर आहरण की सुविधा बढ़ाने के लिए कृषकों को जागरूक करना होगा, ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक शाखाऐं खोलनी होगी। साथ ही साथ ए.टी.एम सुविधा अधिक से अधिक प्रदाय करनी होगी ताकि आहरण अन्य शाखा पर भी कर सकें।

आकृति : के.सी.सी. धारक का वित्त आहरण

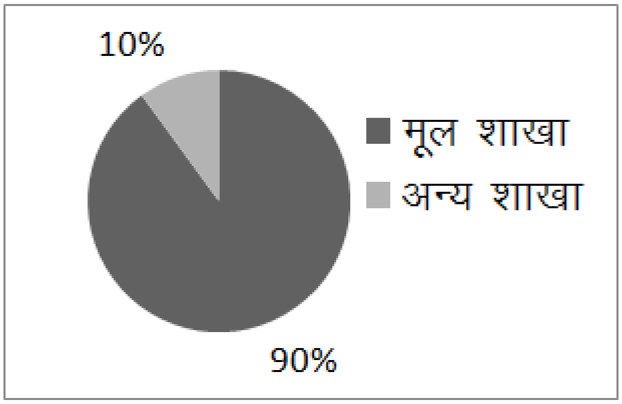

के.सी.सी. धारक का के.सी.सी. योजना के प्रति जागरूकता – उज्जैन संभाग में सर्वेक्षित के.सी.सी. धारक का अवलोकन करने पर पाया गया कि उनकी के.सी.सी. योजना की वित्त राशि का उपयोग, के.सी.सी. का परिचालन, वित्त उपयोग की आवृति, पुनर्भुगतान इत्यादि के प्रति जागरूकता का प्रतिशत 82.86 है, व्यावसायिक बैंक के हितग्राही ज्यादा जागरूक है, जबकि सहकारी बैंक के हितग्राही कम जागरूक है। कृषि जोत आकार अनुसार सीमांत कृषक में से 25 प्रतिशत आज भी जागरूक नहीं है ,मध्यम व वृहत कृषकों की जागरूकता के प्रति स्थिति ठीक है।

तालिका क्रं. 4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

ऋण का उपयोग – उज्जैन संभाग में सर्वेक्षित 140 के.सी.सी. धारक में से 119 के.सी.सी. धारक जो 85: है वो ऋण का उपयोग फसल के लिए करते है जबकि 15 प्रतिशत के.सी.सी. धारक ऋण का उपयोग फसल के अलावा अन्य कार्यो में ज्यादा करते है। अत: के.सी.सी.को बहुउद्देश्यपूर्ण कार्ड बनाया जायें।

के.सी.सी. योजना की विभिन्न विशेषताओं के आधार पर क्रम – उज्जैन संभाग के सातो जिलों में सर्वेक्षित 140 हितग्राहियों से प्रत्यक्ष मौखिक सर्वेक्षण, प्रश्नावली, वार्तालाप अवलोकन करने में पाया गया कि किसान क्रेडिट कार्ड की विशेषताओं से हितग्राही कितने परिचित है। कार्ड की विशेषता से कितने संतुष्ट है, कार्ड की विशेषताओं से कृषकों पर क्या प्रभाव पड़ा हैं इत्यादि बातों का विवरण निम्नानुसार है जो तालिका क्रं. 5 में दर्शाया गया है–

तालिका क्रं.5 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रं. 5 में I अत्यधिक संतुष्टि II औसत संतुष्टि एवं III औसत से कम संतुष्टि का स्तर है। स्पष्ट है कि के.सी.सी. योजना से कृषक को ब्याज के बोझ में कमी, के.सी.सी. के वार्षिक नवीनीकरण की सरलता, वित्त की समय पर उपलब्धता से अत्यधिक संतुष्टि प्राप्त हो रही है। के.सी.सी. धारकों की परिचालन क्षमता जिसमें उसकी विशेषताओं के आधार पर उपयोग शामिल है। वितरित वित्त सीमा की पर्याप्तता, समस्या रहित प्रक्रिया से के.सी.सी. धारक औसत रूप से संतुष्ट है। जबकि के.सी.सी. धारकों को वित सीमा का निर्धारण प्रक्रिया एवं पुनर्भुगतान की प्रक्रिया से कम संतुष्ट है अर्थात् के.सी.सी. ऋण सीमा का निर्धारण प्रक्रिया का सरलीकरण करना चाहिए ताकि कृषक ऋण सीमा निर्धारण की शर्तो को अधिक से अधिक पूरा कर सके।

समस्याऐं –

1. ऋण एजेंसियों के मध्य सहयोग एवं समन्वय का अभाव।
2. ग्रामीण क्षेत्रो में बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार की कमी आज भी लगभग 30: ग्रामीणों के बैंक खाते नहीं है।
3. कृषकों का कहना है कि के.सी.सी. योजना की प्रक्रिया को पूर्ण रुप से बैंक अधिकारी समझा नहीं पाते है और वे कृषक वित्त सीमा का उपयोग नहीं कर पाते और भुगतान में देरी होने से अधिक ब्याज देना पड़ता है।
4. यदि वर्षा या प्रकृति ने साथ नहीं दिया तो कृषक ऋण नहीं चुका पाते और उनको बकायादार की श्रेणी में होने का डर लगता है।
5. संभाग में आज भी भण्डारगृह की कमी है जिससे कृषक को अपना उत्पाद जल्दी ही विक्रय करना पड़ता है।
6. बैंक अधिकारियों से वार्तालाप के दौरान पाया गया कि ऋण प्रकरणों में उन्हें कृषकों की अज्ञानता, अशिक्षा एवं जागरुकता का अभाव जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
7. कुछ कृषक खेत के रिकार्ड में हेराफेरी करके एक खेत पर ही दो या अधिक किसान क्रेडिट कार्ड प्राप्त कर लेते है और पुनर्भुगतान की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

नीतिगत सुझाव–

1. किसान कार्ड का शुभारम्भ 24 नवम्बर 2012 को किया गया। इस योजना के अन्तर्गत ऋण राशि सीधे किसान के खाते में जमा करा दी जाती है जिससे कृषक कृषि आगत जैसे – उर्वरक, कीटनाशक दवाईयाँ, बीज , मजदूरी इत्यादि को तेजी से क्रय कर सकता है। यह योजना समस्त के.सी.सी. धारक की पहुँच में होनी चाहिए।
2. कागजी औपचारिकताओं को कम करना चाहिए और कम समय में के.सी.सी. योजना के अन्तर्गत ऋण दे देना चाहिए।
3. ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी बैंको को और सबल बनाना चाहिए।
4. सरकार को सुनिश्चित करना चाहिए कि के.सी.सी. धारकों को अच्छी गुणवत्ता युक्त आगतें , उचित समय पर उचित कीमत पर उपलब्ध हों जायें।
5. ग्राम पंचायत सचिव व पटवारी ग्राम में के.सी.सी. विहिन कृषकों का पता करके निकटतम बैंक शाखा में सूची देते हुए कृषकों को प्रोत्साहित करे कि वे बैंक में जाकर के.सी.सी. योजना का लाभ लें।
6. भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार बैंकों को अपनी नई शाखाएँ 25 प्रतिशत गैर बैंक ग्रामीण क्षेत्र में खोलना चाहिए।
7. कृषि क्षेत्र को केवल जीविकापार्जन का साधन मात्र नहीं रखकर इसे एक संगठित क्षेत्र के रोजगारोन्मुख व्यवसाय के दर्जे के रूप में प्रतिष्ठित कराने के लिए जोर लगाना चाहिए।

हमें बस जरूरत है, उपलब्ध सीमित संसाधनों का कुशल प्रबंधकीय क्षमताओं के साथ उपयोग करने की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. लुण्डबर्ग, जी.ए. (1939) **'फाउण्डेशन ऑफ सोशियोलोजी'**, न्यूयार्क मेक मिलन, पृष्ठ 07
2. त्रिवेदी : आर.एन., शुक्ला: डी.पी. (2015) **'रिसर्च मैथ्डोलॉजी'**, जयपुर कॉलेज बुक डिपो, ISBN : 81–85788–20–0 पृष्ठ 59
3. Rane: A.A., Deorukhkar A.C., (2012) " Economics of Agriculture" New Delhi, ATLANTIC Publishers and Distributors (P) Ltd. ISBN- 978-81-269-0867-7 Pg.No. 216-218
4. Chakraborty: Debashis, Nath: Smita (2008) " Collected Essays on Economic Developments", New Delhi, BOOKWELL, ISBN- 978-81-89640-58-3.

5. Singh: Harnam, Dwivedi: A.K., Rao K. (2012) " Rural Development in Post Colonial Era", New Delhi, BOOKWELL, ISBN- 978-93-80574-30-1 Pg. No. 330.
6. Shende: Arvind, Upagade: Vijay (2014) "Research Methodology" New Delhi, S. Chand & company Pvt. Ltd., ISBN- 978-81-219-3222-6 Pg.No. 179-182.
7. Sharma: Manoranjan (2007) "India`s Transforming Financial Sector" ATLANTIC Publishers and Distributors (P) Ltd. ISBN- 81-269-0808-4 Pg.No. 190-192.

तालिका क्रं. 3 : बैंकवार एवं कृषक वर्गवार के.सी.सी. वित्त की पर्याप्तता स्थिति

क्रं.सं.	बैंक का नाम	बैंकवार				
		सर्वेक्षित के.सी.सी. धारक की संख्या	हाँ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
1	व्यावसायिक बैंक	35	33	94.29	2	5.71
2	ग्रामीण बैंक	14	12	85.71	2	14.29
3	सहकारी बैंक	91	71	78.02	20	21.98
		कृषि जोत आकारवार (हेक्टेयर में)				
1	1.00 से कम	72	55	76.39	17	23.61
2	1.00 – 2.00 तक	26	24	92.30	2	7.70
3	2.00 – 4.00 तक	21	19	90.48	2	9.52
4	4.00 – 10.00 तक	14	12	85.71	2	14.29
5	10.00 से अधिक	07	06	85.71	1	14.29
	कुल	140	116	83	24	17

सर्वेक्षण पर आधारित

तालिका क्रं. 4 : उज्जैन संभाग में के.सी.सी. धारक की के.सी.सी. योजना के प्रति जागरूकता की स्थिति

क्र.स.	संस्था का नाम	संस्थावार				
		सर्वेक्षित के.सी.सी.धारक	हाँ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
1	व्यावसायिक बैक	35	32	91.42	3	8.57
2	ग्रामीण बैक	14	12	85.71	2	14.29
3	सहकारी बैक	91	72	79.12	19	20.82
		कृषि जोत आकारवार (हेक्टेयर में)				
1	1.00 से कम	72	54	75.00	18	25.00
2	1.00 – 2.00 तक	26	23	88.46	3	11.54
3	2.00 – 4.00 तक	21	19	90.48	2	9.52
4	4.00 – 10.00 तक	14	13	92.86	1	7.18
5	10.00 हेक्टेयर से अधिक	7	7	100		
	कुल	140	116	82.86	24	17.14

स्त्रोत– सर्वेक्षण पर आधारित

तालिका क्रं.5 के.सी.सी. योजना की विशेषताओं का क्रम

क्रं. सं.	विशेषताओं का वर्गीकरण	संतुष्टि का स्तर		
		I	II	III
1.	वित्त की समय पर उपलब्धता	93	07	–
2.	वित्त सीमा की पर्याप्तता	80	13	07
3.	के.सी.सी. वित्त सीमा निर्धारण की प्रक्रिया	50	32	18
4.	के.सी.सी. के वार्षिक नवीनीकरण की सरलता	97	03	–
5.	केसीसी धारकों की परिचालन क्षमता	87	10	3
6.	ब्याज के बोझ में कमी	100	–	–
7.	वित्त प्राप्ति की लागत में कमी	75	15	10
8.	समस्या रहित प्रक्रिया	78	17	5

****

छतरपुर जिले में महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम एवं पलायन (ईशानगर विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में)

डॉ. विभा वासुदेव *

शोध सारांश – वर्तमान में भारत की लगभग एक तिहाई जनसंख्या गरीबी की रेखा के नीचे जीवनयापन कर रही है, जो बेरोजगारी के दल-दल में फँसी है, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध न होने के कारण उन्हें शहरों की ओर पलायन करना पड़ता है जिससे एक ओर तो शहरीकरण की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं और दूसरी तरफ ग्रामीण विकास अवरूद्ध होता है। प्रदेश में ग्रामीण परिवारों को बेरोजगारी के दल-दल से निकालने व ग्रामीण क्षेत्र में ही रोजगार उपलब्ध कराकर पलायन की समस्या को कम करने के लिए भारत सरकार द्वारा क्रियान्वित महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम की भूमिका महत्वपूर्ण होते हुये संदिग्ध है। मध्यप्रदेश में इस अधिनियम का क्रियान्वयन कार्य की अभिव्यक्ति, सुरक्षित आजीविका सुखद भविष्य पर आधारित है।

प्रस्तावना – वर्ष 2005 में पारित राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम मनरेगा देश का पहला ऐसा कानून है जो ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबों को रोजगार की गारन्टी प्रदान करता है। इसके लिए सरकार ने कुछ ठोस नियम निर्मित किए हैं –

- गाँव के एक परिवार के एक सदस्य को एक वर्ष में कम से कम 100 दिनों का रोजगार देना।
- रोजगार न देने पर बेरोजगारी भत्ता प्रदान करना।
- मजदूरी का भुगतान केन्द्र सरकार द्वारा किया जाना।
- यह आवश्यक है कि रोजगार मांगने वाला 18 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुका हो, गरीब हो एवं अकुशल हो परन्तु शारीरिक श्रम करना जानता हो।
- रोजगार चाहने वाले सदस्य को अपनी ग्राम पंचायत में पंजीयन करना होगा, जिसमें अपनी उम्र, नाम व पता सादे कागज पर लिखकर आवेदन करना होगा। ग्राम पंचायत सात दिवस में आवेदन कर्ता को एक जॉब कार्ड प्रदान करेगी यह जॉब कार्ड पाँच वर्ष तक वैद्य होगा।

वर्ष 2005 से 200 जिलों से प्रारम्भ हुई इस योजना का आज मनरेगा के नाम से देश के सभी जिलों में क्रियान्वयन हो रहा है। वर्तमान में मध्यप्रदेश के कुल 51 जिलों में इसका क्रियान्वयन हो रहा है। जिसमें छतरपुर जिला 01 नवम्बर 1956 से अस्तित्व में हैं जो सागर संभाग का एक प्रमुख जिला है। छतरपुर जिले की कुल जनसंख्या 2011 में 1762375 है। जिसमें से छतरपुर जिले के ईशानगर विकासखण्ड का विशेष रूप से अध्ययन किया गया जिसमें 82 ग्राम पंचायतें कार्य कर रही है।

योजना के उद्देश्य –

1. यह योजना क्या है, इसकी रूपरेखा क्या है तथा इसका क्रियान्वयन किस प्रकार से होता है, यह ग्रामीण बेरोजगारी दूर करने में कितनी सफल हुई है?
2. यह योजना गरीब ग्रामीण परिवारों को किस तरह से रोजगार उपलब्ध करवाती है तथा यह अपने उद्देश्य में कहाँ तक सफल हुई है ?
3. इस योजना के द्वारा हितग्राहियों को कहाँ तक लाभ प्राप्त हुए हैं तथा उन पर एवं संबंधित पक्षों पर इसके क्या प्रभाव पड़े ?
4. रोजगार के अवसरों की कमी के कारण ग्रामीण परिवारों का शहरों की ओर पलायन एवं इसे रोकने में यह योजना कहाँ तक सफल हुई है ? इसका मूल्यांकन करना।
5. जिन गरीब ग्रामीण परिवारों को रोजगार देने के लिए इस योजना का निर्माण किया गया उन्हें वास्तव में रोजगार मिला है या नहीं।
6. क्या मनरेगा से ग्रामीण विकास हुआ है?
7. क्या मनरेगा से ग्रामीण परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ या नहीं ?
8. समग्र रूप में योजना का मूल्यांकन, उसकी प्रमुख कमियां एवं कठिनाईयों से परिचित होना तथा उन्हें दूर करने के लिए यथा संभव सुझाव ढूंढ़ना।

शोध प्रविधि – शोध का अध्ययन क्षेत्र मध्यप्रदेश के छतरपुर जिले के ईशानगर विकास खण्ड को चयनित किया गया है। जिसमें 82 ग्राम पंचायतों में से 40 ग्राम पंचायतों के 200 हितग्राहियों का चयन प्रतिदर्शन विधि से करके समग्र का अध्ययन अनुसूची के माध्यम से साक्षात्कार कर किया गया है। अध्ययन की विस्तृत जानकारी एवं परिपूर्णता हेतु द्वितीयक संमकों का भी प्रयोग किया गया है।

भारत में मनरेगा के तहत विभिन्न वर्षो में रोजगार सृजन (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

अध्ययन से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण – जिला छतरपुर के ईशानगर विकासखण्ड में 82 ग्राम पंचायत है जिसमें से 40 ग्राम पंचायतों का मौखिक प्रश्नावली (अनुसूची) बनाकर मनरेगा में कार्यरत 200 हितग्राहियों का प्रत्यक्ष साक्षात्कार कर अध्ययन किया गया है। इस सर्वेक्षण के द्वारा मैने यह जानने का प्रयल किया है कि मनरेगा का ग्रामीण अकुशल श्रमिकों की आर्थिक स्थिति जॉब कार्ड की स्थिति रोजगार की स्थिति एवं ग्रामीण पलायन की स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा है। सर्वेक्षण से प्राप्त ऑकडों को सारणी के माध्यम से विश्लेषित किया गया है।

* विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.) भारत

हितग्राहियों का आयु के अनुसार विवरण

क्र.	आयु वर्ग	हितग्राहियों की संख्या	प्रतिशत
1	18 से 30	32	16.0%
2	31 से 40	85	42.5%
3	41 से 50	60	30.0%
4	51 से 60	19	9.5%
5	61 से अधिक	4	2.0%
	कुल योग	200	100%

वित्तीय वर्ष 2012-13 के दौरान आयुनुसार रोजगार की स्थिति में ईशानगर ब्लॉक में 18-30 आयु वर्ग में 36341 रजिस्टर्ड व्यक्ति थे जबकि इसमें केवल 5337 व्यक्तियों को ही रोजगार प्राप्त हुआ। 30-40 आयु में सबसे अधिक 42774 रजिस्टर्ड व्यक्ति व रोजगार केवल 5340 व्यक्तियों को मिला 40-50 आयु वर्ग में रजिस्टर्ड 27217, रोजगार प्राप्त 3311 , 50-60 में रजिस्टर्ड 16380 प्राप्त रोजगार 1314260 से अधिक में 22191 रजिस्टर्ड रोजगार प्राप्त 883 अर्थात रोजगार का प्रतिशत काफी कम होने में युवाओं व वृद्धों का रूझान निरन्तर कम हो रहा ।

जाति	हितग्राहियों की संख्या	प्रतिशत
सामान्य	9	4.50%
अन्य पिछड़ा वर्ग	148	74.00%
अनुसूचित जाति	40	20.00%
अनुसूचित जनजाति	3	1.50%
कुल योग	**200**	**100%**

हितग्राहियों का जाति के अनुसार वितरण - तालिका से स्पष्ट है कि 74 प्रतिशत हितग्राही अन्य पिछड़ा वर्ग के व 20 प्रतिशत अनुसूचित जाति के 4.5 प्रतिशत सामान्य वर्ग व अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत केवल 1.5 प्रतिशत है जो बेव साइट में प्रदर्शित हितग्राहियों से मेल नहीं खाते क्योंकि वित्तीय वर्ष 2012-13 रजिस्टर्ड अनुसूचित जाति की संख्या 4690 व अनुसूचित जनजाति की 9415 की व कुल उत्पन्न व्यक्ति दिवस अनुसार संख्या अनुसूचित जाति 29926 व अनुसूचित जनजाति की 57644 है व अन्य 206468 है।

सर्वेक्षित हितग्राहियों में सबसे कम प्रतिशत अनुसूचित जनजाति का है जबकि उपरोक्त बेवसाइट के ऑकडे अनुसूचित जनजाति की संख्या अनुसूचित जाति से भी अधिक दर्शा रहे है, जो अत्मसात करना कठिन है क्योंकि ब्लॉक में अनुसूचित जनजाति के परिवारों की संख्या काफी कम है।

जॉब कार्ड से संबंधित जानकारी के अनुसार हितग्राहियों का वितरण (तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ)

तालिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षित हितग्राहियों में 59 प्रतिशत हितग्राहियों को जॉब कार्ड बनवाने में अनेकों कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। जबकि 41 प्रतिशत को कोई कठिनाई नहीं हुई अर्थात 50 प्रतिशत से अधिक हितग्राही जॉब कार्ड बनवाते समय किसी न किसी परेशानी का शिकार हुए ।

प्राप्त रोजगार दिवसों के अनुसार हितग्राहियों का वितरण (तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि जॉब कार्ड बनने के बाद 17.5 प्रतिशत हितग्राहियों को एक भी दिवस का रोजगार प्राप्त नहीं हुआ है व 23 प्रतिशत हितग्राहियों को 50 से भी कम दिवसों का रोजगार प्राप्त हुआ है। सर्वेक्षित हितग्राहियों में से केवल 13.5 प्रतिशत ही 100 दिवस का रोजगार प्राप्त कर पाए है ।

पलायन की स्थिति के अनुसार हितग्राहियों का वितरण (तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि केवल 26 प्रतिशत हितग्राहियों ने माना कि मनरेगा से गांव से पलायन रूका है जबकि 74 प्रतिशत अभी भी मानते है कि 100 दिवस के रोजगार से पलायन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है और उनके परिवार के औसतन 2 या 3 सदस्य शहरों में कार्य के लिए जाते है।

निष्कर्ष -

1. सबसे अधिक परेशानी जॉब कार्ड बनवाने में होती है।
2. जॉबकार्ड में फोटो के न होने से इसका दुरूपयोग किया जाता है।
3. सरपंचों की मनमानी के कारण जरूरतमंद हितग्राही को रोजगार के अवसर प्राप्त नहीं होते, क्योंकि जॉबकार्ड और बैंक पासबुक वे अपने पास रख लेते है और मनमाने ढंग से रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाते है अपनी मेहरबानी मानते है।
4. जब मजदूरों को काम की अति आवश्यकता होती है, उस समय उन्हें योजना के अन्तर्गत कार्य प्राप्त नहीं होता। जिस कारण उन्हें मजबूरन पलायन कर अन्यत्र रोजगार की तलाश में जाना पड़ता है ।
5. घटिया निर्माण कार्य व निर्माण न कराकर फर्जी तरीके से राशि आहरण कर लेना एक बहुत बडी समस्या है जिसमें योजना की पूरी कार्यप्रणाली व व्यवस्था पर ही प्रश्न चिन्ह लग जाता है।
6. अधिकांश ग्राम पंचायतों में श्रमिकों से कार्य न कराकर जे.सी.बी.जैसी मशीनों से तालाब खुदाई व बंधान बनाने का कार्य करवाया जाता है ।
7. 6वें दिन काम करने के बाद 7वें दिन मिल जाएगी मजदूरी के दावे खोखले सावित हो रहे है अत: एक तो मजदूरी इतनी कम व वो भी समय पर प्राप्त न होने से श्रमिकों का मनरेगा में मजदूरी करने से मोह भंग होता जा रहा है।
8. जिला छतरपुर व ईशानगर विकासखण्ड में भी रोजगार पाने वाले परिवारों की संख्या में निरन्तर कमी आ रही है। जिले में वर्ष 2010-2011 में 89363 परिवारों को रोजगार उपलब्ध करवाया गया जो वर्ष 2011-12 में घटकर 83723 व 2012-13 में और अधिक घटकर 56737 परिवार ही रह गया। इसी प्रकार ईशानगर विकासखण्ड में वर्ष 2010-11 में 9039 परिवारों को रोजगार उपलब्ध करवाया गया जो वर्ष 2011-12 में घटकर 8755 व 2012-13 में और कम होकर 6800 परिवार हो गया।
9. रिकार्ड में अनुसूचित जनजाति के जारी जॉब कार्ड की संख्या अनुसूचित जाति को जारी जॉब कार्ड की संख्या से अधिक है, जबकि जिले में व ईशानगर विकासखण्ड में अनुसूचित जनजाति के परिवारों की संख्या अनुसूचित जाति के परिवारों से बहुत कम है। इस प्रकार बेबसाइट में दर्शाए गए आंकडे विश्वसनीय प्रतीत नहीं होते।
10. ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी सामंतशाही की झलक साफ दिखायी दे रही है क्योंकि मनरेगा में दलाली व्यवस्था व गरीब अकुशल मजदूरों का आर्थिक शोषण आम बात है।
11. मनरेगा के अन्तर्गत एक परिवार को वर्ष में केवल 100 दिवस के रोजगार की गारन्टी भी इस योजना की सबसे बड़ी कमी है ।
12. मनरेगा को संचालित कर रहे व्यवस्थापकों की मनमानी के कारण बहुत कम ही परिवार 100 दिवस का रोजगार पूर्ण कर पाते है ।

13. मनरेगा में पारदर्शिता की कमी के कारण सरकार की अरबों रूपये की योजना के कोई ठोस परिणाम निकलते दिखायी नहीं दे रहे है ग्रामीण अकुशल श्रमिकों का जीवन स्तर व रोजगार का स्तर जस का तस है।
14. मनरेगा के अन्तर्गत योजनाओं में अनेको गड़बड़ी की शिकायतें बडे पैमाने पर की जाती है, परन्तु हो रही जॉच की जानकारी न तो हितग्राहियों को दी जाती है और ही वास्तविक तथ्यों को उजागर किया जाता है। अत: योजना की पारदर्शिता व सूचना का अधिकार पर ही प्रश्न चिन्ह लग जाता है।
15. मनरेगा में भ्रष्टाचार की बी.आई.पी. शिकायतों में म.प्र.अव्वल स्थान पर है।
16. वृद्धों व विकलांगों को पर्याप्त मात्रा में रोजगार के अवसर उपलब्ध नहीं करवाए जा रहे है।
17. समय सीमा में काम पूरा न होना, अधूरे कार्य, व कार्य में गुणवत्ता की कमी भी एक गम्भीर समस्या है।
18. 29 जुलाई 2013 के बेवसाइट के आंकडों के अनुसार सोशल आडिट रिर्पोट शून्य बतलाई जा रही है। जो कि एक बहुत ही गंभीर मामला है।

सुझाव – मनरेगा योजना को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए व ग्रामीण अकुशल श्रमिकों को ज्यादा से ज्यादा रोजगार के अवसर उनके निवास स्थान पर मिले। जिससे पलायन की गंभीर समस्या पर रोक लग सके इसके लिए कुछ सुझाव इस प्रकार है –

1. जॉब कार्ड बनाने में पूरी पारदर्शिता व ईमानदारी बरतनी चाहिए।
2. जॉब कार्ड में फोटो का दुरूपयोग रोकने के लिए बोटर आई डी जैसी ही व्यवस्था होनी चाहिए। जिसमें फोटो बदलने की संभावना खत्म हो जाएगी।
3. सरपंचों की मनमानी रोकने के लिए मानीटरिंग करने वाली संस्थाएं एवं अधिकारी गंभीरता से व पूर्ण निष्ठा व ईमानदारी से जॉच करे व दोषी पाए जाने पर कड़ी कार्यवाही का प्रावधान हो।
4. मनरेगा के अन्तर्गत दी जाने वाली मजदूरी को मंहगाई के अनुसार बाजार भाव पर समय समय पर बढाना चाहिए।
5. ग्रामीण अकुशल श्रमिकों को उनकी मांग के अनुरूप समय पर रोजगार उपलब्ध करवाना अति आवश्यक है। तभी पलायन पर कुछ रोक लग सकती है।
6. मनरेगा में योजनान्तर्गत कराए जा रहे निर्माण कार्यो का समय समय पर निरीक्षण किया जाना अति आवश्यक है, जिससे घटिया निर्माण कार्यो पर रोक लगायी जा सके।
7. जिन ग्राम पंचायतों में मशीनों द्धारा कार्य की शिकायतें प्राप्त होती है, वहॉ के जिम्मेदार कर्मचारियों से सरपंचों व सचिवों के विरूद्ध कठोर कार्यवाही का प्रावधान अति आवश्यक है।
8. मजदूरी भुगतान की गम्भीर समस्या को देखते हुए जो नवीन प्रणाली ई.एफ.एम.एस.अपनायी गयी है। इसकी कमियों को दूर करते हुए अतिशीध्र इसे सुचारू रूप से संचालित किया जाए।
9. मनरेगा में हाल ही के वर्षो अकुशल श्रमिकों को प्राप्त होने वाले रोजगार में कमी की समस्या को दूर करने के लिए दलाली प्रथा व कमीशन खोरी को दूर कर ग्रामीण में विश्वास जाग्रत किया जाए। जिससे उनका योजना के प्रति मोह भंग न हो।
10. बेवसाइट में दर्शाए गए आंकडों की विश्वसनीयता को बढ़ाना आवष्यक है।
11. वर्ष में प्रति परिवार केवल 100 दिवस का रोजगार पलायन रोकने में सक्षम नहीं है। अत: वास्तव में यदि पलायन रोकना है, तो उन्हें प्रति परिवार दो सदस्य को 200 दिवस का रोजगार देना चाहिए अधिकांश ग्रामीणों का यही मत है।
12. मनरेगा में व्यवस्थापकों की मनमानी रोकने के मानिटरिंग करने वाली संस्थाओं को सशक्त होना पडेगा।
13. मनरेगा में पारदर्शिता लाने के लिए मूल्यांकन समितियां प्रारम्भ से लेकर अंत तक के कार्यो का ब्यौरा मॉगे जाने पर उपलब्ध करवाए व हो रही जॉच की शिकायत कर्त्ता को पूरी पूरी जानकारी दी जाए व समस्त तथ्यों को ईमानदारी से उजागर किया जाए।
14. निरन्तर आने वाली शिकायतों के प्रति गंभीरता बरती जाए और शिकायतों के निराकरण के लिए ठोस रणनीति बनाना अति आवश्यक है।
15. मनरेगा में ग्राम सभा की ओर से सोशल ऑडिट को अनिवार्य कर देना चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर कैग द्धारा मनरेगा का परर्फोमेस ऑडिट कराया जाना चाहिए।
16. सभी प्रकार की अनियमित्ताओं पर शीघ्र कार्यवाही होना चाहिऐ।
17. पलायन की समस्या को दूर करने के लिए मनरेगा, की परियोजनाओं से ग्रामीण विकास के नवीन कार्यो जैसे स्वरोजगार को विकसित करने वाले कुटीर उद्योगों का विकास, विभिन्न ग्रामीण कलाओं का विकास, गांव में ही स्वरोजगार हेतु संसाधनों की उपलब्धता, शिक्षा प्रशिक्षण जागरूकता अभियान, लघु चलचित्र वृत चित्र, पलायन से, होने वाली हानियों के प्रति जागरूकता जैसे कार्यो पर विशेष बल दिया जाना चाहिए।

माना कि यह योजना जिस तरह से क्रियान्वित हो रही है उससे हम पूरी तरह संतुष्ट नहीं है। योजना की कमियों को दूर करने की महत्ती आवश्यकता है और इसके लिए मनरेगा में विभिन्न परियोजनाओं को संचालित व सम्पन्न करने वाली संस्थाऐं सक्रियता से भागीदारी निभा रही है। मूल्यांकन की जबावदारी भी तय की जा रही है, अनियमितत्ताओं पर रोक लगाने के लिए अनेकों कानूनी कार्यवाही का भी प्रावधान है, नित नवीन सुधारों को अपनाया जा रहा है व नवीनकार्यो को जोड़ा जा रहा है।

अन्त में यही कहूंगी कि मनरेगा के स्वर्णिम भविष्य के लिए आवश्यक है कि इसमें कार्यरत प्रत्येक सदस्य तन मन धन से सक्रीय योगदान दे और राष्ट्रहित, राष्ट्रप्रेम की भावना को जाग्रत कर दृढ इच्छा शक्ति से प्रत्येक कार्य को निश्चित समयावधि में नियमानुसार करें, तो यह योजना मील का पत्थर साबित होगी और हम ग्रामीण अकुशल श्रमिकों का विकास कर ग्रामीण विकास व स्वावलंबन की गांधी जी की कल्पना को मूर्तरूप प्रदान करते हुए अपने आप को गौरवान्वित अनुभव करेंगे और देश के विकाश को सर्वोच्च शिखर पर पहुंचा सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. छतरपुर जिले का गजेटियर संस्कृति संचालनालय भोपाल
2. राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम 2006 भारत सरकार विकास मंत्रालय,
3. आर्थिक समीक्षा वित्त, मंत्रालय भारत सरकार 2010–11
4. आर्थिक समीक्षा वित्त मंत्रालय भारत सरकार 2011–12
5. मनरेगा 2005 पर शोध अध्ययन का संकलन ग्रामीण विकास मंत्रालय,
6. रूद्र, दत्त, सुन्दरम, भारतीय अर्थव्यवस्था

7. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम, म0प्र0
8. महात्मा गांधी नरेगा का हर एक कदम, सशक्त ग्रामीण विकास की ओर ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार
9. A Catalyst in Rural Development NREGS Madhya Pradesh.
10. राष्ट्रीय रोजगार गारंटी कानून,उद्यमिता अंक-2 अप्रैल 2011
11. मुखर्जी रवीन्द्रनाथ, सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी
12. जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2010
13. महात्मागांधी नरेगा की हर एक कदम, मनरेगा स्कीम भोपाल
14. ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार की बेबसाइट
15. दैनिक भास्कर,जुलाई 2012 ,जुलाई 2013,अक्टूबर 2013,दिसम्बर 2013,फरवरी 2014

जॉब कार्ड से संबंधित जानकारी के अनुसार हितग्राहियों का वितरण

	हितग्राहियों की संख्या व प्रतिशत				कुल योग	
	हॉ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
जॉबकार्ड बनवाने में कठिनाई	118	59	82	41	200	100
क्या जॉब कार्ड में आपकी फोटो है	140	70	60	30	200	100
जॉबकार्ड आपके पास है।	132	66	68	34	200	100

प्राप्त रोजगार दिवसों के अनुसार हितग्राहियों का वितरण

रोजगार दिवस	हितग्राहियों की संख्या	प्रतिशत
शून्य	35	17.5
50 से कम	46	23
51 - 60	23	11.5
61 - 70	26	13
71 - 80	22	11
81 - 90	14	7
91 - 99	7	3.5
100	27	13.5
कुल योग	200	100

पलायन की स्थिति के अनुसार हितग्राहियों का वितरण

	हितग्राहियों की संख्या व प्रतिशत					
	हॉ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत	योग	प्रतिशत
गांव से पलायन रूका है।	52	26	148	74	200	100
कुल परिवार के सदस्य शहर में कार्य के लिए जाते है।	152	76	48	24	200	100

Year	Cumulative NoI of HH Issued Jobcards (lakhs)	No.of households who have demanded employment (Lakhs)		No.of households provided employment (Lakhs)			Personday in lakhs							
							SCs		STs		Women		Other	
		No.	Job cards	Total No.	%	Total	No.	%	No.	%	No.	%	No.	%
2006-07	378.5	211.88	55.98	210.66	99.42	9050.54	2295.23	25.36	3298.73	36.45	3679.01	40.65	3456.59	38.19
2007-08	647.41	343.26	53.02	339.09	98.79	14367.95	3942.34	27.44	4205.6	29.27	6109.1	42.52	6219.98	43.29
2008-09	1001.46	455.18	45.45	451.15	99.11	21632.86	6336.18	29.29	5501.64	25.43	10357.32	47.88	9795.06	45.28
2009-10	1125.51	528.64	46.97	525.3	99.37	28359.57	8644.83	30.48	5874.39	20.71	13640.51	48.1	13840.35	48.8
2010-11	1198.24	557.63	46.54	549.54	98.55	25715.25	7875.65	30.63	5361.8	20.85	12274.23	47.73	12477.81	48.52
2011-12	1227.5	503.48	41.02	498.63	99.04	21142.04	4660.57	22.04	3838.49	18.16	10186.8	48.18	12643	59.8

****

विकास का इंजन माने जाना वाला शहरीकरण - पर्यावरण के लिए चुनौति

प्रो. सुजाता नाईक *

शोध सारांश – विकसित देशों के द्वारा शहरीकरण की प्रवृत्ति को विकास के इंजन के रूप में माना गया। विश्व बैंक द्वारा भी शहरीकरण को विकास का प्रमुख फेक्टर माना। विकास की इसी प्रवृत्ति के तहत भारत के प्रमुख शहर मुबंई, दिल्ली, बेंगलुरू, चैन्नई विकास के इंजन बन चुके हैं। इस प्रकार भारत में भी विकास के साथ और औद्योगिकरण बढ़ने के साथ शहरीकरण में भी तेजी से वृद्धि हुई है किन्तु जन सुविधाओं एवं पर्यावरण की दृष्टि से देखें तो षहर कहाँ ठहरते हैं? इन शहरों की पहचान पर्यावरण की समस्या स्थलों के रूप में मिलेगी। बढ़ती जनसंख्या और घटते स्वस्थ पर्यावरण के कारण शहरों में समस्यायें बढ़ती जा रही हैं। आवास की कमी, बिजली पानी की कमी, सड़क और उपर्युक्त परिवहन प्रणाली की कमी, जलमल के निकास की कमी इन सभी कमियों के कारण सामाजिक असन्तोष पनप रहा है। शहरों की बढ़ती आबादी को खपाने की क्षमता खत्म हो चुकी है, स्थिति यह है कि शहरों में भीड़भाड़ में रहने को स्थान नहीं है, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में खेत खलिहान खाली होते जा रहे है और मकानों में ताले दिखायी दे रहे है। इस तरह के विकास से एक असन्तुलन सा बन गया है, जो एक समस्या के रूप में सामने आ रहा है। इस समस्या का समाधान किए बिना और पर्यावरण को संरक्षित किए बिना हम विकसित देशों की बराबरी नहीं कर सकते। इसके लिए हमें छोटे शहरों का विकास करना होगा एवं इन्हें ग्रामीण क्षेत्र से जोड़ना होगा। जिससे शहरों की भीड़भाड़ कम होगी एवं पर्यावरण में सुधार होगा। अत: इस शहरीकरण की प्रवृत्ति को बदलना होगा, ताकि हमारा पर्यावरण भी सुरक्षित रहे सके।
शब्द कुंजी – शहरीकरण, विकास के इंजन, पर्यावरण, औद्योगिक प्रगति, प्राकृतिक संसाधन।

प्रस्तावना – यह सर्वमान्य सत्य है कि राष्ट्र के विकास के साथ साथ शहरीकरण की प्रवृत्ति में भी निरन्तर विकास होता है। शहरीकरण की यह प्रवृत्ति विकसित देशों में विकास का इंजन साबित हुई है। विकास की इसी प्रवृत्ति के तहत भारत में भी शहर आज विकास के इंजन बन चुके है। ग्रामीण क्षेत्रों के मुकाबले शहरों में ज्यादा आमदनी और वस्तुओं तथा सेवाओं का अधिकाधिक उपभोग जहाँ पुल फेक्टर का काम करता है, वहीं गाँवो की गरीबी, बेरोजगारी पुश फेक्टर का। ये दोनों मिलकर शहरों में भीड़ बढ़ा रहे है। लेकिन विकास का प्रारंभ भी शहरों से ही होता है, अत: विकास हेतु शहरीकरण एक आवश्यकता भी है।

विकास के इंजन के रूप में शहरीकरण – विश्व बैंक शहरीकरण, प्रवास और व्यापार को गरीबी उन्मूलन और आर्थिक विकास का सषक्त हथियार मानता है। शहरीकरण के विकास से ही जीडीपी की तेज रफ्तार भी सामने आयी है। भारत में 100 सबसे बड़े शहरों में इन शहरों का योगदान 43 फीसदी है। कार्यशील आबादी के तेज विस्तार के कारण शहरों की ओर पलायन ज्यादा तेजी से हो रहा है। इसी कारण पूरे भारत में शहरी आबादी में बढ़ोतरी की रफ्तार तेज है।

1990 में यूएसए में शहरी जनसंख्या का अनुपात 75 प्रतिशत था, जापान में 77 प्रतिशत, यूके में 89 प्रतिशत था। इसकी तुलना में 2001 में भारत में शहरी जनसंख्या का अनुपात 27.8 प्रतिशत है, जो बहुत ही कम है। इन विशेषज्ञों ने तर्क दिया था कि यदि भारत में विकास दर को बढ़ावा देना है, तो उसे तेज शहरीकरण की नीति अपनानी चाहिए। इन शहरों की पहचान पर्यावरण की समस्या स्थलों के रूप में मिलेगी। बढ़ती जनसंख्या और घटते स्वस्थ पर्यावरण के कारण शहरों में समस्यायें बढ़ती जा रही है। बिजली, पानी, सीवर, सड़क, उपयुक्त परिवहन प्रणालि के अभाव में सामाजिक असन्तोष पनप रहा है। भारतीय शहरों में रहने वाली 20 फीसदी आबादी के लिए शौचालय नहीं है, 30 फीसदी के लिए पीने का पानी नहीं है, 71 फीसदी लोग जहाँ वहाँ कचरा फेंक देते है और 50-70 फीसदी मामलों में जल मल निकास की कोई व्यवस्था नहीं है। शहरीकरण की तीव्रता ने गन्दी बस्तियों आवास समस्या भीड़ भाड़ गन्दगी ने पर्यावरण को चुनौति दी है। एक ओर तो विकास की होड़ लगी है, तो दूसरी ओर पर्यावरण की धज्जियाँ उड़ रही है। शहरों में बढ़ती आबादी को खपाने की क्षमता खत्म हो चुकी है इसलिए वे आस पास के ग्रामीण इलाकों को निगलते जा रहे है, शहरी नियोजन के अभाव में जल्द ही वहाँ भी समस्यायें उभर आती है। यदि कुछ प्रमुख राज्यों की स्थिति का आकलन करें तो इन बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या की स्थिति निम्नानुसार है-

तालिका क्रमांक 1

गंदी बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या की राज्यवार स्थिति (करोड़ में)

राज्य	वर्ष	
	2011	2014 (अनुमानित)
महाराष्ट्र	1.81	2.05
उत्तरप्रदेश	1.1	1.20
आंध्रप्रदेश	0.81	0.86
मध्यप्रदेश	0.64	0.71
गुजरात	0.46	0.52
दिल्ली	0.31	0.37

स्त्रोत – Census of India, 2011

तालिका से स्पष्ट है कि आने वाले वर्षों में इन बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या में और भी अधिक वृद्धि ही होगी। जिसके कारण पर्यावरण की समस्या भी अधिक विकराल हो जाएगी, क्योंकि विश्व के कई अर्थशास्त्री यह मानते है कि विश्व में गरीबी की समस्या पर्यावरण प्रदूषण के लिए अधिक जिम्मेदार है। गरीब लोग पर्यावरण के संरक्षण की बात सोच भी नहीं सकते हैं।

वास्तविकता यह है कि विश्व बैंक ने भले ही शहरीकरण को विकास

* सहायक प्राध्यपक (अर्थशास्त्र) अ.श.रा.म.शा. महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला - देवास (म.प्र.) भारत

का इंजन माना हो और विकसित देशों ने भी शहरीकरण प्रेरित विकास अपनाया हो परन्तु इससे उत्पन्न समस्याओं और पर्यावरण की क्षति पर इनका ध्यान नहीं गया। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इसी विरोधाभास की ओर आकर्षित करता है।

शोध पत्र के उद्देश्य –

इस शोध पत्र के कुछ प्रमुख उद्देष्य निम्नलिखित है–

1. देश में शहरीकरण की प्रगति एवं स्थिति का विश्लेषण विकास के इंजन के रूप में।
2. आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप उत्पन्न पर्यावरणीय चुनौतियाँ की ओर ध्यान आकर्षित करना।
3. देश के आर्थिक विकास हेतु शहरों में पर्यावरणीय गुणवत्ता को बनाने एवं बचाने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र के अंतर्गत द्वितियक समंको का प्रयोग किया गया है।

भारत में शहरीकरण – 2011 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या में से 31.2 प्रतिशत जनसंख्या शहरी क्षेत्रों में एवं शेष 68.8 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। यदि जनसंख्या के विगत् दशकों के आंकड़ों पर नजर डालें तो हमें पता लगता है कि ग्रामीण जनसंख्या का यह प्रतिशत पूर्व में 80 से 90 के मध्य हुआ करता था। जो तीव्र गति से गिरता जा रहा है, जिसे निम्न तालिका द्वारा भी स्पष्ट किया गया है।

तालिका क्रमांक 2

विगत् दशकों में ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या का प्रतिशत

जनसंख्या वर्ष	ग्रामीण जनसंख्या	शहरी जनसंख्या
1901	89.2	10.8
1911	89.7	10.3
1921	88.8	11.2
1931	88.0	12.0
1941	86.1	13.9
1951	82.7	17.3
1961	82.0	18.0
1971	80.1	19.9
1981	76.7	23.3
1991	74.3	25.7
2001	72.2	27.8
2011	68.8	31.2

स्त्रोत –सामान्य अध्ययन, भारतीय अर्थव्यवस्था : प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक 2013–14

उपर्युक्त तालिका के आंकड़ो का विश्लेषण एक अन्य नजरिए से किया जा सकता है। विगत् वर्षो में जहाँ देश की शहरी जनसंख्या में निरंतर वृद्धि होती दिखाई दे रही है, वहीं इनके कारण देश में शहरों की संख्या में भी तीव्र गति से वृद्धि हुई है अर्थात् शहरीकरण में वृद्धि हुई है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार तो इस शहरीकरण की दर के अभी और तीव्र होने का अनुमान है। विशेषज्ञों का तो यह भी अनुमान है कि वर्ष 2025 तक देश की लगभग आधी जनसंख्या शहरी होगी। इसी तथ्य को निम्न तालिका के द्वारा भी स्पष्ट किया गया है।

तालिका क्रमांक 3

भारत में शहरों की संख्या एवं उनकी वृद्धि दर

वर्ष	शहरों की संख्या	वृद्धि दर 1951 की तुलना में
1951	2843	–
1961	2365	16.8
1971	2590	8.9
1981	3378	18.8
1991	3768	32.5
2001	5161	81.5
2011	7935	97.5

स्त्रोत –Census of India, 2011

पर्यावरण–अर्थव्यवस्था की पारस्परिक निर्भरता – वास्वत में अर्थव्यवस्था और पर्यावरण की परस्पर निर्भरता आर्थिक विकास के लिए अवसर और चुनौतियों दोनों ही उत्पन्न करती है। परन्तु विकास के साथ–साथ इसने जो अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न कर दी है, इनमें से कुछ प्रमुख निम्नानुसार है–

- शहरीकरण का सबसे बड़ा दुष्परिणाम हमें शहरों में फैली गंदगी के रूप में दिखाई देता है। ठोस अपशिष्ट पदार्थ तथा द्रवीय कचरा दोनों ही पर्यावरण प्रदूषण के लिए उत्तरदायी है, जिनके कारण न केवल सतही बल्कि भूजल भी प्रदूषित होने लगा है, जिसके परिणामस्वरूप पेयजल की समस्या भी उभरने लगी है।
- शहरी जनसंख्या में वृद्धि के कारण देश के ऊर्जा संसाधनों पर भी दबाव बढ़ा है, जिसका दुष्प्रभाव ग्रामीण एवं शहरी दोनों ही क्षेत्रों को क्रमश: कृषि एवं औद्योगिक इकाइयों के उत्पादन के निम्न स्तर के रूप में भुगतना पड़ रहा है।
- शहरीकरण में निरंतर वृद्धि के कारण देश का वनक्षेत्र भी निरंतर कम होता जा रहा है, जिसके कारण पर्यावरणीय संतुलन पर खतरा बढ़ता जा रहा है।
- एक ओर जहाँ शहरों के कूड़े करकट एवं प्लास्टिक की थैलियाँ तथा अन्य वस्तुओं के कारण भूमि प्रदूषण निरंतर बढ़ रहा हैं, वहीं दूसरी ओर कृषि उत्पादन को बढ़ाने के लिए नित नए एवं अधिक हानिकारक रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग करना पड़ रहा है, जिनके कारण न केवल भूमि प्रदूषण बल्कि देश की जनता के स्वास्थ्य का स्तर भी गिरता जा रहा है।
- औद्योगिक विकास एवं शहरीकरण में वृद्धि के साथ परिवहन के साधनों का विकास होता है। बढ़ते हुए परिवहन के साधनों जैसे कार, ट्रक, बस, मोटर साईकिल, स्कूटर आदि से धुएँ के रूप में जो हानिकारक गैसें निकलती है जिनसे वायु प्रदूषण फैलता है। देश में विगत् वर्षो में बढ़ रहे परिवहन साधन निम्न तालिका के द्वारा भी स्पष्ट हो रहे है।

तालिका क्रमांक 4

विगत दशक में कुल पंजीकृत परिवहन साधन

वर्ष	परिवहन साधनों की संख्या (करोड़ में)
2001	55.0
2002	58.9
2003	67.0
2004	72.7
2005	81.5
2006	89.6
2007	96.7

2008	105.3
2009	115.0
2010	127.7
2011	141.8

स्रोत–Site of Office of State Transport Commissioners

उपयुर्क्त तालिका देश में विगत् दस वर्षो में कुल पंजीकृत परिवहन साधनों की संख्या 9.9 की यौगिक (compound) वार्षिक वृद्धि दर को दर्शा रही है भविष्य में जिसके और भी अधिक तीव्र गति से बढ़ने का अनुमान है।

- शहरों में इन बढ़ते हुए वाहनों के कारण ध्वनि प्रदूषण भी तीव्र गति से बढ़ रहा है, जिसके कारण मनुष्यों में मानसिक तनाव, चिड़चिड़ापन, बैचेनी कार्य में नीरसता, सिरदर्द, हाई ब्लडप्रेशर, अस्थमा जैसी कई बिमारियों की वृद्धि हो रही है, इनके मरीज केवल वयस्क ही नहीं बल्कि बच्चे भी बन रहे हैं।
- शहरीकरण ने जहाँ भौतिक और आर्थिक पर्यावरण को प्रदूषित किया है, वहीं सांस्कृतिक पर्यावरण, मानव मूल्यों पर भी अपना दुष्प्रभाव डाला है, इससे नैतिक एवं पारिवारिक मूल्यों का ह्रास हुआ है। चारों ओर समाज में व्यक्तिवाद, स्वार्थीपन की भावना बढ़ रही है, जिसके कारण शहरों में आपराधिक घटनाओं में भी वृद्धि हो रही है।

सुझाव – स्पष्ट है कि देश में आर्थिक विकास शहरीकरण को बढ़ावा दे रहा है, साथ ही पर्यावरण के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। इसलिए वर्तमान समय में धारणीय विकास (Sustainable Development) पर अधिक जोर दिया जाने लगा है। कुछ सुझावों को अमल में लाते हुए इस विकास की षुरूआत की जा सकती है–

1. ग्रामीण जनसंख्या को शहरों की ओर पलायन से रोकने हेतु ठोस कदम उठाएं जाएं–

- ग्रामीण स्तर पर रोजगार के अवसरो में वृद्धि की जाए।
- मनोरंजन के ऐसे साधन जो शहरों की ओर पलायन को आकर्षित करते हैं उन्हें कुछ परिवर्तनों के साथ गाँवों में उपलब्ध कराया जाए।
- गाँवों में कृषि के अतिरिक्त अन्य लघु एवं कुटीर इकाइयों को स्थापित करने की सार्थक पहल की जाए।
- गाँवों में अच्छी शिक्षा के अवसर प्रदान किए जायें, ताकि शिक्षा प्राप्त करने के लिए शहरों में आने वाले युवाओं की संख्या में कमी हो, क्योंकि इनमें से 2 प्रतिशत भी वापस गाँव जाकर रहना पसंद नहीं करते।
- छोटे शहरो और कस्बों के विकास पर ध्यान देते हुए इन शहरों को ग्रामीण क्षत्रों से जोड़ दिया जाय इससे महानगरों की भीड़ कम होगी और शहरों से निकली आमदनी गाँवो तक पहुंचने से देश का समावेषी विकास होगा।
- वर्तमान समय में स्र्माट सिटी की जो धारणा का विकास किया जा रहा है वह इसी पर आधारित है। यदि यह परियोजना सफल होती है तो काफी हद तक शहरीकरण की समस्या हल हो सकती है।

2. पर्यावरणीय समस्याएं जो शहरीकरण के कारण उत्पन्न होती है, उन्हें रोकने के लिए निम्न सुझाव दिए जा सकते हैं–

- ठोस कचरा प्रबंधन की व्यवस्थित प्रणाली होनी चाहिए।
- घरेलू उपयोग के जल को पुन: उपयोगी बनाने हेतु उपचारित किया जाए।
- वर्षा के जल का अधिकत भाग भूगर्भीय जल में परिवर्तित हो सके, इस हेतु वॉटर हार्वेस्टिंग अनिवार्य की जाए।
- सुलभ शौचालयों के निर्माण एवं प्रयोग को प्रोत्साहन दिया जाए।
- विकास हेतु काटे जाने वाले वृक्षों के बदले चार गुने पौधे रोपे जाना अनिवार्य किया जाए।
- प्लास्टिक पर पूरी रह प्रतिबंध लगाया जाए।
- सौर ऊर्जा को बढ़ाना देने हेतु प्रयास किए जाए।
- जैविक खाद के निर्माण एवं उपयोग को प्रोत्साहित किया जाए।
- औद्योगिक इकाईयों में कचरे का उपचार अनिवार्य किया जाए।
- औद्योगिक इकाईयों में चिमनियों की ऊँचाई में वृद्धि की जाए तथा इसके धुऐं को उपचार के पश्चात ही वायुमण्डल में छोड़ा जाए ऐसी व्यवस्था हो।
- वाहनों में तेज ध्वनि हार्न पर प्रतिबंध लगाया जाए।
- पारिवारिक वातावरण में आत्मीयता को प्रोत्साहित किया जाए।
- परिवार में भौतिकता से दूर रहकर सही मानव मूल्यों, नैतिकता तथा संस्कारों के साथ जीवन यापन को प्रोत्साहित किया जाए।

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि आर्थिक विकास का उद्देश्य केवल औद्योगिक विकास ही नहीं होना चाहिए, बल्कि इसे दीर्धकाल में मानव कल्याण (जो पर्यावरण संरक्षण के साथ प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा है) को बढ़ाने वाला होना चाहिए। इसके लिए पर्यावरण विनाश के बिना औद्योगिक विकास का लक्ष्य होना आवश्यक है अर्थात, न तो विकास की गति रूके न ही पर्यावरण असंतुलित हो और यह तभी संभव है, जब प्रत्येक मनुष्य वास्तविक अर्थों में पर्यावरण संरक्षण के प्रति समर्पित हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अनिमा (2014) मालवा प्रदेश के पारिस्थिक पर्यटन केन्द्रों में अधिगम्यता संबंधित समस्याएँ द इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइसेंस एण्ड ह्यूमेनिटिज 3 (4) 73-77
2. शर्मा् अर्चना (2014) एयर एण्ड नाईज पाल्यूशन इन राजवाड़ा एरिया ऑफ मध्यप्रदेश इंडिया द इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइसेंस एण्ड ह्यूमेनिटिज 3 (4) 78-82
3. भारतीय अर्थव्यवस्था (2013) सामान्य अध्ययन प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक।
4. गुप्ता कावड़िया एवं अत्तरी (2010) विकास एवं पर्यावरण का अर्थषास्त्र भोपाल म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
5. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम (2012) भारतीय अर्थव्यवस्था दिल्ली एस चान्द एण्ड कंपनी।
6. सैनी एवं शर्मा (2009) पर्यावरणीय शिक्षा लुधियाना कल्याणी पब्लिशर्स।
7. Website of Census of India 2011
8. Website of Office of State Transport Commissoner, Govt. of MP.
9. Inext Indore 1 October 2015 Page No 8

****

जनसंख्या वृद्धि एवं बदलते आर्थिक समीकण

हरदयाल अहिरवार *

प्रस्तावना – भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या देश के सम्मुख एक समस्या बन गई है। भारत में यदि जनसंख्या के इतिहास पर दृष्टि डाले तो पायेंगे कि सन् 1900 के पूर्व तक देश में जनसंख्या की वृद्धि दर बहुत कम थी। अनुमान है कि सन् 327 ई. पूर्व सिकंदर के आक्रमण के समय भारत की जनसंख्या 4.8 करोड़ थी। प्रो.एस.चन्द्रशेखर का मत है कि भारत में सन् 1600 में दस करोड़ जनसंख्या थी। जो 1861 में बढ़कर 16.4 करोड़ हो गई है, किन्तु सन् 1900 तक जनसंख्या बढ़ कर 23.59 करोड़ के स्तर पर पहुँच गई। 1901 से 2001 तक देश की जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है।

सारिणी-1

5.1 : भारत में जनसंख्या वृद्धि (1901-2011)

जनगणना वर्ष	जनसंख्या (करोड़)	दशाब्दी में वृद्धि या कमी (करोड़)	दशाब्दी में प्रतिशत वृद्धि या कमी
1901	23.8	-	-
1911	25.2	+1.4	+5.7
1921	25.1	+0.1	-0.3
1931	27.9	+2.8	+11.0
1941	31.9	+4.0	+14.2
1951	36.1	+4.2	+13.3
1961	43.9	+7.8	+21.5
1971	54.8	+10.9	+24.8
1981	68.3	+13.5	+24.6
1991	84.6	+16.3	+23.8
2001	102.9	+18.2	+21.5
2011	121.1	+18.1	+17.6

(Source: Census of India 2001 and 2011)

वास्तव में जनसंख्या वृद्धि ने असंख्य समस्याओं को जन्म देकर देश में भयावह की स्थिति पैदा कर दी है। ये योजनाबद्ध विकास की उपलब्धि को उसी प्रकार साफ कर रही है, जिस प्रकार समुद्र की लहरे बालू की नींव पर बने महल को साफ कर देती हैं। देश की गरीबी जनसंख्या वृद्धि का ही परिणाम है।

यदि जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हो रही है तो उसे जनाधिक्य नहीं कहा जा सकता है। वर्ष 2013-14 सकल राष्ट्रीय आय में 4.0 प्रतिशत की वृद्धि और प्रति व्यक्ति की आय में 2.7 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि अत्यन्त कम है।

भारत में प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हो रही है, परंतु आय का निम्न स्तर होने के कारण बचत की वास्तविक दर 17-18 प्रतिशत से अधिक नहीं है। 2011 का जनगणनानुसार बचत 30.1 तथा निवेश 34.4 है। किसी भी राष्ट्र का अपनी जनता को अच्छा भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा, चिकित्सा एवं रोजगार की व्यवस्था का कार्य सर्वोपरि होता है।

भारत ने अपनी पंचवर्षीय योजनाओं में इन बातों पर विशेष बल दिया है, लेकिन आज 50 वर्षों के बावजूद जनसंख्या को नियंत्रित नहीं कर पाए। इस बात को अर्थशास्त्री भी अच्छी तरह से जानते हैं, कि जब तक जनसंख्या पर नियंत्रण नहीं हो जाता। तब तक भारतीयों को बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति कराना दुर्लभ सा होगा। जनसंख्या के इस बोझ का प्रभाव भूमि व अन्य संसाधनों पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

स्वतंत्रता पूर्व की अपेक्षा अनाज व ऊर्जा आदि के उत्पादन में वृद्धि हुई है किन्तु हमें खुशहाल में नहीं होना चाहिए। ये मामूली बढ़ोत्तरी कोई खास मायने नहीं रखती । आज महानगरों में झुग्गी-झोपड़ियों की संख्या दिनों-दिन बढ़ती जा रही है, बड़े शहरों में यह दृश्य अच्छी तरह से दिखाई दे रहा है। दिल्ली के नारायण, मंगेलपूरी, नरोला, सिलमपूर, मंडावली, आदि कई ऐसी जगह हैं जहाँ, झुग्गी-झोपड़ियाँ फैलती जा रही हैं। यहाँ तक की राज्य सरकारें भी राज्य के निवासियों को आवास व अन्य बुनियादी सुविधाओं की पूर्ति करने में असफल साबित हुई । डॉ. अशोक मेहता कहते हैं- देश की बढ़ती हुई जनसंख्या चोर के समान है, जो रात्रि में सबकुछ चुरा ले जाते हैं, जिसे हम दिन की योजनाओं से प्राप्त करते हैं। हमारे देश में प्रत्येक डेढ़ सेकंड में 1 बच्चे का जन्म होता है हर वर्ष देश में 2 करोड़ 52 लाख बच्चे जन्म लेते हैं, जिनमें से 92 लाख की मृत्यु हो जाती है शेष 1 करोड़ 60 लाख बच्चे हर वर्ष जनसंख्या बढ़ोतरी में अपनी भूमिका निभा रहे हैं। यदि हम कहें कि भारत में जनसंख्या विस्फोट हुआ है, तो इसमें कोई अतिश्योक्ति न होगी। इस बढ़ती जनसंख्या का प्रभाव ये रहा कि इससे हमारे सारे आर्थिक समीकरण गड़बड़ा गये, गरीबी, बेरोजगारी एवं भुखमरी जैसी समस्याएँ उत्पन्न हुई । पंचवर्षीय योजनाओं के तहत् विकास के जो मार्ग अपनाये गये वे बढ़ती हुई जनंसख्या में समा गये। प्रथम पंचवर्षीय योजना में जहाँ 33 लाख व्यक्ति बेराजगार थे वहीं रोजगार के बावजूद आज बेरोजगारी की संख्या 6 करोड़ 41 लाख हो गई है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप देश की राष्ट्रीय आय में जिस दर से वृद्धि हुई उस दर से प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि नहीं हुई, इसका मूलभूत कारण जनसंख्या वृद्धि ही रहा ।

1950-51 से 1998-99 की अवधि में राष्ट्रीय आय में औसतन 5.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि की दर रही, जबकि इस अवधि में जनसंख्या में 2.22 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि की दर रही । प्रति व्यक्ति आय में मात्र 3.4 प्रतिशत औसतन वार्षिक वृद्धि की दर रही जो बहुत कम है। वर्ष 2001 में वार्षिक जनसंख्या वृद्धि दर 1.90 तथा 2011 में 1.64 रही। भले ही वार्षिक वृद्धि दर में कमी आई पर ये कोई मायने नहीं रखती।

तीव्रगति से बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण देश को 1956 से 1975 के बीच अभूतपूर्व खाद्य संकट का सामना करना पड़ा । पी.एल.-480 के अंतर्गत अमेरिका से करोड़ो टन का अनाज आयात करना पड़ा, इससे भारतीय

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) पं.शंभूनाथ शुक्ल शासकीय (स्वशासी) स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

अर्थव्यवस्था के भुगतान संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा । अनाज का उत्पादन 1956 में 63 मिलियन टन था। जो वर्ष 2001 में बढ़कर 205 मिलियन टन हो गया, जहाँ खाद्यान्न की उपलब्धता 431 ग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन थी, जो 1999-2000 में बढ़कर 550 ग्राम हो गई। इससे स्पष्ट होता है कि खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि होने के बावजूद-प्रतिव्यक्ति खाद्यान्न की उपलब्धता में हुई वृद्धि को विशेष वृद्धि नहीं कहेंगे।

ग्रामीण क्षेत्रों में एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए 2400 कैलोरी भोजन की आवश्यकता होती है, वहीं शहरों में 2100 कैलोरी भोजन की आवश्यकता होती है, परंतु आज स्थिति यह है कि कुछेक लोगों को तो एक जून की रोटी तक नसीब नहीं होती। आये दिन न जाने कितने लोग आर्थिक तंगी के कारण आत्महत्या कर लेते हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या ने कृषि विकास को बुरी तरह प्रभावित किया है।

उपविभाजन एवं अपखंडन के कारण भू-जोत के आकार में बहुत अधिक कमी आयी है। वर्ष 1901 में प्रतिव्यक्ति भू-जोत का आकार 0.43 हेक्टेयर था। जो वर्तमान में घटकर 0.23 हेक्टेयर रह गया है।

देश में 0-1 हेक्टेयर के बीच में सीमांत कृषकों की संख्या 59 प्रतिशत है मध्यम कृषक जिनके पास 4-10 हेक्टेयर भूमि है उनकी संख्या 7.2 प्रतिशत है, बड़ी जोतों वाले कृषकों की संख्या जिनके पास 10 हेक्टेयर से अधिक भूमि है, उनकी संख्या 1.6 प्रतिशत है। थोक मूल्य संचकांक 1950-51 में 16.9 था। वहीं 1999-2000 में 362.2 हो गया अर्थात 50 वर्षो के अंतराल में कीमतों में 21 गुना वृद्धि हुई । देश में पूँजी निर्माण तथा बचत की संभावना नहीं के बराबर रही । देश में 15 प्रतिशत लोग ही पूँजी निवेश कर पाते हैं। 1950-51 में बाह्य ऋण 32 करोड़ था। वहीं 2001 में 4,80,586 करोड़ रूपये हो गया। आज देश के प्रत्येक नागरिक पर 5000 रूपये का विदेशी कर्ज है।

दिसंबर 2002 की स्थिति के अनुसार देश पर कुल 105 अरब डालर का विदेशी कर्ज था, रूपयों में यह राशि 5043 अरब 94 करोड़ रूपये बैठती है। इस लिहाज से 102 करोड़ की आबादी वाले इस देश के प्रत्येक नागरिक पर 5000 रूपये से अधिक का विदेशी कर्ज है। डॉ. करमरकर कहते हैं कि- बढ़ती हुई जनसंख्या ने गंभीर समस्या कर दी है। ये देशवासियों के जीवन स्तर को नीचा बना रही है, बेरोजगारी में वृद्धि तथा आर्थिक विकास को अवरूद्ध कर रही है। भारत में लगभग 5 करोड़ लोग झुग्गी-झोपड़ियों में रहते हैं। 6 करोड़ लोग मकान विहीन हैं। भारत में 2500 लोगों पर एक प्रतिशत चिकित्सक उपलब्ध हैं, जबकि अमेरिका में 440 और जापान में 680 लोगों पर एक चिकित्सक उपलब्ध है। ग्रामीण क्षेत्रों में 22 प्रतिशत लोगों को पीने के लिए शुद्ध पानी उपलब्ध नहीं हो पाता है, सैकड़ों गर्भवती महिलाओं को पोषक तत्व भी नहीं मिल पाते । यही कारण है कि भारत में 33 प्रतिशत बच्चे सामान्य वजन के होते हैं, जबकि चीन में ऐसे बच्चे 7 प्रतिशत तथा इंडोनेशिया में 14 प्रतिशत ही हैं। गरीबी के कारण आज खेतिहर मजदूर निम्न जीवन स्तर के चक्र में फँसता चला जा रहा है, खेतिहर मजदूरों को सामान्य जीवन निर्वाह की स्थिति बनाएं रखना भी कठिन है, एक वक्त रूखा-सूखा खाने वाले टूटी-फूटी झोपड़ियों में निवास करने वाले कई घंटों तक काम करने वाले श्रमिकों से मात्र जीवन बसर की आशा की जा सकती है। उनके धंसे चेहरे, दुर्बल स्वास्थ्य व बुझी सी आँखे इनके जीवन स्तर की सहज ही पहचान करा देती हैं। खेतिहर गरीब परिवारों का आकार बड़ा होता है, जिसके कारण बच्चों में अशिक्षा एवं कुपोषण का बोलबाला होता है। छोटे-छोटे बच्चे जिनकी उम्र पढ़ने-लिखने की होती है। वे मजबूरन घरों, होटलों एवं रेस्टोरेन्टों में काम करने के लिए मजबूर हो जाते हैं। भारत में एक अनुमान के आधार पर इनकी संख्या 1 करोड़ 36 लाख से 10 करोड़ है। मुम्बई, दिल्ली, कोलकाता जैसे शहरों में एक लाख बच्चे प्रत्येक शहरों में सड़कों गलियों में घूमते नजर आते हैं, पेट भरने के नाम पर चोरी-चपाटी भी करने लगते हैं, जिसका प्रभाव देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

बढ़ती जनसंख्या न केवल आर्थिक समस्या उत्पन्न करती है बल्कि आर्थिक व्यवस्था को भी प्रभावित करती है, इसलिए एक अल्प विकसित/ विकासशील देश की बढ़ती हुई जनसंख्या अभिशाप मानी जाती है, इसका मुख्य कारण यह है कि जिस गति से जनसंख्या में वृद्धि होती है, उस गति से आय में वृद्धि नहीं होती है, प्रतिव्यक्ति आय कम होने के कारण जनता का जीवन स्तर निम्न हो जाता है, उनकी कार्यकुशलता में कमी आ आती है। जिससे जनोपयोगी संस्थाएँ जैसे अस्पताल, रेल, परिवहन, संचार, विद्युत, जल, आवास, स्कूल-कॉलेज आदि पर खर्च बढ़ जाता है, परिणाम यह होता है कि हमारे निर्धारित लक्ष्य पूरे नहीं हो पाते हैं, प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से पर्यावरण प्रभावित होने लगता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बढ़ती हुई जनसंख्या ने हमारी सारी योजनाओं पर पानी फेर दिया एवं सारे आर्थिक समीकरण गड़बड़ा गये, जनसंख्या वृद्धि को रोकने के लिए जो कदम उठाये गये वे सार्थक सिद्ध नहीं हुये । वर्तमान में 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या वृद्धि की दर 1.63 प्रतिशत वार्षिक रही है, जो बहुत ऊँची है। विकसित देशों में यह वृद्धि की दर 0.5 प्रतिशत वार्षिक है। इससे स्पष्ट होता है कि जन्म दर से वृद्धि दर को कम करने में असफल भी रहे हैं। नियोजन के 63 वर्षो के बावजूद भी हम योजनाओं के लिए संसाधनों की व्यवस्था नहीं कर पाए हैं। प्रत्येक पंचवर्षीय योजनाओं में विदेशी ऋण एवं ब्याज भुगतान बढ़ते गए हैं। दिसम्बर 2013 में भारत सरकार का कुल बाह्य ऋण 624 बिलियन अमरीकी डॉलर था।

2011 की जनगणना के अनुसार बढ़ती हुई जनसंख्या ने पर्यावरण के संतुलन को बिगाड़ दिया है। जंगलों के कटाव को रोकने में हम असफल सिद्ध हुए हैं। भारत का कुल 33 प्रतिशत भाग वनाच्छादित है, जबकि पर्यावरण संतुलन की दृष्टि से भूमि का एक तिहाई हिस्सा होना आवश्यक है। प्रो. रंगराजन के अनुसार 2012 में 29.8 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे थे । जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग गरीबी रेखा में फँसा हुआ है। 2011-12 में बेरोजगारों की संख्या 24.7 मिलियन थी । ग्रामीण क्षेत्र में छिपी बेरोजगारी एवं शहरी क्षेत्र में सफेद कॉलरपोश बेरोजगारी अत्यंत चिंता का विषय बनी हुई है। देश में धन की असमानताएँ बढ़ी हैं, धनी और धनी जबकि गरीबी और गरीब होता जा रहा है। वर्तमान में 10 प्रतिशत से अधिक मुद्रा स्फीति की दर बनी हुई है। बढ़ती मँहगाई के कारण खाद्यान्न लोगों की पहुँच से बाहर होता जा रहा है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बढ़ती हुई जनसंख्या में विकास के सारे समीकरणों पर पानी फेर दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जनांकीय - मुखर्जी ।
2. भारतीय अर्थव्यवस्था - डॉ. सुदामा सिंह ।
3. अमृत संदेश - 10 जुलाई 1998
4. नवभारत - 20 जून 2003
5. यूनीफाईड अर्थशास्त्र - डॉ. मिश्रा एवं भारद्वाज ।
6. यूनीफाईड अर्थशास्त्र - डॉ. पी. डी. माहेश्वरी ।
7. आर. पी. यूनीफाईड अर्थशास्त्र - डॉ. जीवनलाल भारद्वाज ।
8. यूनीफाईड अर्थशास्त्र - अनुपम गोयल, इन्दौर ।

नीमच जिले की जनसंख्या का लिंगानुपात

डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा * बाला शर्मा **

प्रस्तावना - जनसंख्या संरचना का सबसे अधिक लोकप्रिय आधार उसमें पुरुष एवं स्त्रियों का अनुपात निकालना है, जिसे लिंगानुपात कहा जाता है। किसी देश की जनसंख्या में लिंग संरचना को देखकर ही उस देश की सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति का एक निश्चित सीमा तक अनुमान लगाया जा सकता है।

लिंग अनुपात भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न प्रकार से निकाला जाता है। सोवियत रुस में पुरुष एवं स्त्री अनुपात को प्रतिशत में व्यक्त किया जाता है। ये अनुपात पुरुष एवं महिलाओं के लिये पृथक-पृथक निकाले जा सकते है। संयुक्त राज्य अमेरिका में लिंगानुपात को पुरुषों का महिलाओं से प्रतिशत निकालकर व्यक्त किया जाता है।भारत में लिंगानुपात को एक हजार पुरुषों के संदर्भ में महिलाओं की संख्या के रुप में व्यक्त किया जाता है।

यद्यपि पुरुष एवं महिलाओं का अनुपात समान होना चाहिए, किन्तु वास्तविक इससे भिन्न है। जन्म के समय यह अनुपात पुरुषों के पक्ष में होता है। विश्व के सभी देशों में जब 100 लड़कियाँ जन्म लेती है तो उससे अधिक लड़के जन्म लेते है। प्रो. स्टैर्न ने सन् 1968 में यह बताया कि प्रति सौ लड़कियों के जन्म के साथ 125 से 135 तक लड़कों का जन्म होता है। किन्तु यह दर अति-अनुमानित प्रतीत होती है। विश्व के अधिकांश देशों से लड़कियों की अपेक्षा लड़कों का जन्म अधिक होता है। औद्योगिक रुप से विकसित एवं शहरी सम्पन्नता से युक्त पश्चिमी देशों में जन्म के समय लिंगानुपात करीब 105 है, किन्तु उन देशों में जहाँ भ्रुण मृत्यु का दबाव अधिक है, लिंगानुपात करीब 102 है, यह उल्लेखनीय है कि कम विकसित देशों में जन्म एवं मृत्यु का पंजीकरण बहुत कम होता है, विशेषकर लड़कियों का जन्म पंजीकरण, लड़कों की अपेक्षा कम होता है। एक ओर लड़कों की जन्म दर, लड़कियों से अधिक होती है, तो दूसरी ओर लड़कों की मृत्युदर भी लड़कियों से अधिक होती है।

यदि भिन्न-भिन्न आयु वर्गो में लिंगानुपात देखा जाय तो ऐसा प्रतीत होता है कि आयु के प्रथमार्द्ध में पुरुषाधिक्य होता है और उत्तरार्द्ध में महिलाधिक्य होता है। ऐसा इसलिये होता है कि जन्म के समय पुरुष-स्त्री अनुपात 105:100 होता है। यह आधिक्य धीरे-धीरे मृत्यु के दबाव से घटता जाता है। जहाँ जन्म के समय लड़कों की संख्या अधिक होती है। वहाँ कुछ समय बाद लड़कों में मृत्यु का दबाव अधिक होने से उनकी ये बढ़त समाप्त हो जाती है। युवावस्था में यह अनुपात करीब-करीब समान हो जाता है। किन्तु वृद्धावस्था तक यह लिंगानुपात 100 से कम हो जाता है, अर्थात् स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक हो जाती है। यही लिंगानुपात का सामान्य नियम है कि प्रारम्भ से यह 100 से अधिक होती है, मध्यकाल में 100 के आसपास व वृद्धावस्था तक 100 से कम हो जाती है।

उपर्युक्त विश्लेषण के उपरान्त केवल यही कहा जा सकता है कि प्रकृति ने बड़े विचित्र ढंग से संतुलन बनाया है, एक ओर शिशु बालकों का जन्म अधिक होता है, तो दूसरी और शिशु कन्याओं में वातावरण से संघर्ष करने की शक्ति अधिक होती है। अत: जन्म के समय लिंगानुपात 100 से अधिक, युवाकाल में करीब 100 तथा वृद्धावस्था में 100 से कम रहता है।

भारत में पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की संख्या कम होने के मुख्य कारण है-

1. भारत में लड़कियों की देखभाल कम होती है, जिसके कारण बाल्यकाल एव प्रसूति अवस्था में उनकी मृत्यु हो जाती है।
2. भारत में पुरुष शिशु के प्रति अनुराग अधिक है, पुत्र को मोक्ष प्राप्ति का मार्ग बताया गया है, इसलिए भी यह अनुपात प्रतिकूल हो जाता है।
3. बाल विवाह या कम उम्र में विवाह होने से मातृत्व का भार वहन करने के कारण महिलाओं की मृत्यु हो जाती है।
4. परिवार नियोजन के अभाव में बार-बार मातृत्व वरन करने के कारण स्त्रियों का शरीर कमजोर पड़ जाता है और उनकी मृत्यु हो जाती है।
5. भारत में अभी भी स्त्रियों का जन्म अभिशाप माना जाता है, इस कारण या तो भ्रूण में या पैदा होते ही उनकी हत्या कर दी जाती है।
6. भारत में दहेज जैसी कुरीति प्रचलित है, इस कारण निर्धन परिवार बेटी देना अच्छा नहीं समझते। यहाँ स्त्रियों को घर की चार दीवारी के बाहर कार्य करना अच्छा नहीं माना जाता।
7. जनगणना के समय स्त्रियों की गणना सही से नहीं हो पाती।

नीमच जिले में लिंग संरचना की प्रवृत्ति का विश्लेषण

नीमच जिले में लिंग संरचना का अध्ययन एव विश्लेषण किया गया, जो निम्न तालिका से स्पष्ट है।

तालिका क्रमांक- 01 : नीमच जिले में लिंगानुपात की स्थिति

क्र.	जनगणना वर्ष	लिंगानुपात)प्रति 1000 पुरुषों पर स्त्रियोंकी संख्या)	लिंग अनुपात में परिवर्तन
1.	1991	943	-
2.	2001	950	.7
3.	2011	954	.4

* पूर्व प्राचार्य, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

स्त्रोत :- जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, 1991, 2001, 2011

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 1991 की जनगणना में नीमच जिले में प्रति 1000 पुरुषें पर स्त्रियों की संख्या 943 थी जो कि 2001 में बढ़कर 950 हो गई। इस प्रकार 1991 से 2001 के दशक में लिंग अनुपात में 7 की वृद्धि हुई। यह वृद्धि सर्वाधिक मानी गई है। सन् 2011 की जनगणना में जिले में लिंग अनुपात पुन: बढ़कर 954 हो गई, जो कि 2001 से 2011 के दशक में 4 की वृद्धि हुई। इस तरह स्पष्ट है कि नीमच जिले में लिंग अनुपात निरंतर बढ़ रहा है। इस तरह इसे सकारात्मक दृष्टिकोण कह सकते है। इसके निम्न कारण है-

1. साक्षरता में वृद्धि के कारण लिंगानुपात में सुधार हुआ है। 2011 की जनगणना में जिले में 70 प्रतिशत साक्षरता है। साक्षरता से सोच में अंतर आता है।
2. साक्षरता में वृद्धि के कारण समाज की सकारात्मक सोच बनी है। अब महिलाएँ भी आर्थिक रूप से सक्षम हुई है। महिलाओं से संबंधित कुरीतियाँ कम हुई है।
3. चिकित्सालयों में उपलब्धता के कारण मातृत्व मृत्यु दर में कमी हुई है।

नीमच जिले की विभिन्न तहसीलों में लिंगानुपात की स्थिति

नीमच जिले की विभिन्न तहसीलों में लिंगानुपात का अध्ययन किया गया जिसके निष्कर्ष निम्न तालिका में है।

तालिका क्रमांक - 02 : नीमच जिले में विभिन्न तहसीलों में लिंग अनुपात

तहसील	लिंगानुपात			लिंग अनुपात में परिवर्तन	
	1991	2001	2011	1991 से 2001	2001 से 2011
नीमच	933	940	924	+ 7	- 6
जावद	947	954	958	+ 7	+ 4
मनासा	952	957	972	+ 5	+ 15
जीरन	-	-	977	-	-
सिंगोली	-	-	960	-	-

स्त्रोत :-जिला सांख्यिकी पुस्तिका 1991, 2001, 2011

इस प्रकार नीमच जिले की विभिन्न तहसीलों में लिंग अनुपात भिन्न-भिन्न है तथा उसमें परिवर्तन के निम्नलिखित कारण सम्भावित है।

1. जिले में आंतरिक प्रसवन के कारण तथा जिले से बाहर आवास प्रवास के कारण लिंग अनुपात में परिवर्तन हुआ है, क्योंकि अप्रवासियों का लिंग अनुपात नव अप्रवासियों के तुलना में अधिक होता है क्योंकि रोजगार के कारण पहले पुरुषों का प्रवसन होता है, उसके पश्चात् महिलाओं का प्रवसन होता है।
2. जिले में बढ़ती हुई शहरीकरण की प्रवृत्ति ने भी लिंग अनुपात को प्रभावित किया है, क्योंकि नगरों में पुरुषों की संख्या महिलाओं की तुलना में अधिक पाई जाती है।
3. जिले की आयु संरचना में परिवर्तन भी लिंग अनुपात को प्रभावित कर रहा है, क्योंकि जन्म के समय लिंग अनुपात प्रति सौ महिलाओं पर, लड़कों का अनुपात के आधार पर 104 से 107 के मध्य पाया जाता है, परन्तु आयु समूह अधिक होने पर लिंग अनुपात कम होने लगता है, क्योंकि 45 वर्षो से अधिक आयु वर्ग में औरतों में मृत्यु दर पुरुषों की अपेक्षा कम होती है।

भारत, मध्यप्रदेश नीमच जिले के लिंगानुपात का तुलनात्मक अध्ययन

यदि नीमच जिले के लिंगानुपात की तुलना भारत व म.प्र. के लिंग अनुपात से करें तो इस प्रकार के निष्कर्ष प्राप्त होते है जो कि निम्न तालिका से स्पष्ट है-

तालिका क्रमांक - 03 : भारत, मध्यप्रदश, नीमच जिले के लिंग अनुपात का तलनात्मक अध्ययन

वर्ष	लिंगानुपात			लिंग अनुपात में परिवर्तन		
	नीमच जिला	मध्यप्रदेश	भारत	नीमच जिला	मध्यप्रदेश	भारत
1991	943	912	927	-	-	-
2001	950	919	933	+ 7	+ 7	+ 6
2001	954	930	940	+ 4	+ 11	+ 7

स्त्रोत :- भारत की जनगणना 1991, 2001, 2011 म.प्र. सांख्यिकी संक्षेप, जिला सांख्यिकी पुस्तिका

उपरोक्त तालिका से निष्कर्ष इस प्रकार है -

1. सन् 1991 की जनगणना में नीमच जिले में लिंग अनुपात 943 था जो कि मध्यप्रदेश की तुलना में 31 तथा भारत की तुलना में 16 अधिक है।
2. सन् 2001 की जनगणना में नीमच जिले में लिंग अनुपात 950 था जो कि मध्यप्रदेश की तुलना में 31 तथा भारत की तुलना में 17 अधिक है।
3. सन् 2011 की जनगणना में नीमच जिले में लिंग अनुपात 954 था जो कि मध्यप्रदेश की तुलना में 24 तथा भारत की तुलना में 14 अधिक है।
4. सन् 1991 में 2001 के दशक में नीमच जिले में लिंग अनुपात में 7 की वृद्धि हुई जबकि मध्यप्रदेश में भी समान लिंग अनुपात में वृद्धि 7 हुई तथा भारत में केवल 6 की वृद्धि हुई। इस प्रकार नीमच जिले में लिंग अनुपात की वृद्धि मध्यप्रदेश के समान तथा भारत से 1 अधिक हुई है।
5. 2001 से 2011 के दशक में नीमच जिले में लिंग अनुपात में 4 की वृद्धि हुई जबकि मध्यप्रदेश में लिंग अनुपात में 11 की वृद्धि हुई तथा भारत के लिंग अनुपात में 7 की वृद्धि हुई। इस प्रकार जिले में लिंग अनुपात में वृद्धि मध्यप्रदेश की तुलना में 7 कम तथा भारत से 3 कम हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पंत, जीवनचन्द्र: जनांकिकी 2002, पृ. 385
2. पंत, जीवनचन्द्र: जनांकिकी 2002, पृ. 385
3. मेहता, बी.सी.: राजस्थान में जनसंख्या संवृद्धि 1977, पृ. 37
4. Zachariah, K.C.: Migrants in Greater Bombay 1968, PP. 80,81
5. N.s.s.(14th round) fertility and mortality rates in rural India, delhi, no.76,1963 p.138

****

मध्यप्रदेश में हाट बाजार योजना एक आर्थिक विश्लेषण

डॉ. शशि किरण नायक * अनुष्का मिश्रा नायक **रोहिणी त्रिपाठी ***

प्रस्तावना – ग्रामीण हाटों में अधोसंरचना की आवश्यकता – प्रदेश में उत्पाद के विपणन एवं प्रचार–प्रसार हेतु नगरीय क्षेत्रों में अनेक हाट बाजार विकसित किये गए हैं। इन हाटों में ग्रामीणों का निरन्तर रहकर अपने उत्पाद का विक्रय करना किफायती एवं लाभदायक नहीं रहा है। इन हाटों में ग्रामीणों व्यापारियों का अत्यधिक समय एवं श्रम व्यर्थ होता है। इसलिए इन्हें अपने ही क्षेत्रों में लाभ दिलाने के लिए ग्रामीण हाटों को विकसित करने की आवश्यकता महसूस की गई। जिससे कि ग्रामीण उत्पादक नियत दिन इन हाटों में सम्मिलित होकर न केवल आय अर्जित कर सकें, बल्कि उसी दिन अपने ग्राम भी वापस जा सकें।

प्राचीनकाल से ही भारतीय सामाजिक ताने–बाने में हाटों का विशेष महत्व रहा है। ये हाट हर्ष उल्लास एवं आपसी मेल मिलाप के प्रतीक रहे हैं। एक तरह से ये भारतीय जनमानस में एक परम्परा का भी हिस्सा रहे हैं। ग्रामीण अपनी रोजमर्रा की जरूरतें इन्हीं साप्ताहिक हाटों से पूरी करते आए हैं। यह हाट ग्रामीण महिलाओं एवं पुरुषों को समान रूप से न केवल आजीविका के अवसर उपलब्ध कराते हैं, बल्कि इनके लिए घर से बाहर मनोरंजन का साधन भी बनते हैं। भारतीय जनमानस की इसी परम्परा के तहत उनकी आजीविका एवं मनोरंजन को दृष्टिगत रखते हुए प्रदेश सरकार द्वारा इन हाटों को सुव्यवस्थित एवं सुसज्जित करने के साथ–साथ एक निश्चित स्थान पर आजीविका उपलब्ध कराने हेतु मुख्यमंत्री ग्राम हाट योजना को अमलीजामा पहनाया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों की जनता एवं व्यापारियों की सुविधा के उद्देश्य से अमल में लाई गई इस योजना ने ग्रामीण हाटों की तस्वीर बदलने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है।

प्रदेश के लगभग 52,000 ग्रामों में से लगभग 2 हजार ग्रामों में साप्ताहिक हाट बाजार लगते हैं। यह हाट बाजार सामान्यत: आसपास के 8 से 10 ग्रामों को जोड़ने वाले मुख्य मार्गो पर लगते हैं।

इनमें से अधिकतर ग्रामों में इन घरों के लिए न तो स्थान चिन्हित किया गया और न ही सामग्री विक्रय हेतु विक्रेता ग्रामीणों को बैठने अथवा शेड आदि की व्यवस्था थी। इन घरों में खुले स्थानों में सामान बेचने वाले विक्रेताओं को अत्यधिक धूप व वर्षा से परेशानी का सामना करना पड़ता था। एक अनुमान के मुताबिक इन ग्रामीण हाट बाजारों में प्रत्येक सप्ताह लगभग पचास लाख ग्रामीण जन सम्मिलित होकर व्यापारिक गतिविधियों का निष्पादन करते हैं। प्रदेश सरकार द्वारा वर्षो से यह परेशानी झेल रहे ग्रामीणों के लिए इस योजना से सुलभ एवं समुचित व्यवस्था उपलब्ध कराई जा रही है।

स्वरूप – प्रदेश सरकार की महत्वाकांक्षी मुख्यमंत्री ग्राम हाट योजना द्वारा प्रदान की जा रही सुविधाओं से ग्रामीण क्रेता एवं विक्रेताओं के जीवन में उल्लेखनीय परिवर्तन देखने को मिल रहा है। इस योजना से उन्हें न केवल सुनिश्चित आजीविका के अवसर मिल रहे हैं बल्कि उच्च गुणवत्ता का वातावरण भी उपलब्ध हो रहा है। एक नजर में सुविधाएं–

छोटे सब्जी विक्रेता एवं अन्य दैनिक उपयोग की वस्तुओं के विक्रेताओं के लिए (8x6) मीटर के 50 पक्के प्लेटफार्म जिनमें दीवारें सहीं हैं, परन्तु प्युस्लर स्ट्रलर स्ट्रक्चर पर पीपीजीआई की छत निर्मित की जा रही है। अन्य बड़े व्यापारियों के लिए (3.60x4.40) मीटर के 5 चबूतरे तथा अपेक्षाकृत कुछ अन्य बड़े व्यापारियों के लिये (6.30x3.60) मीटर के 5 चबूतरों का निर्माण किया जा रहा है।

हाट समाप्ति के पश्चात् व्यापारियों का सामान रखने के लिए (5x4) मीटर का भंडारगृह (गोडाउन) तथा हाट का कामकाज देखने के लिए एक छोटे कार्यालय का निर्माण किया जा रहा है। यह कार्यालय ग्राम पंचायत के अधीन रहेगा।

सभी चबूतरों के बीच 6 फीट चौड़ाई के पक्का कांक्रीट रोड की व्यवस्था की जा रही है। उन ग्रामों में जहां हाट बाजार नहीं लगते हैं परन्तु दुकान खुले में लगती है वहां 10 लाख राशि से 8 स्थायी दुकानों का निर्माण किया जा रहा है। इनमें से 2 दुकानें महिला एसएचजी के लिए आरक्षित रहेंगी।

पुरुषों तथा महिलाओं के लिए प्रसाधन की समुचित व्यवस्था की जा रही है। ग्रामीणों एवं व्यापारियों के लिए परिसर में शुद्ध पेयजल की व्यवस्था हेतु हेंडपम्प का खनन किया जा रहा है।

हाटों में आने वाले ग्रामीणों एवं व्यापारियों के आवागमन के साधनों की पार्किंग की सुविधा।

योजना में ग्रामीणों के मनोरंजन हेतु एक एम्फीथियेटर जिसका कुर्सी क्षेत्रफल 194 वर्गमीटर, एक मंच तथा 200 से 250 व्यक्तियों के बैठने के लिए सीढ़ीनुमा बैठने की व्यवस्था जमीन की उपलब्धता के अनुसार की जा रही है।

पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग द्वारा प्रदेश के उन सभी 2000 ग्रामों में इस योजना को लागू किया जा रहा है जहां हाट लगते आ रहे हैं। योजना में सामान्यत: तीन प्रकार के हाट निर्मित किये जा रहे हैं। इनमें उपरोक्तानुसार निर्माण कार्य चिन्हित भूमि की उपलब्धता (क्षेत्रफल) के आधार पर प्राकलन की लागत अनुसार किये जा रहे हैं।

(सारणी देखे अगले पृष्ठ पर)

लाभ – हाट योजना से ग्रामीणों के जीवन में आ रहा बदलाव –

- ग्रामीण अधोसंरचना में साफ सफाई की समुचित व्यवस्था से जीवन स्तर में हो रहा सुधार।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सरोजनी नायडू कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सरोजनी नायडू कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
*** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सरोजनी नायडू कन्या महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

- ग्रामीण विक्रेताओं को सामग्री विक्रय एवं भंडारण की सुविधा से व्यापार एवं आय में वृद्धि हो रही है।
- योजना का ग्रामीण अंचलों में उत्तम वातावरण देने में अहम योगदान।
- योजना से व्यापारियों एवं ग्रामीणों का अत्यधिक धूप एवं वर्षो से बचाव हो रहा संभव।
- महिलाओं व बच्चों को विशेष सुविधाओं के साथ–साथ मिल रही सुरक्षा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

क्र.	ग्राम का प्रकार	अनुमानित संख्या	अनुमानित लागत (रु. लाख में)	अनुमानित कुल राशि (रु. करोड़ में)
1	2	3	4	5
(अ)	1 बड़े ग्राम	1000	50.00	500.00
	2 मध्यम ग्राम	600	40.00	240.00
	3 छोटे ग्राम	400	30.00	120.00
	कुल	**2000**		**860.00**
(ब)	स्थायी दुकानें	1000	10.00	100.00
			महायोग	**960.00**

****

डिजिटल इंडिया की संकल्पना में अग्रणी मध्यप्रदेश

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

प्रस्तावना – इंटरनेट, सड़कें, टेलीफोन तथा बिजली की भांति ही किसी भी समाज के लिये ढांचागत जरूरत बन चुकी है। उपभोक्ताओं के लिये इंटरनेट बहुआयामी साधन प्रणाली है। दूरस्थ लोगों के बीच समकालिक संवाद, सामूहिक रूप से कार्य करना, सूचनाओं में हिस्सेदारी व इनका व्यापक प्रचार प्रसार और सूचनाओं का महासागर आदि ऐसे ही कुछ आयाम हैं। सूचनाओं के विश्वव्यापी जाल के साकार होने से गांव रूपी विश्व अर्थात् **ग्लोबल विलेज** की संकल्पना यथार्थ बनती जा रही है। ग्लोबल विलेज की संकल्पना द्विआयामी तथा इंटरनेट गम्य है। संकल्पना के एक आयाम के अनुसार जिस प्रकार गांव जैसे लघु समुदाय में संचार अर्थात् सूचनाओं और भावनाओं की भागीदारी आमने – सामने होती है, उसी प्रकार इंटरनेट के माध्यम से विश्व स्तर पर स्थान और समय के अंतराल को शून्य करते हुये प्रत्यक्ष संचार किया जा सकता है। वैश्विक संकल्पना का दूसरा आयाम भी इतना ही महत्वपूर्ण है कि सूचनाओं के महासागर (अर्थात् विश्व के स्तर पर ज्ञान) को प्रत्येक गांव के लिये सीधे उपलब्धता सुनिश्चित करना। ज्ञान विज्ञान के स्तर पर ऐसी जानकारी गांव में संभवत: महात्मा गांधी के **ग्राम स्वराज** विषयक स्वप्न के निकटतम हो सकती है।

राष्ट्रीय या क्षेत्रीय सूचना आधारभूत संरचना इंटरनेट पर आधारित होता है। यह संरचना उच्च वैंडविड्स ट्रंक लाइनों से बना होता है जहां से विविध संपर्क लाइनें कम्प्यूटरों को जोड़ती हैं। इन कम्प्यूटरों को **होस्ट** कहा जा सकता है। तथा ये इंटरनेट सर्विस प्रोवाइडर कम्पनियों से जुडे होते हैं। ये कम्प्यूटर अनवरत उपभोक्ताओं की सेवा करते हैं। जो पर्सनल कम्प्यूटर, मोडेम तथा साधारण टेलीफोन लाइनों द्वारा उनसे जुड़े रहते हैं। बदले में उपभोक्ताओं से तयशुदा राशि वसूल की जाती है। इंटरनेट पर कम्प्यूटर का एक विशेष पता होता है, जो कि द्विस्तरीय होता है। आई.पी. पता अंकीय होता है, जबकि सरलता हेतु डोमेन नेमिंग प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। इंटरनेट बहुविधि सेवायें देता है जैसे – ई मेल, टेलनेट, फाइल स्थानांतरण, चैटिंग वर्ल्ड वाइड वेव आदि। व्यवसाय को संचालित करने के लिये इंटरनेट पर की गयी कार्यवाही को इलेक्ट्रोनिक्स कॉमर्स (ई – कॉमर्स) कहते हैं। तथा जब उपभोक्ता इंटरनेट पर लेनदेन के लिये सेल्युलर फोन और पर्सनल डिजिटल असिस्टेंट जैसे उपकरणों के प्रयोग को एम. कॉमर्स कहा जाता है। इंटरनेट की लोकप्रियता ने विशिष्ट उत्पादन एवं अनुरक्षण गतिविधियों से संबंधित उद्योगों के साथ – साथ समग्र औद्योगिक परिवेश को फलने फूलने का अवसर दिया जाता है। कम्प्यूटरों के निर्माण और अनुरक्षण, ऑप्टिकल फाइबर, संचार उपग्रह व सेलफोन मूलक उपकरणों व सेवाओं आदि जैसी विषिष्ट गतिविधियाँ इंटरनेट और उद्योग के अंतर्गत आते हैं। वहीं औद्योगिक संगठन या अन्य किसी विशिष्ट संगठन का अपना नेटवर्क इंट्रानेट है। इंट्रानेट को एक्स्ट्रानेट से जोड़ने पर गोपनीयता के अनुरक्षण की समस्या उत्पन्न होती है। इंट्रानेट, इंटरनेट का वैसा आयाम है, जिसमें विविध इंट्रानेटों को विशिष्ट छलनियों के जैसी प्रौद्योगिकियों के माध्यम से सुरक्षित कर इंटरनेट से जोड़ा जाता है। एक्स्ट्रानेट में वही सूचनायें सार्वजनिक पहुंच में होती हैं, जिन्हें संबंधित संगठन आम करना चाहते हैं। इनकी मुख्य विशेषता गोपनीयता है।

सूचना प्रौद्योगिकी पिछली सदी के आठवें दशक के अंत में शिक्षा और अनुसंधान नेटवर्क अरनेट के रूप में इंटरनेट का पदार्पण भारत में हुआ। व्यापक प्रसार के बावजूद आम जनता के लिये अभी भी इसकी सेवायें प्रतिबंधित हैं। राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र परियोजना के तहत देश के समस्त जनपद मुख्यालयों को राष्ट्रीय नेटवर्क से जोड़ दिया गया। 1995 में आम आदमी के लिये इंटरनेट के द्वार खोल दिये गये। 1999 में टेलीकॉम क्षेत्र के उदारीकराण से इंटरनेट के प्रसार में उछाल आया। सूचना प्रौद्योगिकी का बेहतर उपयोग आम लोगों की जिंदगी को आसान बनाने और बेहतर पारदर्शी प्रशासन देने के लिये नहीं किया जा सकता है। इसे साबित करने की सफल कोशिश की है। मध्यप्रदेश ने पिछले एक दशक में सूचना प्रौद्योगिकी की सेवाओं का एक ऐसा ढांचा खड़ा किया है, जिसके जरिये प्रदेश के आम नागरिकों के जीवन को बेहतर बनाया जा रहा है। निवेश हो या नागरिक सेवायें आज प्रदेश आई.टी. में उत्कृष्टता का पर्याय बनता जा रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से लोकसेवाओं को लोगों तक पहुंचाने, पारदर्शिता बढ़ाने और शासकीय कार्य प्रक्रियाओं को सुगम और जबाब देह बनाने के नवाचारों में देश के राज्यों में मध्यप्रदेश का प्रमुख स्थान है। सेमीकंडक्टर, फेब्रीकेशन निवेश नीति तैयार कर लागू करने और राज्य ई – मेल सेवा पॉलिसी बनाकर उसे लागू करने एवं डाटा शेयरिंग में मध्यप्रदेश का अग्रणी स्थान है। मोबाइल एसएमएस गेटवे में प्रदेश का दूसरा स्थान है। डिजिटल इंडिया कार्यक्रम में प्रमुख घटकों में अपेक्षित लक्ष्य हासिल करने की दिशा में काम चल रहा है। राज्य सरकार के प्रयास हैं कि इलेक्ट्रोनिक तकनीकी में मध्यप्रदेश देश में अग्रणी स्थान बना सके।

डिजिटल इंडिया में अग्रणी – हाल ही सम्पन्न डिजिटल इंडिया सप्ताह के दौरान विभिन्न कार्यक्रमों में भागीदारी की दृष्टि से मध्यप्रदेश देश में अग्रणी रहा है। डिजिटल इंडिया पोर्टल पर सप्ताह के दौरान जन भागीदारी से हुये विभिन्न कार्यक्रम संबंधी प्रदर्शित जानकारी से यह तथ्य रेखांकित हुआ है। मध्यप्रदेश में डिजिटल इंडिया सप्ताह के दौरान वर्चुअल क्लास के विद्यार्थियों से सीधे संवाद किया जा सकता है।

सप्ताह के दौरान राज्य, संभाग एवं जिला स्तर पर स्कूल एवं कॉलेज में छात्र – छात्राओं, शासकीय कर्मियों एवं जनभागीदारी से विभिन्न कार्यक्रम हुये।

अनुकूल वातावरण । यह बात उत्साह जनक है कि नई – नई तकनीकी को अपनाने के प्रति प्रदेश में अनुकूल वातावरण बना है। डिजिटल इंडिया डिजिटल

* विभागाध्यक्ष एंव प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश को लेकर प्रदेश का युवा वर्ग खास तौर से उत्साही है। इस दिशा में राज्य शासन के प्रयासों के सफल आने वाले समय में निश्चित देखने को मिलेंगें। प्रदेश में सुशासन की सर्वोच्च प्राथमिकता को दृष्टि में रखते हुये राज्य सरकार तत्परता से काम कर रही है। आज का विद्यार्थी काफी टेक फ्रेंडली है। तकनीकी का बेहतर उपयोग करते हुये डिजिटल युग में वे प्रेजेन्टेषन, साउंडट्रेक, टेस्ट, वीडियो ट्यूटोरियल, इंफोग्राफ मेकिंग, फ्लैशवार्ड, स्टोरी टेलिंग जैसे ऑनलाइन टूल्स का इस्तेमाल पढ़ाई के लिये करें तो इससे अपनी पढ़ाई को आसान बनाने के साथ - साथ उसे एन्जॉय भी कर सकेगें।

डिजिटल इंडिया के टूल्स -

पढ़ाई बनाये आसान - (Zaption) - यह एक वीडियो बेस्ड इटरैक्टिव और लर्निंग टूल्स है। इस टूल्स से आपको सब्जेक्ट से जुड़ी अपनी समझ के विकसित करने में मदद मिल सकती है। यहां पर आप कुछ ही मिनटों में विषय से जुड़े वीडियों पाठ तैयार कर सकते हैं। इसमें कस्टमाइज करने का ऑप्शन भी दिया गया है। वीडियो पाठ तैयार करने के समय उसके साथ इमेज, टेक्सट, वीडियो, क्वेश्चंस आदि जोड़ सकते हैं। फिर आप अपने तैयार किये गये वीडियो पाठ को आसानी से टीचर के साथ शेयर कर सकते हैं। शेयर करने के लिये आपको लिंक मिलेगा। यहां पर फ्री अकांउट क्रियेट करने का आप्षन है।

(Study Blue) - अगर आप परीक्षा की तैयारी को ध्यान में रखकर वीडियो, ऑडियो, नोट्स आदि के साथ फ्लैश कार्ड तैयार करना चाहते हैं तो यह टूल्स आपके लिये परफेक्ट है। यह एक ऑनलाइन लाइब्रेरी है। यहां एलजेब्रा से लेकर फ्लॉपी तक टॉपिक्स पर तैयार किये गये डिजिटल नोट्सकार्ड उपलब्ध हैं।

(Story Bird) - यह एक स्टोरी टेलिंग टूल्स है। इस टूल की सहायता से विद्यार्थी शॉर्ट स्टोरी तैयार कर सकते हैं। बल्कि उसे शेयर और प्रिंट भी कर सकते हैं। यहां आपको अपनी स्टोरी के अलग - अलग तरह के यूनिक इलेक्ट्रोन मिलेंगें जिससे डिजिटल स्टोरी तैयार कर आप एक ऑथर बन सकते हैं। यहां अलग - अलग विषयों से जुड़े डिजिटल असाइनमेन्ट भी तैयार किये जा सकते हैं।

(Picto Chart) - यदि आप पढ़ाई या प्रोजेक्ट के लिये इंफोग्राफिक, प्रजेन्टेशन, पोस्टर, रिपोर्ट आदि तैयार करना चाहते हैं, तो बेव के आइकॉन व टेम्पलेट का इस्तेमाल कर प्रोजेक्ट, इमेज, टैक्स्ट, इंफोग्राफ, चार्ट का इससे विजुअल के साथ बनाने से इंफोर्मेशन लाइव लगेगा।

ये सभी टूल्स विद्यार्थियों के लिये पढ़ाई आसान बनाने के लिये अपनाये गये हैं। ये डिजिटल इंडिया और डिजिटल मध्यप्रदेश में भी इन टूल्स का विद्यार्थी और टीचर दोनों ही इस्तेमाल कर रहे हैं।

धार्मिक उत्सवों में डिजिटल इंडिया - टैक्नोलॉजी के इस युग में दूरियाँ कम करने के लिये बहुत तरीके हैं। काम की उलझनों के कारण धार्मिक उत्सवों में जन सामान्य अपने घर नहीं जा पाते तो ऐसे अवसरों पर इंटरनेट के जरिये बातचीत कर एवं ई - कार्ड्स भेजकर विभिन्न सोषल नेटवर्किंग साइड और एप्स पर सेलिब्रेशन की फोटो शेयर कर खुषियाँ बांट सकता है। ऑनलाइन शॉपिंग ऑनलाइन गिफ्ट भेजना, ऑनलाइन ऑर्डर, फेसबुक व्हाट्सऐप व हाइक जैसे सोशल प्लेटफार्म पर धार्मिक उत्सव मना सकते हैं।

विदेश नीति - सूचना प्रौद्योगिकी आधारित महत्वाकांक्षी परियोजनाओं के जरिये शिक्षित योग्य और कुशल युवाओं के लिये प्रदेश में रोजगार के अवसर मुहैया करने के उद्देश्य से राज्य की आई टी निवेश नीति 2012 संशोधित 2014 बिजनेस प्रोसेस आउटसोर्सिंग, मैनेजमेंट, बीपीओ एवं बीपीएम उद्योग निवेश नीति 2014 तथा सेमी कंडक्टर फेब के क्षेत्र में निवेश को संभावनाओं को धरातल पर लाने के लिये मध्यप्रदेश सेमीकंडक्टर फेब्रिकेशन नीति 2015 को जारी की जाकर प्रदेश में बृहद् आईटी अधोसंरचना का विकास किया जा सकता है। इंदौर एवं भोपाल में आईटी पार्क की स्थापना का कार्य प्रगति पर है।

निविदाओं में पादर्शिता के लिये प्रदेश में ई - टेंडरिंग प्रणाली प्रचलित है। इसके माध्यम से 72,825 करोड़ लागत की लगभग 49,712 निविदायें जारी की गयी। राज्य शासन की प्रभावी सूचना प्रौद्योगिकी प्रणाली में मानव संसाधन का दक्षता से समुचित प्रयोग किये जाने की परिकल्पना को साकार रूप देने के लिये प्रदेश में 15 क्षेत्रीय दक्षता संवर्द्धन केन्द्र संचालित हैं। शेष जिलों में इनकी स्थापना की दिशा में कार्य किया जा रहा है।

आधार पंजीयन - नागरिकों के आधार पंजीयन की महत्ता को ध्यान में रखते हुये प्रदेश में आधार पंजीयन का काम प्राथमिकता से किया जा रहा है। विभिन्न योजना के हितग्राहियों की आधार नंबर से जोड़ने की आधार परियोजना के सुचारू क्रियान्वयन के लिये विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा पहल की जा रही है।

ई - कॉमर्स - ई कॉमर्स या इलेक्ट्रोनिक कॉमर्स किसी व्यवसायिक संगठन का अपने ग्राहकों और आपूर्ति कर्ताओं के साथ - साथ टेक्नोलॉजी आधारित लेन देन है। मध्यप्रदेश में भी इलेक्ट्रोनिक संचार माध्यमों के जरिये दैनिक उपयोगी व्यवसायों का संचालन करना है। ई कॉमर्स से समय या दूरी की बाधाओं के बगैर कारोबार करने का अवसर मिलता है, इससे कारोबार की लागत न्यूनतम होती है। बिजनेस चलाने का सबसे सस्ता सुगम मार्ग है। इससे डिलीवरी, समय, श्रम तथा अन्य अप्रत्यक्ष लागतों में कमी होती है।

ई - बैंकिंग - सूचना प्रौद्योगिकी के विकास ने बैंकिंग सेवा क्षेत्र में कम से कम समय व कम लागत में अपने ग्राहकों को अधिकतम सेवा देना, सुरक्षित सेवा, एवं मोबाइल बैंकिंग सेवा एक क्रांतिकारी बदलाव है। बैंकों के द्वारा इस नयी तकनीक के प्रयोग से युवावर्ग सबसे ज्यादा आकर्षिक हो रहा है। मोबाइल बैंकिंग सेवा, इंटरनेट, एसएमएस के माध्यम से कुछ सेकंडों में ग्राहक दुनिया के किसी कोने में भी किसी भी समय भुगतान प्रक्रिया को ऑपरेट कर सकता है। धन का स्थानांतरण, बिजली बिल का भुगतान, डीमेट एकांउट, ग्राहक के खाते में जमा आदि को मोबाइल व एसएमएस के माध्यम से अलर्ट करते रहते हैं। ग्राहक के खाते में किसी भी कितनी राशि है, डेबिट कितना, कब, किस समय हुआ, चेक बुक जारी करने का अनुरोध स्टॉपपेमेंट का अनुरोध, रेलवे रिजर्वेशन, एयरटिकिट, वस्तु सेवा की बुकिंग, नेटवर्क बिक्री, खरीद आदिकर और डिजिटल मध्यप्रदेश के साथ - साथ हम सभी लोग डिजिटल हो गये है।

सूचना प्रौद्योगिकी वह तकनीकी है। जिसमें कोई भी विषय या जानकारी जो ब्रह्मांड में कहीं भी उपलब्ध है। किसी भी समय, किसी भी व्यक्ति द्वारा कम्प्यूटर पर उपलब्ध कराई जा सकती है। सूचना प्रौद्योगिकी ने दैनिक कार्यप्रणाली, रेलवे विमानन आरक्षण, बैंकिंग, बीमा, टेलीफॉन, मौसम संबंधी पूर्वानुमान, रेडियो, खगोल विद्या, शिक्षा, आणविक, जीवविज्ञान, चिकित्सा, स्वास्थ्य, कृषि शिक्षा, आधार विदेश नीति आदि क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन का सूत्रपात कर यह विश्वास दिला दिया है कि इस नयी सदी अर्थात् 21वीं सदी में सूचना प्रौद्योगिकी का वर्चस्व रहेगा। सूचना प्रौद्योगिकी ने आज पूरे देश को ग्लोबल विलेज को बदलकर रख दिया है। इंटरनेट जैसी आधुनिकतम सुविधाओं ने संपूर्ण विश्व को एक सूचना संचार व्यवस्था के नेटवर्क से जोड़ दिया है। यह एक मिश्रित प्रौद्योगिकी है जिसमें कम्प्यूटर व टेलीकम्यूनिकेशन

टेक्नोलोजी दोनों ही प्रकार की प्रौद्योगिकी एक दूसरे के साथ मिलकर सूचना संसाधन व संप्रेषण का कार्य करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सूचना तकनीकी के बदलते आयाम - डॉ. सेमी - पृष्ठ क्रमांक 87
2. मध्यप्रदेश - शिवकुमार पटेरिया - पृष्ठ क्रमांक 207,215,218
3. मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण (2003-04) आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचनालय, मध्यप्रदेश भोपाल।
4. अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय, सीमा कुमारी 2008 - पृष्ठ क्रमांक 714
5. भारतीय अर्थव्यवस्था नई शताब्दी में - ओ.पी. शर्मा 2001
6. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार।
7. विज्ञान और प्रौद्योगिकी स्पेक्ट्रम, प्रकाशक नई दिल्ली।

****

भारतीय प्रशासन में जनसहभागिता - सिद्धांत एवं व्यवहार एक सर्वेक्षण

डॉ. नेहा चौहान *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से प्रशासन में जनसहभागिता के सिद्धांतों के परिप्रेक्ष्य में जनभागिता के व्यवहारिक पक्षों पर दृष्टिपात करने का प्रयास किया गया है तथा इस आधार पर प्रशासन में जनसहभागिता के समक्ष प्रस्तुत प्रमुख समस्याओं (बाधाओं) एवं इनके सम्भावित समाधानों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना – वर्तमान युग लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं का युग है। यदि कुछ राष्ट्रों जैसे रूस, चीन आदि को छोड़ दिया जाए, तो विश्व के अधिकांश देशों में लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था को ही अपनाया गया है। लोकतंत्र के विषय में पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन के अनुसार –''जनता द्वारा, जनता के लिए, जनता पर किया जाने वाला शासन ही लोकतंत्र है।'

वस्तुत: लोकतंत्र में जनता का अत्याधिक महत्व है तथा जनता जितनी जागरूक, शिक्षित व सक्रिय होगी लोकतंत्र उतना ही सशक्त होगा।

अत: 'प्रशासन में जनसहभागिता की अवधारणा का अभिप्राय स्पष्ट करते हुएं कहा जा सकता है कि – लोकतांत्रिक राजनीति का समस्त सिद्धांत और व्यवहार, सरकार और सरकारी पदों की जिम्मेदारी, शक्तियों का धारण व पृथक्करण करने में सक्रिय नागरिकों के सम्मिलित (सहभागी) होने की धारणा की व्यवहारिकता पर आधारित होता है यही प्रशासन में जनसहभागिता की अवधारणा है।

लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में नीतियों का क्रियान्वयन कार्यपालिका नौकरशाही के माध्यम से करती है। ऐसे में नौकरशाही को विभिन्न अधिकार व शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। अत: 'नौकरशाही द्वारा इन अधिकारों व शक्तियों के मनमाने दुरूपयोग से व्यक्तिगत अधिकारों की रक्षा के लिए राजनीति में जनता की निगरानी व भागीदारी आवश्यक है।'[1]

प्रस्तुत शोध-पत्र का सर्वप्रमुख उद्देश्य 'भारतीय प्रशासन में जनसहभागिता के सिद्धांत और व्यवहार' की तत्कालिन स्थिति व व्यवहारिकता का पता लगाना तथा साथ ही साथ उन परिस्थितियों व कारकों को ज्ञात करना, जिनके कारण यह सिद्धांत व्यवहारिकता में अधिक सक्रिय प्रतीत नहीं होता है। हमारे नीति-निर्माताओं का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना एवं महत्वपूर्ण सुझावों के माध्यम से इस धारण को और अधिक व्यवहारिक बनाने में सहायता प्रदान करना। प्रस्तुत शोध-पत्र का एक दीर्घकालिक उद्देश्य है।

राजनीति विज्ञान के विद्वान व दार्शनिक इस बात पर निर्विवाद रूप से सहमत हैं कि राजनीति में व्यापक जन सहभागिता की प्रमुख उपयोगिता 'यह सुनिश्चित करना है कि विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के निहित स्वार्थ बहुसंख्यक हितों पर हावी न हो जाएँ।'

शोध पद्धति – प्रस्तुत शोध-पत्र मुख्य रूप से प्राथमिक स्त्रोत से जुटाए तथ्यों पर आधारित है। इसके लिए सर्वेक्षणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है तथा प्रश्नावली के माध्यम से जनता के दृष्टिकोण, विचारों व प्रशासन में जनसहभागिता सम्बन्धी अधिकारों व कर्तव्यों की जानकारी का पता लगाने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध-पत्र में जुटाए गए आँकड़े, इन्दौर (म.प्र.) में विभिन्न नागरिकों के मध्य किये गये व्यापक क्षेत्र सर्वेक्षण पर आधारित हैं। इन आँकड़ों के आधार पर नागरिकों के प्रशासन के प्रति जागरूकता, रूचि, सहभागिता एवं शिकायतों व सुझावों का प्रतिशत व आलेखनीय आधार पर विश्लेषण किया गया है।

सहभागिता के साधन – भारतीय प्रशासन में नागरिक प्रमुखत: निम्नलिखित तीन प्रकारों से सहभागिता प्रदर्शित करते हैं या कर सकते हैं :

1. **अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन करके –** ग्राम, प्रखण्ड और जिला स्तरों पर पंचायती निकायों, राज्य विधान सभाओं और संसद में जाने वाले अपने प्रतिनिधियों का चुनाव जनता द्वारा किया जाता है इस प्रकार जनता अप्रत्यक्ष रूप से प्रशासन में सहभागी बनती है।
2. **विभिन्न संगोष्ठियों, अध्ययनों एवं विचार विमर्श में भाग लेकर–** विभिन्न राजनीतिक दलों, दबाव समूहों, युवा मंचों, विश्वविद्यालयों, स्वैच्छिक संगठनों, प्रेस योजना निकायों और सरकारी मशीनरी द्वारा समय-समय पर आयोजित की जाने वाली संगोष्ठियों, अध्ययनों और विचार विमर्शों में शिक्षित नागरिकों द्वारा भाग लेना भी जनसहभागिता का एक साधन है।
3. **राजनीतिक दलों और अन्य हित समूहों के माध्यम से –** नागरिक अपनी आवश्यकताओं और मांगों को राजनीतिक दलों या विविध हित समूहों के माध्यम से नीति निर्धारकों और योजनाओं के समक्ष प्रस्तुत करके दिशा-निर्देश और नीति निर्धारण प्रक्रिया में अपना योगदान दे सकते हैं।
4. **सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 –** इस अधिनियम द्वारा विभिन्न प्रशासकीय नीति, नियमों, निर्णयों व कार्यप्रणाली की जानकारी।

भारत में जनसहभागिता की व्यवहारिक स्थिति – भारत में नागरिकों की सहभागिता की प्रकृति और मात्रा की दृष्टि से व्यापक प्रयोगसिद्ध अध्ययनों से ज्ञात होता है कि औपनिवेशक विरासत, सामाजिक विभिन्नता, दरिद्रता और निरक्षरता तथा राजनीतिक प्रक्रिया का अनूठापन आदि सभी पहलू संयुक्त रूप से लोक प्रशासन में जन सहभागिता के क्षेत्र में बहुत अधिक बाधा डालते हैं। प्रशासकीय सर्वोच्च वर्ग द्वारा सीमित सरकार की औपनिवेशिक विरासत ऐसे प्रशासकों के रास्ते में बाधा बनती है, जो जनता का व्यापक

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) लिबरल कालेज ऑफ लॉ, राऊ, जिला -इन्दौर (म.प्र.) भारत

सहयोग प्राप्त करना चाहते हैं। 'लोकनीति के सभी मामलों में निर्णय पर भारत में छोटे राजनीतिक प्रशासकीय सर्वोच्च वर्ग का एकाधिकार है।' भारत में सामाजिक ढाँचे में विद्यमान धार्मिक, जातीय, भाषायी और वर्ग व्यवस्था के साथ जुड़ी हुई असंख्य ऐसी दरारे हैं। जो कि ऐसे व्यापक-दरिद्रता व निरक्षरता वाले समाज में शक्तिशाली सामाजिक आर्थिक वर्गों के प्रभुत्व का सहज बना देती हैं। यह वर्ग विकास व उन्नति के फलों को पूर्ण रूप से हथिया लेता है।

भारतीय प्रशासन में अधिकारी तंत्र विशेषाधिकार प्राप्त ऐसा अल्पसंख्यक वर्ग बन गया है, जो अपने निर्णय करने वाली शक्ति में लोगों को सम्मिलित नहीं करना चाहता। इसका प्रमुख कारण जनता की आत्मनिष्क्रियता व जी हुजूरी की स्थिति है।

इसी परिप्रेक्ष्य में भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1952) ग्रामीण जनता में आवश्यक उत्साह और स्वत: प्रेरणा जागृत करने में असफल रहा। ऐसा दृष्टिगोचर होता है कि भारत में लागू लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रणाली ने वास्तव में जनता को शक्ति प्रदान नहीं की है। पंचायती राज के गठन में राजनीतिक दबाव पड़ने के साथ-साथ केवल ग्रामीण समाज में विद्यमान जाति और वर्ग भेद ही प्रतिबिंबित होता है, जिसके कारण ये काफी हद तक प्रभावहीन हो गया है।

भारत में विकास परिणाम लक्ष्य वर्गो (ग्रामीण व शहरी निर्धन, भूमिहीन, कृषक, छोटे कारीगर, जनजातियाँ व पिछड़ी जातियाँ) तक नहीं पहुँचे। इन वर्गो ने न तो विकास कार्यक्रमों में भाग लिया और न ही कोई लाभ उठाया।

वस्तुत: विकास प्रशासन में नागरिकों में प्रशासन सम्बन्धी प्रत्यक्ष ज्ञान के मुख्य अवयव अर्थात् 'विकास प्रशासन में सहभागिता के कुछ आवश्यक तत्व होते हैं', जो कि अग्रलिखित हैं -

1. नागरिकों को प्रशासनिक प्रतिमानों और प्रक्रियाओं का पर्याप्त ज्ञान
2. सरकार के उद्देश्यों, नीतियों और कार्यक्रमों में जनता का वास्तविक समर्थन।
3. जनता द्वारा सरकारी अधिकारियों के कार्य निष्पादन का सापेक्ष मूल्यांकन।
4. जनता के प्रति अतिसंवेदनशील और अनुक्रियाशील प्रशासनिक प्रणाली का अवबोधन।
5. प्रशासकों को ऐसे समझना कि वे समतावादी लक्ष्यों और प्रक्रियाओं के लिए वचनबद्ध हैं।

परन्तु दुर्भाग्यवश वर्तमान परिदृश्य में भारत में इस सम्बन्ध में मुख्य तत्व अनुपस्थित हैं, जो कि वास्तव में भारतीय लोक प्रशासन में जनता की व्यापक और प्रभावशाली सहभागिता के मार्ग में मुख्य बाधा है।

अत: इसी परिप्रेक्ष्य में भारतीय प्रशासन में जनसहभागिता की वास्तविकताएँ व समस्याएँ जानने हेतु शोधार्थी द्वारा एक व्यापक क्षेत्र सर्वेक्षण मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले में प्रश्नावली पद्धति के माध्यम से किया गया तथा जनता में प्रशासन में सहभागिता सम्बन्धी जानकारी, समस्याएँ व प्रशासन के प्रति दृष्टिकोण व प्रशासन का जनता के प्रति व्यवहार आदि विषयों से सम्बन्धित व्यवहारिक स्थिति का पता लगाने का प्रयास किया गया।

किये गये सर्वेक्षण से प्राप्त परिणामों का ग्राफीय निरूपण व विस्तार से विश्लेषण अग्रलिखित है **(ग्राफ देखे अगले पृष्ठ पर)**

ग्राफीय निरूपण का अवलोकन करने पर हम देखते हैं 100% (शत-प्रतिशत) लोगों का आज भी मानना है कि भारतीय प्रशासन का सैद्धांतिक व व्यवहारिक पक्ष पृथक-पृथक है। यह प्रदर्शित करता है कि भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के वर्ष व्यतीत हो जाने तथा विकास व जनकल्याण की बड़ी-बड़ी बातें करने के बाद भी प्रशासन की स्थिति घोषित लक्ष्यों जनसेवा, कार्यकुशलता व पारदर्शिता के अनुरूप नहीं बन पायी हैं। यह भारत जैसे विकासशील लोकतांत्रिक देश के लिए चिन्ता का विषय है।

इसी प्रकार प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा निर्धनों, पिछड़ों, दलितों व साधारण जनता के प्रति किये जाने वाले बर्ताव के सम्बन्ध में 85% लोगों का मानना है कि इनका व्यवहार उल्लिखित वर्गों के प्रति उचित नहीं है तथा ये इनके प्रति उचित रवैया नहीं अपनाते हैं। जब स्वतंत्रता के 69 वर्ष बीत जाने के उपरान्त भी हम आज तक प्रशासन के व्यवहाकर को परिवर्तित नहीं कर पाये तो जनसहभागिता में वृद्धि की संभावना तो अत्यन्त दुष्कर प्रतीत होती है।

प्रशासकीय अधिकारियों की मनोवृत्ति से सम्बन्धित प्रश्न के उत्तर में 82% लोगों का उत्तर था कि ये अब भी सामंतवादी विचारधारा से ग्रस्त हैं। यदि भारत में जनसहभागिता को सफल बनाना है, तो प्रशासनिक अधिकारियों की मनोवृत्ति में परिवर्तन होना अपरिहार्य है। जबकि इन्हें जनसेवक बनकर रहना चाहिए तभी लोककल्याण की कल्पना की जा सकती है।

प्रशासन की जनसंवेदनशीलता के विषय में परिणाम कुछ सांत्वना प्रदान करते हैं। इसमें 35% लोगों ने माना कि प्रशासन जनसंवेदनशील है, परंतु दूसरी ओर 65% लोगों ने इससे असहमति व्यक्त की फिर भी सांत्वना की बात यह है कि भारतीय प्रशासन में जनसंवेदनशीलता विद्यमान है परंतु अभी इसका प्रसार कम है यह चिंता का विषय है।

प्रशासन में भ्रष्टाचार व पारदर्शिता के संदर्भ में 8% लोगों ने माना कि यह भ्रष्टाचार मुक्त व पारदर्शी है। वहीं 92% लोगों ने स्पष्ट रूप से नहीं में जवाब दिया। इनका मानना है कि भारतीय प्रशासन में भ्रष्टाचार विद्यमान है तथा पारदर्शिता का अभाव है।

सर्वेक्षण के अनुसार मात्र 42% लोग ही ऐसा अनुभव करते हैं कि वह प्रशासन में सहभागी हैं, जबकि 58% लोगों को आज भी प्रशासन में अपनी सहभागिता की व्यवहारिक अनुभूति नहीं होती है। यह अत्याधिक दु:खद स्थिति है क्योंकि इस दिशा में 1952 के सामुदायिक विकास कार्यक्रम से लेकर 1959 के पंचायती राज व्यवस्था तथा 73 वें व 74 वें संविधान संशोधन द्वारा अनेकों प्रयास किये गये हैं तथा प्राप्त परिणाम इन प्रयासों की सार्थकता पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं।

प्रशासन में सहभागिता से सम्बन्धित अधिकारों व कर्त्तव्यों के विषय में परिणाम काफी उत्साहवर्द्धक रहे। 84% लोगों ने स्वीकार किया कि वे प्रशासन में सहभागिता से सम्बन्धित अपने अधिकारों व कर्त्तव्यों से परिचित हैं। सूचना का अधिकार जनसहभागिता में एक क्रांतिकारी माध्यम बना है जिससे प्रशासन में भ्रष्टाचार में तो कमी आई है, साथ ही साथ ही 80% कार्यप्रणाली में पारदर्शिता तो आई है। यह एक नवआशा का संचार करता है कि आने वाले समय में भारतीय प्रशासन में जनसहभागिता में वृद्धि होगी, परंतु इस दिशा में हमें शेष 16% लोगों को भी अपने सहभागिता सम्बन्धी अधिकारों व कर्त्तव्यों के प्रति सचेत व शिक्षित करना होगा।

सर्वेक्षण में 68% लोगों ने स्वीकार किया कि वे किसी प्रशासनिक अधिकारी से मिले, जबकि 32% लोगों ने कहा कि वे किसी अधिकारी से अभी तक प्रत्यक्ष रूप से नहीं मिले। ऐसे विभिन्न व्यक्तिगत कारणों से हो सकता है परन्तु यदि व्यापक दृष्टिकोण से गहन विश्लेषण किएं जाए तो यह तथ्य दृष्टिगोचर होता है कि जनता में प्रशासनिक अधिकारियों के प्रति निराशा, भय या झिझक कहीं न कहीं विद्यमान है। यदि ऐसा वास्तव में है, तो यह विकास प्रशासन व जनसहभागिता के हित में नहीं है। प्रशासन को

अपनी छवि सुधारनी होगी ताकि कोई भी आम नागरिक किसी प्रशासकीय अधिकारी के पास प्रत्यक्ष रूप से, निर्भय होकर अपनी समस्या लेकर जा सकें तथा जनसहभागिता प्रदर्शित कर सके।

प्रशासन की कार्यकुशलता की पड़ताल करने के लिए सर्वेक्षण में समस्या के शीघ्रताशीघ्र निस्तारण के विषय में पूछा गया। इस विषय में 68% लोगों का मानना था कि उनकी समस्या का निस्तारण शीघ्रातिशीघ्र हो गया वहीं 32% लोगों का उत्तर था कि समस्या का शीघ्रताशीघ्र निस्तारण नहीं हो पाया। वस्तुत: विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि यहाँ स्थिति अधिक चिंतापूर्ण नहीं है, बस इसमें और सुधार अर्थात् कार्यकुशलता में वृद्धि की आवश्यकता है। प्रशासनिक अधिकारियों के शिक्षित जागरूक जनमानस के प्रति व्यवहार के विषय में 56% लोगों ने स्वीकार किया कि अधिकारी का व्यवहार उनके प्रति संतोषजनक था वहीं 20% लोगों ने माना कि उनके प्रति व्यवहार बहुत अच्छा था। इस वर्ग में लगभग 87% महिलाएँ रहीं। वहीं 20% लोग ऐसे भी को जिनके प्रति प्रशासनिक अधिकारियों का व्यवहार उपेक्षापूर्ण रहा। वहीं 4% लोगों ने अधिकारियों के प्रत्यक्षत: न मिल पाने की बात कही।
गहन विश्लेषण करने पर यह तथ्य दृष्टिगोचर होता है कि भारतीय प्रशासनिक अधिकारियों के व्यवहार के स्वतंत्रता पश्चात् की परिस्थितियों व विकास प्रशासन के परिप्रेक्ष्य में काफी बदलाव आया है, परन्तु यह अभी शिक्षित वर्ग या जागरूक नागरिकों के प्रति ही उचित है, वहीं सामान्य जनमानस, निर्धनों, पिछड़ों, निरक्षरों के प्रति व्यवहार अभी भी उचित नहीं है, इसमें सुधार की तत्काल आवश्यकता है।

शिक्षित व जागरूक महिलाओं के प्रति व्यवहार बहुत अच्छा होना शुभ संकेत देता है। भारतीय प्रशासन महिला सशक्तिकरण व महिला अधिकारों के प्रति सक्रिय व सचेत हैं, परन्तु यह व्यवहार सभी वर्गों (निर्धनों, दलितों, निरक्षरों) की महिलाओं के प्रति भी अच्छा होना चाहिए परंतु ऐसा बहुत कम ही दृष्टिगोचर होता है।

वहीं 20% लोगों के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार यह दर्शाता है कि आज भी कई प्रशासनिक अधिकारी ऐसे है, जो स्वयं को मालिक तथा जनता को सेवक मानते हैं। सम्भवत: इन 20% लोगों का सामना ऐसे ही अधिकारियों से हुआ हो। सरकार द्वारा इस दिशा में व्यापक सुधार करने की आवश्यकता है, तभी प्रशासन को सच्चे अर्थों में जनसहभागी बनाया जा सकता है। सरकार द्वारा निजी संस्थाओं के अधिकारियों व कर्मचारियों के लचीले व्यवहार को सार्वजनिक संस्थाओं में अध्यारोपित व क्रियान्वित करने का भरपूर प्रयास करना चाहिए। जिससे जनता खुलकर अपन समस्याओं के समाधान हेतु अधिकारियों के पास आ सकें तथा प्रशासन में सक्रिय सहभागिता निभा सकें। प्रशासन में जनसहभागिता के क्षेत्र में भारत में बहुत सी बाधाएँ हैं। इसमें कुछ प्रमुख बाधाओं का वर्णन अग्रलिखित है –

जनसहभागिता के मार्ग में प्रमुख बाधाएँ –

1. भारतीय प्रशासनिक अधिकारियों की मनोवृत्ति अब भी कहीं न कहीं सामन्तवादी है,
2. अभी भी भारत में निरक्षर व अशिक्षितों की अच्छी खासी संख्या है,
3. जनता में जागरूकता की कमी होना,
4. जनता का सक्रिय व उत्साही न होना,
5. भारत में हर क्षेत्र में व्याप्त 'भ्रष्टाचार',
6. राजनेताओं में प्रशासनिक सुधार हेतु दृढ़ इच्छा शक्ति का अभाव,
7. भारतीय शासन व प्रशासन की कथनी व करनी में अन्तर की प्रवृत्ति का पनपना,
8. देश में अशिक्षा, बेरोजगारी, निर्धनता व स्वार्थ्यपरकता भी जन – सहभागिता के मार्ग में प्रमुख बाधाएँ हैं।
9. शासन व प्रशासन पर तथाकथित अभिजात वर्ग का आधिपत्य होना,

उपर्युक्त वर्णित तथ्य भारतीय प्रशासन में जनसहभागिता की व्यवहारिकता के मार्ग में प्रमुख बाधाएँ हैं।

निष्कर्ष – वस्तुत: विकास प्रक्रिया में जनता की सहभागिता का अभिप्राय विकास प्रशासन के निर्णय लेने की विभिन्न परिस्थितियों में आम जनता और लक्षित जनता के सक्रिय सहयोग और इन कार्यो में उनके शामिल होने से है। इसमें भी सभी स्तरों विशेषत: निचले स्तर पर विकास कार्यक्रमों के नियोजन कार्यान्वित और मूल्यांकन में जनता की सक्रिय भागीदारी, उत्साह व सहयोग की अपेक्षा की जाती है।

'जनता की सहभागिता' जन आंदोलन के रूप में अवश्य होनी चाहिए क्योंकि यह विकास का केवल साधन ही नहीं अपितु यह अपने आप में एक विकास लक्ष्य है।' जनसहभागिता की प्रक्रिया विशेषत: भारत जैसे विकासशील लोकतंत्र के लिए अनिवार्य है तथा इसमें राजनीतिक और प्रशासनिक दोनों प्रकार के विकेन्द्रीकरण की अपेक्षा की जाती है।

परन्तु वर्तमान परिदृश्य में भारत में पंचायती राज ने अपनी प्रकृति व उत्साह को खो दिया है। इसी प्रकार प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार, लालफीताशाही, भाई-भतीजावाद, जातिवाद आदि कुरीतियों के चलते जनसहभागिता की धारणा को व्यापक ठेस पहुँची है।

वस्तुत: भारत में पंचायती राज प्रणाली में विद्यमान वर्तमान दोषों को दूर करना चाहिए तथा भूमि सुधारों के अधिक प्रभावी कार्यान्वयन समेत समाज में संरचनात्मक परिवर्तनों के जरिए गरीबी उन्मूलन करके प्रशासन में 'जनसहभागिता' को सुनिश्चित किया जा सकता है।

इसी प्रकार आधुनिकीकरण, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी और रोजगार के नए अवसरों के जरिए उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाकर, बच्चों व वयस्कों में उपयोगी शिक्षा के प्रचार प्रसार करके और समस्त नागरिकों में जागरूकता व राष्ट्रीयता की भावना को जगाकर इन्हें बल प्रदान करके ही 'भारतीय प्रशासन में जनसहभागिता' में व्याप्त 'सिद्धांतों' व 'व्यवहारिकता' के अन्तर को समाप्त किया जा सकता है।

भारतीय प्रशासन को जनसहभागी, उत्तरदायी एवं पारदर्शी बनाने हेतु सुझाव –भारतीय प्रशासन में जनसहभागिता उत्तरदायित्व व पारदर्शिता जैसे तत्वों का समावेश व विकास करने हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रतिपादित किये जा सकते हैं –

1. भारतीय प्रशासनिक अधिकारियों के प्रशिक्षण के दौरान जनसंवेदनशील जनसेवक के रूप में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए तथा प्रशासनिक अधिकारियों को गांवों, कस्बों, वंचित व पिछड़े क्षेत्रों में प्रशिक्षण के दौरान ले जाया जाना चाहिए जिससे वे ये जन समस्याओं को वास्तविकता में अनुभव कर सकें।
2. देश में शिक्षा का अत्यधिक प्रचार-प्रसार किया जाये जिससे जनता सरकार की नीतियों और योजनाओं को समझ सकें और अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकें।
3. चुनाव में मतदान निष्पक्षता व जागरूकता के साथ हो ताकि योग्य उम्मीदवार ही जनप्रतिनिधि के रूप में कार्य करें।
4. भारतीय शासन व्यवस्था में व्याप्त राजनीतिज्ञों व प्रशासकों के मध्य अधिकारों, कर्त्तव्यों व उत्तरदायित्वों की स्पष्ट सीमांकन रेखा होना चाहिए।

5. प्रशासनिक क्रियाकलाप में राजनीतिक हस्तक्षेप कम होना चाहिए तभी अधिकारियों द्वारा स्वतंत्र व निष्पक्ष रूप से कार्य किया जा सकेगा।
6. राजनेताओं, अधिकारियों व नागरिकों सभी को ईमानदारी, नैतिकता व मानवतापूर्ण आचरण करना होगा तथा राष्ट्रप्रेम की भावना को जागृत करना होगा।
7. सरकारी स्तर पर प्रत्येक अधिकारी की वैयक्तिक जवाबदेही सुनिश्चित की जाए तथा भ्रष्टाचार के मामलों के निपटारे हेतु 'त्वरित कार्यवाही तंत्र' विकसित किया जाए।
8. प्रशासन को जनता के प्रति अधिक से अधिक उत्तरदायी बनाया जाना चाहिए इसके अन्तर्गत 'सामाजिक अंकेक्षण' (Social Audit) व 'वापस बुलाने का अधिकार' (Right to recall) के अधिकार जनता को शीघ्रताशीघ्र प्रदान किये जाएं।
9. भर्ती प्रक्रिया पारदर्शितापूर्ण हो तथा शासन व प्रशासन के नियमों व कानूनों का निर्माण व क्रियान्वयन व्यावहारिकता के आधार पर होना चाहिए।
10. सरकार द्वारा प्रशासनिक अधिकारियों के कार्यों का उचित, निष्पक्ष, व त्वरित मूल्यांकन किया जाना चाहिए।
11. सूचना के अधिकार के प्रति जनमानस को अधिक से अधिक जागरूक किया जाए।

उपर्युक्त वर्णित सुझावों का पालन यदि हमारे नीति-निर्माताओं व अधिकारियों द्वारा किया जाये तो निश्चय ही प्रशासन में जनसहभागिता के सिद्धांत व व्यवहारिकता में एकरूपता आयेगी तथा लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना का उद्देश्य शीघ्रतिशीघ्र पूरा हो जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्राथमिक स्त्रोत - प्रश्नावली प्रपत्र के माध्यम से अर्जित जनमत
2. द्वितीयक स्त्रोत - i) पुस्तकें :डॉ. बसु रूमकीडॉ. फडिया बी.एल.दुबे सुनील कुमारलोकप्रशासन : संकल्पनाएँ एवं सिद्धांत भारत में लोक प्रशासन भारतीय संविधान एवं राजव्यवस्था।

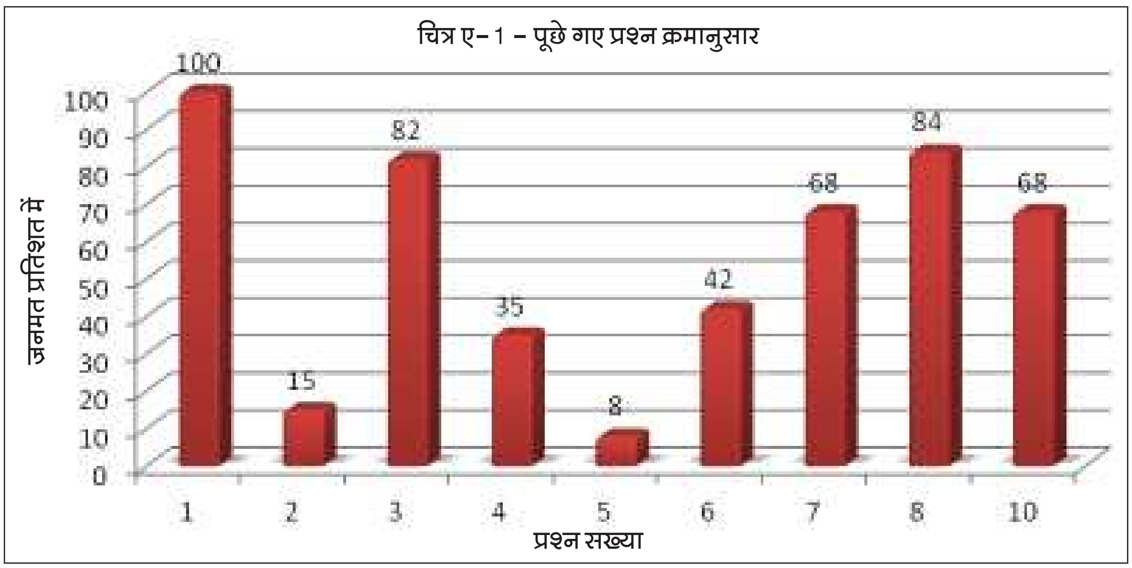

प्र.9 अधिकारियों का व्यवहार शिक्षित व जागरूक व्यक्तियों के प्रति

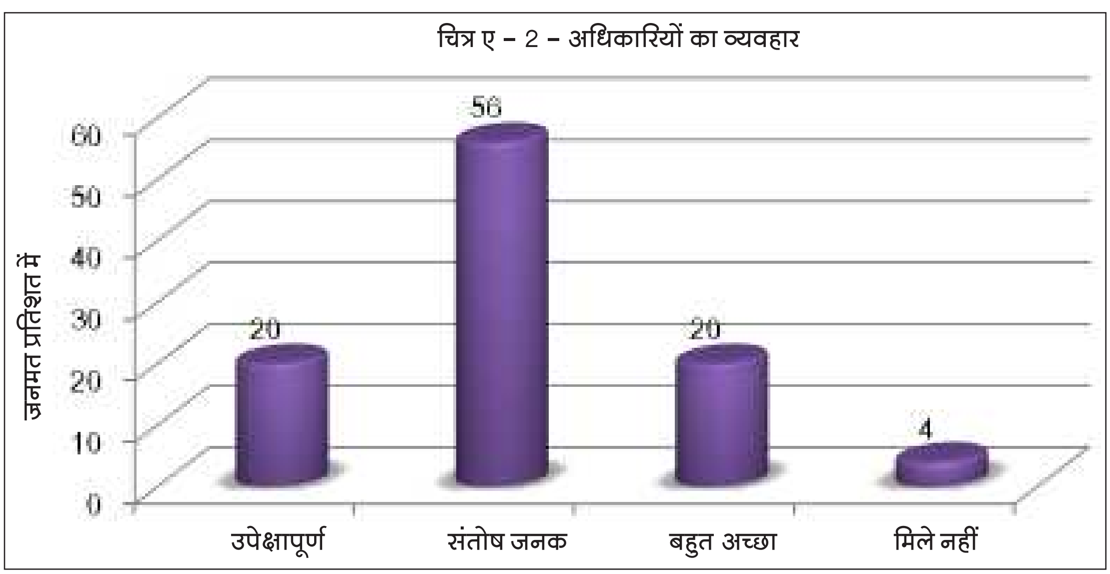

****

पूर्व मुख्यमंत्री श्री बाबूलाल गौर के कार्यकाल में मध्यप्रदेश राज्य व केन्द्र संबंधों की समीक्षा

डॉ. चन्द्रमणि प्रसाद मिश्रा *

प्रस्तावना – सरकारे किसी भी दल की हो, लेकिन विकास के लिए टकराव का रास्ता अपनाने के दुष्परिणाम प्रदेश और देश की जनता को ही भुगतने पड़ते हैं। राजनीतिक दल टकराव के रास्ते पर चलकर अपना कार्यकाल भले ही पूरा कर लें, पर इससे वे मतदाताओं का भरोसा जरूर खो देते हैं। जिन राज्यों ने टकराव का रास्ता अपनाया, वहाँ केन्द्र सरकार की मदद अपेक्षित रूप से नहीं मिल पाई। प्रदेश की पूर्ववर्ती सरकार को केन्द्र द्वारा सहयोग किया गया होता तो मध्य प्रदेश का क्रम पिछड़े राज्यों की पंक्ति में नहीं आया होता। आठवें क्रम से खिसक कर 7 वें क्रम पर पहुँचना विकास की कीमत पर टकराव तथा राजनीतिक हित साधान के प्रयास का प्रतिफल है। मुख्यमंत्री बाबूलाल गौर ने राजनीति और सरकारों में कई उतार-चढ़ाव देखे थे और अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने प्रदेश के विकास के लिए टकराव का रास्ता अपनाने के स्थान पर सहयोग का मार्ग चुना, जिसका परिणाम भी तुरंत सामने आया। जब योजना आयोग ने प्रदेश द्वारा प्रस्तुत 7471 करोड़ रूपये की वार्षिक योजना बिना किसी कटौती के मंजूर कर दी।

प्रारम्भ से अब तक मध्य प्रदेश के साथ यह त्रासदी रही है कि यहाँ का नेतृत्व प्रभावी नहीं रहा। यदि प्रभावी रहा होता तो दिग्विजय सिंह को छोड़कर किसी को पर्याप्त स्थायित्व नहीं मिला। वोट बैंक बनाने के चक्कर में दिग्गी राजा दस साल में राज्य को विकास पथ पर अग्रसर नहीं कर पाए। नैसर्गिक सम्पदा से भरापूरा प्रदेश उस समय बिजली के लिए मोहताज था। पुण्य सलिला माँ नर्मदा का जल कच्छ के रन तक पहुँच गया पर प्रदेश प्यासा था। स्थापना खर्च का बोझ और भ्रष्टाचार के नासूर ने राज्य के विकास को रोक रखा था। मगर मुख्यमंत्री बाबूलाल गौर ने कुर्सी संभालते ही राज्यपाल (डॉ. बलराम जाखड़) एवं केन्द्र से मधुर सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया, और बाबूलाल गौर को प्रदेश के राज्यपाल ने भी विकास कार्यों के लिए खूब सहयोग देने का आश्वासन दिया। फिर उन्होंने बहुत तरीके से केन्द्र के सामने अपनी माँगे रखीं।

भारतीय योजना आयोग ने एक देवता की मुद्रा अख्तियार कर मध्य प्रदेश को 'तथास्तु' का वरदान दिया था अर्थात् प्रदेश ने योजना आयोग से जो भी माँगा, उसे योजना आयोग ने स्वीकार कर लिया। मध्य प्रदेश की अगले वर्ष 2005-06 की आयोजना इतने सुगठित एवं तर्कसंगत रूप में योजना आयोग के सामने प्रस्तुत की गई कि उसमें कटौती की कोई गुंजाइश ही नहीं रह गई थी।

वस्तुत: योजना आयोग ने दस प्रतिशत की कटौती का प्रस्ताव किया था, लेकिन मध्य प्रदेश सरकार ने इसे चुनौती दी। पिछले वर्ष की तुलना में वर्ष 2005-06 की यह योजना 12 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाती है। मुख्यमंत्री बाबूलाल गौर, वित्त मंत्री राघव जी और वरिष्ठ अधिकारियों ने जब प्रदेश की सुदृढ़ वित्तीय स्थति और आर्थिक सुधारों का खाका योजना आयोग के समक्ष रखा तो आयोग के अध्यक्ष मोटेक सिंह अहलूवालिया गदगद हो गए और योजना को यथावत स्वीकृति दे दी, उन्होंने मध्य प्रदेश सरकार के वित्तीय प्रबंधन, आर्थिक एवं प्रशासनिक सुधार के प्रयासों तथा जनभागीदारी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। एक दिन भी ओवरड्राफ्ट की स्थिति नहीं आने देना वित्तीय श्रेष्ठ प्रबंधन के कारण ही संभव हो सका। जबकि पिछली सरकार के कार्यकाल में अनेक बार ओवर ड्राफ्ट की स्थिति आई। बेहतर वित्तीय प्रबंधन के कारण इस वर्ष में करों की वसूली में 21 प्रतिशत, गैर कर राजस्व में वनों से 30 तथा खदानों से 14 प्रतिशत आय में वृद्धि हुई। स्टाम्प एवं पंजीयन, आबकारी, वाणिज्य कर, प्रवेश कर, विद्युत शुल्क, वाहन कर, खनन आदि सभी मदों में वृद्धि दर्ज की गई। जिसके फलस्वरूप 2003-04 का राजस्व घाटा 4.6 प्रतिशत से घटकर 0.95 प्रतिशत पर आ गया और वित्तीय घाटा भी 7.58 प्रतिशत से कम होकर चालू वर्ष में करीब 6.65 प्रतिशत रह गया। घरेलू उत्पादन में जहाँ 10 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वहाँ स्थापना व्यय में 10 प्रतिशत (करीब 230 करोड़ रू.) की कमी आई। चालू वित्त वर्ष में अल्प बचत आय में 46 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई, जबकि सरकार ने 167 करोड़ रूपये के अतिरिक्त संसाधन जुटाए।

योजना आयोग मध्य प्रदेश के जिन कार्यों से प्रभावित हुआ,उनमें बजट के अतिरिक्त सड़क निर्माण हेतु 280 करोड़ रूपए जुटाना, मध्यान्ह भोजन के तहत विद्यार्थियों की संख्या में 6 लाख की वृद्धि, छात्राओं को साईकिल और ड्रेस वितरण, 3514 शिक्षा गारंटी केन्द्रों को प्राथमिक शालाओं में परिवर्तन करना, 882 नई प्राथमिक शालाओं का खोला जाना, आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए प्रति परिवार प्रति वर्ष 20 हजार रूपये की स्वास्थ्य गारंटी योजना, गरीब महिलाओं के लिए चिकित्सा केन्द्र तक ले जाने हेतु परिवहन योजना आदि शामिल थी। इसके अतिरिक्त सिंचाई प्रतिशत 38 से बढ़ाकर 50 प्रतिशत करने का लक्ष्य, चिकित्सा महाविद्यालयों में रिक्त 21 पदों का भरा जाना तथा 147 राष्ट्रकृत मार्गो को खोला जाना भी आयोग को प्रभावित करने के कारण बने। साथ ही प्रदेश में स्थापित होने की संभावना वाले विद्युत संयंत्र और 18 हजार करोड़ रूपये के प्रस्तावित उद्योग, विद्युत मंडल की 1915 करोड़ रूपये की देनदारियाँ वहन को बढ़ाकर 111.48 करोड़ करना, विद्युत व्यय 916.91 से बढ़ाकर 1322.97 करोड़, सिंचाई पर 1624.52 को 1641.58 करोड़, शालेय शिक्षा पर 704.38 को 987.78 करोड़ और लोक स्वास्थ्य आदि के प्रस्तावों ने भी आयोग को यह मानने पर विवश कर दिया कि मध्य प्रदेश की वार्षिक योजना में कटौती की कोई गुंजाइश नहीं है।

आयोग राज्य सरकार के इस तर्क से सहमत था कि देश में वनों के

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय श्यामसुंदर नारायण मुशरान महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

औसत से अधिक वन सुरक्षित रखने के लिए राज्य सरकार को अधिक व्यय करना पड़ता है। अत: वह केन्द्र से अधिक मदद का दावेदार है। इसके अलावा कोयले की रायल्टी का निर्धारण पेट्रोल पदार्थों की तरह मूल्य आधारित होनी चाहिए और सर्वशिक्षा अभियान में केन्द्र द्वारा अधिरोपित अधिभार में से प्रदेश को हिस्सा मिलना चाहिए। आयोग ने केन्द्रीय सहायता में 189 करोड़ की वृद्धि कर दी जो पहले 1100 करोड़ था। अतिरिक्त सहायता भी 56 करोड़ से बढ़ाकर 60 करोड़ रूपये की गई। यहाँ उल्लेखनीय होगा कि पिछले कई वर्षों में राजस्व घाटा बढ़ते रहने के कारण कर्ज का उपयोग सरकार चलाने में किया गया और उत्पादक निवेश के लिए राशि नहीं बच पाई। कर्ज की वजह से देनदारियाँ बढ़ती गईं जो अब 40 हजार करोड़ से ऊपर पहुँच गई थी। कर्ज और ब्याज की अदायगी के लिए भी कर्ज का सहारा लिया गया। यही वजह थी कि सिंचाई, बिजली, सड़क, पीने का पानी, चिकित्सा तथा शिक्षा जैसी मूलभूत अधोसंरचना की उपेक्षा होती गई। जर्जर वित्तीय स्थिति से उबरने के लिए बाबूलाल गौर ने बेहतर वित्तीय प्रबंधन किया, जिससे राजकोषीय घाटा कम हुआ और कम ब्याज दर पर कर्ज लेकर देनदारियाँ पटाई गईं तथा बची राशि का निवेश उत्पादन कार्यों में किया गया। योजना की यथावत् मंजूरी की पृष्ठभूमि में मुख्यमंत्री बाबूलाल गौर द्वारा टकराव की नीति के स्थान पर सहयोग एवं समन्वय की नीति अपनाना था। श्री गौर ने दिल्ली यात्राओं के दौरान प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह, केन्द्रीय वित्तमंत्री पी. चिदम्बरम्, मानव सांसधन मंत्री अर्जुन सिंह, भूतल मंत्री टी.आर. बालू, केन्द्रीय गृहमंत्री शिवराज पाटिल, केन्द्रीय रेल मंत्री लालू प्रसाद यादव, केन्द्रीय कृषि मंत्री शरद पवार, और केन्द्रीय ऊर्जा मंत्री पी.एम. सईद सहित कई केन्द्रीय नेताओं से मुलाकात कर प्रदेश के लिए विशेष पैकेज की माँग की थी। केन्द्र और उसके मंत्रियों ने आश्वासन दिया था, प्रदेश को यथासंभव सहायता मिलेगी।

मुख्यमंत्री बाबूलाल गौर ने 12 वें वित्त आयोग से राज्य को कोयले की रायल्टी की पिछले कई वर्षों से दर की समीक्षा नहीं होने और भुगतान में विलम्ब से हुए 8269 करोड़ रूपये के नुकसान की भरपाई तथा आधारभूत ढाँचे के विकास एवं वन संरक्षण के लिए एकमुश्त 1000 करोड़ रूपये देने की 22 सितम्बर 2004 को माँग की। गौर ने यहाँ आयोग के अध्यक्ष डॉ.सी. रंगराजन से मुलाकात कर उनसे इन माँगों पर विचार का अनुरोध किया था। गौर ने आयोग से कहा कि राज्य में कोयले के विशाल भण्डार को देखते हुए राज्य को उचित मात्रा में रायल्टी नहीं मिल रही है। पिछले कई वर्षों से कोयले की रायल्टी की दर में कोई वृद्धि नहीं हुई जबकि कीमतें काफी बढ़ी हैं। इसके अलावा भुगतान में भी विलंब के कारण राज्य को अनुमानित 8269 करोड़ रूपये की हानि हुई है, जिसकी क्षतिपूर्ति की जानी चाहिए। श्री गौर ने आयोग से कहा राज्य में 68000 किलोमीटर लंबी सड़कों के निर्माण 33 प्रतिशत भू-भाग में फैले जंगलों के रख-रखाव तथा अन्य आधारभूत ढाँचागत विकास के लिए एकमुश्त 1000 करोड़ रूपये की राशि जारी करने का आग्रह किया था। साथ ही मुख्यमंत्री ने वित्त आयोग से अपील की कि केन्द्रीय करों में राज्यों की हिस्सेदारी वर्तमान (उस समय) 29.5 प्रतिशत से बढ़ाकर 40 प्रतिशत की जाये तथा केन्द्रीय सहायता के तौर पर राज्यों को मिलने वाली राशि में कर्ज के तौर पर दिए जाने वाले हिस्से को 70 प्रतिशत से घटाकर 50 प्रतिशत किया जाना चाहिए।

बाबूलाल गौर ने 5 अक्टूबर 2004 को दिल्ली में योजना आयोग के उपाध्यक्ष अहलूवालिया से मुलाकात की और राज्य की सड़कें, भोपाल में नर्मदा का पानी लाने और राष्ट्रीय वनों की सुरक्षा के लिए केन्द्र से 1400 करोड़ रूपये की केन्द्रीय सहायता की माँग की थी।

मुलाकात में मुख्यमंत्री ने श्री अहलूवालिया को बताया कि देश के कुल वन क्षेत्र का एक तिहाई हिस्सा जंगल मध्य प्रदेश में ही है, जिसकी सुरक्षा व संरक्षण के लिए प्रदेश को भारी धनराशि खर्च करनी पड़ती है। साथ ही इन वन क्षेत्रों में दबी ढकी खनिज सम्पदा को निकाल पाना भी आसान काम नहीं है। जिससे राज्य को इस दिशा में कोई विशेष लाभ नहीं मिल रहा है। ऐसे में वन संरक्षण के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता का प्रावधान किया जाना निहायत ही आवश्यक है। मुख्यमंत्री ने राज्यों को दिए जाने वाले संसाधनों को स्थानीय विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाए जाने की अपील की। साथ ही उन्होंने भारत सरकार द्वारा लागू किए शिक्षा उपकर का हवाला देते हुए सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत प्रदेश को सम्पूर्ण केन्द्रीय योगदान सुलभ कराने की भी बात की थी। योजना आयोग के उपाध्यक्ष श्री अहलूवालिया ने अधिकतर बातों पर मुख्यमंत्री से सहमति जताई थी। साथ ही उन्होंने प्रदेश के वनसंरक्षण, भोपाल नर्मदा पेयजल योजना और सड़क सुधार परियोजना को वार्षिक कार्य योजना में विशेष प्राथमिकता दिए जाने का कहा था।

बाबूलाल गौर ने प्रदेश की कानूनी और सुरक्षा व्यवस्थाओं को चाक-चौबंद करने के लिए, साथ ही आंतरिक सुरक्षा के लिए खतरा बढ़ने तथा नक्सलवाद से निपटने के लिए केन्द्र सरकार से हर साल 200 करोड़ रूपये के हिसाब से पाँच साल में एक हजार करोड़ रूपये की सहायता मुहैया कराने का आग्रह किया था। केन्द्रीय गृहमंत्री ने बाबूलाल गौर से कहा कि वे वहाँ एक कमेटी का गठन कर इस मामले की समीक्षा कराने के बाद उचित पर्याप्त राशि मुहैया कराने का प्रयास करेंगे।

25 अगस्त 2005 को संसद भवन के कक्ष क्रमांक 9 में दो राज्यों के मुख्यमंत्रियों, दो केन्द्रीय मंत्रियों, कई राज्य मंत्रियों, शीर्ष अधिकारियों के अतिरिक्त प्रधाानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की उपस्थिति में भारत सरकार की नदी जोड़ परियोजना के अंतर्गत केन-बेतवा लिंक परियोजना के करारनामें पर हस्ताक्षर किये गये। कभी यह सपना पं. नेहरू के समय देखा गया था। कालांतर में इस स्वप्न को अटल बिहारी वाजपेयी ने मूर्त रूप देने का प्रारंम्भिक उपक्रम किया। नदियों को जोड़ने की विराट परियोजना के प्रथम चरण का सूत्रपात 25 अगस्त 2005 को तब हुआ, जब मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री बाबूलाल गौर, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव और केन्द्रीय जल संसाधन मंत्री प्रियरंजन दास मुंशी ने ऐतिहासिक अनुबंधा पर हस्ताक्षर किए। केन-बेतवा लिंक परियोजना को प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने अनुकरणीय बताया, तो गौर ने इसे मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश के पिछड़े क्षेत्रों के लिए उत्तम माना था। साथ ही मुलायम सिंह ने पूरे उत्साह से परियोजना पर अमल का आश्वासन दिया। 5.97 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई, बिजली उत्पादन और पेयजल, बुंदेलखंड के लिए इससे बड़ी सौगात और क्या हो सकती थी। जो इन्होंने केन्द्र के सम्बन्ध द्वारा स्थापित की।

निष्कर्ष एवं सुझाव - मुख्यमंत्री बाबूलाल गौर ने अपने 15 महीने के कार्यकाल के दौरान केन्द्र एवं राज्य सरकार के बीच बेहतर सम्बन्ध एवं सही तालमेल की नई इबारत शुरू की। उन्होंने कहा कि यदि राज्य सरकार क्रियाशील हो, तो केन्द्र में अन्य दल की सरकार होने का फर्क नहीं पड़ता है। यूँ भी जनहित के मामले में कोई टकराव नहीं होता। श्री गौर ने अगस्त 2004 से नवम्बर 2005 माह के दरम्यान दिल्ली की 60 से अधिाक यात्राएं की थी और राज्य के विकास के लिए लगभग सभी मंत्रालयों से संपर्क साधा था। मुख्यमंत्री ने बताया कि योजना आयोग के द्वारा मध्य प्रदेश के लिए 7471 करोड़ की वार्षिक योजना की मंजूरी देना, राज्य के इतिहास में यह पहला मौका था, जब आयोग ने राज्य द्वारा प्रस्तुत योजना एवं आंकड़ों को शत-

प्रतिशत मंजूरी दी।

श्री गौर की मिलनसारिता और विनम्रता उनकी ऐसी पूँजी है, जिसके कारण केन्द्र में दूसरे दल की सरकार होने के बावजूद वहाँ उन्हें काफी तवज्जो मिलती थी, और उनकी बातों को गंभीरता से सुना ही नहीं जाता था बल्कि पर कार्यवाही भी होती थी।

अत: निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि केन्द्र और राज्य के बीच सम्बद्ध सौहार्द्रपूर्ण होने चाहिए साथ ही मुख्यमंत्री की दूरदर्शिता, मिलनसारिता एवं समन्वय की राजनीति ही राज्य को विकास-पथ पर आगे ले जाती है। सरकारें किसी भी दल की हो लेकिन जनहित के मुद्दे पर टकराव नहीं होना चाहिए, क्योंकि विचार अलग हो सकते हैं लेकिन लक्ष्य एक ही होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. शुक्ल, राजेन्द्र प्रसाद, लोकतंत्र में राज्यपाल, प्रिन्टवैल प्रकाशन, जयपुर, वर्ष 1998, पृ. 40.
2. विकास पर गौर - एक नजर, भारतीय जनता पार्टी, गोविंदपुरा विधानसभा क्षेत्र, भोपाल, पृ. 3, 8
3. दैनिक भास्कर, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, भोपाल, 22 दिसम्बर 2004, पृ. 1.
4. नव भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, ग्वालियर, 3 जनवरी 2005, पृ. 6.
5. मध्यप्रदेश संदेश, हिन्दी मासिक पत्रिका, भोपाल, फरवरी 2005, पृ. 9, 10.
6. सक्सेना, सुधीर, काबिले गौर, मेघा बुक्स, दिल्ली, 2005, पृ. 127.
7. मध्यप्रदेश संदेश, हिन्दी मासिक पत्रिका, भोपाल, अक्टूबर 2004,पृ.11
8. नव भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, ग्वालियर, 23 सितम्बर 2004, पृ. 1.
9. हिन्दुस्तान टाईम, दैनिक समाचार पत्र, दिल्ली, 6 अक्टूबर 2004, पृ. 12.
10. नव भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, ग्वालियर, 7 अक्टूबर 2004, पृ. 1.
11. दैनिक भास्कर, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, भोपाल, 18 अप्रैल 2005, पृ. 1, 8
12. श्रीवास्तव, डॉ. रश्मि, मध्यप्रदेश शासन एवं राजनीति, कॉलेज बुक डिपो 83, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर, 2008, पृष्ठ 175.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

संसद के गौरव

डॉ. अभिलाषा साठे *

प्रस्तावना – लोकतंत्र का सबसे बड़ा मंदिर है संसद। यह भारत का सर्वोच्च विधि निकाय है। भारत के लिये लोकतंत्र कोई नई बात नहीं है। संसार के सबसे पुराने गणतंत्र भारत में ही जन्में पनपे है। संसद पुराने संस्कृत साहित्य का शब्द है। पुराने समय में राजा को सलाह देने वाली सभा संसद कहलाती थी। इसकी सलाह को राजा ठुकरा नहीं सकता था। हमारे पुराने बौद्ध ग्रंथों में उल्लेखित बौध्द सभाओं में संसदीय प्रक्रिया संबंधी वर्तमान नियमों से बहुत मिलते जुलते है। खुली बातचीत, बहुमत का फैसला, उच्चपदों के लिये निर्वाचन हमारी लोकतंत्रिका संस्थाएं इन सभी से हजारों साल पूर्व वाकिफ थी। हमारी पुरानी राजनीतिक व्यवस्था वर्तमान के लोकतंत्र से बहुत अधिक मिलती जुलती रही है।

हमारी संसद पूर्व से ही अपनी गरिमा को बनाये हुए है। विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के सर्वोच्च सदन के स्वतंत्रता के पश्चात से आज तक लिये गये फैसले मीलका पत्थर साबित हुए है। इस सदन नें पूर्व से वर्तमान तक बड़े उतार चढ़ाव देखे एक समय ऐसा भी आया कि जनता ने इस पर कटाक्ष भी किये, उस समय ऐसा प्रतीत हुआ कि यह संसद अपनी गरिमा कहीं खो न दे किन्तु इसके सदस्यों ने इसकी खोती हुई प्रतिष्ठा को पुन: बचा लिया। कुछ समय पूर्व से राजनीति में बढ़ते हुए अपराधीकरण के कारण इसकी अस्मिता पुन: खतरे में पड़ गई किन्तु पुन: हमारे सांसदो ने उसके लड़खडाते कदमों को सम्हाल लिया। हमारी इस संसद पर एक बार आंतकी हमला हुआ किन्तु हमारी सरकार ने इसका मुहँतोड़ जवाब दिया।

इस संसद की प्रतिष्ठा बढ़ाने हेतु एवं सांसदो को प्रोत्साहित करने हेतु 1992 में 14वीं लोकसभा के स्पीकर माननीय शिवराज पाटिल ने एक सकारात्मक प्रयास किया। उन्होंने एक सम्मान अर्थात आऊट स्टेंडिग पार्लियामेन्ट्रीयन आवार्ड की घोषणा की । यह पुरस्कार इंडियन पार्लियामेन्ट्रीयन ग्रुप के द्वारा दिया जाना निश्चित किया था। यह सम्मान उन संसद सदस्यों को दिया जाना तय किया गया जिन्होंने अपने कार्यकाल से संसद के कार्यो में अपना अभूतपूर्व योगदान दिया हो। सर्वाधिक प्रश्न पूछना, वादविवाद में भाग लेना व प्रायवेट बिल प्रस्तुत करना सत्रों के दौरान सर्वाधिक उपस्थिति इस सम्मान हेतु मानदण्ड थे।

इस अवार्ड को आलोचनाओं का सामना भी करना पड़ा था। ऐसा कहा गया है कि यह सम्मान मुख्य पार्टी के नेताओं को ही दिया जाता है। यह सम्मान उन व्यक्यिों को नहीं दिया गया जो वास्तव में योग्य थे। किन्तु जैसा कि सर्वविदित है कि हमारी संसद में इस प्रकार से कार्य नहीं किया जाता है

आउटस्टेडिंग पार्लियामेन्ट्रीयन आवार्ड – सर्वप्रथम यह सम्मान 1992 में प्रांरभ हुआ था। इस सम्मान को प्राप्त करने वाले व्यक्तियों का वर्णन निम्न प्रकार से है।

1992 **श्री इन्द्रजीत गुप्ता** कम्युनिस्ट पार्टी मिदनापुर पं. बंगाल संसदीय क्षेत्र के सांसद।

1994 **श्री अटलबिहारी बाजपेयी** भारतीय जनता पार्टी ग्वालियर संसदीय क्षेत्र।

1995 **श्री चन्द्रशेखर** वर्तमान में जनतापार्टी के सदस्य बलिया उत्तरप्रदेश संसदीय क्षेत्र।

1996 **श्री सोमनाथ चटर्जी** बोलपूर पं. बंगाल संसदीय क्षेत्र।

1997 **माननीय श्री प्रणब मुखर्जी** भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जंगीपुर पं. बंगाल संसदीय क्षेत्र।

1998 **श्री एस जयपाल रेड्डी** कांग्रेस दल कलावकटू आन्ध्रप्रदेश संसदीय क्षेत्र।

1999 **श्री लालकृष्ण अड़वानी** भारतीय जनता पार्टी ।

2000 **स्वर्गीय श्री अर्जुनसिंह** कांग्रेस दल सतना म.प्र. संसदीय क्षेत्र।

2001 **श्री जसवंत सिंह** भारतीय जनता पार्टी बाड़मेर राजस्थान संसदीय क्षेत्र।

2002 **श्री मनमोहन सिंह** भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस राज्यसभा असम ।

2003 **श्री शरद पंवार** भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस महाराष्ट्र।

2004 **सुषमा स्वराज** भारतीय जनता पार्टी विदिशा मध्यप्रदेश ,दिल्ली संसदीय क्षेत्र।

2005 **श्री पी चिदंबरम्** आखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस शिवगंगा तामिलनाडू संसदीय क्षेत्र।

2006 **श्री मणिशंकर अय्यर** कांग्रेस दल राज्यसभा के मानोनीत सदस्य।

2007 **प्रिय रंजनदास मुंशी** भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस दल कलकत्ता पं. बंगाल संसदीय क्षेत्र।

2008 **श्री स्वर्गीय मोहन सिंह** समाजवादी पार्टी देओरिया उत्तरप्रेदश संसदीय क्षेत्र।

2009 **श्री मुरली मनोहर जोशी** भारतीय जनता पार्टी अल्मोड़ा उत्तरांचल वाराणसी उत्तरप्रदेश संसदीय क्षेत्र।

2010 **श्री अरूण जेटली** भारतीय जनता पार्टी वर्तमान में कानून एवं न्यायमंत्री।

2011 **श्री डॉ. कर्णसिंह** भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस उधमपुर संसदीय क्षेत्र।

2012 **शरद यादव** कांग्रेस दल उत्तरप्रदेश संसदीय क्षेत्र ।

इन सभी सम्मानीय सांसदो को उनके कार्यकाल में अपने उत्कृष्ट प्रदर्शन हेतु यह सम्मान प्रदान किया गया था। इन सभी सांसदो ने विभिन्न महत्वपूर्ण पदो पर रहते हुए अर्थात मंत्री पद मुख्यमंत्री पद विभिन्न संसदीय समितियों के सदस्य रहते हुए पूर्ण सक्रियता से संसदीय संत्रो में अपनी भागीदारी निभायी।

*सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमा नायक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

इन सभी सांसदो के कार्यो से संसद का मान बढ़ा है। इसी तारतम्य एक और सम्मान की परम्परा 2010 में शुरू की गई।

अनसंग हीरोज अवार्ड – जिस प्रकार पूर्व में आऊटस्टैडिंग पार्लियामेन्ट्रियन अवार्ड दिया जाता था, उसी प्रकार 2010 में एक नवीन सम्मान का प्रांरभ किया गया। इस सम्मान में दो संस्थाओं द्वारा सत्रों के दौरान सूक्ष्मता से प्रत्येक सांसद के कार्यो का मूल्यांकन किया जाता है। इस हेतु उन्होंने 5 आधार तय किये है।

(1) सत्र के दौरान सर्वाधिक प्रश्न पूछना।
(2) सर्वाधिक प्रायवंट मेम्बर बिल प्रस्तुत करना।
(3) बहस के दौरान सक्रियता से भाग लेना।
(4) संसद में सर्वाधिक उपस्थिति।
(5) 377 के अन्तर्गत लोकहित के मुद्दे को उठाना।

इन प्रमुख आधारों पर चयन किया जाता है। प्रारंभ में इस सम्मान का नाम **अनसंग हीरोज अवार्ड** था। सन् 2012 में इस सम्मान का नाम परिवर्तित करके **संसद रत्न अवार्ड** रखा गया था। इस सम्मान हेतु प्राईम पांइन्ट फाउण्डेशन के द्वारा व्यक्ति (सांसद) का चयन किया जाता है व एक विशेष सम्मान समारोह आयोजित कर सम्मानित किया जाता है।

2010 इस वर्ष अनसंग हीरोज अवार्ड से दो सांसदो को उनकी योग्यता के आधार पर सम्मानित किया गया।

श्री हंसराज गंगाराम अहिरे – ये भारतीय जनता पार्टी के चन्द्रपुर संसदीय क्षेत्र महाराष्ट्र से थे। इन्हें यह सम्मान सत्र के दौरान सर्वाधिक 255 प्रश्न पूछने, 9 प्रायवेट बिल प्रस्तुत करने व 31 बार बहस में जीवन्त सहभागिता हेतु यह सम्मान प्रदान किया गया। 14वी लोकसभा में भी इन्होंने 927 प्रश्न उठाये 137 बार बहस में भाग लिया। 54 Special Mentions 12 प्रायवेट बिल प्रस्तुत किये व सोमनाथ चटर्जी ने इन्हें अनेको बार पुरस्कृत किया था।

श्री एस.एस. रामासुब्बु – ये भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के त्रिनुवल्ली तमिलनाडू संसदीय क्षेत्र से पहली बार 2010 में संसद सदस्य बने थे। इसके बावजूद इनका प्रदर्शन श्रेष्ठ रहा। इन्होंने अपनी जीवन्त कार्य शैली के कारण यह सम्मान प्राप्त किया। इन्होंने सत्र के दौरान 224 प्रश्न पूछे 20 बार संसद की डिबेट (बहस) में भाग लिया।

2011 इस वर्ष इस सम्मान हेतु तीन सांसदो का चयन किया गया था। जिन्होंने अपने सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन सत्रों के दौरान जीवन्त सहभागिता हेतु यह सम्मान प्राप्त किया था।

श्री हंसराज गंगाराम अहिरे – भारतीय जनता पार्टी के चन्द्रपुर महाराष्ट्र संसदीय क्षेत्र से थे। इन्होंने पुन: अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन किया व प्रायवेट बिल प्रस्तुत कर इस श्रेणी में अपना प्रथम स्थान बनाया।

श्री आनंदराव अडसुले – शिवसेना दल के अमरावती महाराष्ट्र संसदीय क्षेत्र से निर्वाचित संसद सदस्य रहे है। इन्होंने अपने कार्यकाल के दौरान लोकहित संबंधी प्रश्न पूछ कर अपना स्थान सम्मान हेतु बनाया।

संसद रत्न अवार्ड (सम्मान) – 2012 इस वर्ष इस सम्मान का नाम परिवर्तित कर संसद रत्न अवार्ड किया गया था। इस वर्ष तीन संसद सदस्यों को यह सम्मान प्राप्त हुआ एवं इनके साथ एक नया नाम जुड़ गया और वह था। श्री अर्जुन मेघवाल ये पूर्व से अधिकारी थें।

श्री आनन्दराव अडसुले – यह शिव सेना के सांसद थे, इस वर्ष इन्होंने 917 प्रश्न पूछे 32 डिवेट में भाग लिया। 3 प्रायवेट बिल प्रस्तुत किये एवं इनकी उपस्थिति 77 % इन सभी कारणों से इन्हें यह सम्मान पुन: प्राप्त हुआ।

श्री एस.एस. रामासुब्बु – यह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस दल के सांसद थे। इन्होंने इस वर्ष 821 प्रश्न पूछे, 132 डिबेट में हिस्सा लिया। 2 प्रायवेट बिल प्रस्तुत किये व पूरे सत्रों में इनकी उपस्थिति 97 % रहीं। इन्होने इस सम्मान हेतु अपना स्थान निशिचित किया।

श्री हंसराज गंगाराम अहिरे – ये भारतीय जनता पार्टी के अमरावती महाराष्ट्र संसदीय क्षेत्र के संसद थे। ये प्रायवेट बिल प्रस्तुत करने की श्रेणी में प्रथम रहे। इन्होंने कोयला घोटाला भी उजागर किया व 801 प्रश्न पूछे 91 डिबेट में भाग लिया 27 प्रायवेट बिल प्रस्तुत किये व सत्रों के दौरान इनकी उपस्थित 72% रही। इन सभी कारणों से इन्हें यह सम्मान प्राप्त हुआ।

श्री अर्जुन मेघवाल – भारतीय जनता पार्टी के बीकानेर राजस्थान संसदीय क्षेत्र के सांसद थें। इन्होंने डिबेट में सर्वाधिक बार सक्रिय भागीदारी कर इस श्रेणी में अपना सर्वोच्च स्थान बनाया। इन्होंने 543 प्रश्न पूछें। 345 डिबेट में भाग लिया। 20 प्रायवेट बिल प्रस्तुत कियें थें। इन सभी कारणों से इन्हे यह सम्मान प्राप्त हुआ।

2013 इस वर्ष यह सम्मान जिन सांसदों को उनके सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन हेतु दिया गया। वे निम्नलिखित है।

श्री आनंदराव अड़सुले – अमरावती महाराष्ट्र संसदीय क्षेत्र के ये सांसद थे। इन्हें पुन: अपने सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन हेतु सम्मानित किया गया। इस सत्र में इन्होंने 1055 सर्वाधिक प्रश्न पूछें, 30 डिबेट में भाग लिया 6 प्रायवेट बिल प्रस्तुत किय थे।

श्री एस.एस.रामासुब्बु – इस वर्ष तमिलनाडू के इस सांसद को द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ। इस वर्ष पूरी प्रक्रियाओं के इनके 1038 कुल अंक थे। जिन्हें इन्होंने प्रश्न पूछकर, वादविवाद में हिस्सा लेकर बनाया था।

श्री अर्जुन मेघवाल – भारतीय जनता पार्टी के बीकानेर राजस्थान संसदीय क्षेत्र के सांसद जो अपने क्षेत्र में भी उत्कृष्ट कार्यो के लिये जाने जाते है। उन्होने 386 डिबेटस में भाग लिया था। इनके इस वर्ष के कुल अंक 1002 थे।

श्री हंसराज गंगाराम अहिरे – यह भारतीय जनतापार्टी के चन्द्रपुर महाराष्ट्र संसदीय क्षेत्र के सांसद थे। इन्होंने प्रायवेट बिल पेश करने की श्रेणी में आपने प्रथम स्थान प्राप्त किया इस सत्र में इन्होने 51 प्रायवेट बिल प्रस्तुत किये थे। जो इस सत्र में कुल जितने प्रायवेट बिल प्रस्तुत किये गये उसमें से 27% बिल इनके द्वारा प्रस्तुत किये गये थे।

इस वर्ष महिला सांसदो को महिला संसद रत्न सम्मान दिया गया। इस वर्ष इन महिलाओं को यह सम्मान प्रदान किया गया

डॉ. बोस्टा लक्ष्मी – ये कांग्रेस दल की आन्ध्रप्रदेश से सांसद थी। ये डिवेट्स में भाग लेने की श्रेणी में प्रथम रहीं। (महिलाओं में) इन्होंने 131 डिबेट्स में भाग लिया। इनके कुल वार्षिक अंक थे 478

श्रीमती रमा देवी – ये भारतीय जनता पार्टी की बिहार से सांसद थी। इनके कुल अंक थे 579

2014 में इस सम्मान को प्राप्त करने वाले सांसदों की संख्या थी 8 व इस वर्ष में संसंद महिला रत्न अवार्ड से 3 महिलाओं को सम्मानित किया गया था।

श्री आनन्दराव अड़सुले शिवसेना अमरावती महाराष्ट्र।
श्री हंसराज अहिरे भारतीय जनता पार्टी चन्द्रपुर महाराष्ट्र।
श्री एस.एस. रामासुब्बु कांग्रेस पार्टी त्रिनवल्लु तमिलनाडू।
श्री अर्जुन मेघवाल भारतीय जनता पार्टी बीकानेर राजस्थान।
श्री असदद्दुदीन ओवेसी अखचखच हैदराबाद आन्ध्रप्रदेश।
श्री प्रदीप मांझी कांग्रेस पार्टी बिहार।

श्री शिवराज पाटिल शिवसेना महाराष्ट्र।
श्री गजानंद धर्मसी बाबर शिवसेना महाराष्ट्र।
सुश्री सुप्रिया सुले नेशनल कांग्रेस पार्टी महाराष्ट्र।
सुश्री रत्नासिंह कांग्रेस उत्तरप्रेदश।
श्रीमती रमादेवी भारतीय जनता पार्टी बिहार।

इस वर्ष एक नवीन सम्मान की शुरूआात हुई। यह सम्मान था युवा संसद रत्न सम्मान इस वर्ष इस सम्मान से युवा सांसद श्री प्रदीप मांझी को सम्मानित किया गया उनके कुल अंक 1000 से ऊपर थे।

2015 इस वर्ष तीन सांसदो को उनके लगातार सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन के लिये संसद महारत्न अवार्ड से सम्मानित किया गया। इनके नाम इस प्रकार है।

(1) श्री आनन्दराव अड़सुलों।
(2) श्री हंसराज गंगाराम अहिरे।
(3) श्री अर्जुन मेघवाल।

इस वर्ष संसद रत्न सम्मान प्राप्त करने वाले तीन सांसद थे। इनके नाम इस प्रकार है।

श्री पी.पी.चौधरी – भारतीय जनता पार्टी राजस्थान इन्हें डिबेट की श्रेणी में सम्मान प्राप्त हुआ था। इन्होंने 176 डिबेट्स में जीवन्त सहभागिता की।इनके इस वर्ष के कुल अंक थे 384

श्री रंग अप्पा बर्ने – शिवसेना पार्टी के महाराष्ट्र से सांसद थे। इन्हें सत्रों के दौरान सर्वाधिक प्रश्न पूछने के कारण यह सम्मान प्राप्त हुआ था। इन्होने अपने सत्र के दौरान कुल 314 प्रश्न पुछे थे व इन्होंने कुल अंक 355 प्राप्त किये थे।

श्री निशिकान्त दुबे – भारतीय जनता पार्टी के झारखण्ड से सांसद थे। इन्हें यह सम्मान सत्र में सर्वाधिक प्रायवेट बिल प्रस्तुत करने के कारण प्राप्त हुआ इन्होंने उस सत्र के दौरान 11 प्रायवेट बिल प्रस्तुत किये।

इस प्रकार हम देखते है कि वर्तमान में जहां राजनीति में अपराधीकरण तेजी से बढ़ रहा है व संसद में ऐसे सांसद पहुँच रहे है जिनका एकमात्र उद्देश्य अपने निहित स्वार्थो को पूर्ण करना है, वहीं ऐसे भी सांसद है, जो संसद की गरिमा को बनाये हुए है उसकी अस्मिता के रक्षक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Inldian Pariliamentary Group' Retrieved Nov 7,2012.
2. Dasmunsi MM Joshi to get OUtstanding Parliamentarian award.' New Delhi: Times of India. Aug 6, 2010 Retrieved Nov 7, 2012.
3. Please-all Parliamentarian Award questioned'. The Hindu . 27 March 2013. Retrieved 2014-04-16.
4. Special Correspondent (2010-05-02) " The Hindu report". Thehindu.com. Retrieved 2013-07-20.
5. News, Express (2011-05-08) " New Indian Express report' Newindianexpress.com. Retrieved 2013-07-20
6. Report on 2011 Award' Prpoint.in. 2011-05-08. Retrieved 2013-07-20.
7. 14 April 2013 (2012-04-14) "News4rajasthan'. Retrieved 2013-07-21.
8. "Khabar Express' Khabar Express. Retrieved 2013-07-21.

****

वर्तमान संदर्भो में आचार्य नरेन्द्र देव के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता

डॉ. कान्ता अलावा *

प्रस्तावना – मनुष्य शिक्षित है। इसलिए इस पृथ्वी पर उसे सभी जीवों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता हैं। मनुष्य को अपने जीवन लक्ष्य की पूर्ति के लिए शिक्षा अवश्य ग्रहण करना चाहिए। एक शिक्षित आदमी भीड़ से अलग अपनी एक नई पहचान बनाता है। शिक्षा हमें सही और गलत सोचने की शक्ति देती है। शिक्षा से हमारी तर्कशक्ति बढ़ती है। शिक्षा से हम गरीबी और अज्ञानता को मिटा सकते है। शिक्षा से ही हम अपने आस-पास शांति और भाईचारे का माहौल बना सकते है। शिक्षा समृद्धि में हमारा आभूषण, विपत्ति में शरण स्थान और समस्त कालों में आनन्द स्थान होती है। वास्तव में केवल पढ़ना-लिखना ही शिक्षा नहीं है, बल्कि नैतिक भावनाओं को विकसित करके चरित्र का निर्माण करना परम आवश्यक है। शिक्षा व्यक्ति को स्वयं के विकास के साथ-साथ समाज और राष्ट्र के विकास के लिए भी प्रेरित करती है। इसलिए नैतिक और बौद्धिक दोनों ही प्रकार की शिक्षा प्रदान करना देश और समाज का पहला कार्य होना चाहिए।[1]

भारतीय शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न विचार धाराओं का विकास हुआ, जिनके उन्मुक्त दृष्टिकोण में राष्ट्रीय शिक्षा व्यवस्था को प्रभावित किया, जैसे दयानंद का आर्य-दर्शन, अरविन्द का सर्वांगयोग -दर्शन, गांधी व विनोबा का सर्वोदय तथा नरेन्द्र देव व डॉ. राम मनोहर लोहिया का समाजवादी दर्शन आदि। सभी शिक्षा शिक्षाशास्त्रियों ने अपने दर्शन के आधार पर शिक्षा-प्रक्रिया के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित किया और उसे एक नई दिशा प्रदान की। टैगोर, गांधी, अरविंद और नरेन्द्र मनीषियों के प्रयासों एवं प्रयोगों का प्रभाव आज भारतीय शिक्षा में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। शैक्षिक दर्शनों के इस सरोवर में अनेक शैक्षिक निहितार्थ सामने आये, किन्तु आचार्य नरेन्द्र देव ने जिन शैक्षिक विचारों से भारतीय शिक्षा को अभिसिंचित किया, आर्यावर्त इस महान कार्य के लिए लम्बे समय तक इनका ऋणी रहेगा।

जन्म-प्रभाव – आचार्य नरेन्द्र देव (1889-1956) का जन्म 31 अक्टूबर, 1889 को फैजाबाद में हुआ, उनके पिता बलदेव प्रसाद, अपने समय के प्रसिद्ध वकील ओर सनातन धर्मावलम्बी थे। नरेन्द्र देव की प्रारंभिक शिक्षा फैजाबाद में हुई तथा घर पर ही वेद, गीता, उपनिषद, रामायण, महाभारत, अमरकोष और लघु कौमुदी का अध्ययन किया। बचपन में ही नरेन्द्र देव पं. माधव प्रसाद मिश्र, स्वामी रामतीर्थ और पं. मदन मोहन मालवीय के सम्पर्क में आए, इनका प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर पड़ा। पं. माधव प्रसाद मिश्र ने ही आचार्यजी का नाम नरेन्द्र देव रखा। इनका वास्तविक नाम अविनाशी लाल था। आचार्य जी ने बचपन से ही भारतीय राजनीति और राष्ट्रीय आन्दोलन की गतिविधियों को निकट से देखा था। लोकमान्य तिलक के स्वदेशी, स्वशिक्षा और स्वराज्य के विचार ने आचार्यजी को प्रभावित किया और स्वदेशी का व्रत लिया, जिसका आजीवन पालन किया।[2]

आचार्यजी का शैक्षिक दर्शन – आचार्य नरेन्द्र देव एक महान शिक्षाशास्त्री थे। वे काशी विद्यापीठ से जुड़े थे। एक शिक्षक के रूप में कार्य करके राष्ट्रीय शिक्षा के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया और इस संबंध में अपने विचारों को प्रकट करके शिक्षा के एक राष्ट्रीय स्वरूप का निर्माण किया जो आधुनिक शिक्षा व्यवस्था के लिए बहुत उपयोगी है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था का जो खाका उनके मानस पटल पर अंकित था, उससे भारतीय गणतंत्र की दिशा व दशा में आमूल-चूल परिवर्तन होना तय था। नरेन्द्र देव मानते थे कि शिक्षा का लक्ष्य युवकों को जीवन-संघर्ष के लिए तैयार करना है। जीवन सतत् परिवर्तित है तथा उसमें नई परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप नई स्थितियाँ पैदा होती है, स्थिरता जीवन का आदर्श नहीं हो सकता।

आचार्य जी शिक्षा के द्वारा जनता के विचारों एवं भावों को जाग्रत करना चाहते थे। शिक्षा के द्वारा वे राष्ट्र के युवाओं में प्रजातांत्रिक तरीकों की आदते डालना चाहते थे। उनके अनुसार शिक्षा में वही सफल है जो मानव को उत्तम नागरिकता की शिक्षा दे, विज्ञान के साथ मानवीय भावना का समन्वय हो, जो जनतंत्र के विकास में सहायक हो तथा जो व्यक्ति को आत्मानुषासन में प्रशिक्षित कर स्वावलम्बी बनाये एवं उसे जीविकोपार्जन के साथ-साथ उसके स्र्वांगीण विकास में भी सहायक हो।

धार्मिक शिक्षा–आचार्य नरेन्द्र देव – धार्मिक शिक्षा के विरोधी थे। धार्मिक शिक्षा हठधर्मी और संकुचित साम्प्रदायिक मनोवृत्ति को विकसित करती है। सभी धर्मो में अंध विश्वास का भारी मिश्रण है। यह तर्क या अनुभव के बजाय अंधनिष्ठा पर आधारित है। अत: यह शिक्षा मौखिक नहीं दी जा सकती है। इसके लिए अध्यापक एवं माता-पिता को स्वयं नैतिक बनना होगा। धर्म में आस्था रखने का आशय स्वयं नैतिक बनना है, नैतिक सदगुण मनुष्य की सामाजिक प्रकृति का सार है, इसलिए मनुष्य का नैतिक विकास धर्म निरपेक्ष एवं समुचित सामाजिक वातावरण में ही हो सकता है। अत: बच्चों में नैतिक व धार्मिक गुणों का विकास करने हेतु सिर्फ कुछ विशिष्ट धार्मिक क्षेत्रों में लोगों को चुनना ही ठीक नहीं है, बल्कि संसार के समस्त महापुरूषों व धार्मिक नेताओं का अध्ययन कराया जाना चाहिए।

स्त्री शिक्षा–आचार्य जी स्त्री शिक्षा के पक्के हिमायती थे। लोकतंत्र के निर्माण में वे स्त्री व पुरूष दोनों की समान भागीदारी चाहते थे। इसलिए वे लड़कियों को मुफ्त शिक्षा देने की बातें करते थे। लड़कियों के कौशल विकास हेतु व गृहविज्ञान, समाजशास्त्र जैसे मानविकी विषयों के साथ-साथ विज्ञान की शिक्षा भी प्रदान करना चाहते थे। भारत तभी तरक्की कर सकता है, जब स्त्री-पुरूष दोनों ही शैक्षिक, आर्थिक व सामाजिक स्तर पर समान होंगे।

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

शिक्षा का ध्येय – जहाँ एक ओर समाज मानव को बनाता है, तो मानव समाज का निर्माण करता है, दोनों एक–दूसरे के पूरक है। अत: शिक्षा का ध्येय सामाजिक सहायता के बिना आत्मविकास संभव ही नहीं है। शिक्षा के उद्देश्यों को उन्होंने निम्न रूप में वर्गीकृत किया है –

1. छात्रों को उत्तम नागरिक बनाना।
2. छात्रों को जीविकोपार्जन हेतु तैयार करना।
3. छात्रों के व्यक्तित्व में विज्ञान एवं मानवीयता का समन्वय करना।
4. छात्रों में जनतंत्रात्मक प्रवृत्ति का विकास करना।
5. छात्रों में आत्मानुशासन लाना, साहसपूर्ण चिंतन करना एवं सत्य को स्वीकार करना।
6. छात्रों को स्वावलम्बी बनाना।
7. छात्रों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना।
8. छात्र में राष्ट्र के प्रति समर्पण की भावना का विकास करना।
9. छात्र में सामाजिक चेतना के गुण विकसित करना।
10. छात्र में धार्मिक सहिष्णुता का विकास करना।
11. छात्र को सांस्कृतिक दृष्टि से प्रगतिशील बनाना।

पाठ्यक्रम–आचार्य जी ने भारतीय शिक्षा हेतु छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ–साथ सामाजिक व आध्यात्मिक मूल्यों को भी महत्व देते हुए विभिन्न स्तरों की एक विस्तृत पाठ्यक्रम की रूपरेखा तैयार की जो इस प्रकार है –

बेसिक स्कूल के लिए –

1. बुनियादी शिल्प।
2. हिन्दुस्तानी भाषा।
3. सामाजिक अध्ययन।
4. शारीरिक विज्ञान।
5. कला।
6. सामान्य विज्ञान
7. गणित।

कक्षा 5वीं से 7वीं तक के लिए –

1. बुनियादी शिल्प।
2. हिन्दुस्तानी भाषा व साहित्य।
3. द्वितीय लिपि।
4. गणित।
5. सामान्य विज्ञान (शरीर एवं स्वच्छता प्रशिक्षण)
6. कला (तकनीकि कला सहित)
7. शारीरिक व्यायाम।
8. सामाजिक अध्ययन।

इसके अतिरिक्त आचार्य जी ने कक्षा एक से पाँच तक तकली कताई तथा कृषि–बागवानी को अनिवार्य करने पर बल दिया एवं जिल्द साजी, बढ़ईगिरी एवं लोहारी, चमड़े का काम, कुम्भकारी, साईकिल की मरम्मत, टोकरी, चटाई बनाना, गृह–शिल्प आदि से एक उद्योगयुक्त पाठ्यक्रम भी अपनाने की अनिवार्यता पर बल दिया।

शिक्षा का माध्यम व शिक्षण विधियाँ – आचार्य जी हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में बहुत पसंद करते थे। वे प्रारंभिक स्तर पर प्रादेशिक भाषा व विश्वविद्यालय स्तर पर हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने के पक्ष में थे। उनका यह भी मत था कि भाषाओं की एक ही लिपि हो ताकि सभी प्रदेशों की भाषाओं को सीखना आसान हो जाये। अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप अंग्रेजी का स्वागत करते थे, अंग्रेजी की पढ़ाई के विरोधी नहीं थे। आचार्य जी चाहते थे कि युवकों को संस्कृत भाषा का अध्ययन करना चाहिए ताकि अपनी ज्ञान परम्परा और अतीत के इतिहास से परिचित हो। वे शास्त्रों के वैज्ञानिकअध्ययन और अनुसंधान के समर्थक थे।

आचार्य जी ने तीन प्रकार की शिक्षण विधियों को शैक्षिक दृष्टि से महत्वपूर्ण बताया है –

1. प्रसार व्याख्यान – इतिहास एवं सामान्य ज्ञान के लिए।
2. ट्यूटोरियल पद्धति – बौद्धिक एवं मानसिक विकास के लिए।
3. वैज्ञानिक पद्धति – विचारों की उत्पत्ति व तर्कपूर्ण ज्ञान के लिए।

शिक्षक–शिक्षार्थी संबंध – आचार्य जी स्वयं एक शिक्षक थे और इसीलिए शिक्षक को समाज का एक उच्च एवं जिम्मेदार नागरिक मानते थे। उनका मानना था कि वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था में आचार्य व छात्र के मध्य जो पारस्परिक मधुर अन्त:क्रिया थी, वैसे ही आज होना चाहिए। अध्यापक को सदैव छात्र का उचित मार्गदर्शन करने हेतु तैयार रहना चाहिए। वे इस व्यवस्था में कम आमदनी से शिक्षकों द्वारा अध्यापन कार्य की अरूचि से भी परिचित थे। प्रजातंत्र की सफलता योग्य शिक्षकों पर ही निर्भर है और यह शिक्षा तभी अच्छी तरह दी जा सकती है, जब शिक्षक आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त हो और प्रशासन का कर्तव्य है कि वह शिक्षकों की आर्थिक आवश्यकताओं का पूरा ध्यान रखे।

आचार्य जी समाज–निर्माण में युवकों की भूमिका को सबसे महत्वपूर्ण मानते थे। छात्रों में अध्यापक के प्रति श्रद्धा व आदर का भाव होना चाहिए। तभी वह अधिकाधिक सीखने के लिए प्रेरित हो सकेंगे। वे शिक्षक–छात्र की अन्त:क्रियाओं के माध्यम से उत्पन्न स्वानुशासन को ही सर्वश्रेष्ठ मानते थे।[3]

उपसंहार – आचार्य ने आधुनिक युग की आवश्यकतानुसार शिक्षा के क्षेत्र में व्यावहारिक एवं आदर्श पद्धति के लिए नवीन योजनायें प्रस्तुत की। जीविकोपार्जन हेतु उन्होंने प्रारंभ से ही विद्यार्थियों को स्वावलम्बन की शिक्षा पर जोर दिया, जो आज बढ़ती बेरोजगारी के इस युग में यह विचार पूर्णरूप से सार्थक है। वर्तमान में 'स्किल इंडिया' यानी हुनरमंद युवाओं के भारत के अनेक विजन के हिस्से के रूप में कौशल विकास व उद्यमिता मंत्रालय का गठन किया गया है। भारतीय कृषि शिक्षा के लिए आचार्य जी द्वारा बताये गये सुझाव आज भी भारत की तस्वीर बदलने में सक्षम है। 'बेटी बचाओं, बेटी पढ़ाओं' जिसका उद्देश्य लैंगिक संतुलन स्थापित करना है, योजना पूरे देश में शुरू की गई। आज नैनिहालों के बस्ते का बोझ हल्का करना भी आचार्य जी की बेसिक शिक्षा के प्रति विस्तृत सोच का व्यावहारिक रूप है। शिक्षक–शिक्षार्थी के जिस मधुर स्वरूप की कल्पना आचार्य जी ने की, मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों की दृष्टि से वह आज सर्वथा अनुकूल मानी जाती है। जन–जन की शिक्षा लोकतंत्र की आवश्यकता है एवं लोकतंत्र केवल शासन पद्धति ही नहीं बल्कि एक जीवन प्रणाली है, जैसे विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक है, जितने पहले थे। अन्तत: कहा जा सकता है कि भारतीय शिक्षा एवं संवृद्धता के लिए हमारा देश चिरकाल तक आचार्य जी के योगदान का आभारी रहेगा।

वर्तमान में 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति (स्कूल –उच्च शिक्षा) पर गाँव की प्रथम सीढ़ी से लेकर देश के शीर्ष संस्थाओं के हर वर्ग–समाज वैज्ञानिक, शिक्षाविद्, वैज्ञानिक, व्यापारी, उद्योगपति, गृहणी, विद्यार्थी आदि सभी की सहभागिता से विचार–मंथन कर सुझाव, अनुशंसाएँ पूरे देश से आमंत्रित की गई। इस प्रकार की पहल पहले नहीं की गई। पहली बार भारतीय आवश्यकतानुसार राष्ट्रीय शिक्षा नीति की रूपरेखा तैयार की जा रही है। जब विश्व के तमाम देशों में अपनी राष्ट्रभाषा में सारे काम–काज हो रहे है तो भारत में क्यों नहीं। अत: भारत में भी अब 'मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा विचार किया जा रहा है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सारे कामकाज राष्ट्रभाषा 'हिन्दी' में किया जाये।'

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. महर्षि ओम–'असल शिक्षा के मायने' नई दुनिया, इंदौर शनिवार 21 मई 2016 पेज नं. 16
2. गोविन्द प्रसाद शर्मा – आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, संस्करण 2009 , पेज नं. 213
3. (साहित्य, शिक्षा एवं सांस्कृतिक, आचार्य नरेन्द्र देव (सम्पादक–रमेशचन्द्र तिवारी तथा कृष्णानाथ) 'हमारी शिक्षा संबंधी समस्याएँ' प्रभात प्रकाशन 1988

मध्ययुगीन राजदर्शन पर ट्यूटन जातियों का प्रभाव

डॉ. मीनाक्षी पंवार *

प्रस्तावना – प्राचीनकाल के अन्त और मध्यकाल के प्रारम्भ की सूचना देने वाली घटना ट्यूटन जातियों की पश्चिमी रोमन साम्राज्य पर विजय है। दुर्दान्त ट्यूटन जाति ने न केवल अस्त होते हुए रोमन साम्राज्य के सूर्य को पूर्णत: अस्त कर दिया बल्कि पाश्चात्य जगत को नवीन राजनीतिक विचार भी प्रदान किए। ट्यूटन जाति अपने साथ जो कुछ लाई और रोमनों से उसे जो कुछ उत्तराधिकार में मिला, उन दोनों की परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया के कारण ही सामन्तवाद का जन्म हुआ। रोमन साम्राज्य को पदाक्रान्त करने के बाद ट्यूटन जातियों ने जहां कहीं भी शासन सत्ता स्थापित की वहीं ये अपनी राजनीतिक परम्पराएं और संस्थाएं लेते गए। पाश्चात्य यूरोप में जो वर्तमान राज्य पाए जाते हैं, उनमें से अधिकांश के निर्माण में इन्हीं ट्यूटन जातियों का विशेष भाग रहा है और आज भी इन पर उनके राजनीतिक विचारों की स्पष्ट छाप परिलक्षित है।

मध्ययुग का स्वरूप – योरोपियन इतिहास में 476 ई. में पश्चिमी रोमन साम्राज्य के पतन के साथ प्राचीन युग की समाप्ति होती है तथा 1500 ई. के लगभग उत्तरी और दक्षिणी अमरीका की खोज, भारत एवं पूर्वी देशों को जाने वाले समुद्री मार्ग के अन्वेषक तथा धार्मिक क्रांति (Reformation) के साथ अर्वाचीन युग का श्रीगणेश समझा जाता है। प्राचीन और अर्वाचीन युगों के बीच का 1000 वर्ष का समय दोनों युगों का मध्यवर्ती होने से मध्ययुग कहलाता है।[1] इस सहस्त्राब्दी को दो भागों में बांटा जाता है, इसका पूर्वार्द्ध अथवा पहला मध्य युग 500 ई. से 1000 अथवा 1100 ई. तक का समय अन्ध युग (Dark Ages) कहलाता है[2], क्योंकि इस समय बर्बर जातियों के आक्रमणों के कारण रोमन सभ्यता की ज्योति बुझ जाने से अन्धकार छा गया, सब प्रकार की उन्नति अवरूद्ध हो गयी, अराजकता, अशांति व्याप्त थी, राज, चिन्तन की गति भी अवरूद्ध हो गयी थी, साहित्य, कला, विज्ञान, व्यापार, वाणिज्य आदि सभी क्षेत्रों में अध:पतन आरम्भ हो गया।

मध्य युग धर्म प्रधान था। अत: इसे श्रद्धा का युग (Age of Faith) भी कहते हैं। इसमें आस्था और धार्मिक विश्वासों का बोलबाला था। इसके चिंतन और आकांक्षाओं का केन्द्र बिन्दु धार्मिक आदर्श थे। इस समय प्रार्थनाओं के विचार ने तथा श्रद्धा ने ज्ञान को अभिभूत कर लिया था। अत: इस समय के राजनीतिक चिंतन पर इसका प्रबल प्रभाव था। इस समय स्वतन्त्र मौलिक चिंतन बहुत कम हुआ। डनिंग के शब्दों में, 'मध्यकालीन राजनीतिक चिंतन का उस समय अवसान हो जाता है, जब वह सांसारिक और धार्मिक सत्ताओं के सम्बन्ध में किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन कर चुकता है। अत: नवीन मौलिक चिंतन के अभाव में, धार्मिक चिन्तन की प्रधानता के कारण उसने मध्ययुग को राजनीतिक चिंतन से शून्य (Unpolitical) भी कहा है।'[3]

किन्तु इस युग में धर्म की प्रधानता होते हुए भी कुछ राजनीतिक सिद्धान्तों का विकास हुआ। मध्ययुग के पूर्वार्द्ध अन्धयुग ट्यूटानिक जातियों[4] के प्रभाव के कारण सार्वजनिक जीवन की इकाई व्यक्ति को माना जाता रहा परन्तु पिछले मध्ययुग में धार्मिक और आर्थिक संगठनों- ईसाई परिव्राजक सम्प्रदायों, कारपोरेशनों तथा श्रेणियों (Guilds) के विकास के परिणामस्वरूप सामूहिक जीवन को असाधारण गौरव मिला, व्यक्ति का महत्व घट गया। इन दोनों का दूसरा अन्तर यह था कि अन्धयुग में योरोपियन समाज तथा चर्च बर्बर जातियों के आक्रमणों की बाढ़ में डूबा रहा किन्तु पिछले मध्ययुग में पश्चिमी योरोप में कैथोलिक चर्च का प्राधान्य बना रहा। तीसरा अन्तर यह था कि अन्धयुग के राजनीतिक दर्शन का मूल आधार ट्यूटानिक जातियों की प्रथायें तथा ईसाईयों के पवित्र धर्मग्रन्थ थे किन्तु पिछले मध्ययुग में इसका प्रमुख आधार रोमन कानून, ईसाई धर्मशास्त्र (Christian Theology) तथा अरस्तू के विचार थे। चौथा अन्तर पिछले मध्ययुग में ईसाई सार्वभौमता (Universalism) की भावना की प्रबलता है। यह विचार अन्धयुग में नहीं था। इस विचार के अनुसार पश्चिम में एक सार्वभौम समाज की सत्ता स्वीकार की जाती थी। चर्च और राज्य दो स्वतन्त्र संस्थाएं नहीं थी, किन्तु एक ही समाज को शासित करने वाले तथा धार्मिक और सांसारिक प्रयोजन पूरा करने वाले दो अंग थे। पश्चिमी योरोप के सब निवासी एक ईसाई गणराज्य (Respublica christiana) के सदस्य थे।[5]

हाल ही में सम्पन्न नवीन अनुसंधान और प्राप्य शोध सामग्री के आधार पर मध्ययुग का नया मूल्यांकन भी किया जाने लगा है। अब यह माना जाने लगा है कि कुल मिलाकर यह युग यूरोपीय सभ्यता एवं संस्कृति के विनाश का युग नहीं था, प्रत्युत कतिपय क्षेत्रों में यह सृजन का युग था। यह विकासक्रम का अवरोधक नहीं, उसे गति प्रदान करने वाला युग था। राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से भी यदि मध्ययुग प्राचीन युग की भांति अत्यंत उर्वर युग (Fertile age) नहीं था तो भी से नितान्त बंजर भी नहीं कहा जा सकता। इस युग में भी गम्भीर राजनीतिक चिन्तन हुआ है तथा इस युग ने भी कतिपय अत्यन्त महत्वपूर्ण राजनीतिक गुत्थियों का सैद्धान्तिक समाधान ढूंढ निकालने का प्रयास किया है। वस्तुत: मध्ययुगीन राजनीतिक सिद्धान्त दूसरी शताब्दी से छठी शताब्दी तक के रोमन विधिवेत्ताओं तथा दूसरी शताब्दी से सातवीं शताब्दी तक ईसाईयों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त पर अवस्थित है। इन दो आधारशिलाओं के अतिरिक्त मध्ययुगीन चिन्तन का एक अन्य आधार भी है, जो इसे रोमन साम्राज्य का विनाश करने वाले बर्बर ट्यूटनों के राजनीतिक विचारों के रूप में उपलब्ध हुआ है। इसीलिए आर.डब्ल्यू. कारलाइल और ए.जे. कारलाइल ने लिखा है ....'मध्ययुग में राजनीतिक विचार सक्रिय होने के साथ-साथ समाज की वास्तविक दशा से अत्यन्त घनिष्ठता से सम्बद्ध था।'[6]

ट्यूटन जातियों का प्रभाव – जब ट्यूटन असभ्य जातियों ने रोम को कुचल डाला तो उसका परिणाम यह हुआ कि रोम की प्राचीन सामाजिक तथा राजनीतिक परम्परायें अपने मूल रूप में लागू नहीं हो पाई। विजयी ट्यूटन लोग अपनी सामाजिक तथा राजनीतिक परम्पराओं के द्वारा रोमन साम्राज्य पर अपना प्रभाव डालने लगे। उनकी परम्परायें अनेक दृष्टियों से रोम की परम्पराओं, रोमन कानून तथा प्रशासनिक व्यवस्था से भिन्न प्रकृति की थी। अत: यह स्वाभाविक था कि मध्ययुग के राजनीतिक चिंतन तथा विचारधाराओं पर उनका प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता था। चर्च के बढ़ते

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

हुए प्रभाव तथा शिक्षाओं ने ट्यूटन जातियों पर ईसाई धर्म की विचारधाराओं को लाने में सफलता प्राप्त की थी, परन्तु यह प्रभाव धार्मिक अधिक था न कि राजनीतिक। ट्यूटन संस्थाओं तथा परम्पराओं की विशेषताओं ने मध्ययुग के राजनीतिक विचारों को ही प्रभावित नहीं किया। अपितु उनके अनेक आदर्श अन्य योरोपीय देशों में भी फैले।[7]

ट्यूटन जातियों ने जिन प्रमुख राजनीतिक विचारों को पुष्पित किया वे इस प्रकार है –

(1) वैयक्तिक स्वतन्त्रता – ट्यूटन लोग राज्य की तुलना में व्यक्ति को गौरवपूर्ण स्थान प्रदान करते थे। इसका मुख्य कारण यह था कि वे लोग योद्धा थे और उनके लिये यह सम्भव नहीं था कि वे व्यक्ति की शौर्य–भावना का अनादर करे। आडम्स के शब्दों में 'उनके हृदय में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और राज्य की तुलना में व्यक्ति के मूल्य और महत्व का बहुत बड़ा सम्मान था।' वैयक्तिक महत्व का यह भाव उनकी न्याय व्यवस्था में भी स्पष्ट अभिव्यक्त होता था। वे अपराधी को सजा देने का कार्य राज्य का नहीं मानते थे। वे अपराधी को उस व्यक्ति को सौंप देते थे जिसके प्रति अपराध किया गया हो। इस तरह केवल वही व्यक्ति अपराधी को दण्ड देता था जिसे क्षति पहुंचती थी अर्थात् ट्यूटनों ने अपराधियों को दण्डित करने का कार्य अपने हाथों में ले लिया।

ट्यूटन जातियों की समस्त प्रारंभिक सरकारों में लोकतन्त्र के तत्व मौजूद था। गैटेल के अनुसार वे इस दृष्टिकोण में गहन आस्था रखते थे कि 'राजनीतिक जीवन की इकाई व्यक्ति है, राज्य नहीं।'[8] ईसाइयत भी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और व्यक्ति के मूल्य पर बल देती थी। अत: उस समय यह आशा करना स्वाभाविक था कि इन दोनों विचारधाराओं में ताल–मेल बैठ जाएगा लेकिन यह आशा फलीभूत नहीं हुई क्योंकि व्यक्ति के महत्व और मूल्य के विचार आश्चर्यजनक रूप से शीघ्र ही लुप्त हो गए। मध्ययुग के निगम, श्रेणी, समुदाय अथवा धार्मिक संघ की सदस्यता के जीवन ने व्यक्ति के स्वतन्त्र अस्तित्व को समाप्त कर दिया परन्तु फिर भी सामन्ती व्यवस्था ने राजनीतिक संगठन में व्यक्तिगत अधिकारों को कुछ अंशों तक सुरक्षित रहने का सौभाग्य मिला। इस तरह व्यक्ति की महत्ता के विचार का समूल लोप नहीं हो पाया। पुनरूत्थान (Renaissance) तथा सुधार (Reformation) के दो महान आन्दोलनों से व्यक्ति की महत्ता के विचार को पुनर्जीवन मिला। फलस्वरूप यह सिद्धान्त आधुनिक युग तक आ पहुंचा।

(2) प्रतिनिधि शासन प्रणाली का विचार – यूरोप में प्रतिनिधि शासन प्रणाली के विचार को पुष्ट करने का श्रेय भी वास्तव में ट्यूटन जाति को ही है। प्रारम्भ में ट्यूटन लोगों में दो प्रकार की सभाएं थी– राष्ट्रीय सभा और स्थानीय प्रतिनिधि सभा। राष्ट्रीय सभा में जनजाति के समस्त स्वतन्त्र सदस्य होते थे। यह सभा मुखियाओं का निर्वाचन करती थी किन्तु राजतन्त्रों के स्थापित होने पर इस सभा का लोप हो गया। स्थानीय प्रशासन के क्षेत्र में, स्थानीय क्षेत्रों में, स्थानीय प्रतिनिधि सभाएं होती थी। ये सभाएं स्थानीय प्रश्नों पर विचार तथा विवादों का निर्णय करती थी। ये संस्थाएं यूरोप में मध्ययुग के अन्त तक मौजूद रही। पुनरूदित रोमन कानून के ऊपर आधारित एक नवीन न्याय प्रणाली ने इन्हें समाप्त कर दिया किन्तु स्थानीय प्रतिनिधि सभाओं का विचार विद्यमान रहा। इंग्लैण्ड में लोकसभा का विकास इसी प्रकार की सभाओं का आदर्श लेकर हुआ। परिवर्तन केवल इतना ही किया गया कि स्थानीय प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त को सम्पूर्ण राष्ट्र की लोकसभा के लिए स्वीकार किया गया। ट्यूटनों की स्थानीय प्रतिनिधि सभाओं ने ही जिला और ग्राम परिषद जैसी स्थानीय संस्थाओं की स्थापना के लिए आधार प्रदान किया।

(3) वैध शासन – ट्यूटन जातियों में प्रारम्भ में राजा के निर्वाचनों की व्यवस्था थी। बाद में यह पद वंशानुगत बन गया तथापि सैद्धान्तिक रूप से राजा के चुनाव के विचार को स्वीकार किया जाता रहा। अनेक शताब्दियों तक सम्राट का निर्वाचन मण्डल द्वारा होता रहा। फ्रांस और इंग्लैण्ड में राजतन्त्रात्मक शासन होने पर भी यह विचार बना रहा कि जनता राजा को अपना कर्त्तव्य पालन न करने पर हटा सकती है। 1688 की क्रांति तथा होनोवर वंश के सिंहासनारूढ़ होने पर यह सिद्धान्त स्पष्ट रूप से स्थापित हो गया कि जनता के प्रतिनिधियों को सिंहासन प्रदान करने का अधिकार है। इस प्रकार नाममात्र का राजतन्त्र वास्तव में गणतन्त्र में परिवर्तित हो गया। स्पष्ट है कि निर्वाचित राजतन्त्र के ट्यूटोनिक सिद्धान्त ने वर्तमान वैध शासन प्रणाली के सिद्धान्त को विकसित करने में बड़ा सहयोग दिया।

(4) कानून का विचार – ट्यूटन लोगों की मान्यता थी कि कानून का निर्माण अथवा संशोधन सम्पूर्ण जनता की इच्छा से होता है, अत: जनता की सहमति से ही इसे लागू किया जाना चाहिए। व्यक्ति को कानूनी अधिकार केवल व्यक्ति होने के नाते प्राप्त है न कि राज्य का सदस्य होने के नाते। कानून सम्बन्धी यह धारणा रोमन कानून की धारणा से भिन्न थी। रोमन साम्राज्य में कानून निर्माण की शक्ति जनता में निहित न होकर सम्राट में केन्द्रित थी। रोमन कानून का आधार क्षेत्रीय था जिसे साम्राज्य के अधीन सब लोगों पर लागू किया जाता था। ट्यूटोनिक कानून का आधार वैयक्तिक था। ट्यूटन कानून प्रणाली में प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार था कि वह अपने कानून के आधार पर न्याय प्राप्त करे। जब ट्यूटन लोग रोम में बस गए तो वे रोमन कानून के अधीनस्थ नहीं हुए बल्कि उन्होंने अपने कानून और उसके अनुसार शासित होने के अधिकार को बनाए रखा। उन्होंने यूरोप में यह विचार सुदृढ़ किया कि कानून का मुख्य आधार जनता में प्रचलित रीति–रिवाज है और कानून का अन्तिम स्त्रोत जनता है।[9]

निष्कर्ष – ट्यूटनों ने सीमित शासनाधिकार के सिद्धान्त का प्रतिपादन करके निरंकुश शासन के विरोध की पृष्ठभूमि तैयार की। मध्ययुग के चिन्तन में यदि हमें व्यक्तिगत स्वतन्त्रता एवं व्यक्तिगत अधिकारों के बारे में कोई चिन्तन मिलता है तो उसकी पृष्ठभूमि में कम या अधिक मात्रा में ट्यूटनों के राजनीतिक जीवन की इन परम्पराओं को माना जाना अनुचित न होगा तथा प्रतिनिधि स्थानीय सभाएं, निर्वाचित राजतन्त्र तथा एक सामान्य कानून की प्रणाली– ये तीन लोकतन्त्री संस्थाएं ट्यूटन जाति द्वारा संसार को दी गई, जिन्होंने यूरोप में स्वतन्त्र संवैधानिक शासन के भावी विकास पर गहरा प्रभाव डाला।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. थार्नडाइक – हिस्टरी ऑफ मिडीवल योरोप, पृ.1 अनेक विद्वान मध्ययुग की अवधि 1550 अथवा 1600 ई. तक मानते हैं।
2. बकल– हिस्टरी ऑफ सिविलिजेशन, खं. 2, पृष्ठ 106.
3. डनिंग – ए हिस्टरी ऑफ पोलिटिकल थियोरिज – एंशेण्ट एण्ड मिडीवल, ख. 1, पृष्ठ 130–131
4. रोमन साम्राज्य पर हमला करने वाली जर्मन भाषाभाषी प्रमुख ट्यूटन जातियां नि.लि. थी– उत्तरी सागर के निकट राइन नदी के तट पर बस फ्रैंक, इनके उत्तर में रहने वाले सैक्सन, एंगल तथा जूट, वर्तमान दक्षिणी जर्मनी के अलैमन।
5. हरिदत्त वेदालंकार – पाश्चात्य राजनीतिक चिंतन का इतिहास, सरस्वती सदन, दिल्ली–7, पृष्ठ 258–59
6. R.W. Carlyle and A.J. Carlyle - A History of Mediaeval Theory in the West, Vol. I. P. 3
7. के.आर. बम्बवाल एवं जी.डी. तिवारी – पाश्चात्य राजनीतिक चिंतन का इतिहास, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ. 212
8. गैटेल : हिस्टरी ऑफ पॉलिटिकल थॉट, पृष्ठ 91
9. डॉ. प्रभुदत्त शर्मा – राजनीतिक विचारों का इतिहास, कालेज बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ 332–333

महात्मा गांधी की ऐतिहासिक हरिजन यात्रा 'सिवनी जिले के विशेष संदर्भ में'

डॉ. संकेत कुमार चौकसे *

शोध सारांश – महात्मा गांधी विश्व के उन महापुरूषों में से एक हैं, जिनके विचार मानव सभ्यता के संवर्धन में बहुमूल्य सिद्ध हुए हैं। उनके पास स्त्रियों, अल्पसंख्यकों, दलितों और वंचितों के हर तबके के लिए एक सम्पूर्ण दृष्टि तथा स्पष्ट समाधान उपलब्ध था। तात्कालिक समय में अस्पृश्यता भारतीय हिन्दू समाज में एक अमिट कलंक की भांति सिद्ध हो रही थी। जिसे पूर्णरूपेण समाप्त करना अत्यंत आवश्यक था। साम्प्रदायिक निर्णय द्वारा दलितों को सामान्य हिन्दुओं से अलग कर एक अल्पसंख्यक वर्ग के रूप में मान्यता देने तथा पृथक प्रतिनिधित्व प्रदान करने की व्यवस्था की गई थी, जिसका गांधीजी ने अपने प्राणों को संकट में डालकर भी विरोध किया। अन्तत: पूना समझौते द्वारा समस्त हिन्दुओं के लिए कुछ संशोधित रूप में संयुक्त निर्वाचन का सिद्धांत स्वीकार किया गया तथा सामान्य सीटों में हरिजनों का प्रतिनिधित्व बढ़ाकर लगभग दुगना कर दिया गया। इसके पश्चात् महात्मा गांधी ने स्वयं को हरिजनोंद्धार में समर्पित कर 20 हजार किलोमीटर से अधिक की यात्रा की। प्रस्तुत शोध पत्र में महात्मा गांधी की ऐतिहासिक हरिजनोंद्धार यात्रा के तहत उनका मध्यप्रदेश के सिवनी नगर आगमन तथा उसका स्थानीय लोगों पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण किया गया हैं।
शब्द कुंजी – ऐतिहासिक हरिजनोंद्धार यात्रा ।

प्रस्तावना – महात्मा गांधी न केवल भारत अपितु विश्व के महान चिंतक थे। उन्होंने राजनैतिक विचारों के साथ ही अनेक ऐसे क्षेत्रों पर अपनी व्यापक दृष्टि डाली जिनसें मानवीय मूल्यों का पतन रोका जा सकता हैं। सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान गांधीजी जब यरवदा जेल में थे, उस समय ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैम्जे मैक्डोनल्ड ने देश के लिए एक ऐसी निर्वाचन पद्धति का सुझाव रखा जिसमें हरिजनों के लिए पृथक निर्वाचन की व्यवस्था की गई थी। इससे गांधीजी अत्यंत व्यथित हो गये। उल्लेखनीय है कि गांधीजी इसके पूर्व लंदन की गोलमेज परिषद में घोषणा कर चुके थे कि यदि हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओं के बीच खाई पैदा करने का प्रयास किया गया। तो वे अपने प्राणों को संकट में डालकर भी उसका विरोध करेंगे। 'साम्प्रदायिक पंचाट' नामक इस योजना के संबंध में गांधीजी ने जेल में सरकार से पत्र व्यवहार किया। जिसका सरकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और उसका यही कथन रहा कि 'इस योजना में की गई व्यवस्था के अनुसार यदि गांधीजी कोई सर्वसम्मत विकल्प सुझा दे, तो सरकार उसे मानने को तैयार होगी अन्यथा उसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता।'

अंतत: इस व्यवस्था के विरोध में गांधीजी ने 20 सितम्बर 1932 से आमरण अनशन प्रारंभ दिया।[1] गांधीजी के आमरण अनशन से चिंतित होकर देश के नेताओं मदन मोहन मालवीय, डॉ. अम्बेडकर, सरदार पटेल, राजेन्द्र प्रसाद इत्यादि ने पूना में एक सर्वसम्मत समाधान निकाला। इस योजना के अनुसार समस्त हिन्दुओं के लिए कुछ संशोधित रूप से संयुक्त निर्वाचन का सिद्धांत स्वीकार कर लिया गया तथा सामान्य सीटों में हरिजनों का प्रतिनिधित्व बढ़ाकर लगभग दुगना कर दिया गया। इस योजना को गांधीजी की स्वीकृति के बाद सरकार के पास भेज दिया गया, जिसे सरकार ने भी स्वीकृत कर लिया। भारत के राजनीतिक इतिहास में इसे पूना पैक्ट कहा गया। इसी के साथ गांधीजी का आमरण अनशन समाप्त हो गया। पूना समझौते के बाद महात्मा गांधी ने अनुभव किया कि दलितों की समस्या का समाधान किये बगैर स्वराज्य का कोई अर्थ नहीं है। अतएव उन्होंने स्वयं को हरिजन उद्धार के कार्यक्रम में समर्पित कर दिया। लगभग दो वर्ष तक अन्य कार्य छोड़कर वे निरंतर छुआछूत निवारण आंदोलन में जुटे रहे।[2]

जेल से मुक्त होकर वह सत्याग्रह आश्रम वर्धा प्रस्थान कर गये तथा 7 नवम्बर 1933 को वर्धा से ऐतिहासिक हरिजन यात्रा प्रारंभ की। यह दौरान मध्यप्रदेश के लिए विशेष महत्व रखता है क्योंकि इसके अंतर्गत वे राज्य के सुदूर छोटे-छोटे गाँवों में गये और राज्य की जनता तक हरिजनोद्धार का संदेश प्रसारित किया।[3] मध्यप्रदेश में गांधीजी के इस दौरे की व्यवस्था का सूत्र मुख्यत: पं. रविशंकर शुक्ल तथा ब्यौहार राजेन्द्र सिंह के हाथ में था। इसके अतिरिक्त जहाँ-जहाँ गांधीजी का आगमन हुआ वहाँ के नेताओं ने तन-मन धन से इनके स्वागत की व्यवस्था की।[4] इस दौरे का प्रारंभ गांधीजी ने दुर्ग से किया, जहाँ उनका आगमन 22 नवम्बर 1933 में हुआ।[5] तत्पष्चात् वे रायपुर तथा निकटवर्ती क्षेत्रों का भ्रमण करते हुए 28 नवम्बर 1933 को गोंदिया होते हुए बालाघाट नगर पहुँचे। बालाघाट में सभा समाप्ति के बाद गांधीजी सिवनी के लिए रवाना हो गये। सिवनी की ओर प्रस्थान करते समय गांधीजी को अपना पूर्व निर्धारित मार्ग परिवर्तित करना पड़ा। इसका कारण लांजी के लक्ष्मण पटेल का वह उपवास था। जो उन्होंने इसलिए किया गया था कि इस दौरे में गांधीजी लांजी अवश्य आये। अतएव गांधीजी लांजी और किरनापुर होते हुए सिवनी पहुँचे।[6]

सिवनी नागपुर-जबलपुर राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित महत्वपूर्ण नगर रहा है। मध्यप्रांत एवं बरार की पूर्व राजधानी नागपुर एवं राजनीतिक शक्ति के केन्द्र जबलपुर दोनों से इसका जीवंत संपर्क रहा है। महात्मा गांधी हरिजनोद्धार यात्रा के पूर्व भी एक बार सिवनी नगर आ चुके थे। उनका असहयोग आंदोलन के प्रचारार्थ 20 मार्च 1921 को सिवनी नगर आगमन हुआ था। इस प्रकार सिवनी जिले को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ कि उसने दो बार महात्मा गांधी से साक्षात् प्रेरणा ग्रहण की। गांधीजी के सिवनी नगर

*अतिथि विद्वान (इतिहास) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

आगमन पर उत्सव जैसा वातावरण निर्मित हो गया। उनके स्वागत में सिवनी में दीपोत्सव मनाया गया और समस्त नगर विद्युत प्रकाश से आलोकित किया गया। उनके स्वागत हेतु नगर की जनता तथा समीपवर्ती ग्रामों के लोग उपस्थिति थे। गांधीजी को नगर में पुन: दुर्गाशंकर मेहता के बंगले पर ठहराया गया। दूसरे दिन गांधीजी ने प्रभाकर जठार एवं दुर्गाशंकर मेहता के साथ हरिजन मोहल्ले का भ्रमण कर उनके घरों मे जाकर जलपान एवं दुग्धपान किया।[7] उल्लेखनीय है कि गांधीजी द्वारा हरिजन उद्धार का कार्यक्रम प्रारंभ किये जाने पर देश के अन्य भागों के समान ही सिवनी में भी हरिजनों की स्थिति सुधार के प्रयास किये गये थे। इस कार्य में प्रभाकर जठार, सुंदरलाल मिश्र, द्वारकासिंह, कुंजबिहारी खरे इत्यादि ने विशेष रूचि लेकर हरिजनों को मंदिर में प्रवेश कराया था।[8]

गांधीजी ने सिवनी के गांधीचौक में सार्वजनिक सभा में अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये-[9] 'आज हिन्दू और हिन्दूधर्म, दोनों ही कसौटी पर है। यदि वे सच्चे न उतरे तो दोनों ही नष्ट हो जावेंगे। यह मैं बहुत ही नम्रतापूर्वक कहता हूँ कि संसार में किसी जगह धर्म के नाम पर और जन्म से ही अस्पृश्यता नहीं मानी जाती। बुद्धि या हृदय कोई भी इसका समर्थन नहीं कर सकते। शास्त्रों में इसका समर्थन नहीं मिलता। विद्धान पंडितों ने इस बात की ताईद की है मैं जबरदस्ती हरिजनों को मंदिरों में नहीं घुसेड़ना चाहता। मैं तो चाहता हूँ कि वे स्वच्छता को अपनायें तथा मांस-मंदिरा का त्याग करके स्वयं ही मंदिर प्रवेश के लिए जनता का समर्थन प्राप्त करें। धर्म बरजोरी का कोई काम नहीं। मैं तो करोड़ों के हृदयों में परिवर्तन करना चाहता हूँ। हरिजन सेवक संघ का यह विशेष कार्य है, पर वह उतना ही सफल होगा, जितनी कार्यकर्ताओं में पवित्रता होगी। धर्म जागृति केवल तपस्या और पवित्रता से ही उत्पन्न हो सकती है। यदि हम अपने हृदय को पवित्र न करेंगे तो जनता के हृदय को कैसे बदल सकते है।

राधाबाई जठार के अथक प्रयासों से महावीर व्यायाम शाला में महिलाओं की एक सभा का आयोजन किया गया। जिसे महात्मा गांधी ने संबोधित किया। इस सभा में महिलाओं ने बड़ी संख्या में भाग लिया। गांधीजी के भाषण से प्रभावित होकर कई महिलाओं ने अपने आभूषण उतारकर गांधीजी को समर्पित कर दिए, जिन्हें वही नीलाम कर दिया गया तथा समस्त राशि हरिजनोद्धार हेतु उपयोग की गई। इस प्रकार गांधी जी की हरिजन यात्रा में स्वप्रेरित कार्यक्रम और बिना दबाव समर्थन का निर्माण उनकी कार्यशैली की महत्वपूर्ण सफलता रही। सिवनी में ही कुछ शास्त्रियों के साथ गांधीजी ने मंदिर प्रवेश बिल पर विचार विमर्श किया। भोजनादि से निवृत होकर वे चौरई होते हुए छिंदवाड़ा के लिए रवाना हो गये।

निष्कर्षत – यह कहा जा सकता है कि महात्मा गांधी ने दलित वर्ग के उत्थान हेतु बहुमूल्य योगदान दिया तथा उनके लिए सामाजिक न्याय के तीन आधार बिन्दुओं स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुता की प्राप्ति के लिए अथक प्रयास किये और एक सीमा तक उन्होंने अपने प्रयासों में सफलता भी प्राप्त की। गांधीजी ने हरिजनोंद्धार कार्य हेतु व्यापक भ्रमण किया, जिसमें वे सुदूर गांवों तक गए। इसी दौरान उनका सिवनी नगर आगमन हुआ। जिसका वहां के स्थानीय जनों पर गम्भीर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। इससे वहां न केवल हरिजन उद्धार कार्यक्रम काफी सफल रहा,अपितु गांधीजी के इस नगर आगमन ने राष्ट्रवाद के संदेश को हरिजनों तक पहुंचाया। जिससे जिले में राष्ट्रीय आंदोलन की गति में तीव्रता आई साथ ही इससे कांग्रेसी कार्यकर्ताओं को यह संदेश भी प्राप्त हुआ कि जन आंदोलन निष्क्रिय हो जाने पर वे स्वयं को किन रचनात्मक कार्यो में संलग्न कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ठाकुर,डॉ.(श्रीमती)एग्नेश - मध्यप्रांत एवं बरार में दलीय राजनीति तथा स्वाधीनता आंदोलन,शारदा पब्लिशिंग हाउस,दिल्ली,1998,पृ. 89
2. मध्यप्रदेश और गांधीजी - गाँधी शताब्दी समारोह समिति के लिये सूचना प्रसारण संचालनालय द्वारा प्रकाशित 1969 पृ. 26
3. चंद्र, विपिन - भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1990 पृ. 230
4. मध्यप्रदेश और गांधीजी, वही, पृ. 27
5. वही, पृ. 28
6. वही, पृ. 33
7. मध्यप्रदेश स्वतंत्रता संग्राम सेनानी खण्ड एक, सूचना प्रकाशन विभाग पृ. 166
8. पाठक, जे.पी.-सिवनी कल आज और कल, कोणार्क कम्प्यूटर्स,सिवनी, 2004, पृ. 13
9. मध्यप्रदेश और गांधीजी, वही,पृ. 33

****

स्वाधीनता संघर्ष में महिलाओं का योगदान 'बैतूल जिले के विशेष संदर्भ में'

डॉ. गौरी बेदी *

शोध सारांश – 15 अगस्त 1947 को भारत की ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता कोई आकस्मिक घटना नहीं थी, वरन् यह भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की रणनीति और उसके स्वरूप की स्वाभाविक परिणति थी। इस स्वतंत्रता समर में समाज के प्रत्येक वर्ग ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। स्त्रियों ने भी अनेक स्तरों पर महत्वपूर्ण तथा प्रेरणादायक कार्य कर इस आंदोलन को सफल बनाने में बहुमूल्य योगदान दिया। 1857 के महान विप्लव में युद्ध का संचालन, गांधीवादी सत्याग्रहों में अंग्रेजों के अत्याचारों को सहना, क्रांतिकारी आंदोलनों में अनेक साहसिक कार्य करना इत्यादि कार्यो में पुरूष वर्ग के साथ स्त्रियों के युगल प्रयासों का ही परिणाम रहा कि भारत परतंत्रता के बंधनों से मुक्त हो सका। प्रस्तुत शोधपत्र में राष्ट्रीय आंदोलन में मध्यप्रदेश के सीमांत पर स्थित दक्षिणी जिले बैतूल की महिलाओं के योगदान को बतलाया गया है।

शब्द कुंजी – असहयोग आंदोलन, वन सत्याग्रह, भारत छोड़ो आंदोलन।

प्रस्तावना – भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना दिसंबर 1885 में हुई थी। यह अखिल भारतीय स्तर पर भारतीय राष्ट्रवाद की पहली सुनियोजित अभिव्यक्ति मानी जा सकती है। कांग्रेस की स्थापना के साथ ही इसमें महिलाओं की भागीदारी की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। कांग्रेस के नेतृत्व में आरंभ हुए स्वदेशी आंदोलन के साथ ही इसमें महिलाओं की सहभागिता आरंभ हो गई। इस आंदोलन हेतु जहाँ एक ओर उच्च एवं मध्यमवर्गीय महिलाओं द्वारा धन एवं आभूषण प्रदान किए, तो वहीं दूसरी ओर ग्रामीण महिलाओं ने क्षमतानुरूप अनाज का दान किया। स्वदेशी आंदोलन के पश्चात् महिलाओं की सशक्त भागीदारी होमरूल आंदोलन के दौरान दृष्टिगत हुई। इस लीग की सफलता से प्रभावित होकर कांग्रेस ने 1917 के कलकत्ता अधिवेशन में ऐनी बेसेंट को अध्यक्ष चुना। वे कांग्रेस के किसी अधिवेशन की अध्यक्षता करने वाली प्रथम महिला बनी। इसके बाद राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की सहभागिता निरंतर बढ़ती गई। हालांकि जहाँ तक बैतूल जिले का संबंध हैं, कांग्रेस की स्थापना से लेकर 1920 से यहाँ राष्ट्रीय आंदोलन में जिले की महिलाओं की सहभागिता संबंधी किसी विशेष घटना के साक्ष्य प्राप्त नहीं होते।

भारतीय राजनीतिक रंगमंच पर गांधीजी के पदार्पण के साथ ही स्वाधीनता आंदोलन में भाग लेने वाली महिलाओं की संख्या में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई। गांधीजी के राजनैतिक विचारों का भारतीय महिलाओं द्वारा व्यापक समर्थन किया गया। असहयोग आंदोलन में महिलाओं की सहभागिता विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार, शराब की दुकानों पर धरना प्रदर्शन जैसे कार्यों में रही। बैतूल जिले की महिलाओं ने भी इस आंदोलन के समर्थन में अनेक कार्य किये। उन्होंने जिले में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार, शराब की दुकानों पर धरना प्रदर्शन, जुलूस एवं प्रभातफेरी जैसी गतिविधियाँ संचालित की। असहयोग आंदोलन की समाप्ति के कुछ ही समय पश्चात् मध्यप्रांत में 'झण्डा सत्याग्रह' प्रारंभ किया गया। इस सत्याग्रह में बैतूल जिले की भी अविस्मरणीय भूमिका रही। इस सत्याग्रह संबंधी विचार एवं कार्यक्रम सर्वप्रथम सुंदरलाल जी ने बैतूल में संपन्न हुये। प्रांतीय राजनीतिक सम्मेलन में ही प्रस्तुत किये थे तथा जब इस आंदोलन का केन्द्र जबलपुर से नागपुर स्थानांतरित किया गया तो बैतूल से सेठ जेठमल तातेड़ के नेतृत्व में बहुत से स्वयंसेवक वहाँ भेजे गये। स्वयंसेवकों के इस समूह ने सत्याग्रह में महत्वपूर्ण कार्य किया। इस सत्याग्रह में जिले की महिलाओं ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। जेठमल की पत्नी तथा बैतूल की **सावित्रीबाई** नामक एक शिक्षिका ने सड़कों पर जुलूस का नेतृत्व किया।[1]

महात्मा गांधी द्वारा सविनय अवज्ञा आंदोलन आरंभ करते ही बैतूल में भी नमक कानून का कुशलतापूर्वक उल्लघंन किया गया, किन्तु इस क्षेत्र की समुद्रतट से दूरी एवं व्यय की अधिकता के कारण दीर्घ अवधि तक इस आंदोलन को संचालित कर पाना संदिग्ध था। अतएव बैतूल समेत समस्त मध्यप्रांत में नमक सत्याग्रह के विकल्प के रूप में जंगल सत्याग्रह अपनाया गया। जिले में जंगल सत्याग्रह का शुभारंभ 1 अगस्त 1930 को दीपचंद गोठी के नेतृत्व में किया गया। सत्याग्रह में जाने से पूर्व दीपचंद को उनकी माता सोनीबाई ने रोकते हुए कहा **'रूको ! मैं तुम्हें चांदी का हंसिया देती हूँ। गांधीजी का जंगल सत्याग्रह प्रारंभ करना है, तो उसे चांदी के हंसिये से करना'** यह कहकर **सोनीबाई** ने दीपचंद का चांदी का हंसिया दे दिया। फिर उनका और अन्य सत्याग्रहियों का तिलक किया तथा आरती उतारी।[2] यह घटना प्रमाणित करती कि बैतूल जैसे आदिवासी बाहुल्य जिले की महिलाएं भी राष्ट्रीय आंदोलन के प्रति जागरूक थी तथा गांधीवादी आंदोलनों का पूर्ण समर्थन करती थी। बैतूल जिले में 22 अगस्त 1930 को स्वाधीनता संग्राम को स्थानीय नेतृत्व देने की एक दुर्लभ मिसाल बंजारीढाल नामक ग्राम में कायम की गई। वहाँ जंगल सत्याग्रह में स्थानीय कोरकू नौजवान गंजनसिंह के नेतृत्व में सैकड़ों **स्त्री**-पुरूष जंगल सत्याग्रह के लिए एकत्र हो गये।[3] इसी दौरान जिले की भैंसदेही तहसील के नीलबड़ नामक स्थान पर आनंदराव लोखण्डे के नेतृत्व में सत्याग्रह कर जंगल कानून का उल्लंघन किया जिसमें **पार्वतीबाई लोखण्डे, झनकूबाई कोरकू, राधाबाई महाले** एवं अन्य महिलाओं ने अपनी भागीदारी प्रस्तुत की।[4]

इंग्लैण्ड द्वारा भारतीयों से परामर्श के बिना भारत को द्वितीय विश्वयुद्ध में शामिल किये जाने की पूरे देश में प्रतिक्रिया हुई। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की प्रतिक्रिया बड़ी संतुलित और शालीन थी तथा कांग्रेस ने इसके विरोध

* अतिथि विद्वान (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिवनी (म.प्र.) भारत

स्वरूप महात्मा गांधी के नेतृत्व में व्यक्तिगत सत्याग्रह संचालित किया। परंतु इस समय फारवर्ड ब्लॉक की प्रतिक्रिया थोड़ी उग्र रही। इसके द्वारा जनसभाओं तथा जुलूसों के माध्यम से जनअसंतोष को उभारने का कार्य किया जा रहा था। इस समय बैतूल जिले में फारवर्ड ब्लाक का अधिक प्रभाव था। जिले में फारवर्ड ब्लॉक के नेता आनंदराव लोखण्डे द्वारा कांग्रेस की शालीनता की नीति की आलोचना करते हुए लोगों को युद्ध विरोधी आंदोलन में भाग लेने हेतु तैयार रहने का आव्हान किया गया। उन्होंने स्थानीय विधायक बिहारीलाल के साथ स्थानीय क्षेत्रों में भ्रमण कर राष्ट्रीय जागृति उत्पन्न करने का प्रयास किया।[5] इसी तारतम्य में जिले की भैंसदेही तहसील के ग्राम बड़ाली में 17 मई 1940 को जनसभा आयोजित की गई। इस जनसभा को विष्णु गोंड, झिम्मनसिंह गोंड, **सुमरती गोंड** तथा **दर्शन गोंड** ने भी संबोधित किया। इस सभा में बड़ी संख्या में पुरूष व महिलाएँ उपस्थित थी। सरकार इससे सतर्क हो गई तथा इन गतिविधियों के सूत्रधार आनंदराव को गिरफ्तार कर भारत रक्षा अधिनियम के तहत उन्हें दो वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दिया गया।[6]

बैतूल जिले का जनअसंतोष धीरे-धीरे विध्वंसक होता गया। बिहारीलाल के नेतृत्व में पट्टन में 23 मई को हुई बैठक में समूचे बैतूल में जंगल सत्याग्रह का आयोजन करने तथा रेल रोकने का निर्णय लिया गया। अगले ही दिन हिड़ली ग्राम के गेंदालाल गोंड तथा **सुमरती गोंड** ने आमला-बैतूल रेलगाड़ी की जंजीर खींचकर उसे रोक लिया। इस संदर्भ में मजिस्ट्रेट की टिप्पणी इस प्रकार थी-**'बैतूल आने वाली पैसेंजर गाड़ी को सुमृता तथा अन्य गोंडों द्वारा रोक लिया गया जिन्होंने अलार्म चैन खींची थी। इसके परिणामस्वरूप गाड़ी को कुछ जोखिम के साथ बैतूल लाना पड़ा क्योंकि वैक्यूम ब्रेक के कनेक्शन को निकालना पड़ा था।'7** गेंदालाल गोंड तथा सुमरती गोंड को गिरफ्तार कर दो-दो वर्ष के कठोर कारावास से दण्डित किया गया। इस प्रकार 17 मई 1940 को भैंसदेही तहसील के ग्राम बड़ाली की जनसभा में सुमरती गोंड तथा दर्शन गोंड जैसी ग्रामीण महिलाओं के द्वारा भाषण दिया जाना तथा 24 मई को सुमरती गोंड द्वारा रेल रोकना इस तथ्य को सिद्ध करते है कि जिले की ग्रामीण महिलाए भी स्वतंत्रता के प्रति जागरूक हो चुकी थी।

8 अगस्त 1942 को गांधीजी द्वारा स्वाधीनता का अंतिम संघर्ष 'भारत छोडो आंदोलन' आरंभ करते ही अगली भोर में उन सहित समस्त महत्वपूर्ण नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। इस स्थिति में अरूणा आसफ अली, सुचेता कृपलानी और उषा मेहता जैसी स्वतंत्रता सेनानियों ने भूमिगत होकर आंदोलन का संचालन किया। इस आंदोलन के दौरान जिले के प्रभातपट्टन में 15 अगस्त 1942 को जब आंदोलनकारियों मारोतराव देशमुख, मारोतराव माण्डले, दिवाकर जैन, श्यामराव पोकले को गिरफ्तार कर लिया गया तब इस क्षेत्र की महिलाओं ने इन सत्याग्रहियों की आरती उतारी एवं फूल मालाओं से स्वागत किया। सरकारी गाड़ियों पर पथराव किया गया, पथराव में भाग लेने वाली महिलाओं में बिहारीलाल की दोनों पत्नियाँ **राधाबाई** एवं **लक्ष्मीबाई** तथा 24 वर्षीय जानकीबाई भी शामिल थी।[8] इन्हीं के साथ-साथ मनकीबाई तथा सम्मोबाई ने भी इस आंदोलन में सक्रिय योगदान दिया। जिसके कारण उन्हें अल्पकालीन नजरबंद रखा गया।[9]

19 अगस्त 1942 को उन्होंने घोड़ाडोंगरी में एक अनौपचारिक सभा आयोजित की जिसमें इमारती लकड़ी का स्थानीय डिपो जलाने, सुरंगो के पास रेल की पटरिया उखाड़ने, रेलपटरियों के किनारे स्थित टेलीग्राफ तथा अन्य तारों के काटने, रेलवे स्टेशन तथा रानीपुर पुलिस थाने को जलाने का निर्णय लिया गया।[10] यह निर्णय कार्यान्वित किया गया और घोड़ाडोंगरी का इमारती लकड़ी डिपो जला दिया गया। पुलिस ने यहाँ एकत्रित जनसमूह को गोलीचालन के माध्यम से नियंत्रित किया।[11] इसके पश्चात् 100 से अधिक आदिवासी उनके नेता विष्णुसिंह गोंड एवं उनकी पत्नी **सुमित्राबाई** सहित गिरफ्तार कर लिए गये। उल्लेखनीय है कि घोड़ाडोंगरी वाले विद्रोह में सरदार विष्णुसिंह एवं उनकी पत्नी सुमित्राबाई की प्रमुख भूमिका रही।[12]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बैतूल वनों एवं पर्वतों से परिपूर्ण क्षेत्र रहा है, जहाँ की जनसंख्या अपेक्षाकृत विरल रही है। ब्रिटिश काल में इस क्षेत्र में शिक्षा एवं संचार के साधनों का पर्याप्त विकास भी नहीं हो सका था। इसके बाद भी इस क्षेत्र में राष्ट्रीय जागृति उत्पन्न होना तथा स्वाधीनता संघर्ष में इस क्षेत्र के निवासियों विशेषकर महिलाओं का बढ़ चढ़कर भाग लेना अतिविषिष्ट घटना है। यह नितांत सत्य है कि जब भी कोई बड़ी उपलब्धि प्राप्त होती है तो उसमें छोटी शक्तियों का योगदान उतना ही महत्वपूर्ण होता है जितना की महान शक्तियों का। इस दृष्टि से स्वाधीनता आंदोलन में बैतूल जिले की महिलाओं के योगदान को न तो कम आंका जा सकता है और न ही विस्मृत किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, भाग-एक, जबलपुर संभाग, सूचना प्रकाशन विभाग, 1978, पृ. 135
2. सक्सेना, घनश्याम; जंगल सत्य और जंगल सत्याग्रह, स्वराज संस्थान संचालनालय, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल 2008, पृ. 121
3. वही पृ. 130
4. गुरू, एस.डी.; मध्यप्रदेश में स्वाधीनता संघर्ष (1857-1950), मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2008 पृ. 178
5. शर्मा, देवेश; मध्यप्रांत में व्यक्तिगत सत्याग्रह, , वैभव प्रकाशन, रायपुर, 2006, पृ. 63
6. वही पृ. 64
7. श्रीवास्तव, पी.एन.; बैतूल जिला गजेटियर, भोपाल, 1990, पृ. 63
8. व्यास, हंसा; मध्यप्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम (1857-1947), मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 2011 पृ. 274
9. उइके, अमरसिंह; मध्यप्रदेश में स्वतंत्रता आंदोलन (1857-1947), कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल पृ. 292
10. श्रीवास्तव, पी.एन.; वही
11. मध्यप्रदेश स्वतंत्रता संग्राम सैनिक, वही, पृ. 138
12. मिश्र, डी.पी.; मध्यप्रदेश के स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, स्वराज संस्थान संचालनालय, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल 2001, पृ. 472

****

युवा शक्ति के जागरूक से राष्ट्र जागरण

डॉ. नितिन सहारिया *

प्रस्तावना – निराश हैं युवा, दिशाहीन हैं युवा –अभी पिछले महीने की 12 तारीख को स्वामी विवेकानंद की जयंती राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में एक बार फिर से मनाई गई। युवाओं के प्रेरक व प्रेरणापुंज के रूप में उनका स्मरण किया गया। इस सच के साथ आज का सच यह भी है कि राष्ट्र के युवा न केवल निराश हैं, बल्कि दिशाहीन भी हो रहे हैं। समाज उन्हें दिशा देने के अपने कर्त्तव्य को विस्मृत करता जा रहा है। आज इसकी गहन आवश्यकता है कि राष्ट्र की युवा पीढ़ी की वर्तमान दिशा व दशा पर गहरा चिन्तन व विश्लेषण हो। उन्हें समझने की कोशिश की जाये। साथ में कोशिश उन्हें समझाने की भी हो।

अगर सवाल यह उठे कि युवा किसे कहेगें तो इसका सटीक जवाब यह होगा कि युवा वह है, जिसमें बालपन अल्हड़ता, किशोरावस्था का उत्साह और वैचारिक प्रौढ़ता का समुचित व उपयुक्त सम्मिश्रण हों। यह सब होने के बावजूद यदि उन्हें दिशा नहीं मिल पा रही है तो यह किस कारण है? यह प्रश्न गंभीर व विचारणीय है।

देश की वर्तमान जनसंख्या के आंकड़े यह कहते है कि इस समय 121 करोड़ की कुल आबादी में 50 प्रतिशत आबादी 25 वर्ष से कम आयु की है तथा 65 प्रतिशत आबादी 35 वर्ष से कम आयु की है। इस तरह 13 से 35 वर्ष के आयुवर्ग समूह की कुल जनसंख्या 51 करोड़ से भी अधिक है। देश की कुल जनसंख्या का आधा भाग आज युवा वर्ग में आता है अनुमान है कि आने वाले दशक में युवाओं की कुल संख्या 58 करोड़ तक पहुंच जायेगी।

विश्व स्तर पर जनसंख्या के आंकड़े यह संकेत देते है कि विकसित देशों में जन्मदर लगभग शून्य हो गई है। जिसका दुष्परिणाम यह है कि वहां वरिष्ठ जनों की संख्या लगातार बढ़ रही है। दूसरी ओर भारत की जनसंख्या लगातार युवा हो रही है। नियंत्रण आकंड़े साक्षी है कि आने वाले एक दशक में जहां चीन की औसत आयु 37 वर्ष, अमेरिका की 45 वर्ष तथा पश्चिमी यूरोप और जपान की 48 वर्ष होगी, वही भारत में औसत आयु 29 वर्ष होगी। यहां विचार का विषय यह है कि राष्ट्र में युवाओं की सक्रिय भागीदारी–सामाजिक हलचल और राजनितिक दिशा- बोध का सूचकांक होती है। परन्तु इसके साथ हकीकत यह भी है कि देश की आजादी के युवा चेतना का सूचकांक राजनैतिक पटल से गायब हो गया है।

देश का इतिहास इस सच की गवाही देता है कि कांग्रेस को जन आन्दोलन बनाने तथा राष्ट्र में राजनैतिक चेतना लाने में देश भक्त युवाओं ने ही सक्रिय व साहसिक भागीदारी निभाई थी। उन्होंने एक से बढ़कर एक आदर्श, त्याग व बलिदान के अप्रतिम उदाहरण प्रस्तुत किये थे। इस वीर बलिदानी संगठन में- गंगा- यमुना दोआब में पं. रामप्रसाद बिस्मिल, असफाक उल्ला खाँ, पंजाब में करतार सिंह सरोप, सरदार भगत सिंह, बंगाल में अनुषीलन समिति, मास्टर सेन की विद्यार्थी–क्रांतिकारी मंडली तथा महाराष्ट्र में वीरसावरकर जैसे युवा शामिल थे। इन युवाओं में राष्ट्र प्रेम का जज्वा इस कदर कूट–कूट कर भरा था कि जाति, धर्म, सम्प्रदाय तथा भाषा व क्षेत्र के विचार इन्हें स्पर्श तक नहीं कर पाते थे। परन्तु जैसे–जैसे शिक्षा व शैक्षणिक मूल्यों में गिरावट आती गई, उसी के अनुपात मैं युवा आन्दोलन का आचरण व उसका उद्देश्य भी बदलता गया।

अन्दोलन से राजनीति में बदल गई युवा क्रांति – वर्ष 1965 ई. के बाद सम्पूर्ण विश्व में युवा असंतोष उभरने से जहां पकिस्तान, फ्रांस व थाईलैण्ड जैसे देश प्रभावित हुए, वही भारत भी युवा आक्रोश से अलग नहीं रह सका। इसी युवा आक्रोश के तहत भाषा को लेकर अनेक आन्दोलन हुए। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् भी उसी कालखण्ड की देन है। युवाओं की शक्ति को भांपते हुए कांग्रेस ने भी 1968 ई. में राष्ट्रीय छात्र संगठन बनाया। 1974 ई. में जब बिहार में भ्रष्टाचार व बेरोजगारी के खिलाफ आन्दोलन खड़ा हुआ तो सम्पूर्ण क्रांति का नारा देते हुए लोकनायक जय प्रकाश नारायण के 'यूथ फॉर डेमोक्रेसी' के गठन ने छात्र युवा आन्दोलन को एक नई दिशा प्रदान की। 80 का दशक आते–आते राजनैतिक दलों के ध्रुवीकरण ने बदलाव का जोरदार महौल तैयार किया, युवा राजनीति भी उसका हिस्सा बन गई।

इसी बीच राजनीति पर परिवाद भी हावी हो गया। जाति व धर्म से जुड़ी सियासी घटनाओं, अनेक घोंटालों, राजनीति में भ्रष्ट व आपराधिक पृष्ठभूमि के लोगों के प्रवेश तथा भाई–भतीजा वाद ने युवा राजनीति के चेहरे को प्रदूषित कर दिया है। तब से लेकर आज तक युवा राजनीति के इस संक्रमण काल में युवाओं के समक्ष पहले विराट लक्ष्यों का निर्धारण, उन्हें शॉर्टकट से प्राप्त करने का विभ्रम तथा दूसरी ओर राजनीति के विखरते रोल मॉडल का द्वंद उन्हें आक्रोशित होने के लिए मजबूर कर रहा है। इसलिए हार्दिक पटेल जैसे अनेक युवा अपनी सही दिशा नहीं तय कर पा रहे है। आज का यर्थात् यही है कि युवाओं को राष्ट्रनीति में सुधार के लिए आगे आना चाहिए। राष्ट्रनीति सुधरेगी तो राजनीति में भी सुधार होगा।

इसी सच के साथ यह सच भी है कि आज दुनिया अमेरिका और चीन के बाद भारत को तीसरी शक्ति स्वीकार करने के लिए मजबूर है। इसमें निश्चित रूप से हमारे युवाओं की रचनात्मकता का बहुत बड़ा योगदान है। रिपोर्ट कहती है कि आज अमेरिका आऊटसोर्सिग को लेकर बहुत चिन्तित है। ऐसा केवल इसलिए, क्योंकि 40 प्रतिशत से भी अधिक भारतीय तकनीकी युवा सम्पूर्ण विश्व के तकनीकी संस्थानों में कार्यरत् है। बोइंग कंपनी में 15 प्रतिशत से अधिक भारतीय तकनीकी श्रम शक्ति है। यह अनुमान है कि सन् 2020 तक कई देशों में जब पेशेंवरों की भारी कमी होगी, तब भारत की कुशल श्रमशक्ति ही ऐसे देशों की अर्थव्यवस्था को सहारा दे रही होगी।

यहां गौरतलब तथ्य यह भी है कि पहले की तुलना में नौकरियों का प्रोफाइल बदला है। पहले का युवा सिविल सर्विस, इंजीनियरिंग और चिकित्सा

* शासकीय एम.एम.महाविद्यालय, कोतमा, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

के क्षेत्र में अपना कैरियर बनाना चाहता था लेकिन अब वह सूचना तकनीकी, कम्प्यूटर, बिजनेस मैनेजमेंट और मीडिया में अपना कैरियर बनाने को लालायित है। निश्चित ही आज के युवा की नौकरी के साथ कारोबार में भी दिलचस्पी बढ़ी है। सर्वेक्षण बताते है कि पहले देश में कारोबार शुरू करने की जो उम्र 40 वर्ष के आस-पास थी, वह अब घटकर 25 वर्ष के आस-पास पहुंच गई हैं। हालांकि बिजनेस वीक की एक रिपोर्ट बताती है कि देश के करीब 4 करोड़ शहरी युवा ही उदारीकरण से प्राप्त इन अवसरों का भरपूर लाभ उठा पाये है जबकि दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्र में बसने वाले करोड़ों युवा अब भी बेरोजगारी और तंगहाली में जीवन-यापन करने को मजबूर है।

संक्रमण काल से गुजर रहा है युवा - युवा जगत इस समय परम्परा और विकास के संक्रमण काल से गुजर रहा है। इसका सामाजीकरण आज तीन पीढ़ियों के बीच हो रहा है। इतिहास कहता है कि पहली पीढ़ी ने पहले गुलामी का दंश झेला, बाद में आजादी को जिया जबकि दूसरी ओर तीसरी पीढ़ी ने स्वतंत्रता, मूल्यों व लोकतंत्र की परम्पराओं को पुस्तकों में पढ़ा इस पीढ़ी को अपने जीवनकाल में सैद्धान्तिक और व्यवहारिक जीवन में बहुत बड़ा अंतर दिखाई दिया। पिछले दिनों अन्ना के भ्रष्टाचार आन्दोलन तथा निर्भया मामले के विरोध में यदि युवाओं ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया तो वह इसलिए क्योंकि उन्हें देश की आजादी के बाद देश की व्यवस्था पर खुलकर बोलने और नजदीक से देखने व समझने का मौका मिला।

नये सर्वेक्षण बताते है कि कुछ एक अपवादों को छोड़कर भारतीय युवा इस समय दुनिया के सबसे जागरूक युवाओं में से एक है। पूरी दुनिया में ज्ञान व तकनीक की आंधी चलने के बाद भारतीय युवा थोड़ा असुरक्षित- सा हुआ है इसी वजह से वह पुन: अपनी जड़ों की ओर लौट रहा है। आज उन्हें अपनी संस्कृति व संस्कारों की चिंता होने लगी है, हालांकि उनकी चिन्तायें, उनके सरोकार अपने कैरियर व परिवार तक सिमट कर रह गये हैं। फिर भी वह एक चिनगारी है। जो हवा के सान्निध्य में दहक सकती है, धधकती ज्वाला बन सकती है। जरूरत है आज यथा स्थिति को तोड़ने की और युवाओं को राष्ट्रीय तथा सामाजिक मुख्यधारा से जोड़ने की। स्वामी विवेकानंद के वचन आज भी युवा पीढ़ी के लिए प्रेरक व मार्गदर्शक हैं। उन्होंने कहा था- 'मेरा विश्वास युवा पीढ़ी में हैं, नई पीढ़ी में हैं। वे सिहों की भांति सभी समस्याओं का हल निकालेगें। उन्हीं के प्रयत्न व पुरूषार्थ से भारत देश गौरवान्वित होगा।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अखण्ड ज्योति - मासिक पत्रिका, फरवरी 2016, पृष्ठ 7, संपादक - डॉ. प्रणव पण्डया, प्रकाशक- अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामंडी, मथुरा (उ.प्र.)
2. अखण्ड ज्योति - मासिक पत्रिका, मार्च 2016, पृष्ठ 35, संपादक - डॉ. प्रणव पण्डया, प्रकाशक- अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामंडी, मथुरा (उ.प्र.)
3. अखण्ड ज्योति - मासिक पत्रिका, अप्रैल 2014, पृष्ठ 7, संपादक - डॉ. प्रणव पण्डया, प्रकाशक- अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामंडी, मथुरा (उ.प्र.)
4. अखण्ड ज्योति - मासिक पत्रिका, नवम्बर 2012, पृष्ठ 11, संपादक- डॉ. प्रणव पण्डया, प्रकाशक- अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामंडी, मथुरा (उ.प्र.)
5. युग निर्माण योजना - मासिक पत्रिका, फरवरी 2010, पृष्ठ 9, प्रकाशक - युग निर्माण प्रेस, तपोभूमि, मथुरा (उ.प्र.)
6. हिन्दू नवोत्थान - भाषण (डॉ. मोहन भागवत - नई दिल्ली), प्रकाशन- सुरूचि प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 2009
7. सुरेश सोनी - हमारी सांस्कृतिक विचारधारा के मूल स्त्रोत, पृष्ठ 18, प्रकाशन - अर्चना प्रकाशन, दीनदयाल परिसर, भोपाल, वर्ष 2008

****

खैरागढ़ का ऐतिहासिक, राजनीतिक व साहित्यिक - सांस्कृतिक वैभव

डॉ. रजनीश कुमार उमरे * डॉ. ऋतु सेन **

प्रस्तावना - आदिवासी बहुल तथा कृषि आश्रित खैरागढ़, छत्तीसगढ़ के राजनाँदगाँव जिले का तहसील मुख्यालय है। अपनी ऐतिहासिकता के वैभव के साथ यह कस्बा अपनी सांस्कृतिक व साहित्यक समृद्धि से अपनी राष्ट्रीय तथा वैश्विक पहचान रखता है।

खैरागढ़ के इंदिरा संगीत विश्वविद्यालय के ग्रंथालय में 'नागवंश' शीर्षक एक ग्रंथ अवलोकनार्थ प्राप्त हुआ, जिसके लेखक लाल प्रद्युम्न सिंह हैं। इस ग्रंथ का प्रकाशक तथा प्रकाशन विवरण स्पष्ट नहीं है जीर्ण-अवस्था के इस ग्रंथ का ग्रंथालय का ग्रंथ क्रमांक 03/48794 है। इस ग्रंथ में खैरागढ़ के नागवंशी राजपरिवार तथा नरेशों का ऐतिहासिक विवरण तथा उनके जनहित के कार्यों का उल्लेख है।

यइस राज्य और राजधानी का खैरागढ़ नाम पड़ने के निम्नलिखित कारण मालूम होते हैं -

1. इस राज्य में खैर (catechu tree) के वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं। अनेक स्थानों में इन वृक्षों के झुण्ड ऐसी सुन्दरता से लगे हुए हैं कि दूर से देखने में ये गढ़ के समान दिखाई देते हैं। स्थल-स्थल पर खैर के दुर्ग खड़े हुए हैं। इसलिए प्राचीन काल में इसका नाम खैरगढ़ या खैरागढ़ पड़ गया, राज्य के नाम राजधानी का नाम भी खैरागढ़ हुआ।[1]

नामकरण के संदर्भ में दूसरा अभिमत प्रस्तुत करते हुए लिखा है-

'खैरागढ़ नरेश के पूर्वजों में खडग राय नाम के एक नरेश हुए हैं, उन्होंने संवत 1812 (सन् 1755ई.) में अपने नाम से एक नगर बसाया था, जिसे खडग्गढ़ कहते थे। किन्तु कालांतर में उसका नाम राज्य के नाम से मिलने के कारण अपभ्रंश होते-होते खैरागढ़ नाम से प्रसिद्ध है।'[2]

खैरागढ़ की भौगोलिक स्थित - 'मध्यप्रदेश (अब छत्तीसगढ़) का एक जागीरदारी राज्य। यह अक्षांश 21°4 तथा 24°34 और देक्षांश 80°27 एवं 81°12 पूर्व के मध्य अवस्थित है क्षेत्रफल 931 वर्गमील है।'[3]

खैरागढ़ के प्रमाणों में एक प्रमाण माधवकवि द्वारा रचित ग्रंथ 'कमलनारायण प्रहर्ष' में खैरागढ़ के संदर्भ में प्राप्त होता है जिसमे माधव कवि कहते हैं -

'देश छत्तीसगढ़ सुन्दर सुशालियुत थल थल अन्न जललाह सबही को है।
ग्राम ठाम एक पथिक निवसा हेत रूचि रचि राख्यो जहाँ बसे जो कहीं को है।।
सुजन जहाँ के करै दीन उपकार वर करत उछाह बोल बोलत न भीको है।।
रामराजी वनेत्र वसत महान वह शिवरी नारायण मंडन मही को है।।
ताके बीच राजे शुचि राजधानी **खैरागढ़** आसपास जाके बहुविधि सोहै।।
जाहि देखि लोगन को बढ़ै अनुराग है।।
क्षत्रिय नरेश नागवंशी हमेशा बसैं पूजत ब्रजेश भूरि करत सुजाग है।।
देवन के मंदिर अनेक वर देवन के सेवन को जत जाके दोष को न दाग है।।'[4]

तथ्यानुसार खैरागढ़ का संक्षिप्त इतिहास इस प्रकार है -

'खैरागढ़ राजवंश के शासक नागवंशी राजपूत थे, वे छोटा नागपुर के नागवंशी राजपूत सभासिंह के वशंज थे। सभासिंह के दो पुत्र थे, इनमें से छोटा पुत्र लक्ष्मी निधि खोलवा आया और जम गया, इन्ही के वंश का व्यक्ति श्यामधन 1740 में खोलवा का जमींदार था'[5]

श्यामधन ने लांजी के जमींदार को मण्डला के महरासिंह के विरूद्ध लड़ाई में सहयोग दिया। मण्डला के राजा ने लांजी के जमींदार को परास्त कर लांजी पर अपना अधिकार जमा लिए लेकिन श्यामधन को अपने अधिनस्त जमींदार राज्य विस्तार की अनुमति दी।

श्यामधन की मृत्यु पश्चात क्रमश: दरियालसिंह, अनुपसिंह, माधव सिंह व खड़गराय को गद्दी मिली। खड़गराय के समय ही लांजी के जमींदार ने नागपुर के भोंसलों की सहायता से खैरागढ़ पर हमला कर दिया। खड़गराय भोंसलों का संरक्षण प्राप्त करने में सफल हुए तथा भोंसलों ने उन्हें वार्षिक टकोली (शुल्क) बांध कर उन्हें खैरागढ़ का राज्याधिकार प्रदान किया। सन 1759 के लगभग खड़गराय का देहांत होने पर उनके पुत्र दृगपाल सिंह ने राज्य का प्रभार संभाला। दृगपाल सिंह का देहांत 1833 में होना बताया जाता है। दृगपाल सिंह के देहांत पश्चात उनके भाई महिपाल सिंह गद्दी पर बैठे। महिपाल की मृत्यु पश्चात क्रमश: फतेहसिंह तथा उमरावसिंह को राज्य सिंघासन प्राप्त हुआ

उमराव सिंह के समय राज्य का प्रबंध अंग्रेजों के अधीन हो गया। उमरावसिंह के पुत्र कमलनारायण सिंह के समय अंग्रेजी सरकार ने कमलनारायण सिंह को राजा की पदवी दी। पदवी देने के पीछे कारण था उस समय के घोर अकाल में कमलनारायण सिंह द्वारा उठाए गए संवेदनशील तथा जनहित कारी कार्य :-

यसंवत 1953 (सन 1896) में प्रांत में घोर अकाल पड़ा। उसने महाविकराल रूप धारण समस्त प्रजा को काल कालकवलित करना प्रारम्भ कर दिया।

सभी मृत्यु की भयंकर मूर्ति देख भयभीत हो त्राहि-त्राहि पुकार रहे थे। बहुत से मनुष्य बबूल आदि अखाद्य वस्तुओं के फल खाकर अपनी प्रबल जठराग्नि की ज्वाला को शान्ति कर रहे थे। जहाँ दृष्टि डालो वही नर-नारियों का मृतक देह प्रास्पृश के पतिंडगों की भांति यत्र-तत्र दृष्टिगोचर हो रही थी।

राजा कमलनारायण सिंह ने अपने राज्य में जो प्रबंध किया वह अतुलनीय था। आपने बड़ी उदारता और निस्पृहता से अन्नागार के द्वार और कोष का ताला खोलकर प्रजागण की रक्षा करना प्रारम्भ कर दिया। अपनी क्षुधित और जर्जरीभूत प्रजा को काल से मुक्त करने हेतु अपने कृतान्त से युद्ध प्रारम्भ किया। आपने स्वयं ग्राम-ग्राम में भ्रमण कर दुष्काल-प्रबन्ध का निरीक्षण

* अतिथि विद्वान, शासकीय वी.वाय.टी. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.) भारत
** अतिथि विद्वान, पण्डित एस.एन.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

करते हुए अपने यश रूपी पताका को एक छोर से दूसरे छोर तक फैला दिया। इस प्रबंध की इतनी ख्याति हुई कि श्रीमान जे.एडबर्न साहब बहादुर चीफ कमिश्नर ने इसे देखने के निमित्त नागपुर से खैरागढ़ आने का कष्ट उठाया। आपने इसका निरीक्षण कर इस प्रबंध को आदर्श स्वरूप माना ....

ब्रिटिश गवर्नमेंट ने कमलनारायण सिंह के प्रबंध से संतुष्ट हो आपको उसी वर्ष राजा की उपाधि से विभूषित किया।[6]

कमलनारायण सिंह गीत संगीत तथा साहित्य में निपुण थे। वे रचनाकार थे। उनकी रचनाओं में कमलनारायण विनोद, कमल प्रकाश रागमाला, शीतलायश मालिका, दिल्ली दरबार, जैमिनि अश्वमेघ आदि की चर्चा की जाती है। कमलनारायण सिंह का निधन 1908 में हुआ इसके पश्चात क्रमश: लाल बहादुर सिंह तथा विरेन्द्र बहादुर सिंह गद्दी पर बैठे।

विरेन्द्र बहादुर सिंह तथा रानी पद्मावती के दो पुत्र क्रमश: रविन्द्र बहादुर सिंह तथा शिवेन्द्र बहादुर सिंह तथा पुत्री इंदिरा थी। इंदिरा की मृत्यु 5 वर्ष की अल्प अवस्था में हो गयी। इंदिरा को गायन का शौक था। इंदिरा की स्मृति में विरेन्द्र बहादुर सिंह तथा उनकी पत्नी पद्मावती ने इंदिरा कला एवं संगीत विश्वविद्यालय की स्थापना 1956 में की तथा विश्वविद्यालय के लिए अपने महल को दान दिया। विरेन्द्र बहादुर सिंह के द्वितीय पुत्र शिवेन्द्र बहादुर सिंह राजनाँदगाँव के सांसद बने थे। बड़े पुत्र रविन्द्र बहादुर की पत्नी रानी रश्मिदेवी खैरागढ़ से विधायक चुनी गयीं थी। उनके निधन के पश्चात रविन्द्र तथा रश्मि देवी के पुत्र देवव्रत सिंह भी खैरागढ़ के विधायक चुने गये थे। शिवेन्द्र बहादुर सिंह की पत्नी गीतादेवी सिंह डोंगरगाँव विधानसभा से विधायक निर्वाचित हुई थी। इस राज परिवार ने विश्वविद्यालय की स्थापना कर खैरागढ़ को गौरव दिया। यहाँ विदेशों से भी छात्र-छात्राएँ संगीत अध्ययन के लिए आते हैं। यह एशिया का प्रथम तथा विश्व का द्वितीय संगीत विश्वविद्यालय है।

खैरागढ़ को साहित्य व संस्कृति का अभेद्यगढ़ कहा जाता है। इस गढ़ ने संस्कृति-साहित्य का पोषण किया। राजाश्रय में तथा स्वतंत्र रूप से कला तथा संस्कृति से जुड़े लोगों ने खैरागढ़ में संस्कृति तथा कला को जीवित ही नहीं रखा उसे पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित भी किया है तथा खैरागढ़ के मान सम्मान को सामंती सीमा से बाहर निकाल कर, व्यापक जन जीवन का चित्रण कर कला और संस्कृति को सही अर्थों में परिभाषित किया है।

संस्कृति परिवर्तनशील होती है। पुरातन के साथ आधुनिकता का संतुलन संस्कृति का स्वाभाविक गुण है। खैरागढ़ की संस्कृति तथा साहित्य में यह परिवर्तन स्पष्ट दिखाई पड़ता है। राजतंत्र के दौर में राजाश्रय में पलने वाले कला तथा संस्कृति कर्मियों ने खैरागढ़ में रचनात्मकता का अलख जगाया तो राजाश्रय से बाहर के सृजन कर्मियों ने रचनात्मकता को अपनी समिधा से ऊर्जावान बनाया। खैरागढ़ के साहित्यकारों ने साहित्य के साथ लोक साहित्य को सहेजा संवारा तथा प्रगतिशील वैचारिकता को सृजन का आधार बनाया।

संस्कृति, व्यापक अर्थ का द्योतक है। संस्कृति में अंतरविरोध होता हैं जहाँ अंतरविरोध होगा वहीं गतिशीलता होगी, सृजन होगा। गतिशीलता और सृजन संस्कृति की व्यापकता का मूल है, अधार है।

खैरागढ़ की संस्कृति में अंतरविरोध देखा जा सकता है। खैरागढ़ के भीतर कई खैरागढ़ है एक खैरागढ़ अपने अतीत पर गर्वित है, तो दूसरा खैरागढ़ अपने भविष्य के प्रति आशांवित है। एक खैरागढ़ अपनी समृद्धि पर अभिमान करता है तो दूसरा खैरागढ़ अपनी बुनियादी आवश्यकताओं के लिए संघर्षरत है। एक खैरागढ़ अपने शीशमहल में मस्त है, तो दूसरा खैरागढ़ पस्त लोगों की भावनाओं को स्वर देते हुए क्रांति का गीत गाता है -

'जेबों में पत्थर रखने का हम पर है इल्ज़ाम।
शीशे की बस्ती में हम तो होंगे ही बदनाम।'[7]

खैरागढ़ अपने रहन सहन में आम, साधारण तथा आत्मीयता के ताप से अटाटूट भरा है। सहजता तथा सहयोग इसकी विशिष्टता है पर्व त्यौहार खैरागढ़ में मानो स्वयं उत्सव मनाते हैं। पर्व-त्यौहरों के प्रति यहाँ आम जनमानस का गहरा जुड़ाव है।

खैरागढ़ में शहरी आधुनिकता तथा ग्रामीण परम्परा का मेल है। किसी अंचल की विशेषता या प्रगति का अनुमान वहाँ के बाजार से लगाया जा सकता हैं, शहरी तथा ग्रामीण संस्कृति का मेल यहाँ के बाजार में भी देखा जा सकता है। यहाँ गोल बाजार तथा इतवारी बाजार प्रमुख बाजार है। गोल बाजार प्रतिदिन का आधुनिक बाजार है, तो इतवारी बाजार साप्ताहिक है। जहाँ पारम्परिक ग्रामीण बाजार का स्वरूप नजर आता है।

खैरागढ़ की जनता की वेश-भूषा तथा बोली पर गौर करें तो पायेंगे कि यहाँ की वेशभूषा तथा बोली छत्तीसगढ़ी से थोड़ी सी अलग है। खैरागढ़ की वेशभूषा और बोली में सामंती ठसक है। यहाँ लोग अपने परिधान के प्रति सजग हैं। साफ-सुथरे वस्त्र में बन-ठन के रहना इन्हें प्रिय है। यहाँ की भाषा भी विशेष हैं, आत्मीयता के साथ आन में घुली बोली यहाँ की भाषा को अलग पहचान देती है। मसलन हिन्दी में जिसे मैं आऊंगा मैं जाऊगा या छत्तीसगढ़ी में मैं आँहू मैं जाहू होगा, वहीं खैरागढिया में यह - हम आब, हम जाब, हो जाता है। 'मैं' की जग 'हम' सामूहिकता का बोध नहीं कराता बल्कि 'हम' व्यक्तिनिष्ठ गर्वोक्ति सामंती प्रभाव का सूचक है। रहन-सहन तथा भाषिक ठसक के बावजूद खैरागढ़ के जन मानस में घमंड रत्ती भर भी नहीं है। वे सरल हैं, सहज है, तथा आत्मीयता व सहयोग की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी है।

गीत नृत्य संगीत से समृद्ध खैरागढ़ में शास्त्रीय तथा लोक का समन्वय है। जसगीत, पंथी गीत तथा रामायण मंडलियाँ यहाँ की लोक धरोहर है। चंदैनी, निर्मल पानी तथा पुरखा के थाती लोकमंच है। जसगीत तथा रामायण गायन प्रतियोगिता यहाँ की संस्कृति की धड़कन है। शास्त्रीय रूप से संगीत विश्वविद्यालय यहाँ की बहुत बड़ी पहचान है। जहाँ देश विदेश के विद्यार्थी कलात्मक विधाओं का प्रशिक्षण प्राप्त करने आते हैं। यहाँ ललित कलाओं के अंतर्गत गायन, वादन, नृत्य, नाट्य तथा दृश्य कलाओं के साथ शिल्प तथा चित्र कला की विधिवत शिक्षा दी जाती है। इसके अतिरिक्त हिन्दी, अंग्रेजी तथा संस्कृत साहित्य विषय के पाठ्यक्रमों के साथ इतिहास संस्कृति तथा पुरातत्व विषयों का अध्ययन कराया जाता है।

खैरागढ़ का साहित्यक परिदृश्य व्यापक है, जो खैरागढ़ की रचनात्मकता की पहचान है। खैरागढ़ एक राजवंशीय गढ़ रहा है, प्राचीन समय में राजाश्रय के संरक्षण में यहाँ के राजाश्रय कवियों की बहुत सी रचनाएँ विश्वविद्यालय के ग्रंथालय में सुरक्षित है। राजाश्रय के कवियों के साथ राजघराने के सदस्य भी साहित्य रचना में रूचि के साथ रचनात्मक लेखन भी करते थे। जिनमें कमलनारायण सिंह तथा उमराव सिंह के नाम प्रसिद्ध है। राजाश्रय तथा राजवंश से अलग तथा स्वतंत्र रचनाकारों के नाम से खैरागढ़ की पहचान हिन्दी साहित्य में बहुमूल्य है। जिनमें उमराव बख्शी, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, रमाकांत श्रीवास्तव, जीवन यदु, गोरेलाल चन्देल तथा संजीव बख्शी का नाम प्रमुख है, जिनकी रचनात्मकता ने हिन्दी साहित्य में खैरागढ़ का नाम रोशन किया है। इन रचनाकारों की विद्या व काल में बहुत अंतर है। समानता है, तो इस रूप में कि वे अपने समय तथा समाज के प्रति संवेदनशील दृष्टि रखते हैं तथा अपनी रचनात्मक ऊर्जा से खैरागढ़ की साहित्यक पहचान को

विशिष्ठता प्रदान करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 सिंह लाल प्रद्युम्न नागवंश प्रकाशन-अस्पष्टइं.सं.वि.वि. ग्रंथालय का ग्रंथ क्रमांक इ.छ.ऋ -03/48794) प्रकाशन वर्ष-अपरस्ट 01
2 वही 01-02
3 वसु नगेन्द्रनाथ हिन्दी विश्वकोश इ.ठ.Published Corporation , 461 Vevekanand Nagar Delhi प्रथम-1919 पुन: प्रकाशन - 1986 69
4 माधव कवि कमलनारायण प्रहर्ष 02
5 श्रीवास्तव निर्मलकांत छत्तीसगढ़ की रियासतों में स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी 2009 प्रथम41
6 सिंह लाल प्रद्युम्न नागवंश प्रकाशन-अस्पष्टइं.सं.वि.वि. ग्रंथालय का ग्रंथ क्रमांक B.N.G. -03/48794) प्रकाशन वर्ष-अपरस्ट 268-269
7 यदु जीवन अनकहा है जो तुम्हारा श्री प्रकाशन 1994, 28

****

ब्रह्म विद्या के प्रतीक-सुख के सागर चारों वेद

डॉ. नितिन सहारिया *

प्रस्तावना - मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा सुख की चाहत- संसार में हम देखते हैं कि सभी मनुष्य सुख-शान्ति चाहते हैं। सुख, शान्ति और आनन्द ये तीनों मानव जीवन के उत्तम फल है। सुख क्या है? 'सु' अर्थात जो अनुकूलन है। अच्छा लगता है, 'ख' अर्थात् इन्द्रियों से सम्बन्ध रखता है। जैसे-ईश्वर के द्वारा बनाया गया सुन्दर रूप, प्रकृति, पेड़-पौधे, सुन्दर फूल-फल इन्हें देखना, 'आँख' को अच्छा लगता है। 'सुगन्ध' नासिका को अच्छा लगता है। 'स्वादिष्ट पदार्थ' जिह्वा को अच्छे लगते है। 'मधुर-वाणी' कानों को अच्छी लगती है। इस प्रकार इन्द्रियों की अनुकूलता में सुख मिलता है।

चारों वेद- (1) ऋग्वेद (2) यजुर्वेद (3) सामवेद (4) अथर्ववेद ये सुख के सागर हैं 'वेदों का पढ़ना, सुनना और सुनाना' इससे सुख प्राप्त होता है शान्ति मिलती है।

वेद का अभिप्राय-'वेद' ज्ञान-विज्ञान के सागर हैं- महर्षि यास्क के अनुसार 'वेद' में मुख्य रूप से तीन भावनायें दृष्टिगोचर होती हैं - (1) 'विद्' ज्ञाने अर्थात् वेद पढ़ने और सुनने से ज्ञान प्राप्त होता है।

(2) 'विद' लाभे अर्थात् वेद के ज्ञान प्राप्त करने से लाभ ही लाभ होता है। हानि कुछ भी नहीं होती।

(3) 'विद' प्रतिष्ठायाम् सत्तयाम वा अर्थात् वेद-ज्ञान से मनुष्य का, ज्ञानी व्यक्ति का सम्मान बढ़ता है।

स्वनामधन्य ज्ञानिनामग्रगणय महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने आर्यसमाज के तीसरे नियम के अनुसार वेदों को सभी सत्य विद्याओं का मूल बताया है -

'वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना -सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।'

वेद किसका ज्ञान है ?- 'वेद' वह ईश्वरीय सत्य ज्ञान है जो सृष्टि के आरंभ में ईश्वर ने मनुष्यों के कल्याण के लिए, ऋषियों के माध्यम से प्रदान किया है। वेद अपौरूषेय हैं। जिन ग्रन्थों की रचना मनुष्य द्वारा की जाती है उन्हें 'पोरूषेय' कहा जाता है। 'वेदों का ज्ञान' परमात्मा द्वारा चार ऋषियों को, अलग-अलग समाधि अवस्था में 'जब वे ऋषि' ईश्वर का अनन्य मन से ध्यान कर रहे थे, ऐसे उन पवित्र अन्त:करण वाले ऋषियों को सुपात्र जानकर दिया गया।

साक्षात्कत्तर्ता ऋषि एवं वेदों के नाम-ऋषियों को वेद के ज्ञान की प्रेरणा ईश्वर ने समाधि अवस्था में दी।

(1) 'ऋग्वेद' का ज्ञान 'अग्नि ऋषि' को प्राप्त हुआ। ऋग्वेद के ऋचायें है। ऋच्यते स्तुते अनेन इति 'ऋचा' अर्थात् जिन मन्त्रों के माध्यम से ईश्वर की स्तुति की जाये। 'ऋग्वेद' आकार की दृष्टि से , मन्त्रों की संख्या की दृष्टि से सबसे बड़ा है। सबसे अधिक प्राचीन हैं। ऋग्वेद 'विज्ञान' परक है। ज्ञान-विज्ञान का भण्डार है। (ऋग्वेद में 10 मण्डल हैं। 1028 सूक्त है और 10552 मन्त्र हैं।)

(2) **'यजुर्वेद'** का ज्ञान'वायु ऋषि' को प्राप्त हुआ। विषय की दृष्टि से यजुर्वेद कर्मकाण्डपरक है। इसमें अनेक प्रकार के यज्ञों का वर्णन है। उसमें मानव कल्याण के दिशा संकेत हैं। 'यजुर्यद्याात्मकों' यजुर्वेद के मन्त्र दीर्घ स्वर में लाय के साथ समगति में बोले जाते हैं। इसमें 40 अध्याय और 1975 मन्त्र हैं।

(3) **सामवेद-** 'सामवेद' का ज्ञान 'आदित्य ऋषि' को प्राप्त हुआ इस वेद का विषय 'उपासना' है। इसमें परमपिता परमेश्वर की स्तुतियाँ, प्रार्थनायें भरी पड़ी है। गान-विद्या, संगीत का यह मूलाधार है। सामवेद को दो भागों में बांटा गया है। (1) पूर्वार्चिक और (2) उत्तरार्चिक। सामवेद में 9 प्रपाठक, 29 अध्याय और 1875 मन्त्र है। सामवेद के मन्त्रों का उच्चारण अत्यन्त लयबद्ध होकर मधुर स्वर में गाया जाता है। इन मन्त्रों का मधुर ज्ञान सुनकर अशान्त व्यक्ति भी शान्त हो जाता है।

(4) **अथर्ववेद-** अथर्ववेद का ज्ञान 'अंगिरा' ऋषि को प्राप्त हुआ। अथर्ववेद का विषय 'ज्ञान' परक है। इसमें शेष तीनों वेदों का सार है। अथर्ववेद में अनेक प्रकार की औषधियों का वर्णन रोगों के उपचार का विधान, राजा-प्रजा के कर्त्तव्य, मानवीय उपहार का ज्ञान-विज्ञान कूट-कूटकर भरा पड़ा है। अथर्ववेद में 20 काण्ड 760 सूक्त और 5977 मन्त्र है।

(5) **चारों वेद संसार का उत्तम संविधान-** चारों वेदों के ज्ञान को यदि हम संसार का सर्वोत्तम संविधान कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। इसमें हर प्रकार की सत्यविद्या का ज्ञान दृष्टिगोचर होता है। चाहे वह उपासना और भक्ति हो। संसार में किस प्रकार रहना है, कैसा व्यवहार करना है, किसका क्या कर्त्तव्य है तथा किन किन नियमों का पालन करना है, ईश्वर ने मानव के कल्याण के लिए संविधान के रूप में मानव को वेद-ज्ञान प्रदान किया है, वेद मनुष्य के लिए अमूल्य निधि के समान हैं।

(6) **वेद पढ़ना और सुनना सर्वोत्तम धर्म-** 'धत्र धारणेय इस धातु से धर्म शब्द सिद्ध होता है जिसका अर्थ है धारण करना। महर्षि वेदव्यास जी भी इसी भावना से धर्म का अर्थ करते हैं -'धारणात् धर्मम् इत्याहु' धर्म एक उत्तम कर्त्तव्य कर्म है जो धारण किया जाता है। परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के आरंभ में जब मनुष्य का निर्माण किया, तब उसके लिए, दिशा बोध कराने के लिए सर्वोत्तम वेदों का ज्ञान प्रदान किया। वेदों में प्रभु ने अन्य विद्याओं के साथ-साथ मानवीय धर्म का भी बहुत सुन्दर उपदेश किया है। इसीलिए महर्षि मनु ने कहा है -'वेदोकखिलो धर्म मूलम्'- (मनुस्मृति 2/6) अर्थात् वेद जिज्ञाासमानानां प्रमाणं परम्

* शासकीय एम.एम.महाविद्यालय, कोतमा, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

श्रुति: 'मनु 2/12अर्थात् धर्म को जानने वालों के लिए वेद ही परम प्रमाण हैं। इसलिए वेद का पढ़ना और पढ़ाना सर्वोत्तम धर्म है।

(7) वेद पढ़ने और सुनाने का अधिकार किसको है? - सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में किसी ने वेदों के आचार्य स्वामी दयानन्द जी से भी प्रश्न किया है कि -प्रश्न क्या स्त्री और शूद्र भी वेद पढ़ें, जो ये पढ़ेंगे तो हम फिर क्या करें?

समाधान- सब स्त्री और पुरूषों को वेद पढ़ने और सुनने का अधिकार हैं सब मनुष्यों का वेदादि शास्त्र पढ़ने सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद में है।

महर्षि दयानन्द जी के वेदों के प्रति आस्था- ज्ञानियों में अग्रगण्य महर्षि दयानन्द जी की वेदों के प्रति अनन्य आस्था थी वेदों के प्रति परम श्रद्धा थी। महर्षि ने भारतवर्ष को पदस्थापित करने का महान व्रत लिया था। वेदों को उन्होंने इसका एकमात्र साधन बनाया था। महर्षि ने पाखण्डखण्डिनी पताका लेकर, वेदों के प्रति, एकान्त, एकाग्र व निर्विरोध आस्था को अत्यन्त सुदृढ़ एवं दीर्घ, स्थायी करने में कोई कसर न बचाये रखी। वेद, पुन: वेद पुनरपि वेद, आदि में वेद, मध्य और अन्त में वेद।

विद्धान आचार्यों के वेद के सम्बन्ध में विचार- पण्डित गंगा प्रसाद जी उपाध्याय का कथन है 'इस दीर्घकालीन सृष्टि के इतिहास में सैंकड़ों मतमतान्तर और धर्मशास्त्र बने और बिगड़ गये। कराल काल के थपेड़ों से वेद का बचे रहना सिद्ध करता है कि कुदरत वेदों की रक्षा करती है, जैसे सैंकड़ों तूफान जिन से बड़े-बड़े मनुष्य निर्मित दीपक बुझ जाते हैं, सूर्य को नहीं बुझा सकते इसी प्रकार वेद भी हैं।' संसार के अनेक परिवर्तन हो चुके हैं वेद आज भी सुरक्षित हैं। वेद प्राचीनतम हैं। सारा संसार कभी वेदानुयायी था। कभी वेद ही सारे संसार का धर्म था।

सुख-शान्ति का मार्ग- कुछ लोग पूछते हैं कि वेद में क्या है, ऋषि इसका उत्तर देते हैं कि वेद सारे धर्म का मूल है। सुख शान्ति और समृद्धि का सच्चा मार्ग है। ब्रह्म विद्या का प्रतीक और सुख का सागर है। खूब उपयोग किया जाता है। यह ऐसी दूसरी व्यवस्थाओं से भी संबंधित होता है जिनमें इलेक्ट्रानिक मेल का आपस में प्रभाव पूर्ण रीति से अदला-बदली होती रहती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सेवा प्रेरणा- मासिक पत्रिका, जून 2014, पृष्ठ-12 प्रकाशक-विनोद आर्य, सम्पादक- एम.214 गौतम नगर,गोविन्दपुरा भोपाल।
2. अखण्ड ज्योति- मासिक पत्रिका, मई 1987, पृष्ठ-23, सम्पादक- डॉ. प्रणव पण्ड्या, प्रकाशक- अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा (उ.प्र.)
3. युग निर्माण योजना- मासिक पत्रिका, अक्टूबर 1980, पृष्ठ-21, प्रकाशक- युग निर्माण योजना प्रेस, तपोभूमि मथुरा (उ.प्र.)
4. हिन्दू नवोत्थान-भाषण (डॉ. मोहन भागवत), सुरूचि प्रकाशन, नई दिल्ली, वर्ष -2009
5. सुरेश सोनी- हमारी सांस्कृतिक विचारधारा के मूल स्त्रोत, पृष्ठ-18-19, प्रकाशक- अर्चना प्रकाशन, दीनदयाल परिसर, भोपाल, वर्ष 2008

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

A Comparative Study Of Madhya Pradesh And Karnataka- Demographic Change And Gender Inequality

Dr. Indra Barman*

Abstract - Gender equality and empowerment of women is today recognized globally as akey element in the achievement of progress in myriad areas, the charter of the United Nations signed in 1945 was the first international covenant that proclaimedgender equality as a fundamental right. Millennium Development Goals and Main

Targets for 2015 (UN, MGDs, 2005) recognize promotion of gender equality andempowerment of women is pivotal to its realization. In this paper an attempts ismade to understand the demographic changes and gender inequality in the Statesof Madhya Pradesh and Karnataka. The analysis is primarily based on secondarydata culled out from Census of India reports and other published documents. Thegender gap in index of deprivation (IOD) of CLDI was lower in Karnataka than M.P. Karnataka's Sex ratio is also distinctly better than that of M.P. Similarly, menand women in Karnataka have better longevity over that of M.P.

Introduction - Demographic changes in a region, to a great extent, reflect the extent ofsocio-economic development. In recent years, the developed westerncountries have drawn our attention to the progress attained in theirdemographic goals. However, in order to have policy relevance, bringingout an indicator of gender inequality in India may help to drawgovernment's attention to gender inequality and the policies needed toreduce it. We can also expect it to become an input into theoreticaldebates concerning the existence and nature of the relationship betweengender equality and macroeconomic growth, including the questionwhether greater gender equality would enhance growth and development.Over a period of time achievements in demographic goals inIndia have been significant. However, given the poor socio-economic background, these indicators are lower in Bihar, Madhya Pradesh, Assam,Rajasthan and Uttar Pradesh (BMARU states) than the southern states.Of course, presently India is endeavoring to emerge as a developed nation.According to 2001 census, India remains the second most populatedcountry in the world, the first being China, and the projected populationshows that, if the current trend continues India will overtake China by2011.In this paper an endeavor has been made to understand thedemographic changes and the other aspects of gender inequality fromavailable data on education, health and employment for the states ofMadhya Pradesh and Karnataka.

Objectives - The prime objectives of the study are as follows:

I. To understand and analyze the demographic changes in Madhya Pradesh and Karnataka for the decades 1981-1991 and 1991-2001
ii. To study gender inequality in education, health and employment andto some extent to link the gender relations of the States underconsideration
iii. To suggest policy measures and to make appropriate policy suggestionsto reduce gender inequality in the states of Karnataka and MadhyaPradesh in India

Methodology - Data for the study have been collected from the Statistical Abstract ofIndia and other related documents published by Census of India. Thecomparative analysis has been done for the years 1991 and 2001 tounderstand the demographic changes and gender inequality for the Statesof Karnataka and Madhya Pradesh. For detailed understanding of literacy, the deprivation index(DI) has been prepared by using methodology from UNDP-HDI framework. The IOD has been calculated for the states of Karnataka, MadhyaPradesh and also for all- India. Conclusions and policy suggestions foundappropriate have been adopted.

Previous Studies on the Issue of DemographicChange in India - Several studies on demographic transition like fertility, mortality, but nocomparative studies like Karnataka and Madhya Pradesh on demographicchanges and gender inequality. Hence the possibilities of relevant literatureon the present topic are very few. However, the study, Socio-EconomicImplications of Demographic Change in India (1999) which was carriedout by Mahendra K. Premi gives the overall knowledge on the demographic changes since 1961.Another study by Sulaba Parasuraman (1999) on MortalityTransition in India and its Socio-Economic Consequences, the author foundin the study that in spite of lower levels of mortality in 1951-1961, Orissa,Madhya Pradesh and Rajasthan could not progress well in mortalitytransition. The slowest decline has been in Uttar Pradesh, Bihar and MadhyaPradesh through the transition period so far.

The Demographic Variation of Madhya Pradesh andKarnataka - This section briefly explains the overall demographic changes in the Statesof Madhya Pradesh and Karnataka over the period of two decades, 1981-1991 and

*Institute for excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.) INDIA

1991-2001. The vital statistics of a region throw light on thecharacteristics of socio-economic development in the State.During the decade 1981-1991, India's total population growthrate was 19.03 per cent; it decreased to 17 per cent by 2001. Madhya Pradesh has always had above national-averagegrowth rates of population in total, male, female, rural and urbancategories. On the other hand, Karnataka has shown below nationalaveragegrowth rates in all the categories. (Statistical Abstract, India, 1993 and 2003)

Carving out Chhattisgarh as a separate state from Madhya Pradeshon November 1, 2000 and the consequent changes in its geographicalboundaries has caused the population to be accounted under the twoseparate states during the year 2001. Therefore, the growth rates ofpopulation for total, male and female were shown as negative. Theaverage birth rate in India was 29.5 in 1991; it decreased to 25.4 by 2001. A similar decrease could be seen both in rural and urban birthrates in India. If we compare these figures for states of Madhya Pradeshand Karnataka, we find that birth rate registered is below-nationalaverage in Karnataka State. However, these vital rates were abovethe national-average in Madhya Pradesh in both the years (32.4 in1991 and 31 in 2001). A similar variation could be seen in rural andurban rates of birth for Karnataka and Madhya Pradesh. Death ratesare also above national average for Madhya Pradesh; and below nationalaveragefor Karnataka (Statistical Abstract, India, 1993 and 2003).The average death rates in India decreased from 9.8 in 1991 to 8.4by 2001. The reduction in the rate of death in rural and urbancategories is also reported in Statistical Abstract, India, 1993 and 2003.The number of infant death below one year of age in a year,per 1000 live births, is termed as Infant Mortality Rate (IMR). In thisregard the IMR in India was 80 in 1991; it decreased to 66 by 2001.

Further IMR is higher in rural as compared to urban areas. This ratewas much higher at 86 (2001) in Madhya Pradesh as compared to 58 in Karnataka in 2001. Due to increased health facilities in India, over aperiod of time, IMR tend to decline from 80 in 1991 to 66 in 2001. Dueto the backwardness in socio-economic infrastructure (Statistical Abstract: India 2003),higherper cent of SC/STs, in the population, poverty and relatively low healthcare facilities in Madhya Pradesh IMR rate is higher (86 per 1000 livebirths) as compared to Karnataka where it was 58 per 1000 live births in2001. Madhya Pradesh has 28 excess infant deaths per 1000 live births(Statistical Abstract, India, 1993 and 2003) over Karnataka**.** The excess IMR in total, rural and urban in M.Pwas 28, 23 and 27 respectively when compared to Karnataka. As can beseen from Table-1, infant death in urban areas of M.P was almost doubleas compared to Karnataka. Relatively low literacy, low socio-economicdevelopment and lack of health facilities in M.P. are the reasons for highergrowth rate of population and also higher infant deaths.The average number of years of a new born child is expectedto live under current mortality conditions is called expectation of life atbirth. A low life expectancy reflects that the region poor socio-economicstatus and lack of basic health care facilities, it needs for humandevelopment. Life expectancy increases with improvement in femaleliteracy, economic development and rising standards of living of the people.

One of the important features of life expectancy in India has been contraryto normal biological expectations of life, i.e., women having a longer lifethan men. However, if we examine the life expectancy for males andfemales in states of Madhya Pradesh and Karnataka, for males it can beseen that, life expectancy of males was higher in Madhya Pradesh. 55.6years for males as against 55.2 years for females in 2001. But, lifeexpectancy for females in Karnataka corresponds well with the statisticalevidence given by Statistical Abstract, India, 1993 and 2003 (61.6 for male and 64.9 for female in 2001).The study shows that, the life expectancy of total population,as well as male and female life expectancy was lower in Madhya Pradeshthan in Karnataka. The socio-economic developmentindicators given in Table 6, clearly show that, the progresses in socioeconomicdevelopment in Karnataka is relatively better than in M.P. Lifeexpectancy for both male and female in M.P. is not only lower than thatof Karnataka but also across all states in India (Statistical Abstract, India, 1993 and 2003).Sex-ratio of population in a region, i.e., the ratio of femalesto males in that region is a significant variable. Generally, in a givenregion, the number of females per 1000 males is not equal. It is varyingfrom one region to another. For instance the sex ratio of Kerala ishigher i.e 1058 females per 1000 males. Table-1 shows changes in sexratio in India and both in Madhya Pradesh and Karnataka. As per 2001census the sex ratio of India was 933. Sex-ratio was consistently lowin Madhya Pradesh (920 in 2001) which is also below the nationalaverage. But Karnataka has relatively a better status as compared tothe other states in the country. The sex ratio of 964 per 1000 malesin Karnataka shows higher by 44 over that of Madhya Pradesh. Fromthis angle, we could note that comparatively there is a better statusin sex ratio in Karnataka, and it has kept pace with the all India trends.

A disturbing trend in regard to sex-ratio is observed in states like Haryana(861), Punjab (874), and Uttar Pradesh (898). In this view we couldstate that Karnataka is secure with a better position in sex-ratio, ascompared to the other States of the country. The continuing in sexratio in M.P. is a matter of serious concerned and the state is mostly tojoin the ranks of Haryana, Punjab and Uttar Pradesh in this regard.In order to assess gender inequality in literacy, both in Karnatakaand Madhya Pradesh, the Index of Deprivation (IOD) of Crude LiteracyDevelopment Index (CLDI) has been computed, making use of themethodology of UNDP-HDI frame work.

Gender Inequality in Wages - Here, an attempt has been made to understand gender inequality in theeffective (adult) wage rates in agricultural and non-agricultural sectorsboth in Karnataka and Madhya Pradesh (Human Development Report, INDIA, 1999.). There is a generaldisparity in wages and earnings between men and women for a similarwork. Work participation rate for women in Madhya Pradesh is higher(32.68) when compared to Karnataka (29.29). Here,

one could note that,lower the work participation rate, higher is the gender gap and viceversa.High work participation rate in M.P. may be due to the higherproportion of tribal population among workers where they are engagedin forest based primary and mining activities rather than urban basedtertiary activities. This aspect needs further study to ascertain thenature of women's economic activities. Majority of the population (60-70 per cent) in total populationin both the States depend on agriculture. It indicates that both thestates appearing in agrarian economic situation. From Human Development Report, INDIA, 1999,it canbe seen that, agricultural wage at the national level is Rs. 23.4 per dayfor men and Rs.16.4 per day for women. A similar wage rate variationcan also be seen in both Karnataka and Madhya Pradesh. But thewage rate in non agricultural sector was comparatively better

Summary and Policy Implications - Both Madhya Pradesh and Karnataka are predominantly rural agrarianeconomies. In socio-economic spheres, Karnataka is far better placedthan Madhya Pradesh which is also a progressive state in India. In thisbackground, this comparative study attempts to given an overalldemographic and gender inequality picture of Karnataka and MadhyaPradesh to draw government's attention to the need to bring downgender inequality.India's total decadal growth rate of population declined over theyears from 24.66 per cent in 1981-1991 to 17 per cent in 1991-2001.The demographic variables like birth rate, death rate, infant mortality rateand also fertility in Karnataka have always been below the national average. Unlike in M.P., increased health facilities and programmes initiatedover the years through planned interventions at the national level havebrought down IMR from 80 in 1991 to 66 in 2001 in Karnataka. ThoughIMR is still higher in Madhya Pradesh (28 excess infants' death per 1000live birth) compared to Karnataka. Further the analysis shows that infantdeaths in urban areas of Madhya Pradesh are almost double that of infantdeaths in Karnataka (26 in Karnataka, 53 in Madhya Pradesh). However,life expectancy of men has been found to be higher in Madhya Pradesh.

The women's enrollment in school education is almost 45 percent in Karnataka and 40 per cent in M.P. The sex-ratio in Karnataka issatisfactory and is above the national average. Both men and women inKarnataka have better longevity than in M.P. Life expectancy for menand women in M.P. is almost identical. There is visibly wide gender gap inworkers wage work between agricultural and non-agricultural sectors inboth M.P. and Karnataka.Work participation rate for females in M.P. is much higher (32.68per cent) than Karnataka (29.29 per cent). Hence, M.P. has relativelylower gender gap in work participation over that of Karnataka. Also thewage rate in non-agricultural sector in M.P. is comparatively better thanthat of agricultural sector for both male and female workers. Both thestates have lower wage rate for males and females compared to thenational average. However, there is a significant gender-gap betweenthe All India wage rates of both agricultural and non-agricultural sectorand corresponding rates for Karnataka and M.P.

To bring down the gender inequality and also to achieve further socio-economicdevelopment in M.P. the following suggestions and policy initiativesare recommended:

1. Promote female literacy through planned interventions by blocklevel studies.
2. Augment social infrastructure and lay special emphasis on healthinfrastructure.
3. Provide more employment to the workers in the industrial andtertiary sectors.
4. Provide innovative forms of irrigation to marginal and small farmers.
5. There is also a need to introduce special programmes and schemesfor development of SC/STs for improvement in their socio-economicstatus. Detailed studies are also suggested to tackle cover thechildren school drop-out especially in SC/ST's and weaker sectionsof the society including minorities.

References :-

1. Geske Dijkstra A. and Lucia C.Hammer (1997) Measuring Socio-economic Gender Inequality: Towards An Alternative to the UNDP Gender–Related Development Index, Working Paper Series No.251, Institute of Social Studies, The Netherlands
2. Government of Karnataka (2003) Karnataka at a Glance 2001-2002, Directorate of Economics and Statistics, Bangalore
3. Government of India (2002) Statistical Abstract, India 1999 Ministry of Statistics and Programme Implementation Organization, New Delhi
4. Government of India (2004) Statistical Abstract India 2003, Ministry of statistics and Programme Implementation, New Delhi
5. Jhingan M.L., Bhatt B.K Desi J.N (2003) 'Demography' Vrinda publications New Delhi.
6. Lakshmana C.M. (2005) Spatial Dimensions of Literacy and Index of Development in Karnataka, Working Paper No. 163, Institute for Social and EconomicChange, Bangalore
7. Mahendra K. Premi (1999). Socio-Economic Implications of Demographic Change in India, Anil K Yadav (Ed), IAMR Manpower Journal, vol, xxxv No-3. New Age International (P) Ltd Publishers New Delhi
8. Shanthakumar K.N. (2005) "Fast decline in Child Sex-ratio disturbing" Deccan Herald, Bangalore
9. Sudesh Nagia (2005) Women's Empowerment and Gender Euity, Presidential Address 27th Indian Geography Congress, Bangalore
10. Sulabha Parasuraman (1999). Mortality Transition in India and Its Socio-Economic Consequences, Anil K Yadav (Ed), IAMR ManpowerJournal vol,xxxv No-3. New Age International (P) Ltd Publishers New Delhi
11. UNDP 2003, Human Development Report, New Delhi: OxfordUniversity Press
12. Vijayalakshmi V, B.K.Chandrashekar (2000) Gender Inequality, Diffrences, and Indentities: Women and Local Governance in Karnataka, Working Paper No.72, Institute for Social and Economic Change, Bangalore

मध्यप्रदेश की भील जनजाति में जनसंचार साधन-विकास एवं परिवर्तन

डॉ. संजय जोशी *

प्रस्तावना - जनजातीय समाज भारतीय सामाजिक संरचना का एक प्रमुख आधार है। सदियों से जनजातियां भारतीय जनसंख्या का एक प्रमुख अंग रही है। भारत के सुदूर पूर्व में आसाम से लेकर पश्चिम में राजस्थान तथा उत्तर में हिमालय की तराईयों से लेकर दक्षिण में केरल तक इनका निवास रहा है। भारत में लगभग 240 जनजातियों का निवास माना जाता है। जनजातीय विशेषताओं ने कई मानवशास्त्रियों तथा समाजशास्त्रियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है।

अविभाजित मध्यप्रदेश भारत का सबसे ज्यादा जनजातीय जनसंख्या वाला राज्य रहा है। मध्यप्रदेश में रहने वाली प्रमुख जनजातीयां भील, भीलाला, कोरकू, कमार, सहरिया एवं बेगा है। मध्यप्रदेश में झाबुआ, धार, खरगोन एवं रतलाम जिले भील जनजाति के प्रमुख निवास स्थान हैं। प्रस्तुत शोध कार्य मध्यप्रदेश के रतलाम जिले में निवास करने वाली भील जनजाति में जनसंचार माध्यमों के द्वारा बदलते हुए प्रतिमानों का अध्ययन करने का एक लघु प्रयास है।

सूचना को समाज के विकास का मूल स्त्रोत कहा जा सकता है। मनुष्य जब आदिम युग में रहता था, तब भी सूचना ने मनुष्य में सामाजिक चेतना को उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। गुफाओं और जंगलो में रहने वाले मनुष्य ने सामुदायिक रूप से रहना इसलिए प्रारम्भ किया ताकि वह विभिन्न सूचनाओं का आदान-प्रदान करके अपने जीवन-निर्वाह को सुगम बना सके। संचार समाज की प्रथम पूर्व प्रकार्यात्मक आवश्यकता है। प्राचीन काल से ही संचार मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं मे से एक रहा है पहले इसका संसाधन प्राकृतिक रूप में पक्षियों, मेघों , चांद-तारों से था। इस प्रकार आदिमानव की कंदराओं से अपनी यात्रा का आरम्भ करने वाली संचार तकनीक सेटेलाइट के माध्यम से मुक्त आसमान तक पहुँचे गयी है। वर्तमान में जनसंचार के प्रमुख साधनों में समाचार-पत्र व पत्रिकाएँ, रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा, कम्प्यूटर, मोबाईल व इंटरनेट सम्मिलित हैं।

शोध अवधारणा - जनंसचार से तात्पर्य उन सभी साधनों के अध्ययन एवं विश्लेषण से है, जो एक साथ बहुत बड़ी जनसंख्या के साथ संचार सम्बन्ध स्थापति करने में सहायक होते हैं। जनसंचार माध्यम में संचार शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के 'चर' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है, आधुनिक युग में संचार काफी प्रचलित शब्द है। इसका निर्माण दो शब्दों जन+संचार के योग से हुआ है।

समाजशास्त्रीय अध्ययनों का मुख्य विषय समाज में नवीन तकनीकी या प्रौद्योगिकी से उत्पन्न क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं का मूल्यांकन करना होता है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह विषय और भी महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि संचार का मानव के संबंधों एवं अंत:क्रियाओं पर जो समाजशास्त्रीय अध्ययन के मुख्य विषय हैं, पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। सामाजिक प्राणियों के मध्य होने वाली अंत:क्रियाओं एवं सामाजिक संबंधों की स्थापना में संचार सर्वाधिक महत्वपूर्ण माध्यम का कार्य करता है। संचार के अभाव में किसी भी प्रकार के मानव समाज की स्थापना एवं विकास लगभग असंभव है।। इस क्षेत्र में यह अध्ययन नवीन आवश्यक है, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मानव समाज में संचार की प्रक्रिया भी नई है। आदिमानव से लेकर आधुनिक मानव तक व्यक्तियों में आपस में आवश्यकताओं, इच्छाओं, अनुभवों, ज्ञान आदि का आदान-प्रदान होता रहा है। आदिमानव व्यापार के द्वारा एक दूसरे से सम्पर्क में आते थे। व्यापार के दौरान ही ये अपने आचार विचार का भी आदान-प्रदान करते थे। भारत के आदिम निवासी भारत के अंदर विभिन्न स्थानीय मेलों, कुंभ मेलों, ज्योतिर्लिंगों, चार तीर्थधामों एवं भारत के विभिन्न भागों में स्थिति बावन शक्तिपीठों के दर्शन के दौरान एक दूसरे से मिलते जुलते रहते थे तथा प्राचीनकाल में सूचना एवं संचार के ये ही सर्वाधिक सशक्त केन्द्र हुआ करते थे।

इन्हीं स्थानों के माध्यम से संस्कृति, संस्कार, आचार-विचार एवं रीति-रिवाज का ट्रांसमिशन होता था व पूरे भारत में संस्कारों एवे संस्कृति में समानता देखने को मिलती थी । ये ही वे केन्द्र थे जो आदि भारत के विकास की दिशा को तय करते थे।

भारत के पडौसी देशों के साथ भी हमारे पूर्वजों का सम्पर्क धीरे-धीरे समय के साथ बढ़ने लगा और यह सम्पर्क भी व्यापार के माध्यम से आगे बढ़ा। उत्तरी सीमा पर जो पर्वत हैं, वे भारत को पश्चिमी तथा मध्य एशिया से अलग करते हैं, परंतु इन पर्वतों में जो अनेक दर्रे हैं, वे सम्पर्क के रास्ते हुआ करते थे और सदियों तक लोग इनमें से दोनो ओर आते-जाते रहे हैं। ये पहाड़ी दर्रे विचारों के आदान-प्रदान के भी मार्ग बनें। हमारे भारत के कश्मीर प्रांत में गिलगित एक नगर है, इसका शाब्दिक अर्थ है - सात गठान खोलने वाला अर्थात् इस शहर से उस समय के प्रमुख सात नगरों (काबुल, अरेबिया, तेहरान, काहिरा, ताशकंद, पैशावर एवं खोतान) को रास्ते जाते थे। प्राचीन भारत का यह नगर उस समय का एक प्रमुख व्यापारिक नगर हुआ करता था।

शोध उद्देश्य - जनजातीय समाज की एक प्रमुख विशेषता यह है कि ये अपेक्षाकृत स्थिर एवं परम्परात्मक होते हैं। ये परिवर्तन को शीघ्र स्वीकार नहीं करते हैं ,परंतु 20वीं शताब्दी के अंतिम दौर में संचार और सूचना के क्षेत्र में नई प्रौद्योगिकी का विस्फोट हुआ। जिसने मानव के सभी समाजों को किसी न किसी रुप में प्रभावित किया है। प्रस्तुत शोध कार्य का प्रमुख उद्देश्य जनजातीय समाज में जनसंचार माध्यमों से उत्पन्न होने वाले बदलावों पर ध्यान केन्द्रीत करना है। जनजातीय लोगों में जनसंचार के माध्यम से उनके मानसिक, धार्मिक, शैक्षणिक, मनोरंजन एवं सामाजिक पक्ष में आ रहे परिवर्तन एवं विकास को जानना भी इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य है।

अध्ययन पद्धति - प्रस्तुत अध्ययन हेतु तथ्यों का संकलन मध्यप्रदेश के

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

रतलाम जिले की दो भील जनजातीय बहुल तहसीलों सैलाना एवं बाजना से प्रत्यक्ष निरीक्षण, सूचनादाताओं से व्यक्तिगत साक्षात्कार करके साक्षात्कार अनुसूची, Focused Interview एवं औपचारिक बातचीत के द्वारा किया गया है। सूचनादाताओं के चयन हेतु दोनों तहसीलों में से एक-एक ऐसे गाँव का चयन किया गया, जिसमें कम से कम एक हाईस्कूल हो। दोनों गांवों कुन्दनपुर एवं छावनी झोड़िया में सर्वेक्षण पद्धति के माध्यम से ऐसे लोगों की सूची बनाई गई, जिनके पास जनसंचार का कोई न कोई एक माध्यम जरुर हो। इसके पश्चात देव निदर्शन की एकान्तरण अंकन पद्धति के माध्यम से पचास-पचास परिवारों को चुन लिया गया।

तथ्य विश्लेषण -

सारणी क्रं. 01

सूचनादाताओं की सामाजिक प्रस्थिति

सं.क्रं.	सामाजिक प्रस्थिति	संख्या	प्रतिशत
1	कृषक (जिनके पास 10 बीघा या उससे अधिक सिंचित भूमि है)	12	12 %
2	वेतनभोगी	24	24 %
3	सीमांत कृषक (जिनके पास 5 बीघा से कम भूमि है)	26	26 %
4	भूमिहीन/मजदूरी करने वाले	38	38 %
	कुल	100	100 %

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि भील जनजाति में वेतनभोगी एवं कृषक वर्ग को मिलाकर 36 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं, जो मध्यम वर्ग में आते हैं। ये मध्यम वर्ग ही गाँव की भाषा में खाते-पीते परिवार के रुप में जाने जाते है एवं विभिन्न सामूहिक निर्णयों में गांव के विकास में, योजनाओं के क्रियान्वयन में अग्रणी भूमिका निभाते हैं। गाँव में जनसंचार माध्यमों के द्वारा जनजातीय जीवन में परिवर्तन को उत्पन्न करने में भी यही वर्ग महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वेतनभोगी वर्ग में शिक्षक, पचांयत सचिव, चिकित्सक, पटवारी, बाबू एवं पुलिस विभाग में सहायक उपनिरीक्षक, निरीक्षक, वन विभाग में निरीक्षक इत्यादि शामिल हैं। यही वह वर्ग है, जो अन्य वर्गो के लिये जनसंचार माध्यमों को रखने के संदर्भ में आदर्श की भूमिका निभा रहा है।

सारणी क्रं. 02 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका से स्पष्ट है कि भील जनजाति में जनसंचार का सबसे प्रमुख माध्यम दूरदर्शन है। इसके पश्चात दूसरे स्थान पर रेडियो है, जो भील जनजाति के 54 प्रतिशत परिवारों में उपलब्ध है। कम्प्यूटर एवं मोबाइल उन्हीं लोगों के पास उपलब्ध है, जिनकी आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी है। इस प्रकार स्पष्ट है कि जनसंचार माध्यमों की उपलब्धता आर्थिक स्थिति के साथ जुड़ी हुई है। जिन परिवारों में जनसंचार के आधुनिकतम माध्यम कम्प्यूटर, लैपटॉप एवं एंड्राइड मोबाइल है, उनकी सामाजिक प्रस्थिति भील जनजाति के अन्य परिवारों की तुलना में काफी ऊंची है। जनजातीय समाज के कुछ परिवारों में इन्टरनेट की सुविधा भी देखी गई। विशेषकर वेतनभोगी एवं समृद्ध जनजातीय किसान परिवारों के युवाओं में इन्टरनेट एवं एंड्राइड फोन का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। इसके पश्चात् दूरदर्शन रखने वालों की प्रस्थिति अन्य परिवारों की तुलना में ठीक मानी जाती है।

सारणी क्रं. 03 **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

तालिका स्पष्ट कर रही है कि जनजातीय लोगों में प्रिंट मीडिया अभी भी उन्हीं लोगों में लोकप्रिय है, जो शिक्षित एवं समृद्ध हैं। प्रिंट मीडिया का उपयोग वेतनभोगी वर्ग एवं समृद्ध कृषक वर्ग में ज्यादा पाया गया है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षा एवं जनसंचार के माध्यम में घनिष्ठ संबंध है। शिक्षा ही वह महत्वपूर्ण कारक है जो व्यक्तियों को जनसंचार के प्रति जागरुक बनाने का कार्य करती है।

सारणी क्रं. 04 - सूचनादाताओं की शैक्षणिक प्रस्थिति

सं.क्रं.	शिक्षा का स्तर	संख्या	प्रतिशत
1	निरक्षर	22	22
2	प्राथमिक शिक्षा	25	25
3	माध्यमिक शिक्षा	11	11
4	हाईस्कूल	04	04
5	हायर सेकेण्डरी	08	08
6	स्नातक	16	16
7	स्नातकोत्तर एवं तकनीकी शिक्षा	11 + 03	14
	कुल	100	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि जनजाति में अभी भी 22 प्रतिशत जनसंख्या अशिक्षित है एवं उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों की संख्या 30 प्रतिशत है। इन उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों में से अधिकांश व्यक्ति वेतनभोगी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं और यही वर्ग जनसंचार के दोनों ही प्रिंट एवं इलेक्ट्रानिक मीडिया का सर्वाधिक उपयोग करता है।

आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि जो 22 प्रतिशत निरक्षर वर्ग के व्यक्ति हैं वे रेडियो एवं टीवी से प्रसारित होने वाले अधिकांश कार्यक्रमों को समझने से वंचित रह जाते हैं, इनके लिये रेडियो एवं टीवी केवल मात्र दृष्य देखने एवं सुनने का एक साधन मात्र है। समृद्ध आदिवासी किसान परिवार में जो शिक्षित है, वे दूरदर्शन एवं उनकी शिक्षित संतति इन्टरनेट के माध्यम से कृषि के क्षेत्र में विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से आधुनिक कृषि उत्पादन सिंचाई एवं बीजों का प्रयोग अपने खेत खलियानों में करते हुए देखे गये। इस प्रकार स्पष्ट है कि जनसंचार के माध्यम आदिवासी वर्ग में भी विभिन्न क्षेत्रों में रुपांतरण एवं विकास को प्रशस्त करता है।

सारणी क्रं. 05 - मनोरंजन प्रदान करने वाले साधन

सं.क्रं.	मनोरंजन के साधन	संख्या	प्रतिशत
1	रेडिया से	20	20
2	टीवी से	48	48
3	परम्परागत जनजातीय खेलों के द्वारा	10	10
4	लोकगीत या लोकनृत्य के द्वारा	08	08
5	चौपाल पर हँसी व गपशप करके	14	14
	कुल	100	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि मनोरंजन प्राप्ति का सबसे प्रमुख साधन दूरदर्शन है। जनजातीय लोगों की अपने प्राचीन एवं परम्परागत मनोरंजनों के साधनों से अब दूरी बढ़ती ही जा रही है। केवल 32 प्रतिशत लोग ही ऐसे पाए गए, जो अभी भी अपने परम्परागत मनोरजंन के साधनों से जुड़े हुए हैं। इनमें से भी अधिकांश लोग वे ही हैं जो वृद्ध एवं निरक्षर हैं।

सारणी क्रं. 06 - जनसंचार माध्यमों के उपयोग के प्रमुख उद्देश्य

सं.क्रं.	सामाजिक प्रस्थिति	संख्या	प्रतिशत
1	शैक्षणिक	04	04
2	मनोरंजन	60	60
3	धार्मिक	22	22
4	कृषि ज्ञान वर्धन	14	14
	कुल	100	100

उपर्युक्त तालिका यह बात स्पष्ट कर रही है कि जनजातीय लोगों में जनसंचार के साधन मनोरंजन के प्रमुख साधन के रुप में देखे जाते हैं। इसके पश्चात जनजातीय लोग जनसंचार के माध्यमों को धर्म की पूर्ति हेतु अपने जीवन में प्रयोग मे लाते हैं। जनजातीय लोगों में कृषि एवं शैक्षणिक ज्ञान को बढ़ाने के लिये इन साधनों के उपयोग की रफ्तार अभी कम है, परंतु भविष्य में शिक्षित युवा वर्ग में इस दिशा में उपयोग के संकेत प्राप्त होने लगे हैं।

निष्कर्ष –

1. शोध निष्कर्ष इस बात की ओर स्पष्ट संकेत कर रहे है कि जिन परिवारों में संचार के आधुनिकतम साधन जैसे कम्प्यूटर, टेलीफोन, इंटरनेट, मोबाइल इत्यादि हैं, उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति अन्य परिवारों की तुलना में ऊँची है।
2. संचार के साधनों में भी उनके मूल्य एवं आधुनिकतम उपकरणों को लेकर समाज में उनकी प्रस्थितियों में उतार–चढ़ाव देखने को मिला। जिन परिवारों में कम्प्यूटर, टेलीफोन, इंटरनेट एवं मोाबइल है, उनकी सामाजिक प्रस्थिति उन परिवारों की तुलना में ऊँची है, जिनमें केवल रेडियो, टेलीविजन एवं टेप रिकॉर्डर है।
3. जनसंचार के माध्यमों में आदिवासियों को अपने परम्परागत मनोरंजन के साधनों से दूर कर दिया है। आदिवासी अब अपने परम्परागत मनोरंजन के साधन लोकगीत, लोकनृत्य एवं चौपाल पर गपशप करने के स्थान पर टेलीविजन देखने को प्राथमिकता देते है।
4. जनजातीय लोग भी संचार के माध्यम से बाह्य जगत से जुड़ रहे हैं। संचार के साधन इनके जीवन में एक ओर महत्वपूर्ण परिवर्तन यह ला रहे हैं कि ये अब अपने बच्चों के नाम परम्परागत नामों के स्थान पर आधुनिक नाम रखने लगे हैं।
5. जनजाति की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इनके सदस्यों में जीवन के विभिन्न पक्षों में समरुपता देखने को मिलती है, परंतु इस अध्ययन का एक प्रमुख निष्कर्ष यह है कि जनजाति अब एक समरुपता वाला समूह नहीं रहा है। इसके सदस्यों में जीवन के विभिन्न पक्षों शिक्षा, संचार, आर्थिक व्यवस्था, विवाह एवं नातेदारी में परिवर्तन आ रहा है।
6. जनसंचार के माध्यम जनजाति की आधारभूत विशेषतओं में भी परिवर्तन उत्पन्न कर रहे हैं। विशिष्ट स्थितियों में दो परिवार ऐसे भी मिले जिन्होंने अपनी बेटियों के विवाह बिना वधु–मूल्य लिये हुए किया। इन्होंने हिन्दु विवाह की ही तरह अपनी बेटियों का कन्यादान किया। यह परिवर्तन टेलीविजन पर प्रसारित आस्था, संस्कार एवं साधना चैनल पर विभिन्न धार्मिक कार्यक्रमों विशेष रुप से रामायण सीरियल को देखकर उनके जीवन में घटित हुआ।
7. इस शोध का एक निष्कर्ष यह भी है कि शिक्षा ही एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन है, जो कि व्यक्ति को संचार के प्रति जागरुक बनाता है। जनसंचार के माध्यमों का लाभ भी शिक्षित व्यक्तियों को ही अधिक प्राप्त होता है। जो उच्च शिक्षित हैं, वे तो रेडियो एवं टेलीविजन पर प्रसारित होने वाले प्राय: सभी कार्यक्रमों को ठीक से समझ लेते हैं, परंतु जो व्यक्ति कम शिक्षित हैं, वे इन माध्यमों से प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों को बहुधा समझ ही नहीं पाते हैं।
8. जनसंचार माध्यमों ने आदिवासी किसान परिवारों को खेती का उत्तम तरीका, उन्नत बीज, रासायनिक खाद, कीटनाशक, सिंचाई के कम लागत के साधनों के प्रति जागरुक किया है।
9. जनजातीय युवा वर्ग न्यू मीडिया जिसमें इन्टरनेट, पॉडकास्ट के सहारे उन्नति और विकास के पथ पर अग्रसर हो रहे हैं। मौसम की स्थिति, कृषि से संबंधित ज्ञान, धार्मिक प्रवचन एवं शैक्षणिक प्रसारणों को वे घर बैठे अपने लैपटाप व मोबाइल पर पा लेते हैं। इससे उनके धन, समय एवं शक्ति की बचत होती है।

सुझाव –

1. जनजातीय समाज को देश की मुख्य धारा में लाने हेतु जनसंचार के साधनों की उपलब्धतता उनके क्षेत्रों में तेजी से पहुंचे इस हेतु शासन एवं निजी कम्पनियों को दूरसंचार सेवाएँ उन क्षेत्रों में पहुंचाने का कार्य प्राथमिकता के आधार पर करना चाहिये।
2. मोबाइल टॉवर, विद्युत पोल एवं कनेक्टीविटी की उपलब्धतता आदिवासी क्षेत्रों में प्राप्त हो सके इस ओर भी विशेष प्रयास किये जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1 Doshi, J.K. 1974 **Social Structure and Cultural Change in Bhil Village**, Delhi : New Heights

2 D.S. Das, Biswajit 1997 **"Mass Media"**, Report on Fifty years of Communication Growth in India, Mimeographed

3 Doordarshan 96 **Audience Research Unit** Directorate General Doordarshan April 1996

4 Dissanayake,W. 1998 **Communication, Knowledge and a Post Industrial Society: "The Need for values Centered Approach"**. Seoul Wooseak Publishing Co.

5 Gideens, Anthony 2001 **Sociology,** 4th Edition, U.K.: Polity Press

6 Majumdar, D.N. 1958 **Caste and Communication in an Indian Village**, Bombay: Asia Publishing House.

7 Naik, T.B. 1956 **The Bhils: A Study**, Delhi : Bahrtiya Adimjati Sevak Sangh

8 Singh, Yogendra 1993 **Social Change in India Crisis and Resilience** , New Delhi : Har Anand Publications, P-191

9 Singh, Yogendra 1973 **Modernization of Indian Tradition**, New Delhi : Thompson Press

10 District Statical Office Ratlam Vikas Khand Ke Pramukh Ankde 2004

11 Census 2001 District Census Hand Book District Ratlam

सारणी क्रं. 02

जनसंचार के साधनों की उपलब्धता

सं.क्रं.	सामाजिक प्रस्थिति	टीवी	टेलीफोन	रेडियो	कम्प्यूटर/ लैपटाप	सेलफोन	एंड्राइड मोबाइल	कुल
1	कृषक (जिनके पास 10 बीघा सिंचित भूमि है)	12	12	02	08	7	5	30
2	वेतनभोगी	24	20	07	16	11	13	49
3	सीमांत कृषक (जिनके पास 5 बीघा से कम भूमि है)	20	02	15	02	22	4	33
4	भूमिहीन/मजदूरी करने वाले	15	-	30	-	32	-	38
	कुल	71	34	54	26	72	22	150

सारणी क्रं. 03

प्रिंट मीडिया की जनजातीय परिवारों में उपलब्धता

क्रं.	सामाजिक प्रस्थिति	समाचार पत्र	मैगजीन	कुल
1	कृषक (जिनके पास 10 बीघा या उससे अधिक सिंचित भूमि है)	10	02	12
2	वेतनभोगी	22	06	28
3	सीमांत कृषक (जिनके पास 5 बीघा से कम भूमि है)	05	-	05
4	भूमिहीन/मजदूरी करने वाले	02	-	02
	कुल	39	08	47

****

शिक्षित बेरोजगारी - एक समस्या

डॉ. मनोज वानखेड़े *

शोध सारांश – बेरोजगारी आधुनिक युग की विकट समस्या है व हमारे देश की ज्वलंत समस्या है। यह मानवीय समस्याओं में सर्वाधिक घातक और अन्य समस्याओं की जननी है। समाज में व्याप्त निर्धनता, भ्रष्टाचार, आतंक, शोषण , बेइमानी , और अंशाति बेरोजगारी की ही देन है। यह भारत की सर्वाधिक चिर्तित समस्या है। राजनीतिक सम्मेंलनों , आम सभाओं, छात्रों की सभाओं, राज्यों की विधानसभाओं और लोकसभा आदि में बेरोजगारी की चर्चा अवश्य होती है। दुर्भागयवश यह समस्या निंरतर भयंकर होती जा रही है। शिक्षा के गिरते हुए स्तर और छात्र अंसतोष का प्रमुख कारण बेरोजगारी हैं। स्कुल, कालेजों विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानों और विश्वविद्यालयों से शिक्षा प्राप्त करोडों युवक–युवतियॉ काम की तलाश में इधर–उधर भटकते दिखाई देते है। कुछ को काम मिल जाता है शेष बेरोजगारी का अभिशाप झेलते है। अनेक युवक युवतियों का शोषण होता है, अनेक ठगी का शिकार होते है और कुछ तो उबकर आत्महत्या तक कर लेते हैं। जिस देश में नवयुवकों की दशा इतरी सोचनीय हो तो क्या वह राष्ट्र प्रगतिशील कहलाने का अधिकारी है ? **सर विलियम बेवरीज ने बेरोजगारी के संबध में लिखा है कि 'संसार में पॉच आर्थिक राक्षस मानव जाति को ग्रस्त करने के लिए तैयार है– निर्धनता, अज्ञानता, गन्दगी, बीमारी, ओर बेरोजगारी। इन सबमें सर्वाधिक भयंकर बेरोजगारी है। बेरोजगारी की स्थिति न केवल बेरोजगार व्यक्ति के लिए खतरनाक होती है वरन इससे समाज व राष्ट्र को भी हानि होती है।'**
शब्द कुंजी :– भारत में बेरोजगारी एक व्यापक समस्या के रूप में घातक हो रही है।

प्रस्तावना – बेरोजगारी का अर्थ है काम करने योग्य और काम करने के इच्छुक युवक युवतियों के लिए काम का अभाव। जब कोई शारारिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति काम करना चाहता है, काम पाने के लिए वह भरसक प्रयास करता है। यहाँ तक वह प्रचलित मजदूरी से कम पर भी काम करने को तत्पर होता है, फिर भी उसे काम नहीं मिल पाता है, तो उस व्यक्ति को बेरोजगार कहा जाता है और उसकी यही परिस्थिति बेरोजगारी कहलाती है। पागल, अपाहिज, भिखारी, साधु, सन्यासी, आदि को बेरोजगार नही कहा जा सकता है क्योंकि ये तो शारीरिक रूप से स्वस्थ है लेकिन मानसिक असमर्थता के कारण वह कार्य नहीं कर सकता हैं। लूले, लगड़ें, अपाहिज, अंधे, विकालांग आदि मानसिक रूप से स्वस्थ होते है लेकिन शारीरिक रूप से कार्य करने हेतु अक्षम होते है। साधु सन्यासी कुछ भिखारी जो शारीरिक और मानसिक रूप से समर्थ होने के बावजूद काम करना नहीं चाहते है । अतएवं इन्हें बेरोजगार नहीं कहा जा सकता है।

बेरोजगारी के अंतर्गत वे ही व्यक्ति आते है, जो शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ हो, काम करना चाहते हों, और काम पाने के लिए प्रयत्नशील हो, इसके बावजूद उन्हें काम न मिल रहा हो। इस बेरोजगारी के लिए हमारा समाज ढोषी है। अत: बेरोजगारी समस्या है।

विद्वानों ने बेरोजगारी की निम्न परिभाषाएँ दी है –

(1) कार्ल प्रिबम – 'बेरोजगारी श्रम बाजार की वह दशा है जिसमें श्रम शक्ति उपलब्ध मॉगों से अधिक होती है।

(2) फेयरचाइल्ड – 'बेरोजगारी मजदूरी करने वाले सामान्य वर्ग के एक सदस्य का सामान्य समय में सामान्य वेतन पर तथा सामान्य कार्य करने की दशाओं में वेतन मिलने वाले काम से अनिच्छापूर्वक और जबर्दस्ती पृथक्करण है।'

इस प्रकार बेरोजगारी का तात्पर्य उस व्यक्ति की निष्क्रियता से है जो काम करने की इच्छा और प्रयत्न आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए करता है।

बेरोजगारी के तत्व – परिभाषाओं के आधार पर बेरोजगारी के निम्न तत्व निर्धारित किये जा सकते है–

(1) इच्छा– बेरोजगारी के लिए पहली आवश्यक दशा है इच्छा। यदि कोई व्यक्ति काम करना नहीं चाहता है, तो उसे बेरोजगार नहीं कहा जाएगा।

(2) योग्यता–केवल इच्छा मात्र रखकर काम न मिलने पर ही कोई व्यक्ति बेरोजगार नहीं कहला सकता। यहॉ एक और भी दशा आवश्यक हो जाती है और वह शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से योग्य होते हुए भी इच्छा रखने पर कार्य नहीं मिलना, तभी व बेरोजगार कहला सकता है।

(3) प्रयत्न – इच्छा और योग्यता रखते हुए भी यदि कोई व्यक्ति किसी कार्य को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न नहीं करता तो वह बेरोजगारी की दशा नहीं उत्पन्न कर सकता। अस्तु केवल इच्छा ही नहीं अपितु प्रयत्न भी बेरोजगारी का आवश्यक तत्व है।

(4) आर्थिक उद्देश्य – इच्छा, योग्यता और प्रयत्न के रहते हुए भी यदि व्यक्ति आर्थिक उद्देश्य को लेकर कार्य प्राप्त करता है।

बेरोजगारी के कारण – भारत में ही बेरोजगारी की समस्या विश्व व्यापी है। यह किसी न किसी रूप में सभी देशों, समुदायों में पायी जाती है। बेरोजगारी के निम्नलिखित प्रमुख कारण है –

(1) जनसंख्या वृद्धि निरंतर बढ़ती हुई बेरोजगारी का प्रमुख कारण है।
(2) शिक्षा प्रणाली ऐसी है जिसमें प्रमाण–पत्र और उपाधि सरलता से मिल जाती है इसलिए प्रतिवर्ष शिक्षित बेरोजगारों की बेहताशा वृद्धि होती जा रही है।
(3) नौकरियों की संख्या सीमित होना और बेरोजगारों की संख्या असीमित होना।
(4) स्नातकों की भरमार।
(5) औद्योगिकरण बेरोजगारी का प्रमुख कारण है।
(6) कम्प्युटर मशीनरी एवं श्रम शक्ति में बहुत बचत यह भी बेरोजगारी वृद्धि

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

का कारण है।

(7) भिक्षावृति के साथ बेकारी का बढ़ना क्योंकि हमारे देश में भिक्षा या दान देना पुण्य कार्य माना जाता है।

(8) पूॅंजी तथा श्रम में असंतुलन।

(9) देश में पिछड़ी हुई सामाजिक दशा।

(10) उद्योगों के विकेन्द्रीकरण का अभाव

(11) व्यापार के कारण उतार-चढ़ाव।

(12) भौतिक कारण - में अतिवृष्टि, बाढ़, पाला, अकाल आदि के कारण खेतों का विनाश होना और बेरोजगारी का बढ़ना स्वाभाविक है।

बेरोजगारी के परिणाम - बेरोजगारी के कुप्रभाव अत्याधिक भयंकर होते है। इससे युवकों में अनुशासनहीनता ,कुंठा, अनैतिकता, अपराध तथा पलायन की प्रवृति उत्पन्न होती है।

प्रमुख परिणाम निम्नलिखित है -

(1) आवेदकों की अत्याधिक संख्या - देश में बेरोजगारी बढ़ने के साथ-साथ एक पद के लिए आवेदन करने वालों की संख्या में भी वृद्धि हो रही है। कभी-कभी तो पद व आवदकों का अनुपात 1:100 से भी अधिक होता है। इसी प्रकार चतुर्थ श्रेणी के पदों तक के लिए स्नातक भी आवेदन करते है। यह तथ्य देश में बेरोजगारी की चरम सीमा को बताता है।

(2) अपराध प्रवृति - बेरोजगारी बढ़ने के साथ-साथ देश में अपराध व हिंसा तेजी से बढ़ती जा रही है। युवकों द्वारा चलाए जाने वाले आन्दोलनों में राष्ट्रीय सम्पत्ति को अत्याधिक नुकसान पहुॅंचाया जाता है। रोजगार न मिलने पर युवा वर्ग अपराधी प्रवृत्तियों में लिप्त हो जाता है।कुछ राज्यों में बढ़ता हुआ उग्रवाद इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

(3) मानसिक आघात व विक्षिप्तता - बेरोजगारों को सार्वधिक परेशानी उस समय होती है जब नियुक्तियों के स्थान पर पैसे या सिफारिश को महत्व दिया जाता है। ऐसी स्थिति में बरोजगारों का कोई भी साथ नहीं देता है और उन्हें अत्याधिक मानसिक आघात पहुॅंचता है। इससे युवक मानसिक रूप से विक्षिप्त तक हो जाता है। इस स्थिति के कारण भी युवक वर्ग हिंसावादी तथा सरकारी व्यवस्था व प्रशासन विरोधी बनता जा रहा है।

(4) प्रतिभा का पलायन - बेरोजगारी की समस्या ने प्रतिभा पलायन की समस्या को जन्म दिया। देश में जो प्रतिभाएॅं बेकार रहती हैं वही विदेश में जाकर विश्वविख्यात हो जाती है। संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार विकासशील राष्ट्रों में डाक्टर व इंजीनियर अत्याधिक मात्रा में पलायन कर रहे है। इसमें भारतीयों की संख्या सर्वाधिक है।

खाली दिमाग शैतान का घर कहा गया है। बेकार व्यक्ति के मन में निराशा, हीनभावना, ईर्ष्या, द्वेष आचरण होता है अतएव बेकार व्यक्ति का आचरण भी विध्वंसात्मक होता है। ऐसे व्यक्ति का चरित्र और सामाजिक स्तर गिर जाता है और वह पतनोन्मुख होता है। यही कारण है कि बेकारी की स्थिति में चोरी, डकैती, राहजनी, लूट, हत्या, अनाचार, भ्रष्टाचार, बेइमानी व धोखा आदि में तेजी से वृद्धि होती है। बेरोजगारी के फलस्वरूप गरीबी के कारण लोगों का स्वास्थ्य गिर जाता है और लोग जुऑ, शराब ,डकैती, चोरी सद्दश्य अनैतिक कार्यो की और उन्मुख होते है। बेरोजगारी के कारण जनशक्ति का पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता है और राष्ट्र प्रगति के स्थान पर पतन की ओर अग्रसर हो जाता है।

बेरोजगारी दूर करने के सुझाव-

1. बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिए तेजी से बढ़ रही जनसंख्या पर नियंत्रण करना होगा।
2. कुटीर उद्योगों को बढ़ावा दिया जाए।
3. बेरोजगारी निवारण के लिए रोजगार परक और व्यावसायिक शिक्षा पर जोर देना होगा जिससे शिक्षित बेरोजगारी कम की जा सकेगी।
4. स्वत: रोजगार पर बल देना होगा।
5. रोजगारमूलक शिक्षा और स्वत: रोजगार शिक्षित बेरोजगारी दूर की जा सकती है।
6. देश में तेजी से औद्योगिकरण पर जोर दिया जाए। कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसरों में वृद्धि की गुंजाइश है।
7. रोजगार कार्यालयों की कार्यपद्धति में सुधार और शिक्षण एवं मार्गदर्शन केन्द्रों के विस्तार द्वारा भी बेरोजगारी निवारण में मदद मिलेगी।
8. हमारी उद्योग नीति पूॅंजी प्रधान है इसे श्रम प्रधान बनाकार बेरोजगारी को कम किया जा सकता है।

रोजगार देना सरकार का सर्वप्रथम और महत्वपूर्ण कार्य है। इस दिशा में सरकार ने ठोस कदम भी उठाए है। जनसंख्या वृद्धि रोकने के प्रयास किए जा रहे हैं। शिक्षा को रोजगारपूरक और व्यावसायिक बनाने के प्रयास किए जा रहे है। स्वत: रोजगार अपनाने के लिए प्रधानमंत्री रोजगार योजना, ट्राइसेम योजना आदि चलाई जा रही है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण खेतीहर मजदूर रोजगार गारण्टी कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला और बाल विकास कार्यक्रम जवाहर रोजगार योजना बेरोजगारी निवारण की दिशा में चलाए जा रहे है। साथ ही शासकीय सेवा में पद निर्मित कर नई भर्ती की जा रही है जिससे शिक्षित बेरोजगारी एवं बेरोजगारी दूर करने के शासकीय प्रयत्न किये जा रहे है।

शिक्षित शहरी युवकों को स्वरोजगार प्रदान करने की योजना और शहरी गरीबों के लिए स्वरोजगार प्रदान करने की योजना ओर शहरी गरीबों के लिए स्वरोजगार कार्यक्रम चलाए जा रहे है।

निष्कर्ष - आज रोजगार संबधी समस्त कार्यक्रमों की पूर्ण ईमानदारी से लागू करने की आवश्यकता है। बेरोजगारों को रोजगार देना सरकार और समाज का उत्तरदायित्व है, इसके लिए सबके सहयोग की आवश्यकता है। देश की बढ़ती हुई जनंसख्या ने नीति निर्माता एवं राजनेताओं को झझोंड़ कर रख दिया है। देश में शासकीय व अशासकीय एवं कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसर उत्पन्न किये जा रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नाटाणी, प्रकाश नारायण एवं - भारत में सामजिक समस्याऍं - पोइन्टर पब्लिकेशन्स शर्मा, प्रज्ञा जयपुर, 2000 पृ.सं. 174-175
2. मदन, डॉ जी. आर. - भारत में सामाजिक समस्याएं - विवके प्रकाशन दिल्ली: 2000 पृ.सं. 239-240
3. सिहं , एम.एन. : आधुनिक समाजशास्त्रीय निबन्ध - विवके प्रकाशन दिल्ली: 2000 पृ.सं. 127-128
4. लवानिया, डॉ एम.एन. - भारतीय सामाजिक व्यवस्था - रिसर्च पब्लिकेशन्स जैन, शशी में जयपुर पृ.सं. 429

****

जनजातीय विकास - मध्यप्रदेश शासन की पहल

डॉ. उमा लवानिया *

प्रस्तावना – भारत एक विशाल देश है, जिसमें अनेक विविधताएँ हैं। हमारा भारत प्राचीन काल से ही विभिन्न धर्मों, मतों, सम्प्रदायों, संस्कृतियों, प्रजातियों, जातियों और जन-जातियों की कर्मभूमि रहा है। इन सभी ने भारत की सामाजिक व्यवस्था और संगठन के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है और उन्हें एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया है। जातिप्रथा, जनजाति, ग्राम व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, आश्रम व्यवस्था, कर्म एवं पुनर्जन्म के सिद्धान्त और संस्कार व्यवस्था भारतीय समाज के प्रमुख आधार हैं। एक जनजाति वह क्षेत्रीय मानव समूह है, जो भू-भाग, भाषा, सामाजिक नियम और आर्थिक कार्य आदि विषयों में एक समानता के सूत्र में बँधा होता है।

भारत की सम्पूर्ण जनसंख्या का लगभग 8 प्रतिशत भाग आदिम जातियों या जनजातियों द्वारा निर्मित है। सन् 1981 की जनगणना के अनुसार भारत में 5.16 करोड़ जनसंख्या जनजातियों की थी, जो बढ़कर सन् 1991 में 6.78 करोड़, सन् 2001 में 8.43 करोड़ एवं सन् 2011 में लगभग 10 करोड़ से अधिक हो गई है। अधिकतर जनजातियाँ ऐसे भौगोलिक क्षेत्रों में निवास करती हैं, जहाँ सभ्यता का विकास बहुत कम हो पाया है।

मध्यप्रदेश एक ऐसा राज्य है, जहाँ जनजातियों की जनसंख्या सर्वाधिक है। गौंड़, बैंगा, भील, कमार, भारिया, मुरिया, भुजिया, ओरांव, अगरिया, मुण्डा, नट, खोंड, माझी, सहरिया, परजा, गढावा, हलवा, कमाट, भिलाला, बहेलिया आदि मध्यप्रदेश की जनजातियाँ हैं।

मध्यप्रदेश में जनजातीय कल्याण एवं विकास की योजनाएँ –

1. **प्रांतीय स्तर –** मध्यप्रदेश में जनजातीय कल्याण एवं विकास से संबंधित विभिन्न योजनाओं के आँकलन एवं क्रियान्वयन के लिए एक पृथक् मंत्रालय है। इस मंत्रालय द्वारा निर्धारित कार्यरूप में परिणत करने के लिए स्वतंत्र रूप से आदिम जाति कल्याण विभाग कार्यरत् है। इसका मुख्यालय भोपाल में है।
2. **संभागीय स्तर –** प्रत्येक संभाग में इसके क्षेत्रीय कार्यालय हैं। संभागीय कार्यालय में उपसंचालक प्रभारी अधिकारी होता है। इसका दायित्व अपने संभाग में जनजातीय कल्याण से संबंधित समस्त संचालन, नियमन, नियंत्रण एवं संगठन करना रहता है। यह कार्यालय शासन एवं जिला स्तर के कार्यालयों के बीच सम्पर्क सूत्र का भी कार्य करता है।
3. **जिला स्तर –** जिला स्तर पर जनजातीय समस्याओं के आँकलन, योजनाओं के निर्धारण और क्रियान्वयन के लिए जिला संगठन आदिम जाति कल्याण विभाग का प्रमुख अधिकारी होता है। वह परियोजना अधिकारी एवं जिलाध्यक्ष के प्रशासनिक नियंत्रण में रहता है तथा अपने कार्यों के लिए उनके प्रति उत्तरदायी होता है।?

अनुसूचित जाति/जनजाति विकास – अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्रावास व आश्रमशालाएँ –

- **उद्देश्य –** अनुसूचित जाति/जनजाति एवं विमुक्त जाति के छात्र-छात्राओं को अध्ययन हेतु आवासीय एवं शैक्षणिक सुविधा उपलब्ध कराना।
- इस योजना के तीन भाग हैं –

1. प्री-मैट्रिक छात्रावास –

- इन छात्रावासों में कक्षा 6-12 तक के छात्र-छात्राओं को प्रवेश दिया जाता है।
- इन छात्रावासों में प्रवेश हेतु आयु-सीमा का कोई बंधन नहीं है।
- छात्रों के लिए घर से दूरी का बंधन 8 किमी. और छात्राओं के लिए 3 किमी. है।
- छात्र-छात्राओं को प्रति माह शिष्यवृत्ति भी प्रदान की जाती है।

2. आश्रम शालाएँ –

- इनमें छात्र-छात्राओं को आवासीय सुविधा के अन्तर्गत शैक्षणिक सुविधा और शिष्यवृत्ति प्रदान की जाती है।
- इनमें छात्र-छात्राओं के लिए कक्षा 1 से 8 तक पृथक् कक्षाएँ आयोजित की जाती हैं।

3. पोस्ट-मैट्रिक छात्रावास –

- इनमें कक्षा 11वीं एवं उससे ऊपर की कक्षाओं में छात्र-छात्राओं को प्रवेश दिया जाता है।
- इनमें छात्र-छात्राओं को आगमन-भत्ते एवं छात्रवृत्ति की पात्रता होती है।

छात्र-गृह योजना –

- **उद्देश्य –** मैट्रिकोत्तर कक्षाओं में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति के विद्यार्थियों को छात्रावास में स्थान रिक्त न होने पर आवासीय सुविधा प्रदान करना।
- इस योजना के अन्तर्गत विद्यार्थियों के आवासीय व्यय की प्रतिपूर्ति की जाती है तथा उन्हें छात्रावासीय दर पर मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाती है।
- **पात्रता के लिए शर्तें –**

1. पाँच या अधिक विद्यार्थियों को एक साथ निवास करना चाहिए।
2. इन विद्यार्थियों को नियमित विद्यार्थी के रूप में पंजीकृत होना चाहिए।
3. पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति के लिए सभी आवश्यक शर्तें पूरी की जानी चाहिए।
4. केवल वे ही विद्यार्थी यह सुविधा प्राप्त कर सकते हैं, जिन्हें छात्रावास में स्थान न मिल पाया हो।

राज्य प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति –

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) प्रवर श्रेणी शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

- **उद्देश्य –** कक्षा 1 से 10 तक में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति के विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्त करने में आर्थिक-सहायता के लिए छात्रवृत्ति प्रदान करना।
- **पात्रता के लिए शर्तें –**

1. हितग्राही मध्यप्रदेश का मूल निवासी हो।
2. वह किसी मान्यता प्राप्त संस्था का नियमित छात्र/छात्रा हो।
3. आयु-सीमा का कोई बंधन नहीं है।

राज्य पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति –

- **उद्देश्य –** कक्षा 11 से लेकर स्नातकोत्तर कक्षाओं, जिसमें मेडीकल, इंजीनियरिंग, आयुर्वेदिक भी शामिल हैं, तक में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति के विद्यार्थियों को शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करने हेतु छात्रवृत्ति प्रदान करना।
  कक्षा 11वीं एवं 12वीं के छात्रावासीय छात्रों को अतिरिक्त पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति –
- **उद्देश्य –** कक्षा 11वीं एवं 12वीं अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति के ऐसे विद्यार्थी जो छात्रावास में प्रवेशित हैं, उन्हें प्री-मैट्रिक छात्रावासों में निवासरत विद्यार्थियों के समान शिष्यावृत्ति प्रदान करना।

विशेष पिछड़ी जनजाति के बालकों को छात्रवृत्ति –

- यह योजना 2005-06 में आरंभ की गई।
- इस योजना के अन्तर्गत सहरिया, भारिया और बैगा जनजातियों के पहली से पाँचवी कक्षा तक के विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है।
- **पात्रता –** शासकीय अथवा मान्यता-प्राप्त शिक्षण-संस्थाओं में पढ़ने वाले विशेष पिछड़ी जनजाति के समस्त बालक इस योजना हेतु पात्रता रखते हैं।

उत्कृष्ट खिलाड़ियों के लिए प्रोत्साहन योजना –

- इस योजना के अन्तर्गत प्रतिभाशाली आदिवासी खिलाड़ियों के प्रशिक्षण के माध्यम से उनकी प्रतिभा को निखारने का प्रयास किया जाता है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले (अर्थात् स्वर्ण, रजत एवं काँस्य पदक प्राप्त करने वाले) आदिवासी खिलाड़ियों को निर्धारित दरों पर राशि प्रदान की जाती है। प्रतिभाशाली आदिवासी छात्र-छात्राओं के लिए नेतृत्व-विकास शिविर का आयोजन –
- इस योजना के अन्तर्गत प्रदेश के 19 आदिवासी बाहुल्य जिलों में कक्षा 10 की बोर्ड-परीक्षा में जिले से सर्वाधिक अंक अर्जित करने वाले आदिवासी वर्ग के एक छात्र व एक छात्रा को प्रति वर्ष 23-28 जनवरी के बीच भोपाल आमंत्रित कर नेतृत्व क्षमता का विकास करने हेतु प्रशिक्षण दिया जाता है। इस दौरान उन्हें ऐतिहासिक/दर्शनीय स्थलों का अवलोकन कराया जाता है और उनकी महत्वपूर्ण व्यक्तियों से मुलाकात भी कराई जाती है।
- **पात्र हितग्राही –** 10 वीं बोर्ड परीक्षा में जिले में सर्वाधिक अंक अर्जित करने वाला एक आदिवासी छात्र व एक आदिवासी छात्रा।

विद्यार्थी-कल्याण –

- इस योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के आर्थिक रूप से निर्बल विद्यार्थियों को निम्नलिखित विशिष्ट परिस्थितियों में आकस्मिक आवश्यकता की पूर्ति हेतु आर्थिक सहायता दी जाती है, जिससे वे अपना अध्ययन जारी रख सकें –

1. आकस्मिक विपत्ति में सहायता।
2. किसी रोग के निदान हेतु सहायता।
3. विशेष अभिरूचि को प्रोत्साहित करने हेतु सहायता।
4. खेल-कूद, लोक-नृत्य, लोक-गीत आदि के प्रदर्शनों में भाग लेने हेतु सहायता।
5. विद्यार्थी-कल्याण से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों हेतु सहायता।?

- **पात्रता के लिए शर्तें –**

1. हितग्राही को शाला का नियमित विद्यार्थी होना चाहिए।
2. उसे आर्थिक रूप से निर्बल होना चाहिए।

जनश्री बीमा योजना –

- इस योजना के अन्तर्गत विशेष पिछड़ी जातियों भारिया, बैगा एवं सहरिया के किसी सदस्य की अप्राकृतिक मृत्यु हो जाने पर 20 हजार रूपये की राशि का भुगतान किया जाता है।

कन्या साक्षरता प्रोत्साहन –

- इस योजना का उद्देश्य अनुसूचित जाति/जनजाति की कन्याओं को अपनी शिक्षा जारी रखने हेतु प्रोत्साहित करना एवं उनकी आर्थिक सहायता करना है।
- योजना के अन्तर्गत कक्षा 6, 9 एवं 11 में प्रवेश लेने वाली अनुसूचित जाति/जनजाति की कन्याओं को वार्षिक दर पर प्रोत्साहन-राशि दी जाती है। यह राशि छात्रवृति के अतिरिक्त होती है। अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग की बालिकाओं को नि:शुल्क साइकिल **प्रदाय योजना–**
- इस योजना के अन्तर्गत साक्षरता को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से कक्षा 9वीं में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग की बालिकाओं को नि:शुल्क साइकिल प्रदाय की जाती हैं।
- **पात्रता –** इस योजना की पात्रता उन बालिकाओं की होगी, जो कक्षा 8वीं उत्तीर्ण करने के उपरान्त अपने स्वयं के गाँव में शासकीय शाला न होने के कारण किसी अन्य गाँव की शासकीय शाला में प्रवेश लेती हैं।

उत्कृष्ट छात्रावास योजना –

- इस योजना का उद्देश्य अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के 60 प्रतिशत से अधिक अंक अर्जित करने वाले मेधावी छात्र-छात्राओं को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है।
- **योजना का स्वरूप –** अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के कक्षा 9वीं से 12वीं तक के मेधावी छात्र-छात्राओं को गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से छात्रावास संचालित किये जाते हैं। इन छात्रावासों में न्यूनतम 60 प्रतिशत अंक पाने वाले छात्र-छात्राओं को मेरिट के आधार पर प्रवेश दिया जाता है। इन छात्रावासों में नि:शुल्क आवास, पौष्टिक आहार व नाश्ता, विषयवार कोचिंग, लाइब्रेरी, कम्प्यूटर-प्रशिक्षण, खेलकूद आदि की सुविधाएँ प्रदान की जाती है। इन छात्रावासों में उपचारात्मक शिक्षण की दृष्टि से गणित, विज्ञान एवं अंग्रेजी विषयों का विशेष प्रशिक्षण भी प्रदान किया जाता है।

आवासीय विद्यालय –

- इस योजना का उद्देश्य अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के कक्षा 6 से 12 तक के मेधावी छात्र-छात्राओं को आवासीय सुविधा सहित विज्ञान एवं वाणिज्य विषयों की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है।
- **योजना का स्वरूप –** आवासीय विद्यालयों की स्थापना कक्षा 6 से 12 तक के मेधावी छात्र-छात्राओं को विज्ञान एवं वाणिज्य संकाय के

विषयों की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से की गई है। इन विद्यालयों में 60 प्रतिशत या इससे अधिक अंक अर्जित करने वाले छात्र-छात्राओं को प्रवेश दिया जाता है, लेकिन एक वर्ष अनुत्तीर्ण हो जाने वाले छात्र-छात्राओं को आगामी वर्ष हेतु प्रवेश की पात्रता नहीं होती। शिक्षण कार्य हेतु इन विद्यालयों में योग्य एवं अनुभवी शिक्षकों की सेवाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं।

प्रतिष्ठित पब्लिक/सैनिक स्कूलों में प्रवेश-योजना :

- इस योजना का उद्देश्य सैनिक स्कूलों तथा प्रतिष्ठित पब्लिक स्कूलों में अध्ययनरत् अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के विद्यार्थियों के शुल्क की प्रतिपूर्ति करना है।
- **योजना का स्वरूप –** योजना के अन्तर्गत सैनिक स्कूल, रीवा तथा सिंधिया पब्लिक स्कूल, ग्वालियर; दिल्ली पब्लिक स्कूल, भोपाल; डेली कॉलेज, इन्दौर जैसे विशिष्ट पब्लिक स्कूलों में अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के मेधावी एवं होनहार विद्यार्थियों हेतु 10-10 सीटें आरक्षित कराई गई हैं। जिन विद्यार्थियों का इसमें चयन हो जाता है, उनकी स्कूल-फीस एवं अन्य शुल्कों का वहन विभाग द्वारा किया जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. जनजातीय समाज का समाजशास्त्र - एम.एल.गुप्ता, डॉ.डी.डी.शर्मा
2. समाज शास्त्र - डॉ.रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, डॉ. भरत अग्रवाल
3. समाज शास्त्र - डॉ.अशोक डी.पाटिल, डॉ.एस.एस.भदौरिया
4. योजना - अप्रैल 2016
5. दैनिक भास्कर - अप्रैल 2014

****

नवबौद्ध या बौद्ध ? एक शोध अध्ययन

निलेश वासनिक * डॉ. अर्चना गौर **

प्रस्तावना - डॉ. अम्बेडकर ने अपने लाखों दलित समर्थको के साथ 14 अक्टूबर, 1956 को दीक्षाभूमि, नागपुर मे बौद्ध धर्म मे धम्म-दीक्षा(धर्मान्तरण) गृहण की। धर्मान्तरण के कुछ माह बाद डॉ. अम्बेडकर की मृत्यु हो गई। यह एक विचारणीय तथ्य है कि डॉ. अम्बेडकर के प्रयास से भारत में हजारो वर्षो के पश्चात बौद्ध धर्म की पुन: स्थापना हुई, उन्होंने नवबौद्ध शब्द का सुत्रपात नहीं किया। 'नवबौद्ध' या 'बौद्ध' शब्द भारतीय परिप्रेक्ष्य में मुख्यत: बौद्ध धर्म में धर्मान्तिरित दलितों हेतु प्रयुक्त होता हैं। नवबौद्ध शब्द से आशय नव धर्मान्तरित बौद्धों से नही अपितु जो वैचारिक रूप से बौद्ध धर्म की कुछ रूढ़िगत मान्यताओं जैसे कर्मकाण्ड, ईश्वरवाद आदि से भिन्नता व तटस्थता प्रकट करने हेतु प्रयुक्त किया गया था। कुछ धर्मान्तरित लोगों ने डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रतिपादित बौद्ध धर्म की परंपरागत भारतीय बौद्ध धर्म से भिन्नता होने के कारण अपने को नवबौद्ध शब्द से सम्बोधित किया, जिसे शासन द्वारा अधिमान्यता मिलने के कारण 'नवबौद्ध' नामकरण सम्पूर्ण भारतीय दलित बौद्धो के लिए प्रयुक्त किया जाने लगा। इस संदर्भ में डॉ. भदन्त आनन्द कौशलयापन की टिप्पणी उचित प्रतीत होती है। 'प्राय: सभी राज्यों में इक्के-दुक्के लोग बौद्ध -धर्म गृहण करते ही रहे है, उन्हें भी कभी किसी ने 'नवबौद्ध' नही कहा। किन्तु सन् 1956 में विजयदशमी 14 अक्टूबर के अवसर पर जिन लाखों लोगों ने बौद्ध धर्म गृहण किया और फिर उसी परंपरा मे जो लोग बौद्ध धर्म अपनाते चले गये और अपनाते चले जा रहे हैं, उन्हीं को नव-बौद्ध कहने का और लिखने का कुछ लोगों का आग्रह है और जिद हैं। उन इक्के-दुक्के बौद्ध धर्म गृहण करने वाले लोगों की अपेक्षा लाखों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई, अत: एक साथ बौद्ध धर्म गृहण करने वालो को विशेष महत्व मिला और इसलिए यह 'नवबौद्ध' शब्द अनायास और अप्रयास अस्तित्व में आया।'

नवबौद्ध शब्द के समर्थकों के द्वारा 'नवबौद्ध' उद्‌बोधन के समर्थन के पक्ष में अनेक दलीले प्रस्तुत की जाती है, जैसे भारत में बौद्धो की संख्या सन् 1956 के बौद्ध धर्मान्तरण से पूर्व न के बराबर थी एवं धर्मान्तरण के बाद अप्रत्याशित वृद्धि के कारण बौद्धों की संख्या एवं भारत की जनसंख्या का 0.8 प्रतिशत लगभग एक करोड़ बौद्ध हैं , इसमें भी लगभग 90प्रतिशत दलित बौद्ध ही हैं एवं इसमें से भी 70प्रतिशत महाराष्ट्र में ही निवासरत हैं, अत: उन मुट्ठीभर बौद्धों से अपनी अलग विशिष्ट पहचान बनाने हेतु भी 'नवबौद्ध' शब्द को इसके समर्थकों के द्वारा रचा गया। इसके अलावा भी विभिन्न तर्क 'नवबौद्ध' शब्द के समर्थन में दिए जाते हैं, समर्थकों के अनुसार डॉ. अंबेडकर ने दलितों के लिए परंपरागत बौद्ध धर्म को कुछ अभिनव परिवर्तनो के साथ स्वीकार किया था, वस्तुत: निम्न तर्क प्रस्तुत किये जाते है-

1. परंपरागत बौद्ध धर्म में 'ईश्वरवाद' व 'आत्मा' पर बौद्ध धर्म मौन है, इसके विपरीत डॉ. अंबेडकर द्वारा अपनाए गए बौद्ध धर्म में डॉ. अंबेडकर ने स्पष्टत: इसका खंडन कर अपनी पुस्तक बुद्ध और उनका धम्म में कहा है कि बौद्ध धम्म का 'ईश्वर' व 'आत्मा' से कोई लेना-देना नही हैं व इसे तार्किकता व मानवता पर आधारित बताया है।
2. परंपरागत बौद्ध धर्म के अनुसार दु:ख का कारण तृष्णा(मानवीय इच्छाएँ) है। जिससे वे बंधे रहते है, जो उसके दु:ख का कारण बनती है, इसके विपरीत डॉ. अंबेडकर के अनुसार बौद्ध धम्म में दु:ख का कारण सामाजिक एवं आर्थिक अन्याय है, जो कि मनुष्य द्वारा मनुष्य के समक्ष असमानता के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है।
3. भगवान बुद्ध के महाभिनिष्क्रमण (गृह-त्याग) के संदर्भ में परंपरागत बौद्ध धर्म के अनुसार भगवान बुद्ध ने गृहत्याग 29 वर्ष की आयु में प्रथम बार एक वृद्ध पुरूष, एक रोगी व्यक्ति ,एक लाश तथा एक साधु को देखकर उत्पन्न दु:ख के निवारण हेतु गृह-त्याग किया था इसके विपरीत डॉ. अंबेडकर के अनुसार यह संभव नहीं है कि 29 वर्ष की आयु तक सिद्धार्थ ने एक बुढ़े, रोगी, मृत व्यक्ति तथा साधु को देखा ही नहीं हो, वे डॉ. धर्मानन्द कोसांबी द्वारा प्रतिपादित अवधारणा कि बुद्ध के गृहत्याग का कारण शाक्य-कुल (गौतम बुद्ध का कुल) के कोलिय जाति के संग जल-अधिकारों हेतु आपसी संघर्ष, जिसके परिणामस्वरूप सिद्धार्थ गौतम के समक्ष दो ही परिस्थितियाँ थी या तो शस्त्र धारण कर युद्ध करे या गृह-त्याग करे, इसके परिणामस्वरूप विचलित होकर सिद्धार्थ ने दु:ख का कारण एवं निवारण ढूँढने हेतु गृहत्याग किया था।
4. विहारो की भूमिका -परंपरागत बौद्ध धर्म में बुद्ध विहारों से तात्पर्य सिर्फ बौद्ध भिक्षुओं के निवास-स्थान के तौर देखा जाता है। जिसमें सिर्फ भिक्षु निवास करते है, इसके विपरीत बौद्ध धर्म के नवीन स्वरूप में अधिकतर बौद्ध विहारो मे प्राय: भिक्षु नहीं होते इसे वे बौद्ध धर्म के अनुयायी, सामाजिक-सांस्कृतिक कार्यक्रमों, विचार-विमर्श हेतु उपयोग करते है, पुजारी या भिक्षु होना आवश्यक नहीं है, अत: बुद्ध विहार को बौद्ध धर्म के समर्थक सामुदायिक स्थल के रूप में इस्तेमाल करते है।

जोहान्स् बेल्टज् के महाराष्ट्र के बौद्धों पर अध्ययन के अनुसार बौद्धों में 'नव' उपसर्ग अस्वीकार्य है क्योंकी इसके अपमान जनक अर्थ निकलते है एवं 'नव' धर्मान्तरित को कम विश्वास योग्य व कम प्रतिष्ठित माना जाता है, उनकी तुलना में जो पीढ़ियो से बौद्ध धर्म की परंम्पराओं का पालन कर रहे है। साथ ही जोहान्स् बेल्टज् ने इसके दुसरे पक्ष मे यह भी कहा की नव के सकारात्मक अर्थ भी निकाले जा सकते है जैसे जो जन्म से बौद्ध जरूर है

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.) भारत

लेकिन बौद्ध धर्म के कतिपय उपदेशों को बगैर सोचे विचारे निष्क्रिय रूप से स्वीकार कर लेते है जबकी 'नव' बौद्धों में (भारत के संदर्भ में) कुछ पुरानी मान्यताओं के विरोध का साहस है।

बर्नार्ड फौरई (2009:142) के अनुसार 'नव बौद्ध' को नये युग की आध्यामिकता का संशोधित स्वरूप कहा जा सकता है।

इसी प्रकार 'नवबौद्ध' शब्द के समर्थको के द्वारा विभिन्न कारण दिये जाते है, अत: स्पष्ट है कि डॉ. अंबेडकर ने बौद्ध धर्म का जो स्वरूप स्वीकार किया वह परंपरागत बौद्ध धर्म से कुछ मुद्दो पर भिन्न है, अत: विभिन्न कारणो के परिणामस्वरूप पूर्व में 'नवबौद्ध' शब्द प्रचलन में आया, लेकिन समय के अनुसार अधिकतर लोग प्राय: 'नवबौद्ध' के स्थान पर 'बौद्ध' प्राथमिकता से लिखने लगे है।

शोधार्थी के अनुसंधान एवं जानकारी के अनुसार शोध-कार्य शुरू होने के पूर्व तक भारतीय बौद्धों हेतु भारत सरकार एवं महाराष्ट्र शासन द्वारा 'नवबौद्ध' शब्द बौद्ध धर्म में दलित धर्मान्तरितो हेतु विभिन्न गजट, अध्यादेश, शासकीय अनुदेश, शासकीय सेवा आदि हेतू अनुप्रयुक्त किया जाता था। 2011-12 के उपरान्त भारत शासन द्वारा 'नवबौद्ध' के स्थान पर यबौद्ध शब्द प्रयुक्त किया जाने लगा, वर्तमान में केवल महाराष्ट्र राज्य में शासन द्वारा नवबौद्ध शब्द बौद्ध धर्म में धर्मान्तरितों हेतु प्रयुक्त किया जा रहा है। शोधार्थी के द्वारा किये गये शोध-कार्य के दौरान 250 में से केवल 33 लोगों ने अपने को नवबौद्ध घोषित किया, शेष 217 ने अपने को बौद्ध घोषित किया, जिसमें अधिकतर ने यह भी कहा कि 'हमें धर्मान्तरित हुए इतने वर्ष बीत गये हम अभी भी नवबौद्ध ही है क्या? हम बौद्ध है, नवबौद्ध नही' अत: शोध सर्वेक्षण से शोधार्थी को यह महसूस हुआ कि बौद्ध जनसमूह में शासन द्वारा उनके लिए प्रयुक्त 'नवबौद्ध' शब्द को लेकर घोर विरोधाभास है, कारण स्पष्टत: यह शब्द क्योकि डॉ. अंबेडकर ने कभी प्रयोग में नहीं लाया, केवल कुछ धर्मान्तरितों के द्वारा इसको प्रचलन में लाया गया , शोधार्थी के द्वारा शोध-कार्य के दौरान नागपुर में विभिन्न बौद्ध धार्मिक उत्सव जैसे बुद्ध जयंती , बुद्ध पूर्णिमा ,अम्बेडकर जयंती, धम्म-चक्र प्रवर्तन दिवस समारोह आदि कार्यक्रमो के दौरान कही भी न वक्तव्यों मे न लेख, समाचार -पत्रो, पोस्टर-बैनर आदि में भी 'नवबौद्ध' शब्द का प्रचलन पूर्णत: विलुप्त पाया गया। अत: संभव है कि देर-सवेर 'नवबौद्ध' शब्द के स्थान पर महाराष्ट्र शासन भी बौद्ध धर्मान्तिरितों हेतु 'बौद्ध' शब्द अनुप्रयुक्त करने लगेगी एवं नवबौद्ध शब्द अतीत में रह जायेगा।

निष्कर्ष - अत: 'नवबौद्ध' शब्द से यह अर्थ निकाला जा सकता है कि वे बौद्ध धर्म में धर्मान्तरण के पूर्व पूराने परंपरागत बौद्ध धर्म में स्वीकृत कुछ मान्यताओं जैसे ईश्वरवाद , आत्मावाद , पराप्राकृतिक वास्तुओं में विश्वास, कर्मकाण्ड आदि में विश्वास नहीं करते क्योंकि डॉ. अंबेडकर ने इनको भगवान बुद्ध द्वारा प्रतिपादित बौद्ध धर्म का मौलिक अंग नहीं माना है।अत: जो भी कारण हो यह स्पष्ट है कि भारत में धर्मान्तरित बौद्ध दलितों के मध्य 'बौद्ध' व 'नवबौद्ध' उद्‌बोधन के मध्य कोई भेद नहीं किया जाता उनके लिए यह एक संबोधन भर है। वर्तमान में 'नवबौद्ध' शब्द अपनी उपादेयता खो रहा है कारण अधिकतर दलित जिन्होंने बौद्ध धर्म को अपनाया वे स्वयं को 'बौद्ध' घोषित करते है ना कि 'नवबौद्ध', उसी प्रकार शासकीय अध्यादेशों में भी महाराष्ट्र राज्य को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में बौद्ध धर्म में धर्मान्तरित दलितों हेतु 'बौद्ध' शब्द प्रयुक्त हो रहा है। इस सन्दर्भ में भदन्त आनन्द कौशल्यायन का यह कथन प्रासंगिक प्रतीत होता है 'नवबौद्ध शब्द बौद्ध-बौद्ध में खिची एक विभाजक रेखा है, भावी बौद्ध भारत इस लकीर को मिटा कर रहेगा।'

सुझाव - महाराष्ट्र राज्य को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में, भारत शासन व सभी राज्यों में बौद्ध धर्म में धर्मान्तरितों हेतु 'बौद्ध' शब्द प्रयुक्त किया जा रहा है अत: तत्काल प्रभाव से महाराष्ट्र राज्य को भी 'नवबौद्ध' के स्थान पर 'बौद्ध' शब्द का संबोधन किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. धम्मचक्र परिवर्तन के बाद के परिवर्तन, डॉ. प्रदीप आगलावे, सम्यक् प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010
2. धर्मान्तरण और दलित, जय प्रकाश कर्दम, सूरज प्रकाशन, दिल्ली, 2008
3. डॉ. अंबेडकर बुद्धिज्म एण्ड सोशल चेंज, ए.के. नारायण एवं डी.सी. अहीर, बुद्धिस्ट वर्ल्ड प्रेस, दिल्ली, 2010
4. महार बुद्धिस्ट एवं दलित, जोहानस् बेल्टज्, मनोहर पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली , 2005
5. बद्धिज्म इन माडर्न इण्डिया, डी.सी. अहीर, भिक्खु निवास प्रकाशन, दीक्षा भूमि, नागपुर, 1972
6. बुद्धिज्म इन इण्डिया : चैलेंजिंग ब्राम्हणिज्म एवं कास्ट, ओम्वेदत् गेल, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003
7. बुद्ध का जन्म सुखकर है, डॉ. भदन्त आनन्द कौसल्यायन (संपादक - प्रदीप गायकवाड़), समता प्रकाशन, नागपुर , 2012 , पृष्ठ संख्या 74
8. 'धर्म परिवर्तन क्यों ?', एस.एल.सागर, सागर प्रकाशन, मैनपुरी(उ.प्र.), 2002
9. रिकन्स्ट्रक्टिंग द वर्ल्ड : बी.आर. अम्बेडकर एंड बुद्धिज्म इन इण्डिया, सुरेन्द्र जोन्धाले एवं जोहानस् बेल्टज्, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू दिल्ली, 2004
10. भारत की जनगणना 2011 (धर्म संबंधित आंकड़े)

****

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण के सामाजिक आर्थिक आयाम

डॉ. प्रीति रवि*

प्रस्तावना – ग्रामीण समाज में लड़कियों के प्रति जो दृष्टिकोण है वह अब भी संकीर्ण है। इस वजह से कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, दहेज समस्या, शोषण जैसी प्रवृत्तियां मौजूद है। हमारे समाज में आज भी लड़कों की चाहत रखने वालों की कमी नहीं है, जिसकी वजह से लिंगानुपात लगातार गिरता जा रहा है। आज समाज की सोच इतनी विकृत होती जा रही है कि स्त्री जाति न गर्भ में सुरक्षित है और न ही बाहर आने पर सुरक्षित है। हाल में ही यौन शोषण के खिलाफ जिस प्रकार की जन जागरूकता समाज में देखने को मिली है, उससे इसके प्रति एक सकारात्मक आशा का संचार भी हुआ है।

भारतीय महिलाओं की स्थिति खासकर ग्रामीण क्षेत्रों मे ऐतिहासिक घटनाक्रमों से काफी प्रभावित रही है। प्रचीन भारतीय समाज में स्त्रियों के प्रति सुरक्षात्मक उपायों के रूप में कई कुप्रभाएं प्रचलित हो गई है। मादा शिशु भ्रूण हत्या, बाल विवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा, बहुपत्नी विवाह आदि जैसी प्रथाओं ने स्त्री की स्थिति को निम्नतम बिन्दू पर पहुंचा दिया है, इसके लिए हमारे समाज की सोच और उनकी पुरूषवादी मानसिकता को भी प्रमुख रूप से जिम्मेदार माना जाता है।

प्रसिद्धि नारीवादी चिन्तक और लेखिका 'साइमन द बोउवार' ने भी लिखा है कि नारी पैदा होती नहीं बल्कि उसे नारी बना दिया जाता है।

सशक्तिकरण के मार्ग की बाधाएं – देश के ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी ऐसी काफी महिलाएं है जिन्हें उनके परम्परागत कार्यो तक सीमित करके रखा गया है। जबकि उनकी क्षमता उससे बेहतर करने की है। इसके साथ ही उनके अधिकांश महत्वपूर्ण कार्य अदृश्य व उपेक्षित बन कर रह गये हैं। समाज में प्रचलित मान्यताओं के अनुसार महिलाओं के आर्थिक क्रियाकलापों को घरेलू उद्यमों, हस्तशिल्प, कढ़ाई, बुनाई जैसे क्रिया–कलापों पर आधारित उद्यम के रूप में वर्गीकृत कर दिया जाता है।

महिला–पुरूष में श्रम विभाजन का सर्वाधिक विभेदक लक्षण यही है। इस श्रम विभाजन में महिलाएं शोषित होती है। इस प्रकार की असमानता मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक आदि प्रत्येक रूप में महिलाओं के प्रति समाज में एक उपेक्षित सोच को जन्म देती है। देश के ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियों की भावी उद्यम के प्रति विभिन्न समाजों में भिन्न–भिन्न धारणाएं है। लड़कियों के उद्यम के रूप में तो इन समाजों ने कई क्षेत्र आरक्षित कर रखे हैं जैसे– नर्सिंग शिक्षण, कृषि कार्यो की बुवाई, कटाई, पौधे लगाना आदि।

ग्रामीण समाजों में लड़कियों के प्रति जो दृष्टिकोण है वह अब भी संकीर्ण है। इसी वजह से कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, दहेज समस्या, शोषण जैसी प्रवृत्तियां मौजूद है। समाज में लड़कियों के प्रति दोहरी मानसिकता भी उनके विकास को अवरूद्ध करती है, उन्हें कुंठित करती है, और मनोरोगी बनाती है।

सशक्तिकरण के प्रयास – वैश्विक स्तर पर महिलाओं के प्रति होने वाले भेदभाव के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक घोषणा की और संयुक्त राष्ट्र ने सभी सदस्य राष्ट्रों से उनके देश में महिला की परिस्थिति पर जानकारी मॉगी, इसके बाद भारत में इस प्रयोजन से एक कमेटी स्टेटस ऑफ वुमेन इन इंडिया की स्थापना की गई जिसने वर्ष 1975 मे अपनी रिपोर्ट दी। संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 1975 को महिला वर्ष के रूप मे मनाया।

भारत ने महिलाओं के प्रति गंभीरता का परिचय देते हुए महिला आयोग के गठन का प्रावधान किया। वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया गया। जिसमें यह वादा किया गया कि महिलाओं को राष्ट्र के सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक जीवन में उचित स्थान दिया जायेगा।

ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण के प्रयासों के तहत गरीब महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए सूक्ष्म ऋण देने हेतु राष्ट्रीय महिला कोष का गठन वर्ष 1963 मे किया गया।

गरीब महिलाओं के पारंपरिक कार्यो में कौशल विकास व नवीन जानकारी प्रदान करने के उद्देश्य से महिलाओं के प्रशिक्षण व रोजगार सहयोग हेतु कार्यक्रम (स्टेज) 2009 से आरम्भ किया गया है।

महिला सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय मिशन भी 2010 में आरम्भ हुआ।

आवास की समस्या से जूझ रहे लोगों के लिए आवास प्रदान करने हेतु इंदिरा आवास योजना 1985–86 से चलाई जा रही है। इसके अलावा महिलाओं के अवैध व्यापार से मुक्त व उनकी सुरक्षा पुनर्वास के लिए 2007 में उज्जवला नामक योजना प्रारंभ की गई।

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण की समस्या व समाधान – महिलाओं में पोषण और बाल विकास की समस्या समाधान के लिए पोषण शिक्षा योजना 1993 से प्रारंभ की गई। इसके साथ ही वर्ष 2003 से राष्ट्रीय पोषण मिशन भी चलाया जा रहा है।

लड़कियों को शिक्षा देने तथा बाल विवाह प्रथाओं पर अंकुश लगाने के लिए वर्ष 2008 में धनलक्ष्मी योजना प्रारंभ की गई।

देश के दूरदराज क्षेत्रों में जच्च–बच्चा देखभाल की प्रभावी व्यवस्था हेतु इंदिरा गाँधी मातृत्व सहयोग योजना आरंभ की गई।

वर्ष 2011 मे गरीबी रेखा से नीचे की महिलाओं को प्रसव सुविधा, भोजन, रक्त आदि की मुक्त व्यवस्था करने के लिए जननी शिशु सुरक्षा योजना प्रारंभ की गई है।

अब तक कि इन सभी योजनाओं के बावजूद आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में अपेक्षित लाभ प्राप्त नहीं कर सके है। उन में प्रचलित मूल्य और प्रतिमान इसकी सफलता के मार्ग में बड़े अवरोधक बने हुए है। एक तरफ परम्परागत प्रतिभा मूल्यों तथा महिला–पुरूष के बीच सामाजिक भेदभाव महिलाओं के प्रति उपेक्षित रवैया अपनाया जाता है, तो दूसरी तरफ कई ग्रामीण महिलाएं अपने सामान्य अधिकारों के प्रति अनभिज्ञ रहती है।

आज हमारे समाज में इस दृष्टिकोण से विचार होगा कि महिलाएं भी पुरूषों के समान ही उनकी बराबर की प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से समाज के लिए ही लाभकारी, एक अशिक्षित, शोषण, कुंठित महिला से एक बेहतर संतान उम्मीद नहीं की जा सकती।

यदि हमें स्वरूप विकसित समाज की रचना करनी है तो नारी को कम से कम उसके अधिकारों से वंचित करने की मानसिकता त्यागनी होगी। खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में जहां महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति भी काफी कमजोर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* शासकीय इन्द्रा कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

To study the capability of problem solving ability in Arts and Commerce student

Heenakshi Bhansali *

Introduction - Problem Solving - Everyone must have felt at least once in his or her life how wonderful it would be if we could solve a problem at hand preferably without much difficulty or even with some difficulties. Unfortunately the problem solving is an art at this point and there are no universal approaches one can take to solving problems. Basically one must explore possible avenues to a solution one by one until one comes across a right path to a solution. Thus generally speaking, there is guessing and hence an element of luck involved in problem solving. However, in general, as one gains experience in solving problems, one develops one's own techniques and strategies, though they are often intangible. Thus the guessing is not an arbitrary guessing but an educate done.

"Learning to solve problems is the principal reason for studying mathematics." This statement by the National Council of Supervisors of Mathematics represents a widespread opinion that problem solving should be the central focus of the mathematics curriculum.

A problem exists when there is a situation you want to resolve but no solution is readily apparent. Problem solving is the process by which the unfamiliar situation is resolved. A situation that is a problem to one person may not be a problem to someone else. For example, determining the number of people in 3 cars when each car contains 5 people may be a problem to some elementary school students. They might solve this problem by placing chips in boxes or by making a drawing to represent each car and each person and then counting to determine the total number of people.

Problem solving is the subject of a major portion of research and publishing in mathematics education. Much of this research is founded on the problem-solving writings of George Polya,

One of the foremost twentieth-century mathematicians. Polya devoted much of his teaching to helping students become better problem solvers. His book How to solve it has been translated into 18 languages. In this book, he outlines the following four-step process for solving problems. Understanding the Problem Polya suggests that a problem solver needs to become better acquainted with a problem and work toward a clearer understanding of it before progressing toward a solution. Increased understanding can come from rereading the statement of the problem, drawing a sketch or diagram to show connections and relationships, restating the problem in your own words, or making a reasonable guess at the solution to help become acquainted with the details. Polya's problem-solving steps will be used throughout the text. The purpose of this section is to help you become familiar with the four-step process and to acquaint you with some of the common strategies for solving problems: making a drawing, guessing and checking, making a table, using a model, and working backward. Additional strategies will be introduced throughout the text.

Problem solving skills - Problem solving is a key skill, and it's one that can make a huge difference to your career. At work, problems are at the center of what many people do every day. You're solving a problem for a client (internal or external), supporting those who are solving problems, or discovering new problems to solve. The problems you face can be large or small, simple or complex, and easy or difficult to solve.

Regardless of the nature of the problems, a fundamental part of every manager's role is finding ways to solve them. So, being a confident problem solver is really important to your success.

Much of that confidence comes from having a good process to use when approaching a problem. With one, you can solve problems quickly and effectively. Without one, your solutions may be ineffective, or you'll get stuck and do nothing, with sometimes painful consequences.

There are four basic steps in problem solving :

1. Defining the problem.
2. Generating alternatives.
3. Evaluating and selecting alternatives.
4. Implementing solutions.

* **Research Scholar, Department of Psychology, J.N.V.U, Jodhpur (Raj.) INDIA**

Understanding Complexity - When your problem is simple, the solution is usually obvious, and you don't need to follow the four steps we outlined earlier. So it follows that when you're taking this more formal approach, your problem is likely to be complex and difficult to understand, because there's a web of interrelated issues.

Affinity Diagrams are great for organizing many different pieces of information into common themes, and for discovering relationships between these. Another popular tool is the Cause-and-Effect Diagram. To generate viable solutions, you must have a solid understanding of what's causing the problem. Using our example of substandard work, Cause-and-Effect diagrams would highlight that a lack of training could contribute to the problem, and they could also highlight possible causes such as work overload and problems with technology.

When your problem occurs within a business process, creating a Flow Chart ,Swim Lane Diagram or a Systems Diagram will help you see how various activities and inputs fit together. This will often help you identify a missing element or bottleneck that's causing your problem.

Quite often, what may seem to be a single problem turns out to be a whole series of problems. Going back to our example, substandard work could be caused by insufficient skills, but excessive workloads could also be contributing, as could excessively short lead times and poor motivation. The Drill Down technique will help you split your problem into smaller parts, each of which can then be solved appropriately.

Problem-Solving Processes - The four-step approach to problem solving that we mentioned at the beginning of this article will serve you well in many situations. However, for a more comprehensive process, you can use Simplex, Appreciative Inquiry or Soft Systems Methodology (SSM). These provide detailed steps that you can use to solve a problem effectively.

Simplex involves an eight-stage process: problem finding, fact finding, defining the problem, idea finding, selecting and evaluating, planning, selling the idea, and acting. These steps build upon the basic process described earlier, and they create a cycle of problem finding and solving that will continually improve your organization.

Appreciative Inquiry takes a uniquely positive approach by helping you solve problems by examining what's working well in the areas surrounding them.

Soft Systems Methodology is designed to help you understand complex problems so that you can start the process of problem solving. It uses four stages to help you uncover more details about what's creating the problem, and then define actions that will improve the situation.

Using these tools – and others on our Problem Solving menu – will help you improve your approach to solving the problems that your team and your organization face. You'll be more successful at solving problems and, because of this, more successful at what you do. What's more, you'll begin to build a reputation as someone who can handle tough situations, in a wise and positive way.

A framework for Problem Solving - The following four phases can be identified in the process of solving problems:

1. Understanding the problem
2. Making a plan of solution
3. Carrying out the plan
4. Looking back i.e. verifying

Methodology

Hypotheses :

1. Time taken to solve the problem increases as the complexity of problem increases.
2. As the complexity of the problem increases, the errors committed to solve the problems increases.
3. There is a significant difference between the problem solving ability of Arts and Commerce students.

Sample - The total sample is 60. This includes the undergraduate students from two different streams of arts and commerce.

Materials:

1. Bhatia's design pattern drawing cards (consisting of 8 patterns).
2. Writing materials.
3. Stop Clock.

Research design &Variables - An experiment research design was used for the present study. The variables of the present study were as follows:

Independent Variable - 8 problems of pattern designing. (Complexity of the problems)

Dependent Variable - Time and errors committed by the subject to solve the problem. (Problem solving ability)

Procedure:

Pattern Drawing Test - This test consists of geometric pattern of increasing difficulties. The first co-ordinate is placed between the comfortably treated subjects. The subject is required to reproduce the design on the paper without lifting pencil ort OO drawings. Instructions are given with the demonstration of the design. start signal is given and stop clock is started simultaneously. Note the time taken by the subject to draw the first design the time limit is two minute.Same procedure is followed for the remaining card with the pattern difficulty level increasing time allowed for each pattern is as followed.

Pattern Number	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII
Time slowed in Minutes	2	2	2	2	3	3	3	3

In case of failure the experimenter will demonstrate the solution, but the subject is not allowed to dry. The experiment is stopped with two consecutive failures.

Instruction - Pattern Drawing Test- Here is the pattern at the start signal, start drawing this without lifting the pencil from the paper or retracing the work fast. You can try any number of times within the time limit.

Analysis of Results - After data collection for the statistical analysis standard deviation, mean and t value were calculated

by using of SPSS 16.0 version. Time taken and the errors committed by the subjects were found.

1. Table 1- shows the time taken by Arts students & Commerce students.

	N	Mean	S.D	Std. Error Mean	T
Time taken by Arts student	30	39.63	10.89	3.44	2.46
Time taken by Commerce student	30	30.81	7.52	2.37	

2. Table 2- shows the errors committed by Arts students & Commerce students.

	N	Mean	S.D	Std. Error Mean	T
Error done by Arts student	30	30.80	3.12	.98	3.55
Error done by Commerce student	30	21.79	2.81	.89	

Table-1 and 2 reveals that the average mean of time taken by Arts student (M= 39.63) is higher than average mean of time taken by Commerce student (M= 30.81). And the average mean of error committed by Arts student (M= 30.80) is higher than average mean of error committed by Commerce student (M=21.79). It shows Mean difference is present between time taken and errors committing capacity of problem solving ability in Arts and Commerce student.

The Significant difference on 0.05 levels was found between problem solving ability of Arts and Commerce student. T value of time taken in problem solving ability of Arts and Commerce student is 2.46 and t value of errors committed in problem solving ability of Arts and Commerce student is 3.55. Both values are found significant. Its show difference between Arts and Commerce student in capacity of problem solving ability and is present.

Conclusion - Problem solving is the process of working through details of a problem to reach a solution. Problem solving may include mathematical or systematic operations and can be a gauge of an individual's critical thinking skills. Problems are at the center of what many people do at work every day. Whether you're solving a problem for a client (internal or external),supporting those who are solving problems, or discovering new problems to solve, the problems you face can be large or small, simple or complex and easy or difficult.

The t-test was applied to analyze the data. The result indicates that there is significant difference on 0.05 levels were found between problem solving ability of Arts and Commerce student of undergraduate. Result proves all hypotheses. It shown when complexity of problem increases then time taken to solve problem increases and errors committed to solve the problem is also increases. And there is found significant difference between Arts and Commerce student in problem solving ability.

References :-

1. G. Polya, How to Solve It, A New Aspect of Mathematical Method, Second Ed., Princeton University Press, Princeton, NJ, 1985 — in ODU Library
2. L. C. Larson, Problem-Solving Through Problems, Springer-Verlag, New York, NY, 1983 — in ODU Library.
3. http://www.businessdictionary.com/definition/problem-solving
4. https://www.mindtools.com/pages/article/newTMC

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

A Study of Examination Anxiety Amongst Secondary School Students

Dr. Madhu Mishra *

Abstract - Present study was aimed at investigating **Examination Anxiety** among secondary school students of different schools located in Bhopal city. Examination Anxiety Test by 'Dr. Madhu Agarwal and Miss Varsha Kaushal' was used on sample of 60 students (30 boys & 30 girls) selected randomly. Descriptive Survey method was employed to find out the Examination Anxiety. The statistical analysis of the study revealed that there is no significant difference in Examination Anxiety of secondary school students in relation to Gender. However, there is significant difference in Examination Anxiety between IXth and Xth grade students.

Introduction - Anxiety is a term used to denote the psychological deviation of human mind from normal or psychological homeostasis.In this state mind becomes hyper responsive to existing or impending challenges. To some extent milder forms of Examination anxiety are constructive as these alerts and motivate the mind to initiate action for facing the challenges.However, high level of anxiety leads to mental dysfunctions like inability to recall & express, or in reference to perform to the potentials. At somatic level, high level of anxiety may lead to palpitation, excessive sweating, nervousness and phobia of failure, sometime leading to escapism or even much worse development of suicidal tendencies or suicide. Among students, anxiety state is often related to Academic/ Examination performance.Experiences have revealed that following anxiety, even good and meritorious students have fared poorly in exams to the extent that this anxiety state is often termed as "examination anxiety or test anxiety", referring to distress felt by examinee while or prior to being evaluated and in more sensitive students, even while thinking about examinations.This anxiety state leads to less than expected performance.

To summarize examination anxiety, affects all examinees to level manageable at personal level with little of sleeplessness, headache and stomach upset, physically and irritability, disturbed concentration etc. psychologically, however, when severe it calls for counseling and other remedial measures.

Need of the Study - Nowadays, newspapers and visual media often report about the suicide or suicidal attempts among young students following fear of failure or failure to achieve desired level of success. This study is aimed to evaluate Examination Anxiety among young students.

Objectives :

1. To measure the extent or level of Examination Anxiety of secondary school students.
2. To compare the examination anxiety of secondary school students on the basis of gender.
3. To compare the examination anxiety of secondary school students on the basis of grades (IXth & Xth)

Hypothesis :

1. There is no significant difference in Examination Anxiety of secondary school students in relation to Gender.
2. There is no significant difference in Examination Anxiety of secondary school students in relation to their grades.

Limitation - The study was limited to secondary school students of Bhopal City only.

Tool - 'Students Examination Anxiety Test' by Dr. Madhu Agarwal and Miss Varsha Kaushal was used for the present study. It has 38 statements with positive or negative responses.

Sample - In the present study an overall sample of 60 students was drawn from secondary school students. 15 boys studying in Class IX and 15 boys studying in Class X, likewise 15 girls from Class IX and 15 girls from Class X were selected randomly.

Analysis and Interpretation of Data - The analysis and Interpretation of the data obtained with the help of the tool is given as under:-

Table – 1 : Distribution of Score showing Examination Anxiety ofSecondary School Students

Level of Examination Anxiety	Extremely High	High	Normal	Low	Extre-mely low
Sample (60)	34	14	7	5	-

* Principal, Anand Vihar College for Women, Bhopal (M.P.) INDIA

Table – 2 : Comparison of Examination Anxiety of Secondary School Studentson the basis of Gender

S	Group	Mean	S.D.	S.E.D.	C.R	DF	Level of signifi-cance
1.	Boys	26.96	7.27	1.76	0.49	58	P<0.05
2.	Girls	27.83	6.37				

From Table-2 it may be concluded that there is no significant difference in Examination Anxiety between Boys & Girls of secondary classes. Hence, the null hypothesis that "there is no significant difference in Examination Anxiety of secondary school students in relation to gender" was retained.

Table-3 : Comparison of Examination Anxiety of Secondary School Studentson the basis of Grades

S	Group	Mean	S.D.	S.E.D.	C.R	DF	Level of signifi-cance
1.	IXth	24.96	6.56	1.46	4.04	58	P>0.05
2.	Xth	30.9	4.64				

Table-3 indicates that CR value is 4.04 which is higher than the table value of CR at 0.05 level. Hence, it may be concluded that there is significant difference in Examination Anxiety between students of IXth and Xth grades. Therefore hypothesis that "there is no significant difference in Examination Anxiety of secondary school students in relation to their grades" is rejected.

Conclusion - There is no significant difference in Examination Anxiety between boys and girls of secondary classes but significant difference in Examination Anxiety was found between students of IXth & Xth standard. Students of Xth grade showed high Examination Anxiety than students of IXth grade.

The result of this study indicates towards the need of frequent counselling among needy or highly motivated and focused students highlighting the fact that a failure in single examination is not end of the road and there are many options always open to attempt in future. The students should be assured about no stigma from parents or teachers if they fail to achieve desired results. All these aspects need frequent counselling not of students only but also of their parents.

References :-

1. Austin, Partridge, Bitner, J. & Willington E. (1995), Prevent School Failure: Treat test anxiety, preventing School Failure, 40(1) 10-13.
2. Benjamin, Lud T.; Hopkins, Jr. and Nation, Jack R., Psychology (II Ed) (1990). Macmillan Publication Co. 866 Third Avenue, New York 10022, p.495.
3. Kembree, R. (1988) : Correlates, Causes, Effects and treatment of test anxiety, Review of Educational Research, 58, 7-77.
4. Lali, S. (1997) Influence of Anxiety on Science Achievement of Secondary School Pupils". Asian Journal of Psychology and Education, 30 (7-8), 29-32.
5. Roger, J.C. (2001) : The Impact of Thought field therapy an Heart Rate Variability (HRV). Journal of Clinical Psychology.
6. Sarason, I.G. (1984) : Stress, Anxiety and Cognitive Interference : Reactions to tests Journal of Personality and Social Psychology 76(4), 929-938.
7. Sieber, J.E.; O'Neil, H.F and Tobias, S. (1977). "Anxiety, Learning and Instructions" EA Lawrance Erlbaum Associates, Hillsdale New Jersy, P.20
8. Wine, J.D. (1980) : Cognitive Attention Theory of Test Anxiety. In I.G. Sarason (Ed). Test Anxiety; Theory, Research and Applications, Hillsdale, N.J. Erlbaum, 349-385.
9. Zeidner, M. (1998) : Test Anxiety The State of the Art New York : Plenum.
10. Dr. Madhu Agarwal and Miss Varsha Kaushal: Manual for Students Examination Anxiety Test.

****

Socio-Cultural perspectives in the poetry of Jayanta Mahapatra

Dr. Manisha Dwivedi * Mrinal Kanti Das **

Abstract - The socio-cultural approach is based on the idea that society and culture shape cognition. Social customs, beliefs, values, and language are all part of what shapes a person's identity and reality. According to this approach, what a person thinks is based on his or her socio-cultural background. A socio-cultural approach takes into account more than the individual in attempting to understand cognitive processes. The Socio-culture perspectives can be explained by the different facets poetry. To Mahapatra, poetry is insight, poetry is feeling, poetry is anesthetized mind at work, and whatever is told is right in connection with Mahapatra and his poetry. Poetry is empty idea and the poet a void philosopher, nothing in the mind, steady and stable, everything in a change, this may also be true and his poetry can be described through the light chapter of physics.

In the paper titled, **"**Socio-Cultural perspectives in the poetry of Jayanta Mahapatra" I have tried to analysis the Socio-cultural perspective that embodies the regional and cultural tradition of Orissa. Several imageries drawn from abstract, mythical, psychological, philosophical, introspective, multi-dimensional, rural, landscape, social, humanistic, liberal, truthful, real, regional, personal, private, nationalistic, national and international perception represent Mahapatra's exceptional talent of socio-cultural concept.

KeyWords - Sociocultural,Approach,Cognition,Perspectives,Anesthetized,Empty,Void,Embodies,Mythical,Multi-dimensional,Humanistic, Nationalistic, Concept.

Introduction - Jayanta Mahaptra has done a noteworthy input in elevating the Indian Poetry in English with an inventive use of Indian themes and contemporary idiom in his poetry. Originally hailing from Orissa and spending his whole life in and around a typically rich mythological setting of Cuttack, he steps beyond the physical confines of regions in his treatment of people's pleasure and pain in his poetry which is deeply tinged with an unusual awareness of the surrounding social and cultural realities. This portrayal of human situation forms an integral part of his poetry thus taking into account almost all the prevailing grievances of humans in general- and of Indians in particular- such as poverty, corruption, crime, lack of communal harmony, social unrest, grass-roots level realities of common man along with his symbolic competence. The present paper attempts to throw light on Mahapatra as a poet of universal socio-cultural concerns.

The present paper is an attempt to study the poetry of Jayanta Mahapatra, with particular references to Imagery, his Sociological Perspective and effect of Historical forces that shaped him and his poetry.

Being a poet of Orissa and its socio-culture, he writes with Cuttack, Bhubaneswar, Puri and Konark as the core of his poetry which he keeps rounding about, referring in a various way. The Chilka Lake with its usual environment and migratory birds, the Konark Sun-temple with the chariot, the Jagannath Puri-temple with the statues of Jagannath, Balabhdara and Subhadra and the Lingaraj-temple telling of rock-cut splendour, the Puri sea-beach with calm and tumult and the Mahanadi and the Chandrabhaga rivers flowing through hold the poetic pen of Jayanta to write about and he does too in demarcating a cartography of that.

As a poet of culture and myth, his wits settles in the India of villages living in mud-houses with thatched roofs and the people holding faith in great belief which but betrays too, as faith remains not faith, but turns into blind faith thudded by doubt lurking within and suspense taking over. A poet who has studied physics as his subject with specialization and has taught it into the classrooms, he startles us with his poetic flight and imagination, brooding and insight, imagery and myth-making, peep and penetration, random reflection and introspection.

Mahapatra's other poem "Shapes by the Daya" repeats this historical event. The poet also refers to the nautical ancestors in the poem called "Relationship." As per the myth, Oriya merchants used to travel by sea route to the islands of Bali, Java, and Indonesia for regular trade in ancient days. This legend finds place in many of Mahapatra's poems.

Mahapatra's conception of socio-cultural perspectives that he realizes brings him face to face with history and

* H.O.D. (English) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (English) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

myth when his "self" is exposed in the act of attention. The relations between; self and reality - the reality that eludes but includes man-form the bedrock of Mahapatra's poetry. To him, it is the investigation of myths and it, is coupled with the world of art and sculpture. He continues his search for a divine spirit and for grace in relationship between man and man, and god and god, men and sculptured art. Mahapatra seems to have the conviction that tradition is continuity and one has to understand the present in terms of the past and the past in terms of the present. There is a deep sign of introspection in his poetry. The poet has tried to create a symbol establishing a deep thematic relationship between the inner worlds with the outer world. Poems like "Orissa Landscape," "Evening in an Orissa Village," and "Dawn at Puri" are the representations of his own native place. Mainly in "Taste for Tomorrow," Puri on sea is represented as a real lively character in his poetry. Temple, priest, beggar, fisherman, now all these material truth have become accelerated in his inner consciousness, that they are gradually transformed into intellectual symbols and images in the heart.

Jayanta Mahapatra's poetry is the kind of strange culture. It represents socio-culture decline of the present generation. He always tries to go deep into the disaster. He is anxious about the present state of India. His poetry has a great range and his subject includes both past and present in its thickness. His poetry is at once encompasses history and also gives a vision to future. This makes him a morning star in the galaxy of Indian English poets.

The vice of prostitution is also an essential part of socio-cultural perspectives. It finds a space in Mahapatra's poetry. Prostitution occurs on account of social disparity and financial difference. Shiv. K. Kumar, Pratish Nandy and Kamala Das have treated love and sex in their poems. But Mahapatra never arouses dishonest instincts while he talks about love and sex. He is rather fragile, but apparently cynical and realistic. He is reticent in his words.

Although there is a variation of cultural aestheticism, Orissa is a setup of the staunch patriarchy. The male-dominated world in Orissa believes the liberation of a woman only within the parameters of patriarchal structures. The socio-psychological structure of the male never allows considering woman as a human being. An ordinary man in Orissa can never disclose the fact that a woman is on the same ground as his equal.

A poet's optimistic comeback to his geographical as well as cultural surroundings plays a major role in his poetry. He captures the rock-built temples in their full brightness. The poet tries to go deep into their history. But nobody is there to reply him. Everything is but unnamed and calm. The history of Orissa is his subject and the culture of it is the contents of his poetry.

The socio-cultural factors of a male-dominated world have never accepted the fact that a woman is man's counterpart. Every woman does have a "bruised presence" as she is not careful as a human being. In every conventional society a woman finds it difficult to have her socio-cultural uniqueness. Mahapatra revolts against women being treated as an item of sexual satisfaction. He also highlights on the pain of prostitutes who suffer in their everyday life while facing the artificial cultured society. He desires those prostitutes to be accredited as a part of the community because prostitutes have been treated as detested persons.

Mahapatra confesses that the cultural contexts have contributed in determining his imagination. When he was asked by Gouri Ramnarayan whether he had been "true to your ethos, culture, roots." he states, "You can't rid yourself of them. In the hot summer months we have whole night open air operas. Their tunes and melodies get into you, so do our dance and architecture. They have shaped our people's sensibility, my sensibility." (*The Hindu)*

Jayanta Mahapatra's images of women, singularized by graceful patterning and subtle interrelatedness as well as continuity, evoke at once the local and universal, the contemporary and the perennial, and help us understand his poetry in general and his outlook to life in particular more delightfully to be able to enjoy them and be grateful for their style.

Thus we see that Mahapatra brings in aspects of Orissa culture by describing legends, historical events, by making references to locales and landscapes and by describing the life style of Oriya people. There evidences along with his personal evidence prompt us to conclude that Jayanta Mahapatra's poems symbolize different aspects of culture of Orissa.

From the above discussion, we note that a writer is a product of a particular time and culture and these have greater influence in his writing. Though Mahapatra uses English as a medium, the content and substance of his poems represent the culture and contexts of his origin and upbringing.

In the conclusion, I would like to classify the cultural and mythical approach and outline Mahapatra's device of representation of these aspects. In many poems the poet turns inward, highlights his socio-cultural and mythical tradition and thus establishes a link with the past. Many of his poems reveal his consciousness of that tradition of the land of his birth which kindles a sense of belonging that relates him to the important places of Orissa.

Mahapatra is a splendid poet, a poet of Orissa, Orissa landscapes, sights and scenes, solitude and loneliness, heat and dust, sun-burnt earth and summer. Nihilism, existentialism and absurdist are things of his base. As a vacant theorist, he thinks about life impassively, with nothing in the mind to say resolutely, everything but in a just to be imaginary way, what it appears to be is not so exactly. A poet of waiting, he himself cannot say, what he is waiting for and why is he? Life is silly, the world is and the things which we see are. There is nothing as that to congregate potency and assurance in us; to rest in. The greatest thing of his poetry is this that he is all that one wants to call him, a writer so regional, so national and international at the same time when we take to study him and his poetry.

References :-

1. Bruce King : Modern Indian Poetry in English, Oxford University Press.
2. Devinder Mohan – Jayanta Mohapatra – Arnold Heinemann.
3. K.Ayappa Paniker. Ed. Indian English Literature Since Independence. New Delhi : IAES
4. Keki N Daruwalla – Two Decades of Indian Poetry – 1960-1980
5. Ghaziabad, Vikas publication 1980
6. M.K. Naik : Perspectives of Indian Poetry in English, Abhinav Publication, New Delhi.
7. Madhusudan Prasad : The Poetry of Jayanta Mahapatra – A Critical Study Sterling Publishers Pvt. Ltd., New Delhi.
8. R. Parthasarathi-Ten Twentieth Century Indian Poets, Oxford University Press-1977
9. S. Gupta – Indian Poetry in English – A Literary History and Anthology – Arnold Heinemann.

****

Girish Karnad As A Modern Indian Dramatist

Dr. Manisha Dwivedi * Twishampati De **

Abstract - In the contemporary era, we find many dramatists. Among them, Girish karnad stands supreme. He has specially worked for Kanadian stage. His plays are modern in their appeal. He had a great ambition for achieving the fame of an international poet. Though he could not realize this dream, he has surely achieved a prominent place in the history of Indian English drama. He himself tells us, "I wanted to be a poet, but only a playwright."During his stay in England he came under the influence of great playwrights like Shakespeare, Ibsen and Shaw and thus developed a strong fascination for English language. Striking a balance between Kannada and English, he first wrote his plays in Kannada and then translated some of them into English, in order to be known as an English Playwright, to enrich Indian drama in English.
Key words - Origin of Drama, Development, Ancient, Pre-Independence, Post-independence, Modern and Biography, Exploitation and Patriarchy.

Introduction - Indian drama originated in the 4th century B.C. this date is confirmed by Bharat's "Natyashastra". It is considered that drama began with the works of Kalidas and Bhababhuti. There is no direct proof of the existence of the dramatic art prior to kalidas is found. Looking back towards the bygone historical path, the beginning of the ancient dramas owes to the 'Rig Veda' for its monumental source material, together with Pururava, Urvasi, Yama and yami, Indra- Indrani, Sarmapani and Ushas Suktas. The well-known dramatists of the ancient era are Ashwa Ghosh, Bhasa, Sudraka, Kalidas, Harsha, Bhababhuti, Visha-Khadatta, Bhattanarayan, Murai and Rajesh Khora who enriched Indian theatres. After 15th century, the dramatic activity of India almost stopped due to foreign Invansions on India. However, the age witnessed the beginning of Loknatya. Several states were innovated fresh and new style of drama. Quite understandably, the most famous among the British was "Shakuntala" by kalidas which translated into English by Sir William Jones in 1789. The beginning and rising of the modern history of Indian drama was latent within 18th century when British Empire and its streatch fastened to its stable power in India. The period after Independence in 1947 marks a significant 2nd stage in the development and history of Modern Indian Drama. Prior to 1947, drama scripts were achieved significance around Sanskrit Plays, English plays and ancient religious – historical epics, deriving much influence from the ancient aspect in the play.

Full name of Girish Karnad is Girish Raghunath Karnad. He was born on 19th May, 1938 in Matheran; British India (present day Maharastra, India).He had contributed to enrich the tradition of Indian English Theatre. He had engaged himself in a literary movement – Navya. His well known plays are "Yayati" (1961),"Tughlaq" (1962), "Hayavadana" (1970), "Nagamandala"(1972).Karnad's Schooling was started in Marathi. In Sirsi, Karnataka, he was exposed to travelling theatre groups Natak Mandalis as his parents were deeply interested in their plays. Being a young star, Karnad was ardent admirer of Yashagana and the theatre in his village. He earned his Bachelor's of Arts Degree in Mathematics and Statistics, from Karnatak Arts College, Dharwad (Karnatak University), in 1958. After completing graduation, Karnad promptly went to Politics and Economics at Lincoln and Magalallen colleges in Oxford as a Rhodes Scholar (1960-63), earning his Master degree in philosophy, political science, and economics.

Many writers of India have obtained distinction and worldwide fame after completing their creative self-expression through the English medium. That is why literary creation written in English language by Indians is known as Indian writing in English. It has appeared as a distinctive body of writing that has been flourishing steadily in vitality and volume. It has been received a fairly long history of about two hundred years in which Raja Rammohan Roy was pioneer. Other important figures are literary and intellectual experts like Toru Dutt, Rabindranath Tagore, Sri Aurobindo, Sarojini Naidu, Jawaharlal Nehru, Mulk Raj Anad, R. k. Narayan, Raja Rao, Khushwant Singh, Nissim Ezekiel, Girish karnad, Anita Desai, Amitava Ghosh and many others. Their writings have influenced World- literature in such a level that Indian writing in English has been acclaimed as 'National

* H.O.D. (English) Dr. C.V. Raman University,Kota,Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (English) Dr. C.V. Raman University,Kota,Bilaspur (C.G.) INDIA

Identity'. To achieve this fame, the plays of Girish Karnad have contributed much. Karnad has been composing plays for four decades. To write and compose his plays, he borrowed materials from history and mythology to tackle comtemporary issues. Most of his plays have been translated into some Indian Languages.

Karnad is known as playwright. His plays, written in Kannada, have been translated into English and some Indian languages. His plays were written neither in English, in which vainly dreamt of earning International fame as a poet, nor in his mother tongue Konkani. He published "Yayati" in 1961 when he was 23 years old. His "Hayavadana'' (1971) was based on from "The Transposed Heads", a 1940 novella by Thomas Maan, which originally found in "Kathasaritsagar". Herein he employed the folk theatre form of "Yashagana". A German version of the play was directed by Vijay Mehata as part of the repertoire of the Dutsches National Theatre, Weimar. "Nagamandala"(a play with Cobra, 1988) was based on an folk related to him by A.K. Ramanujan, brought him the Karnad Sahitya Academy Award for the most creative work of 1989. The theatre was subsequently commissioned him to write the play, "Agni Mattha Male" (The Fire and the Rain). Though it came "Tale-Danda" (Death by beheading, 1990) which used the backdrop, the rise of Veerashaivism, a radical protest and reform movements in the 12th century Karnataka to bring out current issues.

The rise of Modern drama dates back from the 18th century when the British Empire has fixed its stable power in India. But the real beginning was in 1831 when Prasanna Kumar Thakur established "Hindu Rangamanch" at Calcutta and exhibited Wilson's translation of Bhavabhuti's Sanskrit drama" Uttar Ramcharitam". Social dramas of Rabindranath Tagore ("Muktadhara" and "Chandalika") continued to reach upto the stage realistic dramas during the period of the worst - ever famines of Bengal and Second World War.

Indian English drama begins its real journey with Michael Madhu Sudan Dutta's "Is This Called civilization "which appeared on the literary horizon in 1871. The two great sage poets of India – Rabindranath Tagore and Sri Aurobindo are the first Indian dramatists in English worth mentioning. R.N. Tagore's plays are "Chitra", "The post Office", "The Sacrifice", "Red Obanders", "Chandalika", "Muktadhara'', "Natir Puja", "The King of the Dark Chamber", "The Cycle of Spring", "Syanasi" and " The Mother's Prayer". Sri Aurobindo's complete blank verse plays are "Persus The Deliverer", ''Vasavadutta'',"Radoguna", "The Viziers of Bassora" and "Eric".

Karnad has written his plays to reflect his modern sentiment. Some Critics opine that Yayati is a morning of modern theatre. In the play "Yayati", king yayti shows himself as a modern common man who remains restless and discontented in his whole life. This statement is expressed through Yayati's dialogue:

"Solitude? What are you talking about?...".

Karnad's "Hayavadana" depicts the complex psysho-social dimension of the problem of identity crisis. The essential ambiguity of human psychology is revealed through the play. Here Girish Karnad has shown his skill in portraying the picture of Padmini's, Hayavadana's and Padmini's child's thirst for completeness, for perfection. Karnad's next play "Hayavadana" (1988) powerfully portrays the agony and anguish faced by both men and women. They face the agony and anguish in their development into adult roles and social adjustment in a society. "Nagamandala" not only exposes male chauvinism but also stealthily deflates the concept of chastity through the story of Rani. The solitary confinement of Rani by Appanna in the house serves as a symbol for the chastity belt of the middle Ages.

The need and the structure of the caste system of India are re- examined through his second historical play "Tale-Danda". Karnad says,

"I wrote Tale-Danda in 1989 when the 'Mandir' and 'Mandal' movements were beginning to show again how relevant the questions posted by these thinkers were for our age". In the play, male is active but female is inactive because they are silent, absent and powerless. That's why the play reflects the condition of middle class women of our society.

Being a versatile dramatist, Karnad has expanded the scope of the play by introducing new techniques and thematic variations .One and only feature of his plays is the depiction of female protagonist in radical manners. These female protagonists try to create modern sentiment in his plays. Actually, his female characters are the denizens of the post –colonial, post modern world. Their urge is to raise a revolt against Patriarchy and male-dominance. Karnad's purpose in writing these plays is to delineate his protest against the male-chauvinism and patriarchal system of the contemporary era.

References :-

1. "Yayati" (1961),"Hayavadana" (1971), "Nagamandala" (1988),"Tale- Danda" (1990)
2. Brustein, Robert. The Theatre of Revolt, London, Methuen, 1962
3. Chaudhuri, Asha Kuthari. Contemporary Indian Writers in English: Mahesh
4. Cornish, Roger and Ketes Violet Landmarks of Modern British Drama: The Plays of the Seventies. London: Methuen, 1986
5. K.R. Srinivasa Iyengas, Drama in Modern India,
6. Bharat Gupt, Dramatic Concepts: Greek and Indian, A study of Poetics and Natyashastri (New Delhi: D.K.Printworld, 1994)

****

Arvind Adiga As A Novelist Of Modern Era

Dr. Manisha Dwivedi * Nidhi Chandra **

Abstract - Arvind Adiga is the one of the best modern novelist, and he always trying to put the light on current social, economic and political problems. Aravind Adiga's The White Tiger and Last Man in Tower came out when old set up of society was losing ground. Rise of materialism, advancement of technology, modernization, social mobility, sense of cut throat competition, disloyalty, change in the norms of social institutions, alienation, extent of urbanization, globalization consumerism, and so on are some of the characteristics which constitute the mode of a new generation, causing changes in the psyche of the man of the new era. These factors are solely responsible for social, cultural and economic changes.
Keywords - The White Tiger, Last Man, Tower, urbanization, disloyalty, Alienation, Materialism.

Introduction - Aravind Adiga is a journalist and author, who holds dual Indian and Australian citizenship. His debut novel, *The White Tiger*, won the 2008 Man Booker Prize.

Aravind Adiga was born in Madras (now Chennaii) in 1974 to K. Madhava and Usha Adiga, Kannadiga parents hailing from Mangalore, Karnataka. He grew up in Mangalore and studied at Canara High School, then at St. Aloysius High School, where he completed his Secondary School Leaving Certificate (SSLC) in 1990. He secured first rank in the state in SSLC. After immigrating to Sydney, Australia, with his family, he studied at James Ruse Agricultural High School. He studied English literature at Columbia College, Columbia University in New York, where he studied with Simon Schama and graduated as salutatorian in 1997. He also studied at Magdalen College, Oxford, where one of his tutors was Hermione Lee.

Adiga began his journalistic career as a financial journalist, interning at the *Financial Times*. With pieces published in the *Financial Times, Money* and the *Wall Street Journal*, he covered the stock market and investment, interviewing, among others, Donald Trump. His review of previous Booker Prize winner Peter Carey's book, *Oscar and Lucinda*, appeared in The Second Circle, an online literary review. He was subsequently hired by *Time*, where he remained a South Asia correspondent for three years before going freelance. During his freelance period, he wrote *The White Tiger*. He currently lives in Mumbai, India.

Adiga As A Novelist Of New Era - In the former age the social issues used to be dowry, death, unemployment, child labor, discrimination, classicism etc, are restore by the modern affairs like gang rape, terrorism, prostitution, gambling, crime, poverty and illiteracy, but corruption is the main evil that still exist. The modern Indian novelist Aravind Adiga highlighted mainly these current social issues, corruption, poverty, illiteracy and unemployment. In modern era you will come across modern affairs like quest for identity, loneliness, alienation, sense of non-belonging and existential crisis which are reflected on the pages of novel The White Tiger. He has an enormous contribution that offers various formulas for the complexities and concerns in the society. The writing of Aravind Adiga revolves around the social life of a ordinary man. The pathetic condition of underdog is deeply presented by Adiga and what compels a common man to commit murder, to rob people and to force the people to go on off beam path. He has explored the authenticity of the life and presented the intimate views of the social life of common masses. The characters of Aravind Adiga are too much real, his characters and situations are also real rather than supernatural. In the modern literature there are so many novelists who wrote or presented their views on social issues and they created their protagonists and characters like those people who live in the society and survive with the social problems. Aravind Adiga is one of them. He is one of the popular modern Indian novelists. He makes his entry in the world of literature with his debut novel 'The White Tiger'. For that he was awarded 40th Man Booker Prize. He explored reality with his characters. The reader feels the connectivity with his characters while reading his novels and that proves him as a one of the immense novelist. Adiga presented the darkness and bitter truths of the modern society.

There are so many social issues which existed in the society and became the major social issues of the society like unemployment, corruption, gang rapes, terrorism, poverty, crime, illiteracy, prostitution, child abuse, Gambling,

* H.O.D. (English) Dr. C.V. Raman University,Kota,Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (English) Dr. C.V. Raman University,Kota,Bilaspur (C.G.) INDIA

discrimination, western management in India, casticism, dowry system in India etc. In the modern times you will find modern issues like quest for identity, loneliness, alienation, sense of non-belonging and existential crisis and it is reflected on the pages of novel of Adiga s 'The White Tiger' He has a great contribution that offers various formulas for the complexities and concerns in the society. Corruption is one of the most upcoming social issues in the modern era.

Conclusion - Finally we can say that Arvind Adiga is one of the best modern novelist of India, through his novels he always trying to present the changing picture of rural and urban India. It can be said that the prevalent corruption, turn down of caste system, rise of materialism, advancement of technology, modernization, social mobility, law and legislator, cinema media, sense of cut throat competition, disloyalty, change in the norms of social institutions, alienation and such are the same characteristics which constitute the mode of the new generation and cause the change in the psyche of the man of the new generation. Here the novelist wants to convey a message that it is the poison of caste system, communalism, regionalism, discrimination on social, economic basis etc. which are the obstacles in the way of progress.This mode of the new generation leads us to disharmonious perfection which prevents one from general perfection.

References :-

1. Adiga, Aravind. Last Man in Tower. New Delhi: Harper Collins, 2011. Print.
2. Adiga, Aravind. The White Tiger. New Delhi: Harper Collins Publishers India.2008.
3. Arnold, Matthew. Culture and Anarchy: An Essay in Political and Social Criticism. London: John Murray, 1961. Print.
4. Aravind Adiga s Between the Assasinations: Chronicals of aspirations and disillusionments Journal of Literature, Culture and Media Studies, 3(5&6), 135-145
5. Chengappa, Raj. "Ground Zero". Tribune. New Delhi: 5 January 2014; 12. Print.
6. Deswal, Prathik. "A critical Analysis of Arvind Adiga's The White Tiger: a socio-Political perspective." Research spectrum Vol 14 Issue 12 December 2014
7. http://www.brainyquote.com/quotes/authors/a/arvind_adiga.html#Q6oqQdQPRZWZ38Mq.99
8. http://articles.timesofindia.indiatimes.com/2012-08-
9. www.wwindependent.co.uk/arts-entertainment/books/features/arvind-adiga-how-english-literature-shaped-me-7494229

****

Rossetti's Extra Imagination Power Of Expression - A Brief Sketch

Dr. Jalaj Dixit *

Abstract - Rossetti was dominated personality in the pre-Raphaelite group a lover of music and melody. This study is an attempt to show the artistic spirit of the poet which makes him an essentially romantic poet. In the context of his work "Blessed Damozel" this study is an attempt to show the extra imagination power of the poet.

Introduction - Rossetti's extra imagination power of expression in the context of his work "Blessed Damozel"

Poetry should be simple, sensuous and passionate As a pre- Raphaelite poet, Rossetti had a great artistic gift; his poetry is richly coloured his verse is curiously and skillfully wrought, but his work is not entirely wholesome and manly. His poetic world lies beyond the limits of our ordinary experience. A shadowy world ruled by mystery, wonder, beauty and love and lit by another light than that of common day.

Rossetti combines physical beauty with spiritual beauty, as is reflected in "Blessed Damozel" This poem was published when Rossetti was in his salad youth days; when he was less than nineteen, he tried to show the medieval heaven through his poetry. It revised several times and pointed two pictures of "Blessed Damozel, which came out to be a wonderful piece of art.

In the "Blessed Damozel", the poet has presented there a graphic and concrete picture of medieval heaven where a young girl is in the company of blessed. She poignantly longs for the company of her lover, who left behind on the earth. The manner, in which she describes the feeling of their separation, typically modern. The feelings of lover has also been conveyed us in dramatic style. We also note that as a pre-Raphaellite poet, Rossetti has an extra-imagination power. His imagination about heaven's situation and his description make the place of poem in English poetry.

Rossetti's love of beauty, alongwith his supernaturalism makes him an essentially romantic poet. He is passionate because he deals with the primal instincts. He had the power of impressing, the imagination by lines of splendor and magnificence suggesting some half expressed through, some dimly shadowed emotion. We come across many suggestive lines of beauty and mysticism in his poetry.

In context of Blessed Damozel, in the opening lines of poem, the poet lays stress on the chastity and devotedness of the girl. He says that she had been chaste and pure and sincere in her love, while she was on earth. Due to her pure love, she has a high place in heaven. Still she pained for her lover. Therefore she leanred her body over the golden bars of the rampart of heaven, to see her lover on the earth. She had three lilies in her hand, the symbol of purity. Like the blessed Damozel, her lover also remembers her very much. The lover still feels as if she were reclining herself over his body and her golden locks were spreading over his face. The remembrance of the days, when she lived with him on the earth, is quite fresh. The poet also describes the conception of heaven. According to him it is situated at greatest height, built by God. The poet also describes the airy bridge, which is made up of ether. It is a bridge between earth and heaven. But very soon her imagination has been ceased, when she knew that her companion not died on the earth now and she started weeping. Simultaneously her weeping is felt by her lover on the earth.

Rossetti was the nineteenth century spirit in English Literature. His richness of imagery and the quality of strangeness is appreciable.

Conclusion - The above study is an attempt to depict the extra imagination power of Rossetti. He has given a touch of romanticism to poem. He is lover of music and melody. The poem Blessed Damozel is simple but sensuous and passionate, deals with primal instincts.

References :-

1. Rossetti. D.G. & J. Marsh (2000) collected writings of Dante Gabriel Rossetti. Chicago: New Anterdam Books
2. Rossetti D.G. & W.W. Rossetti ed. (1911)works of Dante Gabriel Rassetti. Ellis London.

****

*Principal, Savita Devi Jaiswal Memorial College, Shamgarh, Distt - Mandsaur (M.P.) INDIA

छद्म राजनीति के प्रति संघर्षशील दृष्टिकोण - सुरंग में सुबह

विनोद कुमार *

प्रस्तावना - इतिहास पर अगर दृष्टि डाली जाए तो राजनीति हमेशा से ही समाज पर हावी रही है। सत्ता सुख-भोग के लिए शासकों द्वारा किए गए छल, कपट, दम्भ, क्रूरता, अत्याचारों का इतिहास गवाह है। यही विकृति समाज और लोकतंत्र में आज तक भी जारी है। **'साहित्य और राजनीति एक दूसरे से अलग नहीं परस्पर सम्बद्ध है। दोनों एक ही सामाजिक प्रक्रिया के दो पहलु हैं। राजनीति जीवन की एक महत्वपूर्ण दिशा है और इससे समाज, धर्म, अर्थतंत्र सभी प्रभावित हुए हैं।'**[1] मिथिलेश्वर का उपन्यास 'सुरंग में सुबह' भारतीय राजनीति की छद्मता का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। लोकतंत्र की शासन प्रणाली से लेखक का मन पीड़ित है। छल,कपट, अवसरवादिता, पदलोलुपता, भ्रष्टाचार, दंगे-फसाद, अपहरण, मार-काट आदि राजनीति के मुख्य हथकंडे हैं। इन विकृतियों से प्रदूषित राजनीति ने लोक और तंत्र को पृथक-पृथक कर दिया है। लोक को तंत्र रूपी डंडे से हांका जा रहा है। जो लोकतंत्र पहले जनता का, जनता द्वारा और जनता के लिए होता था। आज यह धारणा निर्मूल पड़ गई है। राजनीति की तिकड़म बाजी में आमजन पीसा जा रहा है। राजनीतिज्ञों की लोलुप दृष्टि और अवसरवादी पार्टियों ने लोकतंत्र को तार-तार करके लोकतंत्र की बेहतरी के सभी उपादानों पर कब्जा कर लिया है। शासन व्यवस्था की बेहतरी का प्रारूप हर पार्टी के घोषणा पत्र में चुनाव से पहले होता है, सरकारें बनने पर व्यवस्था ज्यों की त्यों बनी रहती है। ये घोषणा पत्र अनपढ़ और ग्रामीण जनता को गुमराह करने का हथियार है। मिथिलेश्वर ने सामाजिक बदलावों की तड़फ, आशावाद और अन्तर्विरोधों के संघर्ष को यसुरंग में सुबह उपन्यास में प्रस्तुत किया है।

विवेचित उपन्यास में राजनीति के जो छद्म घटक उपन्यासकार ने पेश किए हैं, वे लोकतंत्र को खोखला करके लोकतंत्र की खिल्ली उड़ाते हुए प्रतीत होते हैं। **'संसार में जो कुछ भी है, वह भारतीय लोकतंत्र में निहित है और भारतीय लोकतंत्र में जो नहीं है, वह संसार में कहीं नहीं है।'**[2] किसी भी व्यवस्था को बनाने में लोकतंत्र का बहुत बड़ा हाथ होता है। फिर इस तंत्र को बनाने के बाद लोक को हाशिए पर धकेल दिया जाता है। अपराध, व्यवसायीकरण, लोलुपता, अवसरवाद, भ्रष्टाचार, मिथ्यावाद का सहारा लेकर सत्ता पर कब्जा किया जाता है। व्यवसाय बन चुकी राजनीति में जो दिखता है, वह बिकता नहीं, जो बिकता है, वह दिखता नहीं। राजनीति के पक्ष और विपक्ष के संघर्ष में उलझी जनता दो पाटों में पीसती रहती है। कुकरमुत्तों की तरह उगी पार्टिया एक-दूसरे को नीचा दिखाने में कोई कसर नहीं छोडती। अपने स्वार्थ लोलुपता के कारण पार्टियां और राजनेता लोग किस तरह के हथियार अपनाते हैं, यही विवेच्य उपन्यास का विषय है। लोकतंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार को आमूलचूल उखाड़ने का प्रयत्न 'सुरंग में सुबह' उपन्यास में किया गया है।

उपन्यास लोकतांत्रिक व्यवस्था और मूल्यों के क्रमिक विघटन का साक्ष्य है। कथा का केन्द्र बिहार अंचल के जोगीपुर और छविपुर जैसे क्षेत्रों में होती। राजनीतिक हलचल, अराजकता, अनपढ़ जनता की दरिद्रता, हत्या, अपहरण, उत्पीडन, अवसरवादिता, लोलुपता आदि समस्याओं को दृष्टिगत किया गया है। छद्म राजनीति के धुरंधर राव मानवेन्द्र बाबू येन-केन-प्रकरेण सत्ता को हथियाना चाहता है , वहीं साधारण ग्रामीण युवा जनार्दन राजनीतिक भ्रष्टता को जड़ से मिटाने के लिए तत्पर है। उपन्यास का नायक जनार्दन को सतारूढ़ दल के नेता मानवेन्द्र बाबू नौकरी का प्रलोभन देकर अपने घर पर रखते हैं, राव मानवेंद्र बाबू के यहां रहते हुऐ वह राजनीति के घिनौने रूप से साक्षात्कार करके सिहर उठता है। मानवेन्द्र सत्ता लोलुपता के चलते अपहरण, हत्या, अत्याचार, उत्पीडन झूठे आश्वासन भ्रष्टाचार में किस हद तक संलिप्त हैं जनार्दन से कुछ छिपा नहीं था। जनार्दन हैरान है कि बाहर से साफ छवि, ईमानदारी का पर्याय नेताजी भीतर से कितने जहरीले हैं। राजनीतिज्ञ परिवारों की स्त्रियों भी इस घिनौने कार्य में पीछे नहीं है। मानवेंद्र बाबू की पत्नी जहां हनुमान की पूजा करती है, मन्नतें माँगती है, वही उसकी पुत्री नंदिता अपने हुस्न का भरपूर फायदा उठाती है। पहले शिकार बनता है जनार्दन, फिर प्रोफेसर और इसके बाद आर.अण्डमान को अपने जाल में फंसाती है। जो शब्द जनार्दन ने नन्दिता से कमरे में सुने थे, वही शब्द प्रोफेसर के साथ और आर.अण्डमान के साथ सुनकर **'पहले दरवाजा बन्द कर दीजिए अंकल'**[3] तिलमिला उठता है। मानवेन्द्र बाबू अपने बनावटी व्यक्तित्व से और उसकी बेटी अपने रूप लावण्य को हथियार बना कर आर.अण्डमान जैसे विपक्षी पार्टी के नेता को अपने पक्ष में मिलाने का खेल रचते हैं। **'पिता के खेल का मैदान राजनीति था, पुत्री के खेल का मैदान दैहिक संबंधों का अखाड़ा।'**[4] राज सत्ता के सुख भोग के लिए कुछ भी संभव है और तिकड़मों का कितना जाल फैला है। इससे जनार्दन क्षुब्ध है- **'उसका मन अन्दर से तिक्त और क्षुब्ध हो गया था। ऐसी घटनाओं से उसे हर बार लगता कि राजनीति के इस पूरे तिकड़म को बेनकाब करने की जरूरत है।'**[5]

सत्ता सुख भोग के लिए राजनीतिज्ञ लोगों में आपसी संघर्ष चलते रहते हैं। जिस कारण मानवेन्द्र बाबू की हत्या होती है और जनार्दन की वापसी यर्थाथ की भूमि पर होती है। घिनौनी राजनीति के प्रति उसके मन में अथाह नफरत भर जाती है। मित्र घनश्याम के उसके लिए संजीवनी बनते है। **'हमें अपनी जगह से अपनी लड़ाई लड़नी है... राव मानवेन्द्र बाबू जैसे नेताओं के आसरे नहीं रहना है।'**[6] जीवन के कटु अनुभवों के साक्षात्कार होने के पश्चात् वह अपने गांव की यथार्थ भूमि से ही राजनीति की छदमता के विरूद्ध लड़ाई लड़ने का निर्णय करता है। वह कहता है- **'अपने लोगों को सच्ची राजनीति करके दिखाऊंगा.........। अभी इस देश में जनता की राजनीति शुरू हुई ही नहीं......। जनता की राजनीति के बाद जनता**

* अध्यक्ष (हिन्दी) भाग सिंह खालसा कॉलेज फॉर विमिन, काला टिब्बा, अबोहर (पंजाब) भारत

की बदहाली रह ही नहीं सकती।'[7] सत्ता प्राप्ति के बाद पार्टी का महत्व अपनी घोषणा को क्रियान्वित करने में निहित है परन्तु वास्तव में असीमित अधिकार और सुविधाएं पाकर पार्टियां शोषण और सामन्तवादी प्रवृतियों से लैस हो जाती है। दूसरी ओर विपक्षी पार्टी चाहे कितनी ही भ्रष्टाचार, अत्याचार, शोषण में संलिप्त हो, विपक्ष में बैठते ही ईमानदारी, न्याय और लोक कल्याण के खोखले दावे ठोकती है। पक्ष और विपक्ष इसी सत्ता संघर्ष में लोकतंत्र की सभी धारणा निर्मूल पड़ जाती है। विवेचित उपन्यास आधुनिक राजनीति पर करारा व्यंग्य है। जनार्दन और उसके युवा मित्रों (विजय, घनश्याम, अंजलि, उमेश) को राजनीति की इस अंधेरी सुरंग को पाटने वाली किरण वामपंथी पार्टी 'जनदेश पार्टी' में दिखाई देती है। दूसरी तरफ 'लोकेन्द्र पार्टी' ने रूप लावण्य की प्रतिमा 'नंदिता' जो जनार्दन की प्रेमिका रह चुकी है, को पार्टी प्रत्याशी के रूप में चुनावी मैदान में उतारा जनार्दन जितनी ताकत और सक्रिय रूप से 'जनदेश पार्टी' से जुड़ता है, उसके साथी उसकी ताकत को और अधिक मजबूती प्रदान करते है। 'जनदेश पार्टी' के प्रत्याशी के रूप में जनार्दन के नाम पर उसके साथी मोहर लगाते हैं। जितनी सरल राह राजनीति की जनार्दन समझते हैं उतनी होती नहीं है। राजनीति में अवसरवादिता का भुजंग कब किस को अपना डंक मार दे पता नहीं चलता। यही जनार्दन के साथ हुआ। जब सत्ताधारी पार्टी के मानवेन्द्र बाबू की पुत्री नन्दिता के विरोध में जनदेश पार्टी जनार्दन को दर किनार कर डॉ. अरविन्द्र को प्रत्याशी पद के लिए चुनती है। यहां साफ चित्रित होता है कि लोकतंत्र की विकृतियां सिर्फ सत्तापक्ष तक ही सीमित नहीं है बल्कि इन विकृतियों के जहर ने 'जनदेश पार्टी' जैसी सभी पार्टियों को दूषित कर दिया है। ऐसी पार्टियों में जनार्दन जैसे ईमानदार, कर्मठ और लोकहितकारी का टिक पाना असंभव था। फलस्वरूप वह त्यागपत्र देता है और अपने सहयोगियों के साथ स्वतंत्र रहकर अपना अभियान जारी रखता है। जनार्दन ने अपनी ईमानदारी और कर्मठता से ग्रामीण जन जनार्दन की सहानुभूति प्राप्त कर ली थी। इस सहानुभूति का श्रेय मीडिया यानि अखबार को जाता है। मार्टिन फैक्टरी के मजदूरों के विद्रोह में जनार्दन की सक्रिय भूमिका ने उसे आमजन का नेता बना दिया। अखबारों में जनार्दन की खबर का शीर्षक था- **'युवा नेता जनार्दन की सार्थक पहल'**[8] उपन्यासकार ने चुनावी कार्यक्रम के दौरान होने वाली रैली की भयावह तस्वरी यथार्थवादी दृष्टिकोण से पेश की है। लोकतंत्र की सबसे बडी ताकत होती है संख्या बल। पार्टियां अपना मजबूत पक्ष दिखाने के लिए जुलूस या रैलियों का सहारा लेती है ताकि विपक्षी पार्टी को उसकी ताकत का अंदाजा लग जाए। यह संख्या-बल भले ही किराए के बल पर क्यों न इक्कठा करने पडे। राजनेता लोग ऐसी भीड़ के सामने अपना मिथ्या एवं कल्पनाशील घोषणा-पत्र पढ़ते है और जनता को कितने प्रभावी तरीके से गुमराह करते हैं। ऐसी जगहों पर अप्रत्याशित घटना घटती रहती है। जिसका खामियाजा आमजन को भुगतना पड़ता है। यहां प्रश्न यह है कि ऐसी भीड का हिस्सा बनना मानवीय विकास का सूचक है या ह्रास का? राजनीतिज्ञों पर जूलुसों में होने वाले दंगे-फसादों की जरा भी आँच नहीं आती। ऐसी परिस्थिति में राजनीतिज्ञ लोग जनता के बीच खडे न होकर अपने आरामगृहों में टी.वी. पर सब तमाशा देखते हैं। माहौल शांत होने पर जनता की सहानुभूति बटोरने निकल पड़ते हैं। सामान्य लोग इस यथास्थिति को पहचान जाते हैं। **'सालों ने धोखे से बुलाकर हमारी हालत खराब कर दी कोई इंतजाम नहीं.......। आफत में फंसा दिया........। अबकी दफा किसी तरह लौट जाए.........। फिर इन लोगों को ठेंगा दिखा देंगें फिर देखते है, कैसे बुलाते हैं, रैली में।'**[9]

उपन्यासकार ने वंशवाद की राजनीति पर आक्षेप किया है। जिस प्रकार मानवेन्द्र बाबू के पश्चात् उनके पुत्री नन्दिता को 'लोकेन्द्र पार्टी' की प्रत्याशी बनाया जाता है। वहीं नन्दिता जिसको यहां तक पता नहीं कि आलु कहां लगता है, गेहूँ कहां उगाई जाती है, चावल कहां उगाया जाता है। जिसने कभी महलों के ऐशो आराम के इलावा कुछ जाना ही नहीं, वही नन्दिता आज कृषि विकास, ग्रामविकास, और जन-कल्याण का आश्वासन बडे प्रभावी तरीके से दे रही है। यह वंशगत राजनीति का प्रभाव है, जिसमें नन्दिता परिपक्व बन जाती है। ऐसी वंशगत राजनीति पर उपन्यासकार चिंता व्यक्त करता है **'लोकतंत्र के शासक नायक के निधन या पद-त्याग के बाद उसकी पत्नी या पुत्र-पुत्री के हाथों में बागडोर थमा दी जाती है। फिर उसक पुत्र-पुत्री के बाद उनके पुत्र-पुत्रियों के हाथों में ....।'**[10]

जिस प्रकार लोहे को तपाकर ही विशेष सांचे में ढाला जाता है, उसी प्रकार की तपिश के थपेडे जनार्दन को सहन करने पड़ते हैं। 'लोकेन्द्री पार्टी' की प्रत्याशी के रूप में नन्दिता रैली के दौरान झूठे भाषण देती है, तो जनार्दन के लिए असहनीय हो जाता है। वह झूठे भाषणों का विरोध करता है, तो उसे उग्रवादी घोषित कर दिया जाता है। लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहे जानी वाली पत्रकारिता उसे अपराधी घोषित करने में कोई कसर नहीं छोड़ती और नन्दिता के साफ-सुथरी, आकर्षित व्यक्तित्व और ईमानदार नेत्री के रूप में जनता के समक्ष पेश करती है। जनार्दन को पत्रकारिता का यह बिकाऊ रूप में घिनौना लगता है। जिस अखबार ने जनार्दन को युवा नेता घोषित किया था। उसी अखबार में उसे उग्रवादी बनाकर सुर्खियों में ला दिया और नन्दिता को राजनेत्री स्थापित कर दिया। मीडिया और सूचना तंत्र पर पूँजी का प्रभाव है। **'जो लोग सूचना क्रांति को विज्ञान का वरदान और मनुष्य के विकास का उच्चतम माध्यम मानते हैं वे नन्दिता जैसे लोग ही होंगे। यह सूचना क्रांति वैसे ही लोगों को लाभान्वित करेगी।'**[11] पत्रकारिता के विषय में जो धारणा जनार्दन के मन में थी वह निर्मूल हो गई। **'पूँजी संचालित पत्रकारिता में सामर्थ्य वाले क्या कुछ नहीं छपवा लेते। जो नहीं घटा है उसका घटित होना भी जाहिर कर देते हैं।'**[12] पत्रकारिता की पतनशीलता एक समाज देश, लोकतंत्र को क्षत-विक्षत कर देती है। पत्रकारिता को पतन का सबसे बडा कारण इस क्षेत्र में कम पढ़े-लिखे लोगों का वर्चस्व और साहित्य का क्षेत्र से कोसों दूर होना है।

अपराधी घोषित जनार्दन मित्र घनश्याम के घर, विजय, विजय की बुआ के घर यसोहागी गांव में रहता है। उसके जीवन का एक मात्र लक्ष्य ही इस घिनौनी राजनीति की सुरंग को पाटना ही था। नन्दिता उसके पास अपना संदेश भेजकर उसे पार्टी में मिलने को कहती है। जनार्दन यह प्रस्ताव ठुकरा देता है। परिणामस्वरूप उसे 'एनकाउंटर' की धमकी दी जाती है। पुलिस द्वारा पकडे जाने पर जनता का रास्ता रोकना एक आशावाद है। यह जागृति की एक किरण दिखाई पड़ती है और जनार्दन समान्य से असामान्य बन जाता है। जेल में उसे राजनीतिक बन्दी की तरह रखा जाता है। जेल में ही 'जनदेश पार्टी' और 'भोजलोक पार्टी' उसे अपने साथ शामिल होने का प्रस्ताव पेश करती है। जनार्दन प्रस्ताव स्वीकार नहीं करता।

उपन्यासकार ने विवेचित उपन्यास के माध्यम से लोकतंत्र पर आच्छादित अंधकार को मिटाना ही उचित नहीं समझा। अपितु छद्म राजनीति पर गहन चिंता व्यक्त करते हुए इसे विमर्श का विषय बनाया है। मिथिलेश्वर का हिन्दी साहित्य में संभवत: यह प्रथम प्रयास है जिसमें लोकतंत्र की इस विकृति को चित्रित किया गया है। **'मिथिलेश्वर ने अपने उपन्यास में भारतीय लोकतंत्र के चरित्र को लेकर कई मौलिक स्थापनाएं की है। जैसे एक**

तो यही कि हमारे लोकतंत्र में राजशाही की धारणा अवशिष्ट है। हमारा प्रतिनिधि अपनी असफलताओं और पराजय के बाद भी बार-बार सत्ता पाना चाहता है। राजशाही की तरह सत्ता प्राप्ति के इस खेल में अपनी वंश परम्परा का मार्ग भी प्रशस्त करता चलता है।'[13] उपन्यासकार ने समकालीन जीवन की प्रवृतियों और घटनाओं को क्रमवार उल्लेखित किया है। ग्रामीण समाज के कर्मठ और ईमानदार युवकों के सराहनीय प्रयास के द्धारा छद्म राजनीति का पर्दाफाश किया है।

अवसरवादित, वंशवाद, भ्रष्टाचार, उत्पीड़न में संलिप्त राजनीति का कितना कल्याण कर सकती है। **'प्रश्न यही है——— एक यक्ष प्रश्न कि ऐसी स्थिति में किया जाए। चुनौती दे रहा है, उसे अर्से से परेशान किए है। उन सबको, जो भीतर तक आहत हुए है। आजादी के बाद के पचास सालों में उन आदर्शो, मूल्यों और विचारों का विपर्यय देखकर जैसा हम कर चुके हैं, नवजागरण और स्वाधीनता आंदलोन के दौरान जो शिद्दत से अर्जित किए गए थे गम्भीर-मन विचारक बुद्धिजीवी, लेखक देश के जिम्मेदार नागरिक विचार कर रहे है कि आखिर लोकतंत्र पर छाए इस संकट का निदान क्या है? मिथिलेश्वर का यह उपन्यास लोकतंत्र के मौजूदा स्वस्थ और उसके संकट पर चल रहे इसी विमर्श की एक कड़ी है।'**[14] मिथिलेश्वर ने बहुत सारे सवालों से रू-ब-रू करवाया है जो आज भी लोकतंत्र की जडे खोखली कर रहे हैं। लोक में कहीं भी खराबी नहीं बल्कि तंत्र विकृत हो चुका है। राज में भी कहीं खराबी नहीं है बल्कि नीति विकृत हो चुकी है। उपन्यासकार ने जनार्दन जैसे नायक के माध्यम से तंत्र और नीति को सुधारने का प्रयास आशावादी दृष्टि से किया है। जेल से छूटने के बाद जनार्दन की निगाहें पोस्टर पर पडती है। जिस पर लिखा है-

'हमारा लोकतंत्र महान है।
भारत विश्व का सबसे बडा लोकतांत्रिक देश है।
अपने लोकतंत्र को हमे मजबूत बनाना है।'[15]

यही आशावाद जनार्दन और उसके मित्रों की प्रेरणा शक्ति है, जो लोकतंत्र को मजबूत बनाने के लिए कडी की तरह जुडते जाते हैं। छद्म राजनीति के प्रति संघर्ष की व्यथा को रूपकार करता हुआ, यह उपन्यास लेखक का सराहनीय प्रयास है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 हिन्दी संत साहित्य के स्रोत, विनीता कुमारी, संजय प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ-325
2 सुरंग में सुबह, मिथिलेश्वर, भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली, पृष्ठ-336
3 वही, पृष्ठ संख्या - 83
4 वही, पृष्ठ संख्या - 72
5 वही, पृष्ठ संख्या - 60
6 वही, पृष्ठ संख्या - 108
7 वही, पृष्ठ संख्या - 112
8 वही, पृष्ठ संख्या - 127
9 वही, पृष्ठ संख्या - 187
10 वही, पृष्ठ संख्या - 185
11 वही, पृष्ठ संख्या - 239
12 वही, पृष्ठ संख्या - 280
13 लोकतंत्र सुरंग में राजनीतिक उपन्यासों की सुबह की प्रतीक्षा-कान्ति कुमार जैन, शेष, अप्रैल-जून 2004 पृष्ठ संख्या-160
14 सुरंग में सुबह: मिथिलेश्वर- अंधकार और प्रकाश के महासागर का एक रचनात्मक आख्यान, शिव कुमार मिश्रा, वर्तमान साहित्य, जुलाई-2009 पृष्ठ संख्या-102
15 सुरंग में सुबह, मिथिलेश्वर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली पृष्ठ संख्या-395

****

आदिवासी जीवन की पीड़ा - साहित्यकारों की कलम से

राजिन्द्र कुमार *

प्रस्तावना - भारत एक जाति-बहुल राष्ट्र है। जातिगत विभिन्नता में रहन-सहन, संस्कृति, रीति-रिवाज, परम्परा, धार्मिक मान्यताएं और सामाजिक जीवन संबंधी पर्याप्त अंतर पाया जाता है। इन्हीं में एक समाज आदिवासी जनजाति का है, जो भारत के बहुत बड़े भू-भाग पर निवास करता है। आदिवासी अर्थात् आदि समय से निवास करने वाले। जनजाति, वन्यजाति, आदिवासी, वनवासी, या आदिमजाति शब्द पर्याय रूप में प्रचलित है। आदिवासी समाज की परिभाषा में द्रष्टव्य है-

'मानवता की लम्बी यात्रा के बीच उसी के इर्द-गिर्द एक और मानवता भी है,जो अति प्राचीन काल से प्रकृति की नजदीकी मे अपनी अनूठी शैली की जिन्दगी जीती चली आ रही है। भौतिक प्रगति की दृष्टि से वह मानवता अब भी अक्सर वही है, अपने आदिम संस्कारों के साथ। इस मानवता को ही हम 'आदिवासी' नाम से पुकारते है'[1]

आदिवासी देश के भिन्न-भिन्न राज्यों के जंगलों में फैले हुए है। भारत में दस करोड़ के लगभग आदिवासी निवास करते है। उड़ीसा में कथ, पेरू के मांची, ग्वेकाओं, झारखण्ड के बिरहार, शबर, असुर, कोरबा, राजस्थान के सहरिया, भील, कथौड़ी, छतीसगढ़ की जनजातीयां और न जाने कितने जंगलों में आदिवासी लोग निवास करते है। यह आदिवासी समाज कभी प्रकृति के कोप की मार झेलता है,तो कभी समाज, वर्णव्यवस्था, जातिगत भेदों राजनीतिज्ञों के शोषण, अत्याचार, दमन, विस्थापन से पीड़ित होता है। समस्त विश्व में बिखरे आदिवासी लोग अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए संघर्षरत है। जब कभी भी इनके जल, जंगल, जमीन पर किसी ने अधिकार करने का प्रयास किया है तब आदिवासी लोगों ने विद्रोह किया है तथा अपने-आप को महफूज रखने का हर संभव प्रयास किया।

'आदिवासी लोग बहुत ही सीधे-सादे और स्वाभिमानी है। यह शोषणकारी दुश्मनों के खिलाफ अनवरत लड़े और अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखा है।' [2]

आदिवासियों के संघर्ष, पीड़ा, त्रास,ह्रास, शोषण, आदिवासी और दिक् के संघर्ष को साहित्यकारों ने अपनी कलम से टटोला है। आदिवासी जीवन-संघर्ष और चुनौतियों को साहित्यकारों ने समाज के समक्ष प्रभावशाली तरीके से पेश किया है। गद्य और पद्य साहित्य में आज आदिवासी जीवन को संबल प्रदान कर लेखकों ने उनकी पीड़ा को अपनी अनुभूति का विषय बनाकर उनके हक की लड़ाई लड़नी शुरू की है। आदिवासी लेखन साहित्य के प्रेरणा स्त्रोत बिरसा मुंडा सिद्धो-कानू, तिलका मांझनी भील, काली बाई, झलकारी बाई, तीतुमार, कोल है जिनके संघर्ष ने आदिवासियों के अस्तित्व को बनाए रखा है।

आदिवासी पद्य साहित्य में आदिवासी समाज, संघर्ष की व्यथा, विद्रोह, नारी-जीवन का संघर्ष, अस्तित्व के लिए संघर्ष के स्वर सुनाई देते है। आदिवासी कवियों में महादेव टोप्पो, मंजू ज्योत्सना, सरिता बड़ाइक, हरिराम मीणा, निर्मला पुतुल आदि कवियों के नाम प्रमुख है। इन रचनाकारों ने भोगे हुए यथार्थ जीवन साक्षात्कार करवाया है। जंगल में पीड़ित-मानव की चीख पुकार कवतिाओं में नगाड़े की तरह बजते सुनाई देते है। स्त्री समाज की बद-से-बदतर होती हालात के चित्र कविताओं में हु-ब-हु चित्रित है। बलात्कार, शोषण, दास प्रथा, अपहरण जैसी कुरीतियों से जंगल की बस्तियां पीड़ित है। पुरुष समाज एक तरफ दुर्गा, लक्ष्मी, पार्वती कह कर स्त्री को पूजता है और संकट के समय रक्षा की आकांक्षा करता हुआ पुकार उठता है-

'दुर्गा मैया खड्ग खींच के आओ ,
बैरी को मार भगाओ[3]

वहीं दूसरी तरफ पूरुष की हिंसक प्रवति का शिकार स्त्री ही बनती है जिसकी चीख पुकार पहाड़ो, जंगलों में गूंजती रहती है। पीड़ा जब असहनीय हो जाती है, तो विद्रोह प्रबल वेग से होता है। आदिवासी स्त्रियों ने अस्मिता की रक्षा करने के लिए हथियार उठाए। निर्मला पुतुल ने नारी अस्मिता के प्रति सजगता का परिचय दिया है-

'आज की तारीख के साथ
की गिरेगी जितनी बूंदे लहू की पृथ्वी पर
उतनी ही जन्मेगी निर्मला पुतुल
हवा में उठी बंधे हाथ लहराते हुए'[4]

विकट परिस्थितियों में स्त्रियों ने पुरुषों के साथ मिलकर शत्रुओं से लोहा भी लिया। 'ग्रेस क्रुजर' ने अपनी कविता में आदिवासी स्त्रीयों को पुरुषों की भांति मुगल सेना से लोहा लेते हुए चित्रित किया है। सिनगी देई का वह बलिदान कौन भूल सकता है, जिसने मुगल सेना के विरूद्ध संघर्ष करते हुए स्त्रीत्व धर्म की रक्षा की। कविता में आक्रोश के स्वर आज के आदिवासी समाज को संघर्ष की प्रेरणा देता है-

'अगर अब भी तुम्हारे हाथों की
उंगलियां थरथराई तो जान लो
मैं बनूंगी एक बार और सिनगी दई' [5]

आदिवासी समाज में विवाहित स्त्रियों की दशा यानी शोषण, मार-पीट, बलात्कार आदि का यथार्थ अंकन आदिवासी कविताओं में दिखाई देता है। डॉ0 मंजू ज्योत्सना की 'ब्याह' कविता में एक आदिवासी लड़की अपने पिता से विवाह न करने की प्रार्थना करती है क्योंकि पुरुषों की अवहेलना, बलात्कार और शोषण की पीड़ा के अतिरिक्त उन्हें विवाह से कुछ नहीं मिलता। ऐसी विकट परिस्थितियों से सिहर कर वह कह उठती है-

'पिता मेरी शादी मत करना
मैंने देखी है-बुधनी की जिंदगी
बाल बच्चे संभाल खेत में खटती है

*अध्यक्ष (हिन्दी) एस.जी.एच.आर.एस.कालेज फॉर विमिन, चब्बेवाल, जिला - होशियारपुर (पंजाब) भारत

उसका मर्द सांझ सवेरे रात
मारता है कितना'[6]

आदिवासी स्त्रियों का दैहिक शोषण भी उनकी नियति का हिस्सा रहा। सभ्य समाज उनकी देह को अपने बिस्तर पर सुंघने का अवसर खोजता है। आदिवासी स्त्रियां शोषण से मुक्ति के लिए संघर्षरत है। निर्मला पुतुल की कविता सभ्य कहलाने वाले शोषक समाज को चेतावनी दे रही है-

'मैं चुप हूँ तो मत समझो कि गूंगी हूं
या कि रखा है मैंने आजीवन मौनव्रत
ग्हराती चुप्पी के अंधेरे में सुलग रही है भीतर
जे आक्रोश की आग' [7]

सदियां बदली, युग बदले, परंतु आदिवासियों की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया। आदिकाल से ही आदिवासी समाज विस्थापन की मार झेल रहा है। विदेशी आक्रमण, स्वदेशी शोषण और सरकारी नीतियों ने इस समाज का जमकर दोहन किया।

वैश्वीकरण के इस दौर ने आदिवासी समाज को जल, जंगल, जमीन से रहित करके उनका अस्तित्व ही मिटाने का उपक्रम ही रच दिया। जल, जंगल, जमीन के मूल दावेदारों से आज वकील पूछता है कि यह जमीन तुम्हारी है, तुम्हारे पास सबूत क्या है ? आदिवासी के संदर्भ में यह सवाल बेतुका है, क्योंकि विस्थापन के चलते उनकी जमीन सरकारी कागजों में दर्ज ही नहीं हो पाई। प्रकृति को पूजने वाले आदिवासियों के यहां निजी सम्पति की अवधारणा कभी विकसित ही नहीं हो पाई। आधुनिक युग में विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट किया जा रहा है। औद्योगिक विकास की नीति में नवनिर्माण तथा विस्थापन एक साथ हो रहा है। पूँजीपतियों द्वारा नवनिर्माण किया जाता है, वहीं विस्थापन का दंश आदिवासियों को झेलना पड़ता है। आदिवासी समाज ने अपने घर को उजड़ते देख विद्रोह का रास्ता अपनाया। आदिवासी कवि 'महादेव टोप्पोय की कलम से विद्रोह के स्वर इस प्रकार सुनाई देता है-

'वह धनुष उठाएगा
प्रत्यंचा पर कलम चढ़ाएगा
साथ में बांसूरी और मांदर भी जरूर उठाएगा
जंगल के हरेपन को बचाने की खातिर
जंगल का कवि
मांदर बजाएगा
चढ़ाकर प्रत्यांचा पर कलम' [8]

विकास के नाम पर जंगल में बिजली व्यवस्था के जरिए अंधेरे को दूर करने की प्रकिया जारी है। आदिवासी समुदाय में इस रोशनी के खिलाफ आक्रोश है। चंद्रकांता देवताले की कविता 'तमसा मा ज्योतिर्गमय' में आदिवासियों द्वारा बिजली का विरोध करने का चित्रण हुआ है। वे कहते है कि ये तार, खम्भे, बल्ब और टयूब उस अंधेरे को दूर नहीं कर सकते जो सदियों से मानसिकता पर छाया है-

'एक अंधेरा जो सब अँधेरे से
बड़ा और घना है,
जहां रात ही रात है हजारों साल से
बीहड़ जंगलो
और गहरे कुंओं के अँधेरे से भी
बड़ा और घना है
छोटे दिमाग का अँधेरा'[9]

वर्तमान आदिवासी काव्य के स्वर में आक्रामकता है। इसमें विस्थापन, विकास, अत्याचार, शोषण, उत्पीड़न के प्रति आक्रोश है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में समाजवादी समाज की स्थापना होने के बाद भी आदिवासियों को आज भी इसका इन्तजार है।

साहित्य की गद्य विधा में भी आदिवासी समाज और संस्कृति का चित्रण यथार्थमयी शैली में हुआ है। आदिवासियों के जीवन संबंधी उपन्यास लिखने वालों में सबसे पहला नाम जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी का लिया जाता है, जिन्होंनें सन् 1899 में 'बसंत मालती' उपन्यास लिखा जो मुंगेर जिले के मलयपुर अंचल के मतलाह आदिवासी जीवन पर आधारित है। रामचीज सिंह के उपन्यास 'वनवाहिनी' में आदिवासी जीवन की साफ तस्वीर प्रथम बार दिखाई देती है। संथाल परगने के आदिवासी जीवन के संघर्ष, रहन-सहन, देवी-देवता, वेश-भूषा, भाषा, प्रकृति का चित्रण इस उपन्यास में मिलता है।

इस क्षेत्र से कई साहित्यकारों ने आदिवासी जीवन को खंगाला तथा उनकी पीड़ा को अपने साहित्य का आधार बनाया। इनमें प्रमुख है- मन्नन द्विवेदी (रामलाल), देवेन्द्र सत्यार्थी (रथ के पहिए), रांगये राघव(कब तक पुकारू), नागार्जुन (वरुण के बेटे), राजेन्द्र अवस्थी (सूरज किरण की छांव), राकेश वत्स (जंगल के आसपास), संजीव (धार/पाँव तले की दूब), भगवानदास मोरवाल(काला पहाड़), रणेन्द्र(ग्लोबल गाँव का देवता), राकेश कुमार सिंह (पठार पर कोहरा), महाश्वेता देवी (अग्निगर्भ)।

भौतिकवादी युग ने आदिवासियों के समक्ष दो रास्ते छोडें हैं। एक वे अपनी अस्मिता, संस्कृति, परम्परा को मिटा कर वर्चस्ववादी संस्कृति को स्वीकार कर लें या फिर पृथ्वी गृह से अपने अस्तित्व को मिटते हुए देखते रहें। आधुनिक कथा साहित्य में भौतिकवाद, पूँजीवाद, वैश्वीकरण के प्रभाव के कारण सांस्कृतिक भावना, सामूहिकता, प्रेम भावना एकता और आदर्श समाज विखंडित होता जा रहा है।

'किसी समुदाय की संस्कृति उसके जीवन के पूरे दायरे में अर्जित मूल्यबोध की पूँजी होती है और उसके लिए पहचान के संकट का सवाल तब आता है जब वह देखता है कि उस पर आक्रमण हो रहे हैं। तब उसकी पहचान के विघटित होने का भय उसे आंतकित करता है।'[10]

यही विकट परिस्थितियां उड़ीसा, झारखंड, राजस्थान, छतीसगढ़ में फैली तमाम आदिवासी समाज के सामने है। संजीव का उपन्यास'पाँव तले की दूब' आदिवासी समाज की अंतरंग परिस्थितियों की जांच पड़ताल करता है। संजीव ने आदिवासी अस्मिता के संकट को व्यक्त करते हुए लिखा है-

'यह अस्मिता जिसे तुम प्यार करते थे, प्रतिगामी शक्तियों की रखेल न बन जाए, यही तुम्हारे आघात के केन्द्रीय बिन्दू है न ?[11]

झारखंड केवल अकेला राज्य नहीं है जहां आदिवासी शोषण की चक्की में पिस्ते हैं, बल्कि भिन्न-भिन्न राज्यों में फैला आदिवासी समाज इन समस्याओं से जूझ रहा है। इस श्रेणी में राकेश कुमार सिंह द्वारा लिखित उपन्यास 'पठार पर कोहरा' में वर्तमान आदिवासी जीवन शैली को चित्रित किया गया है। यह उपन्यास शोषण, उत्पीड़न और अत्याचार के नए-नए दुश्चक्रों के जाल में फसे जन जातीय मानस को सजग करते हुए उनमें अस्मिता की रक्षा की दृढ़ इच्छा शक्ति वाले नायक की संघर्ष गाथा है।

आदिवासी समाज की पीड़ा अभिव्यक्त करते यह कथाकार मानवता के पोषक हैं। अत्याचार के विरूद्ध इन कथाकारों ने अपनी कलम के जरिए आन्दोलन को गतिशील किया और टूटते आदिवासी मन को दिशा प्रदान की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 डॉ0 हेतु भारद्वाज (सं0), पंचशील शोध समीक्षा, अंक 23, वर्ष–6 पृष्ठ 44
2 रूपचंद्र वर्मा, भारतीय जन जातीयां, सूचना विभाग और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली पृष्ठ–70
3 मोहनदास नैमिशराय, स्वाधीनता संग्राम में दलितों का योगदान, नीलकंठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ–55
4 निर्मला पुतुल, नगाडे की तरह बजते शब्द, भारतीय ज्ञानपीठ, पृष्ठ–91
5 रमणिका गुप्ता (स0) आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ–23
6 वही, पृष्ठ–98
7 निर्मला पुतुल, नगाडे की तरह बजते शब्द, भारतीय ज्ञानपीठ, पृष्ठ–56
8 रमणिका गुप्ता (स0) आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ–47
9 अरूण कमल, अपनी केवल धार, पृष्ठ–25
10 डॉ0 राम दयाल मुंडा, आदिवासी आस्तित्व और झारखंडी अस्मिता के सवाल, पृष्ठ–29
11 संजीव, पाँव तले की दूब, वागदेवी पॉकेट बुक्स, पृष्ठ–148

****

भारतीय साहित्य का सामाजिक सरोकार और संस्कृति का वैश्विक परिप्रेक्ष्य

डॉ. विजय कुमार पाण्डेय *

प्रस्तावना – भारतीय साहित्य के अध्ययन एवं साहित्यालोचन के क्षेत्र को जितना समृद्ध होना चाहिए उतना ही इसकी दृष्टि को भी समृद्ध होना चाहिए। साहित्य–आलोचना के संदर्भ में उपयुक्त एवं सर्वांगीण प्रणाली की खोज और परिणाम स्वरूप विभिन्न प्रणालियों के दावेदारों द्वारा वस्तुनिष्ठ आलोचना के दावे को इस प्रणाली का प्रमुख अभिप्रेत माना गया है। इस क्षेत्र में साहित्य की अपेक्षा साहित्यकार की ओर विशेष ध्यान जाता रहा है, इसलिए साहित्य में समाजशास्त्रीय अध्ययन की आवश्यकता पर बल दिया जाने लगा। फलत: समाजशास्त्रीय अध्ययन प्रणाली इसी प्रवृत्ति के प्रभाव में प्रचलित हुई।

साहित्य का साध्य मानव–हित एवं उन्नयन है। जो दृष्टिकोण के साथ–साथ व्यवहारिक पक्ष को उद्घाटित करता है – 'जैसे साहित्य के इतिहास लेखन की दृष्टि के विकास में समाज के इतिहास लेखन से मदद मिलती है, वैसे ही कला और साहित्य की समाजशास्त्रीय दृष्टि निर्माण में समाजशास्त्र सहायक बनता है।' [1]

समाजशास्त्रीय दृष्टि वाला आलोचक साहित्य को एक तथ्य के रूप में सामने देखता हुआ साहित्य को बोधगम्य बनाना चाहता है, जिससे मानव के मानवता को जागृत किया जा सके – 'क्योंकि साहित्य का सीधा संबंध मानवीय समाज से है और यह समाज मात्र सरंचना नहीं है, उसके कुछ ऊँचे मूल्य भी होते हैं. इसलिए साहित्यालोचन को आदि के आगे जाना ही होगा।'[2] भारतीय साहित्य में समाजशास्त्रीय उपागम प्रतिष्ठा अपने विकास पथ पर है, यद्यपि साहित्य के अध्ययन के लिए समाज सापेक्ष दृष्टि भारतीय साहित्य चिंतन धारा में पहले से उपस्थित है।

भारतेन्दु काल से देखा जाये तो स्पष्ट होता है कि समाज में अध्ययन–निरूपण तथा साहित्य सृजन की बात को त्याज्य समझा गया है। भारतेन्दु ने नाटक के संदर्भ में कहा है कि जन–रूचि के अनुकूल साहित्य के परिवर्तित रूप को देखने के लिए तैयार रहना होगा। द्विवेदी युग में स्वयं महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सामाजिक जीवन के परिप्रेक्ष्य में भाव को नूतन विषयों एवं नैतिकता से जोड़ा। इसलिए द्विवेदी जी की आलोचना दृष्टि सामाजिक उत्थान–सापेक्ष कही जा सकती है। साहित्य को समाज के संदर्भ में देखने का सम्मयक् प्रयास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल में मिलता है – 'द्विवेदी जी की आलोचना में सामाजिक उत्थान में सहायता देने वाले साहित्य को महत्व देने की जो प्रवृत्ति थी, शुक्ल जी स्वभावत: उसके अधिक समीप थे, उन्होंने सामाजिक पृष्ठों में रखकर कवियों एवं उनकी कृतियों तथा साहित्य की सामान्य प्रवृत्तियों को परखा।' [3] आलोचना के संदर्भ में उन्होंने न केवल समाज या लोक को प्रतिष्ठित किया वरन् साहित्य की प्रकृति की रक्षा करते हुए दोनों के आंतरिक संबंधो की गहन व्याख्या भी की।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी साहित्य को समाज के संदर्भ में देखने के पक्षधर हैं। उनकी दृष्टि मानव एवं मानव–समाज के मंगल एवं उन्नयन पर टिकी रही। उन्होंने सामाजिक समानता, पीड़ितों–दलितों के समाज की रक्षा एवं सहायता, रोग–शोक से मुक्त मानव की रचना को महत्व दिया। उन्होंने माना कि साहित्य का सौन्दर्य सामाजिक सौन्दर्य से ही आता है। यदि कोई व्यक्तिगत उपलब्धि सामाजिक उपलब्धि नहीं बन पाती तो वह व्यर्थ है, इसलिए वे कहते हैं – 'मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ।' [4]

साहित्य के अध्ययन के लिए समाजशास्त्रीय दृष्टि के विषय में जो धारणाएँ स्पष्ट हुई हैं, उनसे यह तथ्य स्पष्ट होता है कि विचारकों के दृष्टिकोण दो प्रकार के हैं – प्रतिबद्ध दृष्टिकोण (रूसी तथा चीनी) एवं समाज सापेक्ष दृष्टिकोण (अमेरिकन) प्रतिबद्ध दृष्टिकोण वाले विचारक साहित्य के मूल्यांकनार्थ सामाजिक प्रतिमान से सम्बद्ध है। साहित्य के अध्ययन के समय भी सामाजिक प्रतिमान ही इनकी दृष्टि में रहता है, और इनके अनुसार साहित्य का अपना स्वस्थ सामाजिक आधार होता है, तथा सौन्दर्य की संकल्पना सामाजिक आधार पर निर्धारित हो सकती है।

समाज सापेक्ष विचार वाले दृष्टिकोण वाले विचारक साहित्यिक घटना को समाज के संदर्भ में मूल्यांकित करने के पक्षधर तो है ही परंतु साथ ही कला परख या सौन्दर्य मूल्यों को भी महत्व देते हैं। समाज कल्याण के लिए मनुष्य का कल्याण अपेक्षित है। समाजशास्त्रीय दृष्टि के अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण पद्धति के रूप में प्रतिष्ठित होने का दमखम रखता है, क्योंकि यह समाज कृति, कृतिकार, परिवेश, मानवीय अनुभव, इतिहास का सृजन अन्त: प्रक्रिया से सीधा जुड़कर निष्कर्षात्मक तथ्य स्थापित करता है।

समाजशास्त्रीय अध्ययन के लिए व्यवाहारिक पक्ष की दृष्टि से निश्चित प्रतिमान होना अनिवार्य है। देवराज ने इस पद्धति के विषय में स्पष्ट किया है – 'समाजशास्त्रीय आलोचना किसी साहित्यिक कृति के बारे में दो प्रश्न करती है, एक यह कि उस कृति को जो विशेष रूप से प्राप्त हुआ है, उसका उस कृति के निर्माणकाल की सामाजिक वास्तविकता से क्या संबंध है अर्थात कहां तक उसके उस रूप की व्याख्या तत्कालीन सामाजिक यर्थाथ द्वारा हो सकती है। वहां व्याख्या से मतलब है कार्यकारण रूप व्याख्या का सामाजिक यर्थाथ साहित्यिक कृतियों के विशिष्ट रूपों में कारण भूत होता है। दूसरा प्रश्न जो समाजशास्त्रीय आलोचक उठाता है वह यह है कि – कृति विशेष या आलोच्य कृति का तत्कालीन समाज पर क्या प्रभाव पड़ा ? उसने सामाजिक जीवन को किस प्रकार प्रभावित किया।' [5]

किसी भी कृति का अध्ययन समाज के संदर्भ में करना इसलिए अपेक्षणीय है कि साहित्यिक कलाकृति में सामाजिक यथार्थ कृतिकार के

* अतिथि विद्धान, श्री गजानन भवन के पास, वार्ड नं. 06, पाण्डव नगर, शहडोल (म.प्र.) भारत

माध्यम से समाज में पुन: प्रेषित होता है, समाजशास्त्र की चर्चा करते हुए साहित्यिक समाज में चर्चित अवस्थाओं के चित्रण को समाजशास्त्रीय अध्ययन की पद्धति मान लेना भ्रामक है, क्योंकि यह मूल साहित्य समाजशास्त्रीय अभिकल्प से नहीं जुड़ती सामाजिक अध्ययन की पारम्परिक विधि कही जा सकती है। व्यक्तिवादियों का खण्डन भी प्रतिबद्ध समाजशास्त्रीयों का प्रकार्य है। व्यक्तिवाद वस्तुत: पूँजीवाद को जन्म देता है, इसके साथ ही प्रतिबद्ध विचारकों में यथार्थ को ही महत्व दिया। यथार्थ भी मनुष्य के साथ सम्बद्ध रूप में देखे जाने की बात कही गई है, इस अवधारणा के विचारक, पूँजीवाद, साम्राज्यवाद् एवं अभिजात्य का खुलकर विरोध करते है, वर्गहीन सामाज को देखना उनका लक्ष्य है। आगस्ट काम्टे ने अपनी समाजशास्त्रीय दृष्टि के माध्यम से साहित्य के समाजशास्त्रीय अधिगम को प्रेरित किया है, इमाइल दुर्खीम ने माना कि- सामाजिक घटनाओं का अध्ययन वस्तुनिष्ठ तथ्यों पर आधारित रहना चाहिए। सामाजिक घटनाएँ, सामाजिक तथ्य के रूप में देखी जा सकती हैं। इसमें मानसिक क्रियाओं की अपेक्षा निरीक्षण और प्रयोगिक पक्ष पर बल दिया और तुलनात्मक पद्धति को महत्वपूर्ण बताया।

साहित्य के सामाजिक अध्ययन पद्धति विषयक उपर्युक्त मतों से निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं- साहित्यिक घटना का परीक्षण, अवलोकन एवं वस्तुपरख अध्ययन के द्वारा साहित्यिक रचना को समझना चाहिए, क्योंकि साहित्यिक गतिशीलता के लिए ऐतिहासिक या तुलनात्मक आधार को अपनाया जाना अपेक्षित है, कृतिकार का अभ्यांतर पक्ष सामाजिक आधार पर खड़ा होता है, कृति की अन्त: सरंचना द्वारा कारण परक व्याख्या संभव है तथा उसके उद्देश्य की खोज सामाजिक परिप्रेक्ष्य में की जा सकती है।

साहित्य के इतिहास में भी समाज में वर्ग, वर्ण तथा जातियों को विभेदीकरण होता रहता है, यद्यपि समाजवादी समाज में वर्गहीन-समाज की कल्पना की जाती है तथा समानता, स्वतंत्रता और भ्रातृत्व-भाव को प्रधानता दी जाती है और वह किसी न किसी प्रकार का स्तरीकरण होता है और श्रेणीहीन समाज नहीं बन पाता है। इस प्रकार साहित्य में भी आयु, लिंग, प्रजाति, सम्पत्ति, व्यवसाय तथा आर्थिक सांस्कृतिक और राजनीतिक कारणों से वर्ग और जातियों का निर्माण रचनाकार अपनी कृतियों में करता है।

साहित्य में रचनाकार अपनी रचना के माध्यम से अभिव्यक्त राष्ट्रीय भावना में वर्ग-चेतना का पहलू भी महत्वपूर्ण होता है। वर्ग का तात्पर्य है कि - मानव जाति का ऐसा समय जिसके आर्थिक हितों में असमानता न हो। मेकाइवर तथा पेज के अनुसार - 'सामाजिक वर्ग एक समुदाय का कोई अंग है, जो सामाजिक प्रस्थिति के आधार पर शेष भाग से अलग होता है।'[6] सामान्यत: यह माना जाता है कि, जाति-व्यवस्था ईश्वरीय देन है, तथा यह शाश्वत्, सनातन और अपरिवर्तनीय है किन्तु वास्तविकता इसके विपरीत है, वस्तुत: जाति-प्रणाली एक गत्यात्मक व्यवस्था है। विभिन्न युगों में राजनीतिक, सामाजिक कारणो से इसमें परिवर्तन होते रहते हैं।

भारतीय साहित्य समाज की प्राण-शक्ति को लेकर फलता फूलता है, और बदले में समाज को एक नई दिशा प्रदान करता हैं,तथा साहित्यकार ही वर्तमान को साहित्य के माध्यम से भविष्य के लिए सुरक्षित रखता है, समाज को व्यवस्थित करने के लिए रचनाकार देश की संस्कृति को ही आवश्यक मानता है क्योंकि संस्कृति के माध्यम से ही साहित्य की पहचान होती है। प्रो0 देशराज सिंह भाटी ने बाण भट्ट की आत्म कथा में लिखा है - 'संस्कृति और समाज का परस्पर अविछिन्न संबंध है। यदि समाज संस्कृति को जन्म देता है तो संस्कृति उसमें प्राणों की प्रतिष्ठा करती है, इस प्रकार दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।'[7] भारतीय समाज में कई धर्मों व जातियों के लोग निवास करते हुए आपस में पारस्परिक एकता के साथ सभी प्रकार के उत्सवों को एक साथ मनाते हैं। डॉ. रांगेय राघव और गोविन्द शर्मा ने लिखा है कि - 'संस्कृति हमारी प्रकृति की बाह्य अभिव्यक्ति है, जो हमारी विचार प्रणालियों, कार्य प्रणालियों, कला, धर्म, नैतिकता और मनोरंजन द्वारा प्रकट होती है।'[8]

आज का मनुष्य दो विश्वयुद्धों का अनुभव कर चुका है, और वह स्थायी शांति के लिए प्रयासरत् है। वैज्ञानिक उन्नति में मनुष्य को ऐसे-ऐसे उपकरण दिए है, सारे संसार को पलभर में समाप्त किया जा सकता है। इस विनाश से बचने के लिए राष्ट्र आपस में संधि कर रहे है और स्थायी शांति के लिए प्रयत्नरत् है। भारतीय साहित्य के साहित्यकारों ने विश्वबन्धुत्व की भावना को ही एकमात्र उपाय बताते हैं, और यह उपाय तभी संभव हो सकता है, जब समाज के हर व्यक्ति ने सद्भावना व भाईचारे के गुण मौजूद हों।

आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय संबंधो की जटिलता का अवबोध नजर नहीं आता, लेकिन मानव स्वभाव पर आधारित सभ्यता समीक्षा की वह दृष्टि जरूर नजर आती है, जिसने गाँधी को एक मजबूरी के फैशन की तरह नहीं देखा है, बल्कि उनके व्यक्तित्व में अन्तर्निहित मानवीय करूणा की विशालता और व्यापकता के आधार पर उसने समझने की कोशिश की है।

गाँधी जी अपने देश में ही नहीं विश्व के संबंधो में भी अहिंसा पर बल देते थे उनका विश्वास था कि निहत्थे किन्तु पराधीनता स्वीकार न करने वाले देश-वासियों के सामने आक्रमणकारियों को झुकना पड़ता है। अहिंसा से विश्व विजय का एक रूप यह है कि शांति की स्थिति में तो प्रेम और मैत्री के रूप में अहिंसा अन्य देशों पर अपना प्रभाव डालती ही है और उन देशों के दिलों को भी जीतती है। श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान ने भी 'अहिंसा के भाव के द्वारा ही विश्व विजय की बात कही है।' इस अहिंसा भाव से प्रेरित होकर श्री उदय शंकर भट्ट ने विश्व के समस्त राष्ट्रो की स्वतंत्रता, सुख और नैतिक उत्थान की कामना की है वह चाहते हैं कि-'देश एक-दूसरे का दुख दूर करें, सभी देश महान, स्वतंत्र और सुखी हो संसार का समूल विकास हो, मनुष्य विशाल हो और विश्व से दासता, निरीहता, दरिद्रता, असंस्कृति, अन्याय, अनीति और अतिवाद आदि सभी दुगुर्णो का नाश हो।'[9] राष्ट्र कवि मैथलीशरण गुप्त ने भेदभाव के स्थान पर विश्वबन्धुत्व, मैत्री और करूणा का प्रतिपादन किया है, उन्होंने मैत्री और करूणा में विश्व कल्याण और विश्व-बन्धुता में उसका प्राण माना है।

हमें विश्व शांति के लिए सह अस्तित्व के साथ सभी के हित के लिए प्रयास करना होगा। भवानी प्रसाद मिश्र जी लिखते हैं -

'विश्वनीड़ उपमा होकर रह गया
कभी क्या व्यक्त हुआ कुछ!
इसीलिए यदि भिक्षु-चरण में
मैंने 'धम्मविजय गति' माँगी!
क्या बहुजन हिताय मेरा पथ
कृपा कटाक्षे सुगम बनेगा
क्या आगम की भाँति प्रकाशित
मेरे आगे निगम बनेगा।' [10]

कवि विश्व शांति और सह अस्तित्व की कामना करता है इसीलिए वह सम्राट अशोक के धम्म विजय के समान विश्वशांति की विजय चाहता है। वह आशा करता है कि आने वाला समय विश्वशांति का मार्ग लाएगा।

भारतीय साहित्य में प्रारम्भ से ही विश्व कल्याण के प्रयास चल रहे हैं और आज भी भारतीयों की यही भावना है कि सृष्टि के समस्त प्राणी सुखमय

जीवन व्यतीत करें और हमारे साहित्य सागर में विश्वबन्धुत्व के गीत गाए जाये । डॉ. दशरथ ओझा का विचार है –'हमारा भारतीय आदर्श विश्व कल्याण का है हमारे लिए समस्त बसुधा कुटुम्ब है अतएव विश्व मंगल अपेक्षणीय है।' [11] भारतीय साहित्य सामाजिक, सांस्कृतिक विविधता का साहित्य है, रचनाकार अपने आवेश या व्याकुलता को बांधकर उसे ज्ञानात्मक संवेदन के रूप में संवेदनात्मक ज्ञान प्रस्तुत करता है और विश्व में प्रेम और सद्‌भाव चाहता है।

निष्कर्षत – 'भारतीय साहित्य का सामाजिक सरोकार और संस्कृति का वैश्विक परिप्रेक्ष्य' शीर्षक के अन्तर्गत भारतीय साहित्य में समाज के प्रत्येक वर्ग से लेकर राष्ट्रीयता एवं विश्व व्यापकता को समझने का प्रयास किया गया है, तथा विश्व के समाज और संस्कृति के तात्विक वैशिट्य का मूल्यांकन किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. साहित्य का समाजशास्त्र – डॉ. बच्चन सिंह, भूमिका।
2. हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष – डॉ. शिवदान सिंह चौहान, पृ0 19.
3. रामदरश मिश्र – साहित्य अध्ययन की दृष्टियाँ, पृ0 20.
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी – ग्रंथावली, पृ. 26.
5. आधुनिक समीक्षा कुछ सीमाएँ, पृ. 131–132.
6. एडवांस इन्स्टीट्यूट ऑन मेथड्स अवरीचिंग सोसियालॉजी अव लिट्रेचर– पाण्डेय शशिभूषण शीतांसु।
7. समाजशास्त्र – सत्यकेतु विद्यालंकार, पृ. 26.
8. बाण भट्ट की आत्मकथा – प्रो. देशराज सिंह भाटी, पृ. 150
9. संस्कृति और समाजशास्त्र – रांगेय राघव, गोविन्द शर्मा, पृ. 11
10. भवानी प्रसाद संचयिता – प्रभात त्रिपाठी, पृ. 407–408.
11. भारत विजय – दशरथ ओझा, पृ. 131–132.

****

आधुनिक संदर्भ में नागार्जुन का जनवादी काव्य

डॉ. पूनम त्रिपाठी *

प्रस्तावना – 30 जून 1911 ई0 के मधुवनी जिला के सतलखा गाँव में जन्में नागार्जुन का साहित्यिक दुनिया में आविर्भाव उस समय होता है, जब सारे देश में रूढ़िया, अंधविश्वास, अशिक्षा, बेरोजगारी, वर्गभेद जाति भेद जैसी भयावह विसंगतियाँ व्याप्त थी। देश में ब्रिटिश शासन की काली छाया मंडरा रही थी। देश में राष्ट्रीयता का सर्वत्र अभाव था। देश के बुद्धिजीवी विदुर स्वार्थ में लिप्त हो चुके थे। समाज का ठेकेदार भोली–भाली जनता के शोषण पर तुला हुआ था। साहित्यकार जनता के सुख–दुख से पड़े अपनी व्यक्तिगत सुख–दु:ख की अनुभूति प्रकृति में ढूँढ रहे थे। कवि यर्थाथ को भूल कर कल्पना सागर में गोते लगा रहे थे। सभी अपनी डफली अपना राग वाली सिद्धांत को चरितार्थ कर रहे थे। घोर संकट के इस क्षेत्र में जनवाद ने मानव मुक्ति की कामना के साथ राष्ट्रीय चेतना के जागरण हेतु साहित्य के माध्यम से जनजीवन को प्रभावित किया।

जनवाद एवं जनवादी कवि– 'जनवाद' जन यानी लोग वाद यानि विचार धारा अर्थात विचारधाराओं में समाज के बेवस उपेक्षित, सर्वहारा वर्ग के हितार्थ उनकी सभ्यता–संस्कृति, आर्थिक, सामाजिक एवं धार्मिक उन्नति के लिए प्रेरणादायक साहित्य की रचनात्मक अभिव्यक्ति 'जनवाद' है'। इनकी समस्याओं का अवलोकन एवं उन्मूलन के लिए रचनात्मक अभिव्यक्ति करने वाला कवि जनकवि कहलाता है। 19वीं सदी के तीन महानायक कालमार्क्स, फ्रायड, डार्विन हुए जिनके विचारों का प्रभाव साहित्य पर पड़ा और साधारण जनता का साहित्य साधारण जनता के लिए बन सका। जनकवियों में नागार्जुन, केदारनाथ, त्रिलोचन शास्त्री, शमशेर बहादुर सिंह, भवानी प्रसाद मिश्र, रागेय राघव आदि कवियों में नागार्जुन की दृष्टि सर्वाधिक पैनी है। आमलोगों के जीवन में खुशहाली आने के बजाये जो बदहाली आयी थी, उसे नागार्जुन ने कई कोणों से देखा। नागार्जुन की काव्यधारा जनवादी परंम्परा में आगे बढ़ी। नागार्जुन सम्राज्यवाद के सांस्कृतिक विनाशक प्रत्यत्न को एक चुनौती देते है और उन क्रांतिकारी शक्तियों का आह्वान भी करते है। जिसके द्धारा पूंजीवादी शासन से मुक्ति मिल सकती है। वे आह्वान करते हुए कहते है।

'आओं खेत मजदूर और भूमिदास नौजवान।
आओ खदान श्रमिक और फैक्ट्री वर्कर नौजवान।
आओं कैम्प के छात्र और फैक्ट्रियों के नवीन प्रवीण।।
हाँ, हाँ तुम्हारे ही अंदर तैयार हो रहे है। आगामी युगो के लिवरेटर'।[1]

कवि पूँजपतियों और धनिकों के हृदय परिवर्तन के लिए क्रांति चाहता है। क्रांति के बिना श्रमिक वर्ग पर करूणा के बादल नहीं बरसने वाले है। नागार्जुन के व्यक्तित्व पर सर्वाधिक प्रभाव राहुल सांकृत्यायन एवं निराला जी का पड़ा। राजनीतिक रूप में नागार्जुन साम्यवादी विचार धारा के पोषक रहे। इनकी रचनाओं में सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण हुआ है। इनकी कविताओं में निराला जैसी सहजता, आक्रोश, व्यंग्य अक्खड़ता हुंकार एवं ललकार है। शोषण के विरूद्ध आवाज उठाकर शोषितों के प्रति सहानुभूति तथा अन्याय एवं अत्याचार का विरोध करने वाली कविताओं की रचना करके जनवादी विचारधारा का पोषण किया/पीड़ित मानवता को स्वर प्रदान करके नागार्जुन ने कवि के उत्तरदायित्व को भली–भाँति निभाया है।

नागार्जुन सत्ता व्यवस्था एवं पूंजीवाद के प्रति आक्रोश व्यक्त करने में निरन्तर अग्रणी रहे है। उनकी कविता में राष्ट्र प्रेम है तथा आजादी के सपनों के भारत जिसे भारतवासी क्रांतिकारी वीर तथा जननायक गाँधी जी ने देखा था। वह आजाद भारत में कितना सकार हो रहा था। इसकी यथार्थ चित्र जनकवि नागार्जुन अपनी कविता के माध्यम से खिचते है। 'देश हमारा भूखी नंगा घायल है बेकारी से। मिले न रोटी रोजी भटके दर–दर बने भिखारी से'। कवि इस विडम्बना से वाकिफ है कि गौतम गाँधी के सत्य अहिंसा वाले पावन भूमि पर वर्तमान परिस्थिति ऐसी हो गई है, जहाँ सत्य बोलना पाप है तथा झूठ चापलुसि युग धर्म बन गया है।

'सपने में भी सच न बोलो वरना पकड़े जाओगे?
भैया लखनउ दिल्ली पहुँचों मेवा मिसरी पाओगें।
माल मिलेगा रेत सको यदि गाला मजूर किसानों का
हम मर भुक्खों से क्या होगा, चरण गहो श्रीमानों का।[3]

भारत में भ्रष्टाचार का नंगा नृत्य देखकर कवि का हृदय रो उठता है और अपना आक्रोश इन शब्दों में व्यक्त करता है। 'रामराज में बकी रावण नंगा होकर नाचा है। सूरत शकल वही है, भैया बदला केवल ढांचा है'।[4] नागार्जुन के साहित्य में राजनीतिक गतिविधियों और शोषित गतिविधियों को प्रमुख लक्ष्य बनाया गया है। आज देश राजनीति के क्षेत्र में ऊपर से लेकर नीचे तक भ्रष्ट आचरण का शिकार है। शासन और उसे संचालित करने वाले नेता भ्रष्टाचार का शिकार है। स्वार्थी षड्यंत्र उठापटक, अधिकारों का दुरूपयोग, चुनाव में की जाने वाली गड़बडियाँ यानि सम्पूर्ण राजनीतिक वातावरण प्रदूषण का शिकार है। शासन के साथ प्रशासन भी पूरी तरह भ्रष्टाचार की गिरफ्त में है क्योंकि राजनीति एवं प्रशासन में चोली दामन का संबध होता है। श्रमिक वर्ग अभाव की चक्की में पिस रहा है, कृषक अनेक समस्याओं से जूझ रहा है। किन्तु उच्च वर्ग भोग विलास में पानी की तरह धन बहा रहा है। लोग मुखौटा लगाए दोहरी जीवन जी रहे है, बाहर से खद्दरधारी है पर भीतर से कसाई है।

'जमींदार है साहूकार है बनिया है, व्यापारी है।
अंदर–अंदर विकट कसाई बाहर खद्दरधारी है'।।[5]

सामाजिक विषमता की बढ़ती हुई खाई जनकवि नागार्जुन को व्यथित् कर देती है। जिसे वह कविता के इन पंक्तियों से व्यक्त करते है।

'खादी ने मल मल से अपनी साँठ गाँठ कर डाली है।

* म.नं. 7/479 खुर्माबाद, सिवान (बिहार) भारत

विड़ला टाटा डालमिया की तीसो दिन दिवाली है'।

यहाँ खादी का प्रतीकार्थ राजनीतिज्ञों तथा मलमल का प्रतीकार्थ पूँजीपतियों से है, जो दोनों आपस में मिलकर गरीबों को लूट रहे है। यह समाज में कैसी विडम्बना है कि जो श्रमिक करखानों में सारी वस्तुओं का निर्माण करता है, वही उसके उपयोग से वंचित है। महल बनाने वाले मजदूरो के लिए महल क्या झोपड़ी भी नसीब नहीं होती। वह किसान जो चिलचिलाती धूप में और ठिठुरन की सर्दी और बरसात में दिन रात कड़ी मेहनत करते हुए अन्न का ऊपार्जन करता है, पर उस अन्न का मूल्य निर्धारण किसी और के हाथों मे होता है।

नागार्जुन जी की समकालीन परिस्थितियाँ आज भी किसी न किसी रूप में मौजूद है। नागार्जुन जी का काव्य आज की समस्या रूपी अंधकारों का चिराग है। आज हमारे समाज के बीच यह विषमता की खाई एक विकराल रूप धारण करके खड़ी है। इन विकट परिस्थितियों का सामना कैसे हो? जो हमारे मानवीय मूल्यों को नष्ट कर देना चाहती है। इन परिस्थितियों में नागार्जुन जी का काव्य एक अच्छे सिपाही एक अच्छे समालोचक, एक अच्छे मार्ग दर्शक के रूप हमारी सहायता करता है। आज ऐसे अक्खड़ सिपाही, राजनेता और साहित्यकार की आवश्यकता है, जो इस विकट समस्या से हटकर मुकाबला करे। आज समाज को हर क्षेत्र में ऐसे नागार्जुन की आवश्यकता है, जो अपने हाथों में मशाल लिए भयंकर तुफानों में भी निर्भीक होकर सीना ताने चल सके।

जनकवि नागार्जुन का काव्य क्या आज की सामाजिक संरचना में हमारे साथ है? तो इसका उत्तर शायद हाँ में होगा, क्योंकि आज हम जिस देश में रह रहे है, वहाँ आर्थिक विषमता अपने चरम सीमा पर है। अमीर अत्यधिक धनवान होता जा रहा है। जबकि गरीबों की दुर्दशा बढ़ती ही जा रही है। हमारे हिन्दुस्तान के आज दो चेहरे हो चुके है। पहला 'इण्डिया' जहाँ संसाधनों की अधिकांश हिस्सा खर्च किया जाता है। जिसकी वजह से यहाँ समृद्धि है, तो दूसरी तरफ 'भारत' जो उपेक्षित है। आज इस देश में समता या जनवाद हेतु कोई स्थान खासतौर पर आर्थिक संसाधनों के बटवारे में दृष्टिगोचर नहीं होता है। शहरी 'इंण्डिया' दिन दूनी रात चौगुनी वाले अंदाज में तरक्की कर रहा है, तो ग्रामीण भारत आज भी मूलभूत सुविधाओं से वंचित है। कुपोषण अशिक्षा, बेरोजगारी, भुखमरी आज भी ग्रामीण भारत में व्याप्त है। यही अंसतोष का मुख्य कारण है जो आंतकवाद नक्सलवाद जैसी समस्याओं का जन्म होता है जिसे जनकवि नागार्जुन अपने कविता के माध्यम से संकेतित करते है –

'तरूणों को डाकू बनने दो
फिर करवाना आत्मसमर्पण
अपराधों की राख मलो तो
चमके प्रजातंत्र का दर्पण' [6]

'जो हमारा देश सबसे अधिक अबरपतियों की पंक्ति में पाँचवे स्थान से बढ़कर तीसरे स्थान पर है। जबकि एशिया महादेश में हमें दूसरे स्थान पर होने का गौरव हासिल है। हमारे देश की विडम्बना तो देखिए। पूरे विश्व में गरीबों की एक तिहाई हिस्सा अकेले भारत में निवास करती है। इतना ही नहीं उड़िया प्रांत के कालाहांडी का कलंक भी हमारे ही माथे पर थी, जहाँ विश्व की सबसे अधिक भुखमरी दर्ज की जाती है'। यहाँ पर नागार्जुन जी का काव्यगत व्यंग्य प्रासंगिक है।

'बीज नहीं, बैल नहीं, बरखा बिन अकुलाते है।
नहर रेट बढ़ गया खेत में पानी नहीं पटाते है?
नहीं खेत से कनका भर भी दाना उपजा पाते है।
पिछला कार्ज चुका न सके, साहु की झिड़की खाते है'।[8]

आज के वैज्ञानिक युगमें कृषि प्रधान भारत में भूख की वजह से मौत? घोर आश्चर्य! एक ऐसे देश में जहाँ हजारों टन आनाज भंडार के अभाव में सड़ जाते है और फिर उन्हें समुन्द्र में फेंक दिया जाता था। इससे यह सिद्ध होता है कि यहाँ संसाधनों की कमी नहीं बल्कि देश के नीति निर्माताओं की संवेदन हीनता की वजह से जरूरत मंदो तक अनाज नहीं पहुँचाया जाता और भूख से तड़प–तड़प कर मरने हेतु छोड़ दिया जाता था। नागार्जुन जी की काव्यगत स्थिति आज भी हमारे समाज में विद्यमान है। अत: हमे नागार्जुन जी के काव्यों से प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। आगे हम यह विचार करेगें कि आखिर इस गैर बराबरी का कारण और निवारण क्या है क्योंकि यह बहुत ज्वलंत मुद्दा है। अगर इसका शीघ्र समाधान नहीं किया जाता तो स्थिति बहुत विस्फोटक हो सकती है।

कारण और निवारण – नागार्जुन सर्वहारा वर्ग के शुभचिंतक और हितैषी रहे जो उनकी बहुत सारी कविताओं में परिलक्षित होता है। वर्तमान संदर्भ में अगर हम सर्वहारा अर्थात् गरीब की विवेचना करे, तो पहला प्रश्न यह उठता है कि आखिर गरीब कौन है? भारत में 1972 ई0 से गरीबी को परिभाषित करने हेतु कैलोरी को आधार माना गया है। अर्थात् वही व्यक्ति गरीब माना जाएगा जो शहरी क्षेत्र में रहते हुए प्रतिदिन 2100 कैलोरी अथवा गाँव में रहते हुए 2400 कैलोरी ऊष्मा पैदा करने में सहायक खाध पदार्थ नहीं खरीद सकता। ज्ञायातव्य है कि इसमें शिक्षा स्वास्थ्य जैसी मूलभूत जरूरतों को भी शामिल नहीं किया गया था। दूसरा प्रश्न यह उठता है कि 2100 अथवा 2400 कैलोरी प्राप्त करने हेतु खाद्यान्न खरीदने के लिए कितना पैसा चाहिए। योजना आयोग के 31 दिसम्बर 2011 के प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार। 'शहरी क्षेत्र में 32 रू. तथा ग्रामीण क्षेत्र में 26 रू. प्रतिदिन कमा लेने वाला गरीब नही था। महीने के लिए यही आकड़ा क्रमश: 965 रू. प्रतिमाह तथा 781 रू. प्रतिमाह बताया गया था'। इतना कम आधार रखने के बावजूद भारत में 29.9 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे बताए गए थे। इस पर भी हद तब हो गई। जब लगभग तीन महीने बाद 20 मार्च 2012 ई. को योजना आयोग ने यह स्तर और नीचे क्रमश: 28.35 रू0 तथा 42 रू. कर दिया गया, जबकि इन तीन महीनों में महँगाई और बढ़ी। इस बाजीगरी और कागजी कारामात के जरिए यह दावा किया गया था कि भारत में गरीबी 7.3 प्रतिशत कम हो गई। अर्थात् इन 7.3 प्रतिशत लोगों को बी. पी. एल. का कोई लाभ नही मिलता, क्योंकि इनकी तरफ से सरकार ने आँखे फेरकर गरीब मानने से ही इनकार कर दिया था। हालाँकि वर्तमान समय में शहरी क्षेत्र में 47 रू. तथा ग्रामीण क्षेत्र में 32 रू. (7 जुलाई 2014 के आइम्स ऑफ इण्डिया में प्रकाशित खबर के अनुसार) कर दिया गया है। जिससे बी0 पी0 एल0 का स्तर कुछ बढ़ा है। आर्टी आई कार्यकर्त्ता श्रीजोनी नाग के जबाब में तिहार जेल के प्रशासन ने बताया कि– 'हमारे कैदियों के ऊपर रोजाना 80.35 रू. खर्च किया जाता है। परन्तु यह भी संतोषजनक नहीं है'। क्या आज भी गरीब कैदियों से गया गुजरा है। मैं सरकार का ध्यान इस तरफ आकृष्ट करना चाहती हूँ कि इस दिशा में न्यायोचित कदम उठाय जाए'।

भारत के आकड़ों के अनुसार 44 प्रतिशत बच्चे (जिनकी उम्र पाँच वर्ष से कम है) कुपोषण से ग्रसित है और 15 से 49 वर्ष की 51 प्रतिशत गर्भवती महिलाएँ, एनिमिया अर्थात् रक्ताल्पता से जूझ रही है। स्पष्ट है कि उनके पिता या पति के पास इतने पैसे या संसाधन नहीं है कि उन्हें पौष्टिक भोजन प्रदान कर सके। दूसरी तरफ अनिल अंबानी जैसे धन कुबेर है, जो जन्मदिन के अवसर पर अपनी पत्नी को जहाज तोहफे में देते है। जो यह विडम्बना

नागार्जुन के कविता से द्रष्टव्य होता है।

'पूस मास की धूप सुहावन
फटी दरी पर बैठा है चिर रोगी बेटा
राशन के चावल से कंकड़ बीन रही पत्नी बेचारी
गर्भ भार से अलस शिथिल है अंग-अंग
छप्पर पर बैठी है बिल्ली
किसके घर से जाने क्या कुछ खाकर आई है।
चला-चलाकर जीभ स्वाद लेती होठों का।'[9]

इतना ही नहीं कुछ लोगों के पास अकूत सम्पति है कि शायद भारतीय बैंक उन्हें संभालने में सक्षम नही है क्योंकि यह हेरा-फेरी से हासिल की गई है। अतः आय से अधिक सम्पति के मामले में फंसने का भय है। फलतः तथा कथित कालाधन के रूप में इस धन का स्वीस बैंक में रख दिया जाता है। अगर इस सम्पति को बाहर जाने पर रोक लगाकर टैक्स चोरी रोक दी जाए और इस पैसे का सही इस्तेमाल किया जाए, तो कुपोषण और रक्ताल्पता जैसी समस्याओं को आसानी से समाधान किया जा सकता है। हमारे देश में नागार्जुन जी के काव्यगत स्थिति नहीं रहेगी जो कि द्रष्टव्य है।

'चाट रहे है कुछ प्राणी, बाहर जुठन के ढोने।
चहक रहे है अंदर में, लक्ष्मी के पुत्र सलोने।
कला गुलाम हुई इनके आगे-कविता पानी भरती है।
सौ-सौ लोगों की मेहनत, इनकी मुस्कानों पर मरती है'।[10]

हाँलाकि खुशी की बात यह है कि वर्तमान सरकार द्वारा कालाधन वापस लाने के लिए बहुत सारे कदम उठाएँ गए है। उम्मीद है कि इस धन का उपयोग कुपोषण और रक्ताल्पता जैसी कई समस्याओं को दूर करने के किया जाएगा। इस तरह से स्पष्ट है कि सही योजना बनाकर उनका ठीक से क्रियान्वयन किया जाए, तो अमीरी-गरीबी की खाई को बहुत हद तक पाटा जा सकता है। जो संसाधन हमारे पास है, उनके सही प्रंबधन और ईमानदारी से बँटवारे की आवश्यकता है। यह ज्ञायातव्य हो कि 'हम सब धरती के संतान है और धरती के समस्त सम्पदा पर हम सबका समान अधिकार है' जो नागार्जुन जी के काव्य का मूल्य संदेश है।

निवारण - इसके निवार हेतु केवल कागजीय कारवाई की जरूरत नहीं है। जैसा कि नागार्जुन जी के काव्य के द्वारा ध्वनित किया गया है'।

'पाँच वर्ष की बनी योजना एक, दो नही तीन।
कागज की फूलों ने ले ली सबकी खुशबू छीन।।
बलिहारी कागजी खुशी के क्यों न बजाएँ बीन।
फँटे बाँध से बाजू बोले हम भी है स्वाधीन।
अवश्मेघ का घोड़ा निकला चित्ता है चारों नाल।।
कौन कहेगा आजादी के बीते तेरह साल'।[10]

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में भुखमरी, कुपोषण और रक्ताल्पता बहुत शर्म की बात है। कम आमदन बढ़ती महंगाई दर इसका मुख्य कारण है। खाद्य पदार्थ के महँगें होने की वजह है लागत खर्च में वृद्धि। खाद्य-बीज और कृषि के औजारों के मूल्य आसमान छू रहे है, पर उपादित अनाज की कीमत और बढ़ाने से महंगाई और बढेगी। इसी वजह से किसानों के उत्पादों का न्यूनतम मूल्य भी सरकार अधिक नहीं बढ़ाती। ऐसे में खेती एक घाटे का सौदा हो गया है। अतः कई बार किसान बैंक का लोन नहीं चुका पाने के वजह से आत्माहत्या तक कर लेते है। आखिर इस समस्या का समाधान क्या है? मेरे विचार में इसके लिए समय रहते कदम उठाने की आवश्यकता है। उदाहरण के तौर पर महाराष्ट्र के विदर्भ में किसानों ने जब आत्महत्या करनी शुरू कर दी, तब की तत्कालीन कॉंग्रेस सरकार द्वारा 72 हजार करोड़ों रूपये कर्ज माफी हेतु बाँट दिये गए। पर यही पैसा समय रहते कृषि उपकरणों, सिचाई उपकरणों और उर्वरक के साथ-साथ बीज के मुफ्त वितरण पर खर्च किया गया होता, तो लागत खर्च को काफी कम किया जा सकता था। इस तरह से किसानों को काफी फायदा पहुँचता और साथ ही साथ सरकारी खर्चे पर फसलों का बीमा किया जा सकता था। ताकि सुखे की स्थिति में भी किसानों को एक निश्चित मूल्य प्राप्त हो जाता इससे किसान आसानी से बैंक का खर्च चुकाकर सम्मान की जिंदगी जी रहे होते और आत्महत्या जैसे कदम नही उठाना पड़ता। हाँ इसके लिए योजना के नौका और भाषण की पतवारों से अपनी चुनावी वैतरणी पार करने वाले नेता, प्रगति का मात्र कागजी घुड़ दौड़ करे तो यह संभव नही है। जैसा कि नागार्जुन राजनेताओं के कर्महीन कर्मठता की ओर इशारा करते है।

'कागज पर खेती होती है कलम हुई हर-फार
छोड़ रहे है गाँव-गाँव खेत मजदूरों के परिवार
कृषि विकास के खबरे प्रतिदिन छाप रहे अखबार
असेम्बली की छत पर फसले उगा रही सरकार'। [11]

इस तरह से हम देखते है कि हमारे पास जो संसाधन है, अगर उनका ही सही प्रबंधन किया जाए और सही समय पर आवश्यक कदम उठाया जाए तो ऐसी कई सारी समस्याओं को पैदा होने से रोका जा सकता है। इतना ही नही खाद्य महँगाई दर पर काबू पाकर लाखों जिंदगियाँ बचाई जा सकती है। इस प्रकार जन-जीवन का स्तर उँचा उठेगा और आर्थिक विषमता में कमी आएगी। हाँलाकि तथा कथित स्थितियों से अवगत हो वर्तमान सरकार जो 'सबका साथ सबका विकास' के साथ आई है। इससे कॉफी लोगों की उम्मीदे है। लोगों को भरोसा है कि 'जमीनी धरातल पर काम होगा जिससे गरीबी का दंश झेलते लोगों को वास्तव में राहत मिलेगी, सिर्फ आकड़ों में नहीं'। इण्डिया फुड बैंकिंग के अनुसार 40 प्रतिशत फल सब्जियाँ तथा 20 प्रतिशत अनाज सप्लाई चेन मैनेजमेंट के खामी के वजह से बर्बाद हो जाता है। अतः सरकार से मै निवेदित हूँ कि 'इस खामी को दूर कर इसे जरूरत मंदो तक पहुँचाया जाए। इससे काफी गरीब लोगों को राहत मिल सकती है'। अगर संसाधनों का न्याय पूर्ण तरीके से वितरण किया जाए, तभी हमें प्रतीत होगा कि 'हम नागार्जुन जी के जनवादी काव्यों को समझ सके है और उनके काव्यगत शिक्षाओं को आत्मशात कर पाए है'।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्यासी पथराई आँखे - नागार्जुन, हिन्दी कविता संग्रह 1962
2. नागार्जुन - सत्यनारायण 115
3. कविता 'रामराज्य' नागार्जुन।
4. दूर से आए हम मनवाने जिन पृ0 352 - नागार्जुन।
5. बीते तेरह साल - नागार्जुन।
6. घर से बाहर निकलेगी कैसे जलवन्ती - नागार्जुन -पृ0 52
7. द हिन्दी न्यूज नेशनल-अप्रैल 2016 के आधारभूत।
8. प्यासी पथराई आँखें-पृ0 34-नागार्जुन।
9. बीते तेरह साल-नागार्जुन पृ0 337-338
10. युगधारा - नागार्जुन पत्रिका हिन्दी बुकलेट 1953
11. हंस - ' शांति' अंक-9 नागार्जुन।
12. इण्डिया टुडे।
13. द हिन्दी न्यूज नेशनल अप्रैल 2012

द्वन्द्वात्मक विचारणा एवं नयी कविता

डॉ. गायत्री वाजपेयी *

प्रस्तावना – यह शाश्वत सत्य है कि युग गति और मति के अनुरूप प्रत्येक वस्तु के मूल्यांकन के मानदण्ड बदलते रहते हैं। साहित्य भी इससे विलग नहीं है वरन् वह तो एक वर्धनशील कला है, अत: उसमें नव्य विचारणाओं एवं नूतन स्फुरणाओं का समावेश अवश्यसम्भावी है। आधुनिक हिन्दी साहित्याकाश की प्रत्येक काव्यधारा में क्रमश: छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद आदि में यह नवीनता परिलक्षित होती है। प्रयोगवाद के अनन्तर अस्तित्व में आने वाली नूतन काव्य धारा (नयी कविता) भी नवीन मन: स्थिति का प्रतिबिम्ब है उसमें सर्वत्र नवीन जीवन दृष्टि, नवीन मानवीय मूल्य तथा नवीन सन्दर्भो को नवीन धरातल पर प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। साथ ही नव्य के स्थापन तथा प्राच्य के भी विस्थापन के मध्य एक द्वन्द्वात्मक स्थिति भी सर्वत्र दृष्टिगत होती है। शोधपत्र में नयी कविता में अन्तर्भावित इसी द्वन्द्वात्मक विचारणा के रेखांकन का प्रयास है।

हिन्दी साहित्याकाश में प्रयोगवाद के अनन्तर जो काव्यधारा अस्तित्व में आयी उसे साहित्य समीक्षकों ने नयी कविता के नाम से संबोधित किया चूँकि काव्य एक वर्धनशील कला है जिसमें नवीन विचारों एवं नवीन स्फुरणाओं का समावेश अवश्यसम्भावी है। नयी कविता में भी नवीन जीवन दृष्टि, नवीन मानव मूल्य तथा नवीन सन्दर्भो को नवीन धरातल पर प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति सर्वत्र दिखलाई पड़ती है। वस्तुत: नयी कविता नवीन मन: स्थिति का एक प्रतिबिम्ब है जैसा कि रवीन्द्र भ्रमर के इस कथन से ध्वनित होता है – 'नयी कविता केवल इसलिए नयी नहीं है कि उसकी रचना आज हो रही है वरन् इसलिए कि विषयवस्तु साजसज्जा तथा रूपगत सज्जा समस्त काव्य उपकरणों की दृष्टि से उसने अपने को पिछली काव्य परम्पराओं से नितान्त भिन्न कर लिया है।' यह निर्भ्रान्त सत्य है कि हर युग की अपनी एक दिशा दृष्टि होती है और परिस्थितियों में परिवर्तन के फलस्वरूप विचारधारा में परिवर्तन होता रहता है, नयी विचारधाराएँ जन्म लेती हैं, जो भावों को नये सिरे से स्फूर्ति, शक्ति और गति प्रदान करती हैं। नयी कविता की भी अपनी एक दृष्टि है जो किसी विशेष वाद, विचार एवं सम्प्रदाय से बंधी न होकर जीवन को नवीन दृष्टिकोण से देखने का प्रयास करती है। नया कवि जीवन के प्रति घोर यथार्थवादी दृष्टिकोण लेकर काव्य क्षेत्र में प्रवेश करता है। यह नया दृष्टिकोण दो कारणों से पैदा हुआ है, एक तो सम सामयिक परिस्थितियों के कारण और दूसरा आधुनिक चिन्तनधाराओं के प्रभाव के कारण। नये कवि की विशेषता यह है कि वह किसी वैचारिक या सैद्धान्तिक खेमे में न बंधकर वर्तमान जीवन के प्रत्येक पहलू को मुक्त दृष्टि से देखने का प्रयास करता है। वह जो भी कहता है, वह जीवन की कथा है, उसका पूरा प्रयत्न है– जीवन के सारे दु:ख दर्द एवं हलचल को महसूस करना और उसे व्यक्त करना। नयी कविता में विज्ञान राजनीति, अर्थनीति के कुचक्र में फँसे पिसते हुए जीवन और समाज के अनुभव को अपने वैचारिक स्तर पर प्रस्तुत करना नये कवि का अभीष्ट है। वह एक सजग कलाकार के रूप में युगीन यथार्थ को अत्यधिक स्पष्ट एवं आत्मीय ढंग से व्यक्त करता है। जहाँ उसमें प्रचुर युगबोध है, तो पर्याप्त परम्पराबोध भी है क्योंकि परम्परा को बिल्कुल छोड़ देना या नवीनीकृत कर देना सम्भव ही नहीं है। यही एक वैचारिक द्वन्द्व की स्थिति नये कवि के सामने है, जिसकी सहज अभिव्यक्ति जगदीश गुप्त की इस कविता में हुई है –

ढ़ोऊँगा कहाँ तक
परम्परा व्यर्थ का बोझ है,
दे दूँ इसे
किसी योग्य याचक को,
ऐसा सोच
ऊपर को उठ आया
दायाँ हाथ
पर ज्यों ही देने को हुआ दान
सहसा मुझे
याचक पहचाना लगा
रोशनी में देखा
अरे! वह तो –
मेरा ही बायाँ हाथ था।

नयी कविता अपने युग की विभिन्न विचारधाराओं गाँधीवाद, मार्क्सवाद, समाजवाद, मनोविश्लेषणवाद आदि से अत्यधिक प्रभावित हुई है। अरविन्द के वेदान्त दर्शन, रवीन्द्र दर्शन, एवं अस्तित्ववादी दर्शन ने तो नये कवि को बहुत प्रभावित किया है। इन वादों और दर्शनों के प्रभाव स्वरूप उनके चिंतन को नवीन दृष्टि मिली है, जिसके आधार पर उन्होंने अपने परिवेष एवं मानव व्यक्तित्व को देखा एवं परखा है। युगीन सन्दर्भो एवं विषम परिस्थितियों के अनुरूप ही उन्होंने नये मानव की कल्पना की। क्षणवाद, अहंवाद, विकृत सौन्दर्यबोध, मृत्युबोध, कुंठा, घुटन, निराशा आदि प्रवृत्तियों को काव्य में प्रतिष्ठित किया। जिसमें मानव, समाज, जीवन, ईश्वर, धर्म, प्रकृति, प्रेम एवं सौन्दर्य के प्रति नवीन दृष्टि व्यक्त हुई, जो यथार्थ मूलक है। नयी कविता में मानव के जिस रूप की प्रतिष्ठा की गई है। वह लघुमानव है और उसे अपनी लघुता का एहसास भी है लेकिन वह अपनी विशिष्टता के प्रति सतर्क है। वह जागरूक, स्वतंत्र और अपने परिवेश के प्रति आस्थावान है। उसके मन में दर्द है, संशय है, कुंठा है, विवशता है किन्तु विश्वास भी है कि इतने पर भी वह अपनी विशिष्टता और स्वतन्त्रता को प्रतिपादित कर सकेगा। वह निराशा की स्थिति में भी चिन्तित नहीं है, बल्कि जीवन के प्रति पूर्ण आस्थावान है। जिसकी अभिव्यक्ति धर्मवीर भारती की इन पंक्तियों में मुखरित हुई है –

रात,
पर में जी रहा हूँ निडर
जैसे कमल

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

जैसे पंथ
जैसे सूर्य
क्योंकि
कल भी हम खिलेंगे
हम चलेंगे
हम उगेंगे
और
वे सब साथ होंगे
आज जिनको रात ने भटका दिया है।

भारत भूषण अग्रवाल ने 'बहुत बाकी है' शीर्षक कविता में जीवनगत आस्था को वाणी देते हुये यह उद्घोषित किया है कि जीवन में भले ही कितने भी संकट और परेशानियाँ आये, भले ही पुराने संगी साथी साथ छोड़ दें और कुछ पलों के लिये हृदय में भी उत्साहहीनता आ जाए किन्तु कवि मन पराजय नहीं मानता, वह तो यही संदेश देता है-

शान्त हो जा मन! कि जीना है अभी
अभी जीवन में अनागत है न जाने और कितने ज्वार
जाने और कितने अभावित, अकल्पित संघर्ष
कितनी व्यथा कितना हर्ष।
अभी पथ का नहीं आया कूल
अभी यात्रा का नहीं है अंत
इस विषम संघर्ष में तू अभी हारा नहीं है।

आस्था की इस अतिशयता में जीवन की कड़वाहट भी मधुर लगने लगी है। नयी कविता में व्यंजित यह वह आस्था है जहाँ जीवन दूभर हो जाने पर भी जीत की भावना व्यक्ति को निराश नहीं होने देती है। बल्कि उसे स्वप्नद्रष्टा नहीं, वर्तमान स्थितियों में भी कर्मरत होने की प्रेरणा देती है

कर्मरत रहो
स्वप्न मत देखो
कहीं उन्माद रह जाए न भौंरो का
निरर्थक गीत उद्दीपन।

नयी कविता का मानव आस्था का यह दीप इसलिए भी जलाये रखने की बात कहता है क्योंकि परिस्थितिजन्य विषमता अत्यधिक बढ़ गई है। जीवन में सर्वत्र असंतोष, अनिश्चय और दुविधा व्याप्त है। घर से लेकर समाज तक जहाँ भी देखो यही रूग्णता दिखलाई पड़ती है। जहाँ सब कुछ अनजाना-सा लगता है। दुष्यंत कुमार की ये पंक्तियाँ ऐसे ही अनजानेपन को व्यक्त कर रही हैं -

अनजानी लगती है
अपनी ही हर पुकार
छू छू कर लौट-लौट आती
हर गली द्वार

ऐसी स्थिति में मनुष्य जीवन की वास्तविकता को पहचान रहा है वह महसूस कर रहा है कि जीवन कहीं से रिक्त हो रहा है, आशाएँ बिखर रही हैं और जीवन निष्क्रिय होता जा रहा है। वह विवषता और अनास्थाजन्य कुंठाओं से ग्रस्त होने के कारण सुख-दु:ख को भी पूरी तरह भोग नहीं पा रहा है। सामाजिक और सांसारिक स्थितियाँ ही ऐसी बन गई हैं कि मानव दुविधा और अनिश्चय से हैरान है। प्राचीन मूल्य के विसर्जन और नये मूल्यों के ग्रहण के बीच उलझ गया है। ऐसी द्वन्द्वात्मक स्थिति उसे कहाँ ले जाएगी यह प्रश्न चिन्ह है-

ऐसी परिस्थिति को
मेरे मनोबल भला कब तक सहेंगे ?

लेकिन जैसे ही मनुष्य अपनी स्थिति को संकट में पाता है वैसे ही वह अपने अस्तित्व के प्रति सचेत हो जाता है। अनेक संकल्प, विकल्प, अनिश्चय, अनास्था और विवषता से गुजरता हुआ भी वह बड़ा जागरूक है। वह किसी के इच्छा संकेतों पर नहीं चलता बल्कि स्वयं की इच्छा से चलता है तथा बुद्धि की मानता है। उसकी आस्था ईश्वर से कहीं स्वयं में अधिक है। वह भाग्यवादी नहीं अपितु कर्मवादी है, उसके चलने पर जीवन चल सकता है, वह जो सोचता है, जो करता है, जो करेगा वही ठीक है। अपने व्यक्तित्व व अस्तित्व के प्रति उसका अटल विश्वास है जिसका दिग्दर्शन सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की इन पंक्तियों में बखूबी हुआ है -

बार-बार अपने भीतर दोहराता हूँ
मैंने जो कुछ किया
ठीक किया
मैं जो कुछ कर रहा हूँ
ठीक कर रहा हूँ
मैं जो कुछ करूँगा ठीक करूँगा, ठीक करूँगा
अपने पर मेरी आस्था
इतनी छोटी नहीं
कि ईश्वर के कंधों पर बैठकर ही
इन पहाड़ियों के पार देख सकूँ।

नयी कविता, बौद्धिक और वैज्ञानिक परिवेश में विकसित हुई है। विज्ञान के उदय से जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं मानव जीवन में अनेक नये मूल्य विकसित हुए हैं। जैसे जीने का अटूट मोह, प्राचीन मर्यादाओं को तोड़ नवीन प्रस्थापनाएँ, मुक्ति का आग्रह, स्वाभिमान और स्वतन्त्रता आदि। नयी कविता में जीने की लालसा और मुक्ति कामना की प्रखर अभिव्यक्ति हुई है। कुँवर नारायण की इन पंक्तियों में जीवन जीने की ललक कितनी प्रबल रूप में दिखलाई पड़ रही है -

अभी तो बूझ लेने का प्रलोभन
शून्य से भी जूझ लेने का नियोजन
फिर कभी क्या मिल सकेगा जिन्दगी में
जिन्दगी से भी बड़ा कुछ।

मानव की जिन्दगी में मृत्यु का भय सदैव बना रहता है मृत्युबोध उसे जागरूक बनाता है। नये कवियों का मानना है कि केवल जीना ही नहीं, सार्थक जीना जरूरी है। वह जीवन तो मृत्यु से भी गया गुजरा है जिसमें कोई वैशिष्ट्य नहीं हैं क्योंकि शारीरिक भोगों से पूर्णत: की प्राप्ति नहीं होती, जीवन कृतार्थ भी नहीं होता है। नया कवि जीवन को विराट अर्थ देने का परामर्श देता है जिससे मृत्यु के संदिग्ध क्षणों में भी जिया जा सके -

चाहता हूँ पा सकूँ
उस एक क्षण की
............नहीं.............
क्षण के भी विभाजित
मात्र उतने ही अंश की अनुभूति
जितने में अनाहत धार जीवन की
अचानक मौत की काली गुहा में डूब जाती है।

इस प्रकार नयी कविता द्वन्द्वात्मक विचारणा की कविता है उसमें प्रतिष्ठित मानव आस्था - अनास्था, संकल्प - विकल्प, निश्चय - अनिश्चय, विवषता - परवषता, स्वीकार-अस्वीकार तथा अहं और उसके

विसर्जन की द्वन्द्वात्मक स्थितियों में सामने आता है। लेकिन अपने इस वैचारिक, द्वन्द्व में भी वह अपनी अस्मिता एवं पहचान के प्रति सचेष्ट है। उसमें पर्याप्त अस्तित्व बोध और दायित्व बोध है। वह अपने परिवेश के प्रति पूर्ण सतर्क रहते हुए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं में प्रवेश करता है। वह समाज का महत्वपूर्ण अंग है तथा उसका व्यक्तित्व सामाजिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. धर्मयुग – 27 मार्च 1996
2 सातगीत वर्ष – धर्मवीर भारती पृष्ठ 78–79
3. ओ अप्रस्तुत मन – भारत भूषण अग्रवाल पृष्ठ 93
4. चक्रव्यूह – कुँवर नारायण सिंह पृष्ठ 49
5. आवाजों के घेरे में – दुष्यंत कुमार पृष्ठ 75
6. युग–चेतना – दुष्यंत कुमार, अक्टूबर 1957
7. एक सूनी नांव – सर्वेश्वर दयाल सक्सेना पृष्ठ 29–30
8. चक्रव्यूह – कुँवर नारायण पृष्ठ 49
9. शब्द दंश: – जगदीश गुप्त पृष्ठ 15

****

भोजपुरी कविता में आत्मिक एवं सामाजिक सौन्दर्यबोध

डॉ. अनुपम कुमार वर्मा *

शोध सारांश – भोजपुरी कविता लोक कण्ठ से प्रस्फुटित गीत और लोकजीवन की संवेदना तथा अनुभूति जो स्वाभाविक रूप से धड़कती है, उसका परिमार्जित रूप है। जिसमें लोक भाषा की जीवन्तता है, तो लोक मुहावरे और भोजपुरी संस्कृति अपनी सम्पूर्णता में विराजमान है। सत्य को पूरी आँच के साथ अभिव्यक्ति देने में भोजपुरी कविता समर्थ और पानीदार है। वह सत्य चाहे जीवन का हो, प्रकृति का हो, लगातार परिवर्तित होते वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक परिवेश का हो, भोजपुरी कविता की भाषा में एक अद्‌भुत सांस्कृतिक ऊष्मा और लालित्य है। साथ ही अभिव्यक्ति का एक खास तेवर भी है, जो उसे अपने समकालीन भाषा-भाषी कविता के समकक्ष खड़ा करती है, अपितु कुछ बिन्दुओं पर आगे भी ले जाती है।

प्रस्तावना – साहित्य जीवन के रास-रंग, हर्ष-विषाद का समवेत् दिग्दर्शन है और कविता उसकी पूर्णाहुति। विश्व वाङ्मय के समस्त जगत् में आत्मिक और पारिवारिक जीवन की दुर्लभ छटाएँ विद्यमान हैं। उसमें भोजपुरी कविता लोक जीवन के अधिक निकट होने के कारण उसमें जीवन के आत्मिक सुख की अनुभूतियाँ रंग-बिरंगे रूप में विद्यमान है, तो साथ ही साथ पारिवारिक जीवन की मूल्य मान्यताएँ भी अपने चरम इत्यता की प्रतिध्वनि है। जैसा कि डॉ0 विमलेश मिश्र कहते हैं – 'परिवार सुख-दु:ख, हर्ष-विषाद एवं प्रेम कलह का समष्टि रूप है। पारिवारिक सम्बन्ध रूचिकर और अरूचिकर दोनों होते हैं। माता-पुत्र, माता-पुत्री, पिता-पुत्री, भाई-बहन, पति-पत्नी, सास-बहू, ननद-भावज-जेठानी, सौत-सौत, देवर-भाभी, समधी-समधिन तथा मामा-भाँजा आदि का सम्बन्ध परिवार में विशेष स्थान रखता है।[1]

इसमें एक बिन्दु ध्यान देने योग्य है कि काल की निर्बाध गति के साथ परिवार की सीमाएँ भी संकुचित हुई है। इसलिए साहित्य में अन्तर्विरोध भी व्याप्त हुआ है। कभी काका-काकी, चाचा-चाची, दादा-दादी, इया, बुआ ये सभी परिवार के अंग होते थे किन्तु आधुनिकता के चकाचौंध में पारिवारिक सम्बन्ध संकीर्ण हो गये। माँ-बाप भी परिवार के हिस्सा होंगे या नहीं एक प्रश्न वाचक लकीर खींच गयी है। उत्तर आधुनिक काल में परिवार से बेटा-बेटी को भी किनारे कर विचारों के अन्त की उद्घोषणा कर दी। किन्तु ज्यादा संतोष का विषय है कि भोजपुरी कविता अपनी परिवार विषयक परिभाषा में ज्यादा संकीर्ण नहीं हो पायी है। अभी भी भाई-बहन, माँ-बाप, पति-पत्नी, बेटा, ननद-भावज-जेठानी, उसके अभिन्न अंग है। भाई-बहन सम्बन्धों की यह कविता कितनी अनुकरणीय है –

जेठ की दुपहरी में पियासल जइसे हिरना
बहुत दिनवाँ में अइलऽ मोरा बिरना
नीके नीके रहै तोरी जँधिया जुअनियाँ
भयवा के गोइवा अेटेले भगवनियाँ।[2]

भेंटने की यह परम्परा आत्मिकता की बड़ी पहचान है, जो जीवन को परम्परा में परिभाषित करती है। माँ-बेटी के अलग होने की विशाल दृष्टि का कितना अनोखा चित्रण है। लड़की का जब विवाह होने लगता है, तब माँ अत्यधिक दु:खी हो जाती है। वह सोचती है कि अब मेरी लड़की पराई हो जायेगी। त्रिलोकी नाथ उपाध्याय की एक कविता में माँ से बेटी पूछती है –

माई काहें तोर मुँहवा झुराइल रे ना,
नैना रहि रहि काहें भरि आइल रे ना।
माई काहें, हमसे नेह अधिकाइल रे मा,
काहे मनवाँ माई सचिया समाइल रे ना।[3]

यह सुन माँ कहती है –

बेटी कल्हियाँ बभना एक आइल रे ना,
एक पीयरि पतिया ले आइल रे ना।
बेटी कोखिया के दाह ना बुलाइल रे ना,
तुहरे गवने के दिनवाँ धराइल रे ना।[4]

दाम्पत्य प्रेम की गार्हस्तिक वृत्ति का जितना सुरम्य वर्णन भोजपुरी कविता में है प्राय: उतना ही वियोग का विछोह भी। विरहाग्नि की धधकती ज्वाला कभी नागमती के वियोग की याद दिलाती है तो कभी गोपियों के उपालम्भ की। महेन्द्र मिसिर की यह कविता इसका अप्रतिम उदाहरण है –

नेहवा लगाके दुखवा दे गइले रे परदेशी सइयाँ।
अपने त गइले पापी, लिखियों ना भेजे पाती,
अइसे निठुर स्याम हो गइले रे परदेसी सइयाँ।
बिरहा जलावे छाती, निंदियो ना आवे राती,
कठिन कठोर जियरा हो गइले रे परदेसी सइयाँ।
कहत 'महेन्दर' प्यारे सुनऽ हो परदेसी सइयाँ,
उड़ि-उड़ि भँवरा रसवा ले गइले हो परदेशी सइयाँ।'[5]

इन पंक्तियों में पति को **'पापी'** का उदाहरण सूर की उपालम्भ को ध्वनित करता है तो **'निष्ठुर श्याम'** की कल्पना भ्रमर गीत से अनु-प्रमाणित है। **'बिरहा जलावे छाती, निंदियों ना आवे राती'** में विरहाग्नि में जलती हुई नायिका मलिक मुहम्मद जायसी के पद्मावत की उन पंक्तियों की याद दिलाती है। यथा –

'जाके कहना प्रिय सो हे भौरा ! हे काग ।
जो धनि विरहा जरि मुई, तेहि क धुआँ हम लाग।।

'जरमुई' की तुलना में **'जरावें छाती'** सौन्दर्य की नूतनता को प्रमाणित करता है और भोजपुरी कविता का एक नया सौन्दर्यशास्त्र निर्मित करता हुआ प्रतीत होता है।

भोजपुरी साहित्य चिन्तन में धर्म-सम्प्रदाय-पंथ का विशेष महत्व रहा

*400-एफ, आजाद नगर, रूस्तमपुर, गोरखपुर (उ.प्र.) भारत

है।अगर थोड़ा आगे बढ़कर कहे तो धर्म के चादर में लिपटी लोक के करीब जाने के लिए अपनी बात जिस भाषा ने कही शायद उसमें भोजपुरी विशेष है। गोरखनाथ से लेकर लक्ष्मीसखी तक पूरी काव्य साधना ज्ञान योग और भक्ति के जिस रसमय धारा से आत्म साक्षात्कार करती हुई आगे बढ़ी उसकी लोकग्रहिता भोजपुरी काव्य में ज्यादा मुखरित हुई।

श्रीकृष्ण एक ऐसे देवता है जिनसे भोजपुरी क्षेत्र में हर माँ अपने पुत्र की तुलना करती है। साँवले वर्ण के बच्चे, घुँघराले काले बाल, मन्द मुस्कान, बकइयाँ चलना सब कुछ माँ कृष्ण से जोड़ती नजर आती है। कृष्ण की मनोहारी छवि एवं उनके मुरलीधर रूप की पूजा सर्वत्र मिलती है, हरिराम द्विवेदी को अपनी एक कविता में कृष्ण का वर्णन करते हुए देखा जा सकता है –

मन होला साँवरिया अंबारी भरी लेहीं
रसिया के रास भतिन मनमानी करि लेहीं
सोचते रहली तबले बाँसुरी बजाय गइल
सुर से तन छू के मन छनै में चोराय गईल।[6]

इस कविता में एक स्त्री कल्पना कर रही है कि काश ऐसा होता कि कृष्ण मेरा आलिंगन करते, तभी अचानक कृष्ण बाँसुरी बजाकर चले जाते है। वह स्त्री अपना तन–मन खो बैठती है।

नाथ सम्प्रदाय से या उससे भी थोड़ा–सा और पीछे जायें तो लोक में व्याप्त सुक्तियाँ, लोकोक्तियाँ, मुहावरे जो काव्य के बाद में आधार बने वह भोजपुरी कविता के धार्मिक पल्लवन का आधार है।

भोजपुरी कविता में धर्म का परिपक्व रूप गोरखनाथ की कविता में दिखाई देता है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

'हंसिबा बोलिबा रहिबा रंग। काम क्रोध न करिबा संग।।
हंसिबा बोलिबा गाइबा गीत। दिढ़कर राषिबा अपना चित्त।।
हबकि न बोलिबा, ढबकि न चलिबा, धीरे धरिबा पाँव।
गरब न करिबा, सहजै रहिबा, भणत गोरख राँव।।[7]

नाथ मूल्यों का पूर्बिया बोध लोकरंग में रचकर गोरखनाथ ने अपनी गोरखवाणी में दिया है। मत्स्येन्द्र नाथ के धार्मिक आडम्बरों, मसलन पंचमकार को तोड़ते हुए धर्म के योगरूप और उसके नाड़ी जागरण का जो रूप गोरखनाथ ने प्रस्तुत किया उसने भारतीय जनमानस को धर्म के आडम्बर से विरक्त, योग के छत्रछाया में लाकर खड़ा कर दिया। तदुपरान्त उनके शिष्य भर्तृहरि ने जो भोजपुरी में भरथरी के नाम से प्रसिद्ध है, ने इस योग साधना को भोजपुरी कविता के माध्यम से आगे बढ़ाया।

पूसहिं पाला परि गइले हो जाड़ा जोर बुझाय।
नव मन रूइआ भरवलों हो बिनु सैंया जाड़ न जाय।।

भोजपुरी कविता के इतिहास से धार्मिक–आचार विचार, रीति–रिवाज और भारतीय मन की आस्था और अध्यात्म को उद्घाटित करने वाले महान सन्तों में कबीर का स्थान उच्चतम् है। कबीर की वाणी में भोजपुरी कविता के सहारे भारतीय मन बोलता हुआ दिखाई पड़ता है। लोक–परलोक और माया के आडम्बर की जैसी प्रस्तुति कबीर करते हैं उतना अन्यत्र कोई नहीं।

कवन ठगवा नगरिया लूटल हो।
चनन काठ के बनल खटोलना, तापर दुलहिन सूतलि हो।
उठु रे सखि भोर माँगु सवाँरहु, दुलहा मोसे रूसल हो।
अइले जमराज पलंग चढ़ि बइसल, नयनन असुँआ टूटल हो।
चारि जना मिलि खाट उठवले, चहुँ दिसि धूँ धूँ ऊठल हो।
कहत कबीर सुनहु भाइ साधो, जगवा से नाता टूटल हो।।

कबीर की निर्गुण वाणी भोजपुरी प्रदेश धर्म को एक नये ढंग से देखने, जाँचने और परखने की कोशिश है। उसी का एक दूसरा रूप गायकी के क्षेत्र में निर्गुन रूप में भोजपुरी प्रदेश में आज भी परिलक्षित होती है। जो जीवन की माया को कठघरे में खड़ा करता, लौकिक और पारलौकिक जीवन की सच्चाई मानकर उस जीवन को अर्पित कर देता है। कबीर इसमें पथ प्रदर्शक के रूप में खड़े दिखाई देते हैं।

संतौ भाई आई ग्यान की आँधी रे।
भ्रम की टाटी सभै उड़ानी माया रहै न बाँधी रे।
दुचिते की ढोई धूँनि गिरांनी मोह बलेंडा टूटा।
त्रिसनां छांनि परि घर ऊपरि दुरमति भांडा फूटा।
आंधी पाछै जो जल बरसै तिहिं तेरा जन भीनां।
कहै कबीर मनि भया प्रगासा उदै भानु जब चीना।[8]

भोजपुरी काव्य धारा में धर्म एक महत्वपूर्ण कड़ी है। लगभग सन्त साहित्य के सभी कवि मसलन कमाल दास, धरमदास, भण्डोरी, घाघ, डाक जैसे कवि कभी प्रकृति की ओट में कभी मानुष–सत्व को पहचानने और उसकी जीविविषा को खंगालने के क्रम में धार्मिक साहित्य रचते हुए दिखई पड़ते है।

मोर पिया बसे कवने देस हो ?
अपना पिया के ढूँढन हम निकसी।
केउ ना कहत सनेस हो।।
पिया कारन हम भइली बावरी।
धइली जोगिनिया के भैंस हो।।
ब्रह्मा बिसुन महेस न जाने।
का जानसु सारद सेस हो।।
धन जे अगम अगोचर पवलन।
हम सब सहत कलेस हो।।
उहाँ के हाल कबीर गुरू जानले।
आवत जात महेस हो।[9]

आधुनिक और समकालीन भोजपुरी कविता में धर्म कविता का प्रयोज्य नहीं रहा है। फिर भी उनमें धर्म की बानगियाँ देखी जा सकती है। मोती बी0ए0 की मृग–तृष्णा, 'मृगकस्तुरी' जैसी कविताओं की दूहरी अर्थव्यंजना इस तरफ ध्वनित करती है। फिर भी हम आश्वस्त होकर कह सकते है कि सम्पूर्ण भोजपुरी कविता में धर्म एक ऐसा प्रयोज्य है। जिसके सहारे कविता पल्वित पुष्पित होती रहती है और उसका जो ढाँचा तैयार हुआ है, उसमें धर्म का एक महत्वपूर्ण योगदान है।

सौन्दर्य का एक रूप जो व्यष्टिनिष्ठ है तो दूसरा रूप वस्तुनिष्ठ है। व्यष्टिनिष्ठ सौन्दर्य ऐन्द्रिय एवं व्यष्टिवादी मन के हिल्लोल और कल्लोल उसके उपादान है तो वस्तुवादी सौन्दर्य का मूलाधार सामाजिक है। मुक्तिबोध ने लिखा है 'सौन्दर्यशास्त्र एक विचित्र शास्त्र है। चूँकि हमारे जीवन की प्रधान दिशाएँ और तत्सम्बन्धी जिज्ञासाएँ विभिन्न युगों में बदलती रही है और बदलती रहेंगी, इसलिए इस शास्त्र का वैसा विकास नहीं हो पाता। जिस प्रकार कि उदाहरणत: भौतिकशास्त्र का है जिसमें परवर्ती विचारक पूर्ववर्ती चिन्तक के सिद्धान्तों को या तो नई व्यवस्था में बाँधता है अथवा उसके कन्धे पर खड़े होकर नवनवीन विकास के परिदृश्य देखता है। सौन्दर्यशास्त्र, नीति–शास्त्र आदि मूल्य–शास्त्र होने के कारण वे सिद्धान्त मुख्यत: प्रणालियों के समवाय के रूप में प्रस्तुत होते हैं। अन्तिम निर्णय करने का भार हम पर ही रह जाता है, कि उनमें से कौन–सी बात हमारे लिए स्वीकरणीय है और कौन–सी त्याज्य। आधुनिक सौन्दर्य–शास्त्र के क्षेत्र में तो सिद्धान्तों का एक जंगल

का जंगल खड़ा हो गया है।'[7]

साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका में मैनेजर पाण्डेय जिस समाजशास्त्र में समाज की पैरवी कर रहे हैं और उसे देखने जाँचने और परखने की जो विचार–बिन्दु रख रहे होते है। वह लोकानुभव ही तो है जो जीवन को सरस और गतिशील बनाता है। यह लोकानुभव भोजपुरी कविता का प्राण तत्व है। उसकी सैद्धान्तिकी में कहीं सौन्दर्यबोध या शास्त्र जैसी विचार बिन्दु हो या न हो किन्तु उसका व्यावहारिक विज्ञान जीवन का सामाजिक सौन्दर्य की सृष्टि करता है।

कविता आत्मिकता से निष्पन्न होती है किन्तु उसका रसास्वाद सामाजिक होता है। जिसमें जीवन, जगत, प्रकृति, हाट, बाजार, शहर उसके उपांग होते है। शास्त्र उसका घाट होता है और सौन्दर्य उसकी चेतना।

प्राचीन एवं मध्यकालीन कवियों में कबीर का साहित्य चिन्तन धार्मिक होते हुए एक सामाजिक सृष्टि करता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी माना कि उनके साहित्य की गगरी से केवल भक्ति का जो रस छलका उससे ही साहित्य का कटोरा भर गया, किन्तु साहित्य के कटोरे में जो रस प्राप्त हुआ उसका उत्स सामाजिक है। यह कहने में कोई संकोच नहीं। और यह भोजपुरी कविता की थाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ0 विमलेश मिश्र–समकालीन भोजपुरी काव्य की सामाजिक चेतना, पृ0सं0–950
2. स्व0 श्री त्रिलोकी नाथ उपाध्याय–माटी की महक भाग–एक।
3. स्व0 श्री त्रिलोकी नाथ उपाध्याय–माटी की महक भाग–दो।
4. डॉ0 विमलेश मिश्र, समकालीन भोजपुरी काव्य की सामाजिक चेतना, पृ0सं0–96
5. श्री दुर्गा शंकर प्रसाद सिंह, भोजपुरी के कवि और काव्य, पृ0सं0–217–218
6. डॉ0 अरूणेश नीरन और डॉ0 चित्तरंजन मिश्र–सं0–भोजपुरी वैभव' पृ0सं0–23
7. श्री महेश्वराचार्य–भोजपुरी काव्य साहितय के इतिहास, भोजपुरी अकादमी, मानव संसाधन विकास विभाग, बिहार सरकार, पटना, पृ0सं0–8
8. डॉ0 पारसनाथ तिवारी, कबीर वाणी, राका प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ0सं0–165
9. श्री दुर्गा शंकर प्रसाद सिंह, भोजपुरी के कवि और काव्य, पृ0सं0–51–52

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

जीवन से साक्षात्कार करवाती हिन्दी कहानी

डॉ. मंजुला जोशी *

शोध सारांश – कहानी विश्व साहित्य की प्राचनीतम विधा है। साहित्य की समस्त विधाओं में कहानी आज भी लोकप्रिय है। दादी नानी की गोद में बैठकर लेटते ऊंघते कहानी सुनने से लेकर वर्तमान में मनोरंजन से लेकर समस्या पूर्ति तक लिखी जाने वाली कहानियाँ हर युग में विद्यमान रही। ये कहानियाँ समस्या पूर्ति के साथ-साथ सामाजिक परिवेश, परिस्थितियों और सामाजिक मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों का साक्षात्कार करवाती है। इक्कीसवी सदी की कहानियों में जहाँ स्त्री विमर्श को लेकर काफी कुछ लिखा गया, वहीं घटते मानवीय मूल्य, सम्बन्धों का बौनापन, निजता का प्रभुत्व, आत्मीयता की कमी, संयुक्त परिवारों का विघटन, सम्बन्धों की औपचारिकता को भी उजागर करता है।

प्रस्तावना – कहानी विश्व साहित्य की प्राचनीतम विधा है। साहित्य की समस्त विधाओं में कहानी आज भी लोकप्रिय है। दादी नानी की गोद में बैठकर लेटते ऊंघते कहानी सुनने से लेकर वर्तमान में मनोरंजन से लेकर समस्या पूर्ति तक लिखी जाने वाली कहानियाँ हर युग में विद्यमान रही। ये कहानियाँ समस्या पूर्ति के साथ-साथ सामाजिक परिवेश, परिस्थितियों और सामाजिक मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों का साक्षात्कार करवाती है। इक्कीसवीं सदी की कहानियों में जहाँ स्त्री विमर्श को लेकर काफी कुछ लिखा गया, वहीं घटते मानवीय मूल्य, सम्बन्धों का बौनापन, निजता का प्रभुत्व, आत्मीयता की कमी, संयुक्त परिवारों का विघटन, सम्बन्धों की औपचारिकता को भी उजागर करता है।

स्वतंन्त्रयोत्तर भारत का समाज एक नये परिवर्तित रूप में हमारे सामने आता है। जहाँ पीढ़ियों का संघर्ष, एकल परिवार, स्वार्थपरता, संयुक्त परिवारों का विघटन के साथ-साथ हमारे सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन स्पष्ट दिखाई देने लगा। सारे मानवीय सम्बन्ध और संवेदना औपचारिकता मात्र रह गये हैं। इस सारे बदलाव को महिला एवं पुरूष कहानीकारों ने बहुत गहरे से महसूस किया और अपनी लेखनी में इस सामाजिक दायित्व का निर्वहन बड़ी कुशलता और सशक्तता से किया। इन कहानीकारों की कहानियाँ सामाजिक सत्य का साक्षात्कार करवाने में समर्थ है। शिक्षा के विस्तार ने महिलाओं को शिक्षित कर आत्मनिर्भर बनाया, महिलाओं के आत्मनिर्भर होने से परिवार का जीवन स्तर भी सुधरा और स्त्रियों के प्रति समाज का नजरिया बदला, जहाँ प्रगतिवादी विचारधारा के लोग है। वहां वैचारिक श्रेष्ठता की मिठास गंध महसूस होती है। वहीं जहाँ लोग पुरानी रूढ़िवादी विचारधारा से जुड़े हैं। वहाँ आपसी कलह, पारिवारिक द्वन्द्व देखने को मिलता है। कहीं-कहीं हमारे व्यवहार का दोगलापन भी इन कहानियों में दृष्टिगोचर होता है। दहेज प्रथा, अधिक उम्र तक विवाह न होना अथवा बेटियों द्वारा परिवार का भरण-पोषण करना, बांझ स्त्रियों के प्रति हमारा व्यवहार अथवा दाम्पत्य जीवन में आर्थिक मुद्दों पर विवाद होना, अहं का होना, कहीं स्त्री का सम्मान न होना, उपेक्षा का व्यवहार होना, पारम्परिक मूल्यों की उपेक्षा इत्यादि। इसी तारतम्य में मृदुला गर्ग की कहानी अलग अलग कमरे में दो पीढ़ियों के बढ़ते अंतर और दो विपरीत मूल्यों की कहानी है। कहानी के दो प्रधान पात्र पिता और पुत्र में मूल्यों को लेकर द्वन्द्व चलता रहता है। पिता दया, करूणा, प्रेम, सहयोग, स्नेह और परोपकार जैसे मूल्यों के प्रति आस्थावान है; वहीं पुत्र मूल्यों से ज्यादा अर्थ, लाभ और व्यवहारपरक मूल्यों को मानता है। इसी तरह से उषा प्रियम्वदा की कहानी 'वापसी' में गजाधर बाबू ने आजीवन परिश्रम कर परिवार के प्रति निष्ठावान रहकर समस्त दायित्वों का निर्वाह किया किया। सेवा निवृत्त होने पर वे बड़ी प्रसन्नता से बच्चों से कहते है कि 'मैने सोचा था कि बरसों तुमसे अलग रहने के बाद अवकाश पाकर परिवार के साथ रहूँगा।' उनकी यह सोच बहुत जल्द ही समाप्त हो जाती है, जब वे परिवार के बीच स्वयं को उपेक्षित महसूस करते है।

सेवा निवृत्ति पर वेतन का कम होना, व्यर्थ खर्च पर रोक लगाना बच्चों को पसंद नहीं आता, वे अपनी माँ से पिता की शिकायत करते हुए कहते है। 'अम्मा तुम बाबूजी को कुछ कहती क्यों नहीं, बैठे बिठाये कुछ नहीं तो नौकर ही छुड़ा दिया, अगर बाबूजी यह समझते हैं कि मैं साइकिल पर गेहूँ रखकर आटा पिसाने जाऊँगा, तो मुझसे यह नहीं होगा। हाँ अम्मा बसंती का स्वर था मैं भी कॉलेज जाऊँ और लौटकर झाडू भी लगाऊ तो यह सब मेरे बस की बात नहीं। तभी अमर भुनभुनाया बूढ़े आदमी है; चुपचाप पड़े रहे हर चीज में दखल क्यों देते है।'[1]

आजीवन परिश्रम करने वाले तथा अपने परिवार और बच्चों की सुख सुविधाओं का ध्यान रखने वाले पिता सेवानिवृत्ति के बाद कोई आदेश निर्देश न दे, चुपचाप पड़े रहे यह बात कितनी कष्टप्रद लगती हैं। इससे भिन्न कहानी उषा प्रियम्वदा की एक और कहानी जिन्दगी और गुलाब में बेटे की जगह बेटी परिवार के निर्वहन की जिम्मेदारी उठाती है और आत्मगौरव महसूस करती है।

मालती जोशी जी ने अपनी कहानियों में मध्यमवर्गीय परिवारों की समस्याओं को बखूबी उठाया है। ये कहानियाँ जीवन के यथार्थ पक्ष को उद्घाटित करती है। अधिक उम्र तक बेटी का ब्याह तय न होना, दहेज मांगना, अथवा उपयुक्त वर न मिलना और अंत में 'एडजस्टमेंट तो करना ही पड़ता है' जैसे वाक्यों का प्रयोग कर हर स्थिति में स्त्री को दोषी बताना कहां तक उचित है। 'कोहरे के पार' कहानी की नायिका शीला अविवाहित उसकी बड़ी बहन के देहान्त के बाद उसे ही ब्याहने की बात होती है तो वह ग्लानि से भरकर दु:खी स्वर में कहती है।

'शोक दीदी की मृत्यु का इतना नहीं है, जानती हो वे लोग मुझे दीदी के स्थान पर देखना चाहते है, सच कह रही हूँ अगर सिर्फ दीदी के ससुराल वाले ही ऐसा सोचते तो ठीक था, परन्तु अम्मा, भैया, भाभी, चाचा, चाची सबके

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

सब पीछे पड़ गये हैं। मैं तो ग्लानि से भर उठी हूँ, लगता है जैसे दीदी की मृत्यु की कामना लेकर ही इतने वर्षो तक अनब्याही बैठी रही।[2] यह कितनी कष्टप्रद बात है कि बगैर उसकी स्वीकृति के परिवार के लोग बहन की जगह उसे ब्याहना चाहते हैं।

मालती जोशी की कहानी 'आस्था के आयाम' में स्वाभिमानी और स्पष्टवादी स्त्री के चरित्र को रेखांकित किया गया। कहानी की नायिका तेजस्विनी के समक्ष वर के माता-पिता यही शर्त रखते है कि 'आपके माता-पिता की आपसी लड़ाई से हमें कोई मतलब नहीं है। सगाई के समय पिता मण्डप में हो, बस हम यही चाहते है' तब तेजस्विनी अपनी भावी सास से कह देती है कि यह शादी मुझे मंजूर नहीं, मैं अपनी माँ की तपस्या का अपमान नहीं कर सकती, उसके स्वाभिमान का सौदा नहीं कर सकती'।[3] तेजस्विनी का यह कथन माँ के त्याग और स्वाभिमान की रक्षा करता है।

अमृता प्रीतम की कहानी **'बू'** में एक मजबूर पति है, जो अपनी पत्नी को बहुत प्यार करता है, किन्तु माँ के सामने कुछ कह नहीं पाता। उसके ब्याह को सात वर्ष हो गये, किन्तु कोई संतान नहीं हुई, तब उसकी माँ दूसरा विवाह करवाना चाहती है। जब वह मायके जाने लगती है, तो वह उसे हठपूर्वक रोककर यह कह नहीं पाता की मत जा माँ मेरा दूसरा विवाह करवाने वाली है। वह सिर्फ यह कह पाता है कि देख गुलेरी तू मत जा मैं तुझे फिर कहता हूँ इस बार मत जा।[4] पत्नी के जाने के बाद माँ उसकी दूसरी शादी करवा देती है वह विरोध नहीं कर पाता। उसकी शादी की बात सुनकर पहली पत्नी घासलेट डालकर मर जाती है और वह अपनी सुध बुध खो बैठता है। नयी बहू से पैदा हुये बच्चों को देखकर वह चीख पड़ता है। 'इसको दूर करो मुझे इसमें मिट्टी के तेल की 'बू' आती है।'[5] वह 'बू' का उच्चारण करते हुए समाज में व्याप्त बुराई की ओर 'बू' का शीर्षक संकेत भी देता है।

राजकमल चौधरी की 'दाम्पत्य' की पत्नी उर्मिला जो अपने पति से बेहद प्यार करती है, जब राजनाथ जर्मनी गये थे, तब अकेलेपन से तंग आकर श्यामली के साथ उर्मिला घर से निकलती है तो फिर वापस लौट नहीं पाती, अपनी इस एक भूल के लिये वह बहुत पछताती है, लेकिन वापस घर आने का साहस नहीं जुटा पाती। उसके पति राजनाथ बिना किसी प्रकार का प्रष्न पूछे वापस घर ले आते है, पूरे आठ साल बीत चुके है, मगर ट्रिकाज की वह रात और रात के बाद सैकड़ों रातों की घटनाएँ अपने पति को सुनाना चाहती है। पूरी दास्तान का सच बता देना चाहती है, किन्तु राजनाथ ने अतीत पर लोहे का दरवाजा डाल दिया, दरवाजा बंद कर दिया। उर्मिला को राजनथ का यूं चुपचाप अपना लेना, खटकता है। वह सब कुछ कहना चाहती है कि लेकिन राजनाथ बिना कुछ कहे पहले की तरह व्यवहार करने लगते है। जब राजनाथ उसकी पांच साल की बच्ची को भी अपना लेते है तब उसके सब्र का बांध टूट जाता है और वह फूट-फूट कर रोने लगती है।'[6]

जहाँ पुरूष अत्याचार शंका कुशंकाओं से ग्रसित मानसिकता वाले समाज में राजनाथ जैसे व्यक्तित्व भी है जो क्षमाशीलता, त्याग से पत्नी की त्रुटियों को नजरअंदाज कर पुन: अपने दाम्पत्य जीवन को उसी सकारात्मक रूप में प्रारंभ करते हैं और अपने टूटते परिवार की रक्षा करते है।

इसके ठीक विपरीत इलाचन्द जोशी की क्रय-विक्रय भी पत्नी पति की इच्छाओं के अनुरूप खुद को ढाल लेती है, लेकिन एक दिन उसका समर्पण पति के आचरण के कारण विद्रोह कर उठता है। वह उसकी हर गलती बताती है कि उसने पैसे की भूख और ऊँचे पद की लालच में अपनी ही पत्नी का इस्तेमाल किया वह कहती है।

'तुमने अपनी कुलीनता के दामों पर मुझे खरीदा और पाँच सौ रूपये की नौकरी के मोल मुझे बेचा। अपने हीन स्वार्थ के लिए तुमने मुझे वेष्या बनाकर छोड़ा।'[7]

इन कहानियों में जहाँ सामाजिक स्थितियाँ मूल्यों परम्पराओं के खण्डित रूप मिलते है, वहीं देश की बेरोजगारी, भूख और युवा सपनों का बेरोजगारी के समक्ष ध्वस्त होना भी इन कहानियों में देखा जा सकता है। अमृतराय की 'सपने और सपने' कहानी में स्वतंत्र भारत की जनता नये युग की आकांक्षा लिये मनोरम सपनों का संसार बुनती है।

नदियों के पानी को कैद करेंगे, उन पर बड़े बांध बनायेंगे, उस पानी से बिजली पैदा करेंगे। 'हमारे देहात जो अभी सरे आम अंधेरे और मरघट सन्नाटे में डूब जाते है, उनकी मुर्दा रगो में बिजली दौड़ने लगेगी, उनमें जान पड़ जायेगी।'[8] ये सारे सपने भ्रष्टाचार भाई भतीजावाद बेकारी के सामने ध्वस्त हो गये।

'सत्तर और अस्सी की एक एक नौकरी के विसापन पर सैकड़ों अर्जिया पड़ती थी। जिस तरह मिठाई के एक टुकड़े पर मक्खियों के गोल के गोल झुण्ड टूटते है, उसी तरह किसी एक सड़ी सी नौकरी पर कोड़ियों डिग्रीधारी लोग टूटते हैं।'[9]

यह कैसी विडम्बना है कि काम करने वाले हाथ है पर उनके पास रोजगार नहीं। बिना रोजगार के पेट भरना और भी बड़ा संकट है, क्योंकि जब तक आदमी जीवित है तब तक पेट की आग बुझती नहीं, उसे बुझाने के लिए रोटी की अनिवार्यता है और यही जीवन का सच यशपाल की कहानी 'निरापद' में व्यक्त हुआ है। रोजगार के बगैर जीवन संघर्ष में खुद तो वह अपराध करके जेल पहुँच जाये। लेकिन बिना कुछ करें तो वह जेल भी नहीं जा सकता और अपराध करने के लिए भी तो दम चाहिये। वह कहता है - 'अपराध उसके लिए सीने में दम चाहिये, जेल में क्या हराम की रोटिया रखी हैं।' [10]

पेट और रोटी का ऐसा अटूट रिश्ता है जो जीवन पर्यन्त चलता है। बस यही संघर्ष रोटी का, बेटी का, परिवार का, समाज का, सदाचार का, व्यवहार का, संबंधों का, सम्बन्धों की कटुता निजता, मधुरता का, अहं का, मूल्यों का, परम्पराओं का, प्रतिस्पर्धा का, हमारे सबके जीवन में अहर्निष जारी है। इस संघर्ष के मध्य से गुजरते हुए जीवन यात्रा का सारा सत्य इन कहानियों के माध्यम से हमारे समक्ष अनेक प्रश्न खड़े करता है और हम कई स्थानों पर निरूत्तर भी हो जाते है।

जीवन संघर्ष के इसी अकाट्य सत्य का साक्षात्कार करवाना अंधेरे में रोशनी की तलाश करना ही इन कहानियों का उद्देश्य भी है। निरूत्तर होने पर भी शांत चित्त सोया नहीं जा सकता। तब जागते रहे और तलाशे सुधार की नई संभावनाएँ अथवा करे इसी सत्य से साक्षात्कार निरन्तर!

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. 'वापसी' उषा प्रियम्बदा पृष्ठ 12
2. कोहरे कपार - मालती जोशी की कहानियाँ पृष्ठ 134
3. आस्था के आयाम - मालती जोशी की कहानियाँ पृष्ठ 134
4. 'बू' अमृता प्रीतम की श्रेष्ठ कहानियाँ पृष्ठ 81 से 83 तक।
5. 'बू' अमृता प्रीतम की श्रेष्ठ कहानियाँ पृष्ठ 81 से 83 तक।
6. 'दाम्पत्य' राजकम चौधरी पृष्ठ 360
7. मेरी प्रिय कहानियाँ 'क्रय-विक्रय' पृष्ठ 56, 57
8. अमृतराय 'सपने और सपने, भौर से पहले पृष्ठ 65
9. अमृतराय 'सपने और सपने, भौर से पहले पृष्ठ 65
10. यशपाल की कहानी 'निरापद' पृष्ठे।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी खड़ी बोली की चुनौती

डॉ. रत्नेश विष्वक्सेन *

शोध सारांश – हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल की जब भी बात आती है, तो गद्य विधा का प्रारंभ और भारतेंदु की महती भूमिका हमारे सामने परिलक्षित होती है। इसके साथ ही गद्यात्मकता को प्रस्तुत करने वाली भाषा खड़ी बोली की चुनौती भी पेशेकदम होती है। भारतेन्दु के हाथों लगभग गद्य की तमाम विधाएँ अपना आकार पाती है और खड़ी बोली का विकास भी होने लगता है। ध्यान से देखने पर सबकुछ बड़ा भला प्रतीत होता है, पर वास्तव में खड़ी बोली की असली चुनौती का प्रश्न भारतेंदु के व्यक्तित्व और गद्यधर्मी क्रांतिकारी प्रतिभा में बिसर जाता है। ठीक उसी समय हम कविताओं पर नजर डालें तो पता चलता है कि भारतेंदु भी पद्य को लेकर ब्रजभाषा के 'हासिल की लकड़ी' को पकड़े हुए हैं। ब्रजभाषा की विशाल पद्य परंपरा का मोह हैं या फिर कोई और बात जो भारतेंदु जैसा सृजनशील और क्रांतदर्शी क्षमता वाला लेखक भी पद्य खड़ी बोली में हो इसका सामना करने से लगभग कतराता है। खुद भारतेंदु के शब्दों में यह जानना दिलचस्प होगा 'बहुत चाहा कि खड़ी बोली में कविता लिखना परंतु चित्त के अनुसार बनी नहीं।'

शब्द कुंजी – गद्यात्मकता, भाषिक प्रतिमानीकरण, संपादक, सरस्वती, शुद्धता, व्याकरणिक अनुशासन, आधुनिकता, आधुनिक काल।

प्रस्तावना – खड़ी बोली का ठेठ खड़ापन गद्य के लिए तो नया आविष्कार था, लेकिन जहाँ तक पद्य की बात थी, वह भारतेंदु को बहुत जँचा नहीं शायद। चित्त के अनुसार न बन पाना पद्य का यह सिर्फ कवि की चिंता थी, या ब्रजभाषा का मोह, या फिर नई चुनौती से कतराकर निकलने की मंशा ये बताना तो मुश्किल है, पर हाँ इतना जरूर है कि भारतेंदु की ईमानदार स्वीकारोक्ति को ध्यान में रखते हुए तीनों बातें अपनी जगह पर दुरूस्त ठहरती है। ब्रजभाषा ने पद्य को अब तक जो गति दी थी, उसके प्रभाव और परिणाम से बाहर निकलना आसान नहीं था, शायद मोह की हद तक। गद्य जहाँ विचार के दबाव का परिणाम था, तो पद्य चित्त की द्रवणशीलता से संबद्ध था। भारतेंदु लगभग यह मान चुके थे कि पद्य खड़ी बोली में नहीं हो सकता। कोशिश उन्होंने बहुत की यह सच हैं पर उससे ज्यादा चित्त के अनुसार नहीं बन पाने का मलाल ज्यादा था।

अब आते हैं मुख्य बात जो इस लेख का अभिप्रेत है। वास्तव में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ऐसे पहले व्यक्तित्व थे जिन्होंने खड़ी बोली की असली चुनौती यानी खड़ी बोली में कविता कैसी हो, इसकी रचनात्मकता से जूझा था। खड़ी बोली का निर्माण काल सही दृष्टि से द्विवेदी युग ही था। 'सरस्वती' के संपादक के रूप में द्विवेदी जी ने न केवल एक पत्रिका संभाली, बल्कि खड़ी बोली के विकास के गुरूतर दायित्व को अपने कंधो पर उठाकर हिंदी साहित्य की भाषा के संचार का विकास किया। किसी भी भाषा के लिए दो चीजें आवश्यक है, पहला व्याकरणिक अनुशासन और दूसरी भाषिक प्रतिमानीकरण। जिस समय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का आगमन हुआ, उस समय साहित्य द्वैत और द्वन्द्व में फंसा था। राजभक्ति, राजप्रशस्ति, गद्य-पद्य, ब्रजभाषा खड़ी बोली, संस्कार-विचार, आदि के द्वन्द्व और संक्रमण ज्यादा थे। समय की हलचलों में सोच अभी स्पष्ट नहीं हो पायी थी। ठीक उस समय महावीर प्रसाद द्विवेदी ने न केवल गुरूतर दायित्व को संभाला, बल्कि हिंदी साहित्य को एक नया आधार देकर उसके रास्ते स्पष्ट और प्रशस्त कियें। द्विवेदी युग में और खुद द्विवेदी जी बड़े अनुशासनप्रिय संपादक थे। और हिंदी के प्रति अकुंठ निष्ठा थी उनकी। 'द्विवेदी जी की कोमलता और कठोरता, दोनों का स्रोत एक ही था। यह स्रोत था हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति उनकी निष्ठा। इस निष्ठा के कारण जिसे वह अवांछित समझते थे, उसकी कठोर आलोचना करते थे।'[1]

इस अनुशासन और कठोरता से उनका चरित्र हिंदी के प्रति निष्ठा को सबसे ऊपर रखने के कारण बना। द्विवेदी जी ने आत्मसम्मान से कभी समझौता नहीं किया। खुद उनके शब्दों में कहें तो 'जानबूझकर मैंने कभी अपनी आत्मा का हनन नहीं किया।' आत्महनन का यह बड़ा रूप आत्महंता निराला में मिलता है। द्विवेदी जी अनुशासित थे, निराला उच्छृंखल पर ये दोनों आत्महनन नहीं करते थें। यो महावीर प्रसाद द्विवेदी को समझना हो तो दो बड़े कवि हमारे सामने हैं, एक मैथिलीशरण गुप्त और दूसरे निराला। ये दोनों बड़े कवि महावीर प्रसाद द्विवेदी की देन थे। हिंदी भाषा के प्रारंभिक दौर पर खड़ी बोली के प्रचार-प्रसार हेतु वे बड़े सतर्क थें।

'लिखित भाषा की सजीवता का सबसे बड़ा लक्ष्य यह है कि वह अधिक दूर तक व्यापक है। जो भाषा जितनी ही अधिक व्यापक होती है, जिस भाषा का प्रचार जितने ही अधिक प्रांतों मे होता है, जो भाषा जितनी ही अधिक लोगों को समझ में आती है, वह भाषा उतनी ही अधिक सजीव समझी जाती है।'[2]

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने निरंतर अभ्यास और सतत प्रयास से हिन्दी की भाषिकता को पुष्ट किया। वह भाषाविद् थें, हिंदी, संस्कृत, बांग्ला, अंग्रेजी, मराठी सहित सात भाषाओं के ज्ञाता थे।

हिंदी के प्रचार-प्रसार की व्यावहारिक समस्या को खूब अच्छी तरह से जानते थे, पहचानते थे। 'आचार्य द्विवेदी मूलत: व्यवस्थापक हैं, जो उस समय नये-नये बनते खड़ी बोली हिंदी भाषा और साहित्य के विकास की ऐतिहासिक आवश्यकता थी। उनकी तुलना 18 वीं सदी के अंग्रेजी लेखक डॉ0 जॉनसन से किसी रूप में हो सकती है, जिनकी अपनी रचनात्मक क्षमता बहुत बड़ी न थी, पर जिनके बहुआयामी व्यक्तित्व में अनेक प्रकार की प्रतिभा थी। दोनों कवि हैं, अधिकतर इतिवृतपरक, गहरे भाषाविद् और संपादक हैं, अनेक कवियों और लेखकों के गुरू मित्र तथा प्रेरक हैं, तथा सबसे बड़ी बात

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) राँची कॉलेज, राँची (झारखण्ड) भारत

यह कि आदि से अंत तक निर्भीक हैं, पर पूरी शिष्टता के साथ।'[3] यहाँ बेन जॉनसन से तुलना का अर्थ यह है कि वास्तव में महावीर प्रसाद द्विवेदी अपनी तमाम सीमाओं के बावजूद जो उपलब्धियाँ हिंदी भाषा एवं साहित्य को दी वह निश्चित तौर पर ऐतिहासिक है। जैसा कि पूर्व में इसकी चर्चा की गई है कि खड़ी बोली की रचनात्मक चुनौती ये थी कि वह हिंदी कविता के स्वाद और स्वास्थ्य का निर्माण कर ब्रजभाषा की विशाल और सौंदर्यपूरित काव्यास्वाद के समांतर काव्य प्रतिष्ठा की वापसी कर सके और खड़ी बोली की पाठकीयता का स्तर सुरक्षित रहे। यह संयोग है कि भारतेंदु हरिश्चंद्र के बाद महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के प्रारंभिक दौर का नेतृत्व किया। यह ऐतिहासिक तो है ही साथ ही बड़े फक्र की बात है कि हिन्दी भाषा का विकास सही हाथों से हुआ। आगे हम इसमें आचार्य रामचंद्र शुक्ल को जोड़ दें तो एक नायाब परंपरा से हमारा सामना होता है, जो हिंदी साहित्य और भाषा के लिए स्वप्न सरीखा है। महावीर प्रसाद द्विवेदी पर यह टिप्पणी देखने योग्य है–

'अपनी पुस्तक 'आधुनिक साहित्य के आरंभ में नंददुलारे वाजपेयी न आचार्य द्विवेदी के योग–दान का सही मूल्यांकन किया है।–'साहित्य के क्षेत्र में किसी एक व्यक्ति पर इतना बड़ा उत्तरदायित्व कदाचित् इतिहास की शक्तियों ने कदाचित् पहली बार रखा था और पहली ही बार द्विवेदी जी ने इस उत्तरदायित्व को सफल निर्वाह का अनुपम निदर्शन प्रस्तुत किया।'[4]

इस कथन के बाद हम अपनी बात की पुष्टि कर सकते हैं। छायावाद युग के सभी रचनाकारों का प्रारंभिक काल द्विवेदी युग ही है। प्रेमचंद, निराला इसके साक्षात उदाहरण है। गद्य की भाषा के लिए रचनात्मक संघर्ष तो जारी था, साथ ही पद्य की भाषा को लेकर भी आचार्य द्विवेदी कृतसंकल्प थे। कवि मैथिलीशरण गुप्त ने कविता में हिंदी प्रचार–प्रसार किया, वास्तव में सही मायने में आचार्य द्विवेदी के काव्यात्मक संस्करण थे। आचार्य द्विवेदी का निबंध 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' का रचनात्मक विस्तार ही साकेत में होता है। यह एक ऐसा बड़ा उदाहरण है जिससे महावीर प्रसाद द्विवेदी का प्रभाव और उसकी व्यापकता परिलक्षित होती है। सही में इतिहास की शक्तियों ने जो दायित्व आचार्य के कंधे पर दिया वे उसे शाइस्तगी से निभाते रहें। खड़ी बोली में व्याकरण, प्रतिमानीकरण और भाषिक अनुशासन का लक्ष्य प्राप्त किया। उसके लिए हिंदी साहित्य आचार्य का ऋणी है।

हिन्दी साहित्य के सबसे बड़े आलोचक आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास की पुस्तक में आचार्य द्विवेदी के योगदान पर जो टिप्पणी की है वह देखने योग्य है। 'गद्य की भाषा पर द्विवेदी जी के इस शुभ प्रभाव का स्मरण जब तक भाषा के लिए शुद्धता आवश्यक समझी जायेगी, तब तक बना रहेगा।'[5] आचार्य शुक्ल की यह टिप्पणी सटीक है। भाषा के लिए शुद्धता सिर्फ व्याकरण की दृष्टि से ही नहीं बल्कि उसके अस्तित्व के लिए बुनियादी शर्त है। तब हमें आचार्य की आचार्य पर टिप्पणी का मर्म पता चलता है।

निष्कर्षत – हम आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और खड़ी बोली की चुनौती की पड़ताल कर सकते हैं। बाद में जिस तरह छायावाद की भाषा संस्कार और कोमलता से कविता में विन्यस्त हो गई, वही सही परंपरा का रचनात्मक विकास है। इतिहास में परिवर्तनों का संबंध उसकी परंपरा के सातत्य से है। द्विवेदीयुग का अनुशासन प्रवृत्ति के स्तर तक था। उस समय अनुशासन की आवश्यकता भी थी और फिर जहाँ तक भाषा की बात है तो यह अनुशासन और अर्थवान प्रतीत होता है। कई बार इतिहास में ऐसे अवसर आते हैं, जब कोई व्यक्ति अपने युग का प्रतिनिधि बन जाता है। छायावाद से पहले हम भारतेंदु युग और द्विवेदी युग का जो नाम पाते हैं वह प्रवृत्तिमूलकता से ज्यादा व्यक्तिपरकता का परिचायक है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी भाषा का जो विकास किया वह अद्‌भुत है। अनस्थिरता शब्द पर बालमुकुंदगुप्त और आचार्य का विवाद इतिहास प्रसिद्ध है, पर शिष्टता और सौजन्यता के साथ। आचार्य में समन्वय और तर्कप्रसूत संवाद के गुण भी मौजूद थें। इन साहित्यकारों और संपादकों ने भाषा निर्माण में जो अपना अमूल्य सहयोग दिया वह बेजोड़ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रामविलास शर्मा –महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण, पृ0–364, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010
2. वही, पृ0–262
3. रामस्वरूप चतुर्वेदी– हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ0–101, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2002, संस्करण–16वां
4. वही, पृ0–101
5. आचार्य रामचंद्र शुक्ल – हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ0–349, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2012, आठवां संस्करण।

****

नाच - जी सकने का विवश कर्म

डॉ. संध्या टिकेकर *

प्रस्तावना – नाच वस्तुत: दर्शक समाज पर करारा व्यंग्य है। एक के लिए जो मनोरंजन है ,वही दूसरे के लिए जिंदा रहने की मजबूरी है। एक के लिए जो विस्मय, रोमांच और समय बिताने का साधन है, वही दूसरे के लिए क्षण प्रतिक्षण आशंका, भय और तनाव का कारण है। कविता, इंसानी संवेदनहीनता को तीव्रता से इंगित करती है। चैतन्य करती है कि हमारी संवेदनाएं यदि थोड़ी बहुत भी बची हैं, तो जीवन जीने की ऐसी शर्मनाक़ शर्त पर रोक लगनी ही चाहिए।

नाच(कविता) – एक तनी हुई रस्सी है जिस पर मैं नाचता हूं /जिस तनी हुई रस्सी पर मैं नाचता हूं /वह दो खम्भों के बीच है।/रस्सी पर मैं जो नाचता हूं /वह एक खम्भे से दूसरे खम्भे तक का नाच है/ दो खम्भों के बीच जिस तनी हुई रस्सी पर मैं नाचता हूं/ इस पर तीखी रोशनी पड़ती है/ जिस में लोग मेरा नाच देखते हैं/न मुझे देखते हैं जो नाचता है/ न रस्सी को जिस पर मैं नाचता हूं/ न खम्भों को जिस पर रस्सी तनी है/न रोशनी को ही जिस में नाच दीखता है/लोग सिर्फ नाच देखते हैं।

पर मैं जो नाचता/जो जिस रस्सी पर नाचता हूं/ जो जिन खम्भों के बीच है/जिस पर रोषनी पड़ती है / इस रोशनी में इन खम्भों के बीच इस रस्सी पर /असल में मैं नाचता नहीं हूं/

मैं केवल उस खम्भे से इस खम्भे तक दौड़ता हूं/ कि इस या उस खम्भे से रस्सी खोल दूं/ कि तनाव चुके और ढ़ील में मुझे छुट्टी हो जाये–/ पर तनाव ढीलता नहीं /और मैं इस खम्भे से उस खम्भे तक दौड़ता हूं/पर तनाव वैसा ही बना रहता है/सब कुछ वैसा ही बना रहता है।

और वही मेरा नाच है जिसे सब देखते हैं/मुझे नहीं /रस्सी को नहीं / खम्भे को नहीं/रोशनी को नहीं/तनाव भी नहीं /देखते हैं– नाच।

– स. ही. वा. अज्ञेय –

अज्ञेय की यह 'नाच' कविता हमें स्मृतियों की उन कस्बाई सड़कों पर ले जाती है,जहां कोई एक व्यक्ति जोर–जोर से डुगडुगी बजा कर भीड़ को गोलाकार में इकठ्ठा करता है , अपने कंधे पर बैठी हुई मरियल सी बंदरिया को उस भीड़ के बीच उतार कर कुछ करतब दिखाता है, साथ के अपने एक छोटे से बीमार से बच्चे को कुछ कुलांटियां खिलवाता है, पत्नी पर सोंटे बरसाते हुए सूं—सूं —साट की आवाज से वातावरण में भयावह सन्नाटा फैलाता है और अंत में अपनी जवान होती बेटी को, ढ़ोलक और डुगडुगी की तीव्रतम होती थाप ध्वनि पर ,दो खंभों पर कसी रस्सी पर इस से उस पार चलवाता है।रस्सी का दूसरा छोर पार होते ही नीचे बिछी चादर पर सिक्कों की झड़ी लग जाती है और नट का पूरा परिवार सिक्के बटोरने में लग जाता है। वस्तुत: अज्ञेय की यह कविता उसी नाच का पूरा का पूरा जीवंत वीडियो है।

आमतौर पर अज्ञेय की सशक्त कविताओं की पहचान ,छोटे–छोट वाक्यों में गुंथी हुई सरल सुबोध पंक्तियों से होती रही है। कविताओं में उनकी भाषा इतनी मंझी हुई है कि आकार में छोटी होते हुए भी अर्थ प्रभाव की दृष्टि से वे व्यापक और गहरी छाप छोड़ती हैं। इस संदर्भ में नाच कविता का अपना खास वैशिष्ट्य है। यह कविता आद्यांत मिश्र वाक्य से बुनी हुई है।प्रत्येक पंक्ति के छोटे–छोटे मिश्रित वाक्य मिलकर एक बड़े पूर्ण वाक्य को आकार देते हैं। नाच की पूरी कविता कुल चार अनुच्छेदों में या कहें कि कुल चार लंबे वाक्यों में रची गई है और हर वाक्य पूरा होने पर कविता का एक अर्थ खुलता है। इस प्रकार कविता वाक्य दर वाक्य अपने व्यंग्यार्थ तक पहुंचती है।हर पंक्ति का प्रभावोत्पादक शब्द – 'जोय' और 'जस' ,पाठकों की जिज्ञासा को बढ़ाता जाता है कि आखिर रचनाकार कहना क्या चाहता है?

अज्ञेय के साहित्य में मनोविज्ञान का प्रभाव एकदम स्पष्ट है। शेखर एक जीवनी ,अपने अपने अजनबी ,नदी के द्वीप उपन्यासों के रचयिता अज्ञेय ने फ्रायड के मनो चिंतन को अपनी रचनाओं में आवश्यकतानुसार कुशलता से बरता है। नाच में भी इसके प्रभाव को देखा जा सकता है। पाठकों में कदम दर कदम उत्सुकता जगाने वाली इस रचना का उद्देश्य चमत्कार दिखाना किंचित भी नहीं है ,भले ही वह चमत्कारी है। रचना का मूल कथ्य उस नट के भीतर झांकना है, जो रस्सी से इस से उस पार जाने का तनाव ,हर खेल के साथ , हर बार झेलता है। ध्यान से देखें तो ज्ञात होता है कि नट यहां अपनी भूमिका के विषय में दर्शकों की सोच और प्रतिक्रिया के बारे में पूरे तटस्थता से सोचता है। और लोगों के बेदर्द असंवेदनशील होने की सच्चाई से हमेशा की तरह रूबरू होता है।

भारत में नटों की पहचान जन जातीय समाज के रूप में है। 'अंग्रेजों के गजट–गजेटियरों में उनके नाम हैं–'अपराधी कबीलों' या सरकश जन जातियां'। जबकि यह जन जाति अपना संबंध जोड़ती है, रानी पद्मिनी और राणा प्रताप से ,शिवाजी और झांसी की प्रति–रानी झलकारी बाई से– यानी उन सबसे जिन्होंने किसी साम्राज्य के आगे सिर नहीं झुकाया , भले ही इसके लिए वनवास की गुमनामी का ही वरण क्यों न करना पड़ा हो।' इतिहास कथाएं बताती हैं कि इस जन जातीय समाज का जीवन बहुत संघर्षमय रहा है। इस खानाबदोश समाज को अपने जीवन यापन के लिए यहां वहां भटकना पड़ता है। कहते हैं कि रानी पद्मिनी की सेना को जब सुल्तान अलाउद्दीन ने घेरना शुरू किया, उनका रसद पानी छीनना चालू किया तो रानी ने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि – बल नहीं तो छल । फौजें हमें खा जाएंगी। उनकी रसद लूट लो। छावनियों में घुस कर हथियार चुराओ। सुल्तान के सिपाहियों को हंसकर रिझाओं और लहंगों में छिपी कटार चला कर खसिया कर दो। बस इसी तरह रानी आगे बढ़ती रही। भूख और काम भड़कते , बेशर्मी घेर लेती। अपने सैनिकों से रानियों को, बांदियों को , रक्कासाओं को गरभ रहे। रास्तों में, नदी घाटियों में पहाड़ पर्वतों पर बच्चे जन्में। रानी पद्मिनी की संतान, वीरों के अंश ,जंगलों में विचरनेवाली चित्तौड़ से भागी हुई फौजी पीढ़ियां। रसद लेने वाले कहाए बंजारे। नाचने–गाने वाले हुए – कबूतरा। दवा रुखियों के जानकार – मोधिया। घाटियों को लांघने –नाखने में माहिर लोग –

* प्राध्यापक (हिंदी) शासकीय कन्या महाविद्यालय बीना (म.प्र.) भारत

नट। बंदर-भालुओं से रोजगार जुटानेवाले -कलंदर। फिर म्लेच्छों द्वारा रानी के युद्ध में बचे पकड़े गए लोगों को गुलामों की तरह बरता गया। इसके बाद फिरंगियों ने इन्हें अपने काम का मोहरा बनाया।पर इन लोगों ने फिरंगियों की कैद रास नहीं आई ,बगावत कर दी। स्वतंत्रता के लिए पागल यह जनजाति फिर रानी झांसी की सेना में शमिल हो गई। अंग्रेजों ने इन्हें अपराधी जन जाति घोषित कर दिया। तब से आज तक ये जनजातियां सभ्य समाज के हाशिए पर जी रही हैं।सभ्य लोगों से इनका संबंध काम चलाऊ है।

यह कविता दर्शकों के मनोविज्ञान को उद्घाटित करती है। क्षेत्र कोई भी हो , दर्शक हमेशा कुछ अनोखा कुछ चमत्कारिक देखना चाहते हैं। वे जटिलतम् कला-कार्यो को देखकर अचंभा से आनंदित होना चाहते हैं। उस कला -कार्य के पीछे की चुनौतियों, दुख तकलीफों से उनका कोई लेना देना नहीं होता।(कुछ संवेदनशील रचनाकार ही उनकी इस पीड़ा को समझ पाते हैं।) अचंभे से अभिभूत हो कर फिर वे मनचाहे तरीके से जेब को ढीलने के लिए तैयार रहते हैं। नट दर्शकों के इस मनोविज्ञान को समझते हैं, फलत: नटों के द्वारा पलकों पर सुइयों को उठाना ,जीभ पर तलवार रख नाचना सिर पर आग की लपटों को धारण कर नृत्य करना आदि प्राणांतक करतब दिखाए जाते हैं। अपने दर्शकों को रिझाने के लिए और ऐवज में अपनी आजीविका जुटाने के लिए जन जातियों के अलग अलग समूहों ने एक दूसरे की कला - कार्य को कुशलता से अपना लिया है। अब एक नट कलंदर की तरह बंदर -भालुओं की कलाबाजियां भी दिखाता है, कबूतराओं की तरह नाचता-गाता भी है और रस्सी पर चलने की महीन धारदार कला को भी प्रस्तुत करता है।

नट के लिए नाच कोई मनोरंजन नहीं है। एक मजबूरी है। पेट- पालने की विवशता है। दो खंभों पर तनी रस्सी से इस से उस पर जाने का अपरिहार्य कर्म है।इसीलिए नट कहता है कि - असल में मैं नाचता नहीं हूं/ मैं केवल उस खम्भे से इस खम्भे तक दौड़ता हूं/ कि तनाव चुके और ढ़ील में मुझे छुट्टी हो जाये/पर तनाव ढ़ीलता नहीं। अज्ञेय ने अपनी कविता में यद्यपि नाच के दौरान वाद्यों की चर्चा कहीं नहीं की है, पर नटों द्वारा नाच के दौरान तनाव ढ़ीलने के लिए वाद्यों का प्रयोग आमतौर पर किया जाता है। तनाव मुक्ति के विषय में यूनानी विचारक प्लेटो ने 'लॉज' में इस प्रकार के विषमोपचार का संकेत किया है। प्लेटो के अनुसार - बाहरी उत्तेजना की सहायता से आंतरिक उत्तेजना और अशांति का निराकरण होता है। रस्सी पर चलते हुए नट का मन - ध्यान अपने इस काम के अलावा और कहीं न भटके इसलिए ढ़ोलक डुगडुगी की ध्वनि को तीव्र से तीव्रतम् किया जाता है।

नाच कविता जीवन का सच उजागर करती है कि मनुष्य निर्मित अर्थ विभाजन की काली रेखा ने मध्यम वर्ग और विपन्न वर्ग के पक्षों-पालों के सोचने - समझने की दिशा को दो विपरीत ध्रुवों में स्थापित कर दिया है, फलत: उनकी संवेदनाएं भी उसी अनुरुप व्यक्त होती हैं।दर्शक का अर्थ है, देखने वाला किन्तु विडंबना यह है कि यह दर्शक समाज वह सब कुछ नहीं देखता जो कि स्पष्ट तौर पर दिख रहा होता है यथा - नट के चेहरे का तनाव, उसकी चुनौतियां जैसे - रस्सी खंभा आदि। नट की रस्सी पार करने की करामात दर्शकों में रोमांच भरती है।रोमांच की इस घड़ी में दर्शक को केवल और केवल नाच दिखता है रस्सी, खम्भा, रोशनी, तनाव कुछ भी नहीं दिखता। जबकि नट का अंतर्मन कहीं न कहीं यह चाहता है कि दर्शक उसके तनाव को देखें,उसकी मजबूरी को पीडा को महसूसें उसकी जीवन से जुड़ी इस आजीविका की समस्या को जानें- समझे। पर कड़वा सच यह है कि आज तक नट की समस्या ज्यों की त्यों है।तभी तो नट कहता है कि - 'पर तनाव वैसा ही बना रहता है/सब कुछ वैसा ही बना रहता है।' वैसा ही अर्थात हमेशा की तरह ।ऐसा इसलिए कि दर्शक भी इसमें बदलाव नहीं चाहते। दर्शक वही देखते हैं जो वे देखना चाहते हैं , वे जो नहीं देखना चाहते वह दिखाई देने पर भी नहीं देखते।

नाच वस्तुत: दर्शक समाज पर करारा व्यंग्य है। एक के लिए जो मनोरंजन है ,वही दूसरे के लिए जिंदा रहने की मजबूरी है। एक के लिए जो विस्मय, रोमांच और समय बिताने का साधन है, वही दूसरे के लिए क्षण प्रतिक्षण आशंका, भय और तनाव का कारण है। कविता, इंसानी संवेदनहीनता को तीव्रता से इंगित करती है। चैतन्य करती है कि हमारी संवेदनाएं यदि थोड़ी बहुत भी बची हैं, तो जीवन जीने की ऐसी शर्मनाक़ शर्त पर रोक लगनी ही चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अल्मा कबूतरी - मैत्रेयी पुष्पा , राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली
2. पाश्चात्य काव्यशास्त्र - देवेन्द्रनाथ शर्मा , नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

महाप्राण निराला की मानवीय चेतना

डॉ. वारिश जैन *

प्रस्तावना – छायावाद के प्रमुख आधार स्तम्भ व हिन्दी के 'महाप्राण' सूर्यकांत त्रिपाठी निराला का जन्म 28 फरवरी सन्1899 को हुआ था।[1] निराला ने स्वयं अपना नाम सूर्यकांत रखा और जब साहित्य जगत में प्रतिष्ठित होने लगे तो उपनाम 'निराला' जोड़कर ये सूर्यकांत त्रिपाठी निराला नाम से जाना जाने लगे। उन्हें तीन वर्ष की अल्प आयु में ही माँ के प्यार से वंचित होना पडा। निराला के जीवन में खुशियों का दौर बहुत कम समय तक रहा। विवाह के पश्चात् उनकी दूसरी संतान सरोज के जन्म के साथ उनके पिता रामसहाय तिवारी का देहावासन हो गया और निराला के ऊपर पारिवारिक दायित्वों का बोझ आ गया। अभी वे अपने पिता के देहावासन के दुख से उबरे भी नहीं थे कि उनकी पत्नी और बड़े भाई का साथ छूट गया। जब वे महीसादल में थे तभी उन्हें पत्नी की गंभीर बीमारी का तार मिला, जो उन दिनों उनकी ससुराल डलमऊ में थी। वहाँ पहुँचने से पूर्व पत्नी उनका साथ छोड़ कर अनन्त पथ की पथिक बन चुकी थी। पुत्र और पुत्री सरोज को डलमऊ में ही नानी के पास छोड़कर वे गडवोला के रास्ते मे ही थे कि उनके बड़े भाई बदलु उनका साथ छोड़ गये। उनके शव को देखकर वे मुर्छित हो गए, बड़े भाई के पाँच बच्चे थे, जिनमे एक दूधपीती बच्ची भी थी। बडे भाई की मृत्यु के तीसरे दिन भाभी चल बसी और उसके तीसरे दिन सबेरे छोटी बच्ची भी जाती रही। कुछ दिनों पश्चात् उनके चाचा का भी निधन हो गया।[2]

उनकी पत्नी की मृत्यु 21 वर्ष की अवस्था में हुई, जो आयु वैवाहिक जीवन प्रारंभ करने की होती है, उसी समय उनकी पत्नी का कारुणिक अंत हो गया। उनके दो बच्चे और भाई के चार बच्चों का दायित्व भी इन्हीं के कंधो पर आ गया। सन् 1917 में पिता की मृत्यू से जो सिलसिला आंरभ हुआ, वह उनकी प्रिय पुत्री सरोज के निधन तक चलता रहा। यह निराला पर अंतिम वज्रपात था, जिसके पश्चात निराला सचमुच निराला बन गए। आघातों के इन थपेडों में उनके व्यक्तित्व की क्रांति चेतना व मानव चेतना दोनो विकसित हुई, जिसका विश्लेषण हम आगे करेंगे। निराला के जीवन की एक के बाद एक इन दुखद घटनाओं का वर्णन करने का एक मात्र कारण यह है, कि इससे उनकी मानवीय चेतना को समझने में आसानी होगी। अभाव व अकेलेपन की अनुभूति ने उनके जीवन को रिक्त नहीं किया, बल्कि अंदर से मानवीय संवेदनाओ से लबालब कर दिया। यहीं इनके जीवन का वैशिष्ठ्य है, जो उनके सम्पूर्ण रचनात्मक साहित्य मे अमृत की धारा की तरह बहता रहता है।

जीवन मे लगातार प्रहार झेलते रहने के बावजूद उनका मन हार नहीं मानता। वे अपने कविकर्म और जन सामान्य की गौरव और गरिमा की प्रतिष्ठा के लिए निरंतर संघर्षशील रहता है। जीवन के प्रति यह आस्था और कभी हार न मानने की जिद ही निराला का व्यक्तित्व है।

इस व्यक्तित्व का प्रस्फुटन ही उनके रचनाकर्म में होता है, जिसे हम उनका कृतित्व कहते है।

एक ऐसा व्यक्तित्व जो सिर्फ और सिर्फ आम आदमी के लिए जीता रहा, लड़ता रहा और उनके अपमान को अपना अपमान समझता रहा। इस अपमान को करने वाली व्यवस्था के सामने कभी नतमस्तक नहीं हुआ, उस कवि में मानवीय चेतना का उच्चतम स्तर अपनी सीमा को पार कर गया होगा। यह बात नि:सदेह है।

'मानवीय चेतना से यहाँ हमारा तात्पर्य उस चेतना से है, जो आज मानव के आंतरिक विकास में गति प्रदान करे। उसे सही दिशा में बढ़ने मे सहयोग दें। मानवीय गरिमा को चोट पहुँचाने वाले तत्वों का प्रतिस्थापन करें। वैसे तो सभी चेतना प्राकृति या मानवीय चेतना के अंतर्गत आ जाती है, क्योंकि मनुष्य की आत्मचेतना (बीइंग) ही सबसे बड़ी चेतना है।'[3] परंतु यहाँ हम उस मानवीय चेतना की बात कर रहे है, जो मनुष्य की गरिमा को सर्वश्रेष्ठ महत्व तक पहुँचाने का कार्य करती है। आज सर्वव्यापी मानवीय संकट' की बात की जा रही है। वास्तव में क्या है, मानवीय संकट का स्वरुप ? कौनसा पहाड़ टूट रहा है, मानवता पर या कोई विश्वव्यापी भूचाल आने वाला है ? ऐसा कुछ भी नहीं होने वाला, फिर कौन सा संकट है ? वह संकट है, मानवीय चेतनाओं के लुप्त होने का संकट। संकट है मानव की वैयक्तिक आंतरिकता के विघटन का संकट अविवेक और असंगति ही जीवन चेतना बन जाने का संकट, मनुष्य के अंदर मानवीय दायित्व को ग्रहण करने की क्षमता नपुंसक होते जाने का संकट। परंतु निराला के संबंध में स्थिति बिल्कुल विपरीत थी, उन्हे मृत्यु से भी भय नहीं लगता था। परिस्थितियों से लड़ने का अटूट विश्वास व जिजिवषा थी उनके अंदर। उनके संबंध में विचित्र बात यह थी कि वे मृत्यु को चुनौती के रुप मे स्वीकार करते थे। मृत्यु उनके लिए भय पैदा नहीं करती परंतु वे स्वयं उसका साक्षात्कार करते थे। जिसने दुख को, पीड़ा को, मृत्यु को जीने की दृष्टि पैदा कर ली, सच्चे अर्थो में, वही मानवीय है और इसी दृष्टि से निराला सबसे 'मानवीय' थे।

'आज के संस्कृति-युग' की सबसे बडी विषमता यह है कि हमारे पास न तो सुख को भोगने की दृष्टि है और न दुख को भोगने का साहस। सुख को सार्थक रुप में भोग सकने की भी क्षमता उसी में होती है, जो दुख को भोगने की दृष्टि विकसित कर लेता है। आज की संस्कृति नपुंसकता की संस्कृति है। यथार्थ से पलायन और दुख से ऊबकर अपने चारों ओर कुहासा पनपाकर जो जीना चाहता है, उसमें व्यक्तित्व की प्रतिष्ठापना नहीं हो सकती।'[4]

वर्तमान समय में निराला की इस चेतना की महती आवश्यकता है, आज तो पल पल पर आत्महत्या की बात होती है, जरा से दुख से घबराकर लोग जिन्दगी से हार मान लेते है, लेकिन निराला में जीने की चाह अंत तक बनी रही। उनके पास मृत्यु का आह्वान है, लेकिन यह आत्महत्या से सर्वथा भिन्न है, क्योंकि विलासिता, ऐश्वर्य और निर्बाध इंद्रिय सुखों के सामंतीय मूल्यों के परिवेश मे दुख और मृत्यु को जीवन दर्शन के रुप मे अपनाना किसी

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, साँवेर (म.प्र.) भारत

कायर का काम नही यह शूरवीर और साहसी का काम है और निराला तो थे ही महाप्राण 'निराला'। वे पहले से मृत्यु का वरण करते है, मृत्यु उनका वरण जब करेगी तब करेगी

'मरण को किसने वरा है
उसी ने जीवन भरा है
परा भी उसकी, उसकी
अंक सत्य यशोधरा है।'

मानवीय चेतना से ओतप्रोत उनके हृदय में आम आदमी के प्रति अत्याधिक संवेदना थी। यह संवेदना कोरा साहित्य कर्म का निर्वाह मात्र नहीं था। इसके लिए वे जीवन में प्रत्यक्ष लड़ाई भी लड़े है। 'भिक्षुक', 'दीन', 'विधवा', 'वह पत्थर तोड़ती पत्थर', 'कुकुरमुत्ता' इत्यादि कविताए इसका उदाहरण है। समाज में व्यापत विषमता व शोषण ने निराला के मर्म को छू लिया था, उनके हृदय की समस्त करुणा दीन जनो की ओर प्रवाहित हो गई थी। करुणा तो औरों की भी प्रवाहित हो गई थी पर निराला की विशेषता थी उनसे तादात्म्य इन्हें नीच कहने–समझने वालो के प्रति आक्रोश संत रविदास के प्रति कविता की इन पंक्तियों से यह तथ्य स्पष्ट होता है –

'ज्ञान गंगा में समुज्जवल चर्मकार
चरण छूकर कर रहा मैं नमस्कार।'

निराला एक आस्थावान कवि थे, लेकिन जीवन समर से पराजित और सम्पूर्ण साथी जनो को छोडकर जाने का यह एकाकी बोध यह क्षीण, कण्टकपथ और जीवन के विपुल प्रहार उन्हें बारबार तोड़ने की कोशिश करते थे, परंतु निराला अपनी आस्था के बल पर शरणागति पाने की कोशिश करके जीवन में पुन: डटे रहने की शक्ति अर्जित करते है। डॉ नंदकिशोर नवल निराला के उक्त शीर्षक की व्याख्या करते हुए कहते है – 'निराला ने विभिन्न मोर्चो पर अपने जीवन में जो संघर्ष किया था, वह आज हिन्दी जगत के लिए एक सुपरिचित तथ्य है। उस संघर्ष मे स्वभाविक रुप से ऐसे क्षण आते थे, जब उनकी आध्यात्मिक आस्था जो उनके भीतर थी, संकटग्रस्त तो हुई लेकिन जिसे उन्होंने कभी छोडा नहीं।'[5]

निराला मानव की शक्ति सामर्थ और गौरव के गायक कवि है। दुनिया की कोई भी अवधारणा या वस्तु उनकी दृष्टि में मनुष्य की गरिमा से अधिक गरिमावान नहीं है। मानव पर सबसे अधिक आतंक 'ईश्वर' या ब्रह्म की अवधारणा रहा है। ईश्वर के सर्वशक्तिमान, मनुष्य की नियती के विधायक तथा सृष्टि में कर्ता के रुप में जो भय मनुष्य के हृदय पर सदियों से राज करता रहा, वह निराला पर हावी नही है। शंकराचार्य ने कहा था 'अहंब्रह्मस्मि' मैं ब्रह्म हूँ। निराला ने इस सूत्र को पलट दिया और कहा 'तुम ब्रह्म हो' मैं से तुम का यह अंतर शंकराचार्य और निराला की दृष्टि 'विजन' और सोच का अंतर है। यहाँ 'तुम' मानव मात्र को संबोधन है। 'मैं' मे जो अहमपने का बोध है, वह 'तुम' में आकर मानव मात्र में परिणत हो जाता है। कायरता और कापरता के भाव दीन भाव है और नश्वर है। मनुष्य की गरिमा सर्वोत्कृष्ट है, उसके लघु या दीन–हीन का भाव गलत है। मानव को ही ईश्वर घोषित करने का यह विचार हमारी सम्पूर्ण अवधारणा और परंपरा को उलट–पलट देता है।

निराला ने जिस ईश्वर को अपनी प्रार्थनाओं में संबोधित किया है वह कोई अवतारी रुप नहीं है, निराला ने राम शब्द का बार–बार प्रयोग किया वह भी अवतारी राम के अर्थ में नहीं एक मानवीय शक्ति के रुप मे राम की शक्ति पूजा में राम एक मानव है। अपनी सम्पूर्ण संशय, पराजयबोध तथा अहंकार को जीता हुआ। एक पुरुषोत्तम नवीन। तुलसी ने राम को विष्णु के अवतार के रुप में प्रस्तुत किया था। परंतु निराला के यहॉ राम किसके प्रतिक है ? आस्था के, विश्वास के, दृढ़ संकल्प के तथा एक विशुद्ध मानव के।

डॉ आर डी मिश्र ने लिखा है – 'उसकी आकांक्षा ईष्वर को पाने की नही और न वह स्वर्ग के सुख अथवा अलौकिक आनंद की लालसा करता है। वह तो अपने जीवन की सुस्त शक्ति को पुनर्जाग्रत करना चाहता है, पूर्ण मनुष्यत्व बोध और मानवीय गरिमा की कामना के साथ।'[6]

निराला का व्यक्तित्व असाधारण था, चेतना का उद्दाम आवेग ही विषम परिस्थितियों में भी उनसे साहित्य रचना कराता रहा। कोई भी साधारण इंसान निराला जैसी परिस्थिति में अपना संयम खो देता और सुविधा संपन्न जीवन को अपना लेता, परंतु निराला महाप्राण थे मरते मर गये न समझौता किया न मानवीय दायित्व से विमुख हुए। इसका एक उदाहरण दृष्टव्य है – जीवन के अंतिम समय में जब वे रोगग्रस्त थे उस समय महादेवी वर्मा ने उनसे कहा कि चलो अस्पताल ले चलती हूँ। इसके जवाब मे निरालाजी ने कहा था मैं वहा कभी नहीं जाऊँगा जहाँ आम आदमी की कोई कीमत या पूछ परख नही होती और विशिष्ठ वर्ग की पूछ परख होती हो। उनके अंतिम समय की यह घटना उनकी मानवीय चेतना व उनकी जागृत आत्मा का ठोस प्रमाण है।

निष्कर्षत: हम कह सकते है कि निराला के व्यक्तित्व में मानवीय संवेदना और आम आदमी के दु:खों के प्रति गहन भावना कूट कूट कर भरी हुई थी। उनके जीवन की घटनाएँ उन्हें मानवीय चेतना का सदी का सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व सिद्ध करने और मानने के लिए विवश करती है, उनकी यही संवेदना उन्हें महाप्राण निराला बनाती व अन्य साहित्यकारों से अलग करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रामनरेश त्रिपाठी कविता कौमुदी में प्रकाशनार्थ निराला द्वारा प्रेषित जन्म तिथी,रामविलास शर्मा – निराला की साहित्य साधना – 1 पृष्ठ 54
2. रामविलास शर्मा – निराला की साहित्य साधना – 1 पृष्ठ 34
3. मनखंजन किनके – लेखक रमेश कुंतल मेध पृष्ठ 197
4. नये प्रतिमान पुराने निकश – पृष्ठ 270 लेखक लक्ष्मीकांत वर्मा
5. निराला कृति से साक्षात्कार – पृष्ठ 82 लेखक नंदन किशोर
6. निराला के काव्य मे मानवीय चेतना – पृष्ठ 10

****

नारी चेतना का उत्तरोत्तर विकास

डॉ. स्मिता सिंघई *

प्रस्तावना – मनुष्य सृष्टि का सबसे अधिक सचेतन प्राणी है। इसलिये वह वर्तमान के साथ ही भूत और भविष्य में जीवित रह लेता हैं। उसमें जीते हुये वह पुरातन अनुभवों से सीखता हैं, और वर्तमान से उबरने के लिये भविष्य की परिकल्पना करता है। चेतना मनुष्य को परिस्थितियों से साक्षात्कार कराते हुये विकास की ओर ले जाती है। चेतना मनुष्य को ज्ञान से युक्त करती है। आज चेतना के विविध रूप हमारे सामने आते है– सांस्कृतिक चेतना, आध्यात्मिक चेतना, सामाजिक चेतना आदि। नारी चेतना सामाजिक चेतना का ही एक अंग है। क्योंकि समाज का निर्माण स्त्री और पुरूष के सम्मिलित प्रयास से ही संभव है। इसलिये नारी की सामाजिक स्थिति का प्रभाव, पूरे परिवार, समूह और राष्ट्र पर पड़ता है। नारी हो या पुरूष अपने अस्तित्व के प्रति सचेत रहना उनका स्वाभाविक धर्म है। परन्तु शारीरिक भिन्नताओं ने उन्हें एक सामान्य स्तर पर न रखकर अलग–अलग स्थितियॉ प्रदान कर दी है। पुरूष जैसी ही सामाजिक स्थिति को धारण करने वाली नारी, पुरूष अहम् का शिकार बनकर दोयम दर्जे पर रखी गई है। और उसकी स्थिति समाज में पुरूष से निम्नतर है। इसके बाद भी नारी अपने अस्तित्व के लिये लगातार लड़ती है। वैदिक युग से लेकर मध्ययुग और वर्तमान युग में भी नारी अपने अस्तित्व के लिये संघर्षरत रही है। द्रोपदी का असंतोष यदि महाभारत काल में युद्ध के रूप में प्रकट होता है, तो कैकयी का असंतोष राम वनवास के रूप में। अत: नारी अपने अस्तित्व की लड़ाई के लिये लगातार प्रत्यनशील रही है।

आधुनिक युग नारी की सफलता की कहानी है। राजा राममोहनराय के प्रयत्नों से लेकर आज के वैधानिक प्रयत्न तक नारी ने बहुत कुछ अर्जित कर लिया है। ये सही है कि नारी के अस्तित्व की लड़ाई में पुरूष हमेशा ही सहभागी रहा है, परन्तु उसकी सहभागिता परिवर्तन को जन्म देकर भी नारी को उसका प्राप्य नहीं दिला सकी। इसका कारण नारी का स्वयं के प्रति उदासीन रहना है। वस्तुत: नारी का गठन ऐसा है कि वह शारीरिक और मानसिक रूप से पुरूष पर निर्भर रहना अधिक पसंद करती है और निर्भरता उसको अधिकारों के प्रति अधिक उदासीन बना देती है। उदासीनता की यही परत कालांतर में उसके अस्तित्व को पुरूष के आगे बौना बनाने में सहयोगी सिद्ध होती है।

वैदिक काल में नारी सुरक्षित तथा स्वतंत्र थी और जीवन के हर क्षेत्र में मनुष्य की सहायक थी। युद्ध क्षेत्र में वह दुर्गा थी। समाज में नारी का सशक्त व्यक्तित्व था। किन्तु उसकी दशा उत्तरोत्तर हीन होती चली जाती है।

बौद्धकाल में अनेक स्त्रियॉ निर्वाण की खोज में भिक्षुणियॉ बनी, सामाजिक क्षेत्र में भी उनकी स्थिति उत्तरोत्तर गिरती जा रही थी। मध्य युग तक पहूॅचते–पहूॅचते स्त्री बिल्कुल पंगु हो गई थी।[1] नारी चेतना की श्रृंखला में नारी शोषण के विरूद्ध पहला सशक्त स्वर 'मीराबाई' का था। मीरा भारतीय साहित्य में ही नहीं वरन् विश्व साहित्य में नारी शोषण के विरूद्ध पहली चिंगारी थी। वे तत्कालीन नारी शोषित समाज के सामने लौह स्तंभ के रूप में खड़ी थी।

वास्तव में मीरा आधुनिक नवजागरण का प्रतीक थी। वह मध्यकाल में नारी की स्वतंत्रता और पुरूष निरपेक्ष भूमिका का पथ प्रशस्त करने वाली पहली महिला थी। उन्होंने स्त्रियों के लिये नवीन उदाहरण प्रस्तुत किये जो कि स्त्री के लिये पुरूष निरपेक्ष व्यक्तित्व का विकास है। मीरा के व्यक्तित्व से नारी जीवन के संदर्भ में पुरूष की केन्द्रीय स्थिति महत्वहीन हो जाती है।

आधुनिक युग में नारी शिक्षा पर जोर दिया गया। शिक्षित नारी ने घर और बाहर दोनों क्षेत्रों को प्रभावित किया। वह यह भी सोचने लगी पुरूष वर्ग घर और बाहर दोनों क्षेत्रों में अधिकृत है, तो नारी क्यों नहीं? यह स्थिति उसके लिये असहनीय थी, इसलिये नारी के मन में विद्रोह की भावना जाग उठी। भारतीय नारी पर पाश्चात्य प्रभाव पड़ने के कारण धीरे–धीरे उसके अंदर आर्थिक स्वतंत्रता की भावना उठी। आर्थिक स्वतंत्रता के साथ ही साथ नारी के अंतर्मन में वैचारिक स्वतत्रंता की भावना भी पनप उठी। आधुनिक युग में नारी शिक्षित है तथा समाज के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर सकती है, तथा आर्थिक दृष्टि से भी आत्मनिर्भर है। भारतीय संविधान भी नारी को उसके मूल अधिकारों के लिये पुरूष के समकक्ष मानता है। बीते हुये युग की नारी तथा आज की नारी में जमीन आसमान का अंतर है। सदियों से नारी, दासता से मुक्ति तथा समाज और राष्ट्र में स्वतंत्र अस्तित्व ग्रहण करने के लिये प्रयत्नशील थी। नारी, पुरूष के समान उच्च शिक्षा ग्रहण कर चुकी है। और उसे भी पुरूष के समान अधिकार प्राप्त हो चुके है। अब लड़कों के समान लड़कियॉ भी स्वतत्रंता पूर्वक शिक्षा प्राप्त कर सकती है। इसके लिये कोई भी सीमा रेखा नहीं खींची गई है। इसके अलावा पैतृक संपत्ति पर जितना अधिकार लड़कों का है, उतना लड़कियों का भी है। नारी में आई हुई चेतना के कारण समाज के हर सम्मानित पद पर नारी विराजमान है।

स्त्री की दशा या दिशा पर जो कुछ भी लिखा जाता रहा है। उसे नारी चेतना या स्त्री विमर्श की श्रेणी में रखा जाता है। नारी चेतना को समझने की जरूरत सबसे ज्यादा इसलिये है क्योंकि नारी परिवार के केन्द्र में होती है, और परिवार में अलगांव का असर पूरी सभ्यता को तहस नहस कर देता है। समाज और परिवार में स्त्रियों की दशा ठीक नहीं है। स्त्री – सबलीकरण की बातें अपनी जगह है। लेकिन कोई भी संवेदनशील मन उन बातों के अंबार के नीचे दबे नारी जीवन के सिसकते सच की अपेक्षा नहीं कर सकता। मुश्किल यह है कि पुरूष वर्चस्व के प्रभाव के कारण जाने – अनजाने बहुत सारी बातें और उन बातों से निकलने वाली अंतर्ध्वनियॉ कुछ ऐसी हो जाती है कि नारी जीवन के दुखद सच और कारण ओट में ही छिपे रह जाते है। सहज ही विश्वाास नहीं होता है कि हिंसा का सबसे खतरनाक पहलू है– घरेलू हिंसा। घर के अंदर होने वाली हिंसा, हमारे समाज की ढकी – छिपी सबसे बड़ी सच्चाई है। सरकारी ऑकड़े बताते है कि हमारे देश में मौत का सबसे बड़ा कारण घरेलू हिंसा है। पुरूष वर्चस्व वाले समाज में हिंसा और क्रूरता की त्रासद अभिव्यक्ति पुरूष – मनोभाव में ही हो रही है। जाहिर हैं, हिंसा और क्रूरता की

*अतिथि विद्वान (हिंदी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहगढ़, जिला- राजगढ़ (म.प्र.) भारत

पैठ की जड़ सामाजिक और आंतरिक जीवन की संरचना में है। इन्हें खोजा जाना चाहिये।

स्त्रियों की आत्मनिर्भरता से आशय आर्थिक आत्मनिर्भरता तक सीमित न होकर समाज के दूसरे आयामों तक होना चाहियें, खासकर मानसिक आत्म निर्भरता से। नारी चेतना के प्रसंग में आर्थिक, शारीरिक और मानसिक आत्मनिर्भरता के बहुत से आयामों के लिये पर्याप्त मनोभाव बनाने के लिये नैतिकता की पुरानी मान्यताओं की जगह नई मान्यताओं को देना आवश्यक है। हिंदू समाज के बारे में नागार्जुन की एक टिप्पणी है हमारा हिंदी-भाषी क्षेत्र सामाजिक सहजीवन की दृष्टि से पड़ोसी प्रदेशों की अपेक्षा अधिक पिछड़ा हुआ है। हमारी यह लालसा रहती है कि फिल्मों में नये-नये चेहरे दिखाई पड़े, किंतु अपनी पुत्री या पुत्रवधु को हम 'मर्यादा' की तिहरी परिधियों के अंदर छेके रहेंगे।[2] यह सच है कि 'जितना बड़ा होता है घर। उतना ही छोटा होता है स्त्री का कोना।'[3] स्त्रियों में आई चेतना ने इस छोटे कोने से बाहर निकलने की कोशिश की है। आजादी के बाद साक्षरता - दर एवं अन्य स्थितियों में सकारात्मक बदलाव भी हुये है। महिलाओं की आर्थिक स्थिति भी पहले से अच्छी हुई प्रतीत होती है।

पुरूषवादी समाज व्यवस्था में स्त्री की देह पर होने वाले तमाम तरह के अत्याचार के कारण 'स्त्री की देह पर अधिकार' के सवाल को प्राथमिकता मिल जाती है। 'स्त्री औपनिवेशिक आखेट बनकर उतनी ही आत्मसम्मान विहीन है, जितनी पितृसत्तात्मक धार्मिक जंजीरो में कसकर।'[4] 21वीं सदी में पश्चिमी दुनियॉ का सांस्कृतिक साम्राज्यवाद हमारे बिल्कुल आसपास और भीतर पहुॅच चुका है। उसकी नजर में स्त्री की सबसे बड़ी संपत्ति उसका रूप और यौवन है। पहले उसे धोबी पाट और किचन समझा जाता था, अब उसे महज मनोरंजन और बेडपार्टनर के रूप में देखा जाता है। पितृसत्तात्मकता और पश्चिमी दुनियां के सांस्कृतिक साम्राज्यवाद के बीच सैंडविच होकर स्त्री, दुनियां के किसी भी देश में दूसरे देश से ज्यादा भारत में चेहराविहीन है। पुरूष वर्चस्व की दुनियां में यह उक्ति प्रसिद्ध है कि पुरूष की शक्ति ही उसका सौन्दर्य होता है, और स्त्री का सौन्दर्य ही उसकी शाक्ति होती है। लेकिन स्त्रियों में आई चेतना ने इस उक्ति के मायने बदल डाले है।

नारी चेतना के प्रांरभ का गहरा संबंध नवजागरण से ही है। यह भी कहा जा सकता है कि नारी चेतना नवजागरण के कई महत्वपूर्ण सूत्रों में से एक है। नवजागरण का उदय मूलत: धर्म के जड़ और वंचक इस्तेमाल से बने दमघोंटू सामाजिक वातारण में प्राणवायु के रूप में हुआ। हालॉकि नवजागरण एक आधुनिक घटना है और इसका गहरा संबंध स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की इच्छा से रहा है। भारत में इसकी हल्की सी झलक मध्ययुग में भी मिलती है। यह सत्य है कि मध्ययुग में स्त्री के सवाल गंभीरता से शामिल नहीं है लेकिन मीरा के उदय जैसी घटनायें नारी चेतना का ही एक रूप है। 'पराधीनसपनेहुं सुखानाहीं' तुलसीदास जी को लोक प्रसिद्ध उक्ति है। कुछ लोग 'पराधीन' को मुगल शासन की पीड़ाओं से जोड़ते है, उस अर्थ में इस उक्ति का मुगल शासन से कुछ भी लेना देना नहीं है। इस उक्ति से पहले की उक्ति पर ध्यान देने से बात साफ हो जाती है कि 'पराधीन सपनेहुं सुखानाहि' का संबंध स्त्री के कठिन जीवन से है। पूरी उक्ति इस प्रकार है 'कत विधि सृजी नारी जगमॉहि, पराधीन सपनेहुॅ सुख नाहीं'[5] बहुत हद तक हमारे समाज में नारी अब पराधीन नहीं है। क्योंकि अब उसमें चेतना का विकास हो चुका है। संपूर्ण विश्व में कई प्रकार की भिन्नतायें है, तो कई प्रकार की समानतायें भी है। इन भिन्नताओं और समानताओं को देखते हुये लगता है कि पूरी दुनियां में स्त्रियों की सामाजिक दुर्दशा में चारित्रिक समानतायें है। यह समानता देह पर अत्याचार से जुड़ी है, लेकिन यह देह तक सीमति नहीं है। शिक्षा के प्रभावी ढंग से जुड़े होने के बावजूद नारियों के शोषण की महागाथा नहीं है। शिक्षा के प्रभावी ढंग से जुड़ी होने के बावजूद नारियों के शोषण की महागाथा का कोई अंत नहीं है। समाज में स्त्रियों की हैसियत दोयम दर्जे पर है। समाज की धुरी परिवार है और परिवार की धुरी स्त्री होती है। पुरूषों की रंजिश के चरम प्रतिशोध का आसान शिकार भी स्त्री ही होती है। तमाम विकास के बावजूद नारी को जमीन पर खड़े होकर आसपास देखने का अवसर नहीं बन पाया है, इसलिये उनके खींझने और तंग होने के उनके मर्म को हमें समझना होगा। समझना होगा कि स्त्रियॉ क्यों कहती है कि शतंग आ चुकी हूॅ खिड़की से आसमान देखते-देखते। स्वाभाविक है कि स्त्री अपनी समग्र मुक्ति की मांग करती है और इसके लिये प्रयासरत भी रहती है। लेकिन एक विषम समाज में पांरपरिक सत्ता - समूह नाना प्रकार के अलगांव और विभेदकारी प्रवृत्तियों की गिरफ्त में आदमी को लेकर नारी की असली चेतना का शिकार कर लेताा है। पराधीन सपने सुख नाहीं के भाव को स्त्री की पराधीनता के मूल प्रसंग को अलग किये बिना संपूर्ण समाज के प्रसंग से जोड़कर देखना जरूरी है। नारी चेतना को परिवार और घर के संदर्भ में देखना जरूरी है। पूरी सामाजिक संवेदनशीलता और शक्ति के साथ नारी के सवाल को अभी तक ठीक से उठाया जाना शेष है, जो अब महिला सशक्तीकारण के प्रयासों से पूर्ण हो रहा है। समाज में सच में महिला सशक्तीकरण लाने के लिये महिलाओं के खिलाफ बुरी प्रथाओं के मुख्य कारणों को समझना और उन्हें हटाना होगा जो कि समाज की पुरूष प्रभाव युक्त व्यवस्था है। जरूरत है कि हम महिलाओं के खिलाफ पुरानी सोच को बदले। संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों में भी बदलाव लाये इसके साथ ही हमें महिलाओं के प्रति अपनी सोच को विकसित कररना होगा, क्योंकि सशक्त नारी से ही सशक्त समाज का निर्माण संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. शैली रस्तोगी 7 हिंदी उपन्यासों में नारीं पृ. 10
2. नागार्जुन - आइने के सामने, सारिका मार्च 1965
3. नागार्जुन - रचनावली - 6 - राजकमल प्रकाशन, प्रथम सं. 2003
4. शंभुनाथ - हिंदी नवजागरण और संस्कृति: स्त्री विमर्श की मुश्किलें आनंद प्रकाशन 2004
5. तुलसीदास - रामचरितमानस।

****

हिन्दी पत्रकारिता एवम् विधिक सीमाएँ

डॉ. एस. जे. सिद्दीकी *

प्रस्तावना – ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा बंगाल को अधिगृहित करने के बाद सन् 1800 ई0 में अंग्रेजों द्वारा भारतीयों से सम्पर्क में रहने के उद्देश्य से फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना की गयी। जिसके प्रिंसीपल जॉन गिलक्रिस्ट थे, जो हिन्दी भाषा के जानकार थे। सन् 1803 में विलियम कैरे और मार्शमैन ने कलकत्ता के समीप श्रीरामपुर में देवनागरी अक्षरों की ढलाई के लिये एक छापाखाना खोला। इसी समय हिन्दी में 'समाचार दर्पण' और 'दिग्दर्शन नामक समाचार प़त्र श्रीरामपुर से निकला। 1826 में पं. युगल किशोर शुक्ल ने हिन्दी में 'उदन्त मार्तण्ड' शीर्षक से साप्ताहिक निकाला। भारत के हिन्दी प्रदेश में यह प्रारंभिक पत्रकारिता छापाखाने के अविष्कार के साथ एक महान् पवित्र उद्देश्य लिये हुए जनता मे जनजागरण हेतु उदित हुई क्योंकि 'प्रेस ही उस समय एक ऐसा हथियार था। जिसके जरिए जनता को राजनैतिक तौर पर शिक्षित प्रशिक्षित किया जा सकता था और एक राष्ट्रीय विचारधारा का रोपा जा सकता था।'-डॉ रमेश चन्द्र शुक्ल।

19वीं सदी के आरम्भ तक आते-आते पत्रकारिता ने जनविरोधी कानूनो के विरोध में तर्कसंगत आंकड़े छापने शुरू किये जिसके विरोध में ब्रिटिश शासन द्वारा प्रेस की स्वतंत्रता बाधित करने लिए कई विधेयक पास किये गये। पर सारे विरोधो को कुचलते हुए दमन की परवाह न करने वाले भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को गति और दिशा देने में हिन्दी पत्रकारिता के माध्यम से तत्कालीन साहित्यकारो का शतश: समर्थन मिला।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तो साहित्य की इस विधा ने विराटतर रूप धारण कर लिया। जीवन और समाज के सभी क्षेत्रों से जुड़ी पत्रकारिता का उद्देश्य प्रकृति और प्राणी मात्र के कल्याण के लिए दृढ़ संकल्पबद्ध होना हो गया। हिन्दी पत्रकारिता एक ऐसी आंख जो सम्पूर्ण समाज और उसमें व्याप्त स्थितियों को एक साथ देख लेती है और प्रतिबिम्बित करती है। स्वतंत्रयोत्तर पत्रकारिता की यात्रा एक क्रांन्ति की यात्रा की तरह है, जिसमें समाज को न केवल बाहर से बदला गया। अपितु भीतर से भी बदलने का क्रम जारी है। हिन्दी पत्रकारिता ने जहां जनसंचार का संदेश दिया है वही सुधार और परिष्कार का काम किया है। समानता, भातृत्व स्वतंत्रता और उन्मुकता का नींव पर निर्मित मानव समाज का ढांचा खड़ा करने और उसे मजबूत बनाने में हिन्दी पत्रकारिता ने विशेष योगदान दिया है -डॉ0 रमेश चन्द्र शुक्ल।

बीसवीं सदी के अन्त तक आते-जाते भूमण्डलीकरण के कारण पत्रकारिता में व्यावसायिकता का प्रवेश हुआ। अनुशासन और मूल्य बोध का ह्यस हुआ। मूल्य विहीन राजनीति के कारण पत्रकारिता विघटनकारी और सतही विषयों पर अधिक केन्द्रित हो गयी। आज की पत्रकारिता नकारात्मक प्रचार पर अधिक जोर देती देखी जा रही है तथा वह सकारात्मक पहलुओं को बिकाऊ न समझते हुए इन्हें लगातार तिरस्कृत और बहिष्कृत करती आ रही है। किन्तु पत्रकार समाज का सजग प्रहरी है और पत्रकारिता प्रजातन्त्र का महत्वपूर्ण स्तम्भ 'पत्रकारिता खबरो की सौदागिरी नहीं है, न उसका काम सत्ता के साथ शयन है।' उसका काम जीवन की सच्चाईयो को सामने लाना है जनता समाज राष्ट्र और विश्व को गरीबी का भूगोल पूंजीपतियों को अर्थशास्त्र और नेताओ को समाजशास्त्र पढ़ाने में पत्रकारिता ही सक्षम है।' डॉ. सुषमा शर्मा प्रख्यात पत्रकार प्रभाष जोशी लिखते है- 'न्यायापलिका कार्यपालिका, विधायिका और प्रेस में यदि मैं चौथा खम्भा हूँ तो पत्रकार होने के नाते मेरा अधिकार और कर्तव्य है, कि इन तीन खम्भो को मै जज करूँ। पत्रकार वेद प्रकाश वैदिक का भी मत है 'विधायिका कार्यपालिका तथा न्यायपालिका भी लोकतंत्र का महत्वपूर्ण स्तंभ है। पत्रकार को किसी विशेषाधिकार की आकांक्षा न रखते हुये न्यायाधीश की निष्पक्षता और योद्धा की सी निर्भीकता के साथ सच्चाई उजागर करनी चाहिए। वे अपनी स्वंय की आचार संहिता के साथ पत्रकारिता में प्रवेश करे।'

भारतीय संविधान ने सब नागरिकों को वाक स्वतंत्रय एवं अभिव्यक्ति स्वातत्रंय का अधिकार दिया है किन्तु साथ ही इन पर विवेक संगत प्रतिबंध भी प्रतिस्थापित किये है- 'वाक स्वातत्रंय एवं अभिव्यक्ति स्वातंत्रय के अधिकार की कोई बात अपमानजनक लेख, अपमान वचन, मान-हानि न्यायालय अवमानना से अथवा शिष्टाचार या सदाचार पर आघात करने वाले अथवा राज्य की सुरक्षा को दुर्बल करने अथवा राज्य के उलटने की प्रकृति वाले किसी विषय से जहां तक कोई वर्तमान विधि संबंध रखती हो वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव अथवा संबंध रखने वाली किसी विधि को बनाने में राज्य के लिये कोई रूकावट नहीं डालेगी।' संविधान का अनुच्छेद 10 खण्ड-2

इससे स्पष्ट है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्राप्त पत्रकारो को आमजन से अधिक अपने देश के इस अभिव्यक्ति के कानूनी स्वरूपों से भी परिचित होना आवश्यक है। क्योंकि इससे अनभिज्ञता के कारण उन्हे कई बार कानूनी पेचिदगियों का सामना करना पड़ सकता है। मोटे तौर पर उन्हे मुख्य सिद्धांतो से अवगत होना आवश्यक है जिनमें कुछ विशेष ये है-

मान-हानि पत्रकार को धारा 499 के तहत दोषी करार दे सकती है- यदि उसके अपमान जनक व्यक्तव्यों लेखों से किसी व्यक्ति, व्यक्ति समूह कंपनी की छवि को दूसरो की दृष्टि में या समाज में ठेस पहुंचती हो तो यदि यह कार्य सामाजिक हित के उद्देश्य से न हो तो अपकीर्ति प्रसारण के दोषी को धारा 500 के तहत दो वर्ष का साधारण कैद जुर्माना (जुर्माने की राशि का उल्लेख नहीं है) या दोनों ही हो सकते है। स्पष्ट यह कि इस धारा से मुक्ति के पीछे मानहानि के आरोपी की नेकनीयती सत्यनिष्ठा, सार्वजनिक हित और सद्भावना का मूल आधार होना आवश्यक है।

अपमानजनक लेख पत्रकारिता के लिये मुख्य चुनौती है। पत्रकार को झूठे दोषारोपण से बचना चाहिए। जब तक वह पूरी जानकारी न प्राप्त कर ले किसी पर लांछन न लगाए।

न्यायिक कार्यवाहियों, विचाराधीन मामलों को आकर्षक शीर्षक देकर

* विभागाध्यक्ष(हिंदी) शासकीय गृ. वि. महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

छापना या टिप्पणी करना न्यायायल की अवमानना को केस धारित करने को न्यौता देता है। इसके लिये ब्रिटिश शासन द्वारा 1926 में ही 'कन्टेप्ट ऑफ कोर्ट एक्ट' बनाया गया, जिसे 1971 में संशोधित कर लागू किया गया। इसके दोषी को भारतीय दण्ड संहिता में छः महीने के साधारण कारावास या दो हजार जुर्माने या दोनों का प्रावधान है। इसमें न्यायाधीश द्वारा सन्तुष्ट हो जाने पर क्षमा याचना भी दी जा सकती है।

संसद और विधानसभा सदस्यों को अपने कार्यो के संचालन हेतु संविधान के अनुच्छेद 105 (1) एवं 194 (2) के तहत कुछ विशेषाधिकार दिये गये है, जिनकी जानकारी पत्रकारो को होनी चाहिये। इसमें कुल मिलाकर संसद या विधानसभा की कार्यवाहियों का झूठा विवरण देना, गोपनीयता भंग करना संसद या उसकी किसी समिति की गरिमा को ठेस पहुंचना, उनके विरूद्ध अपमाजनक पत्र लिखना, बदनाम करने वाली रिपोर्ट लिखना, झूठा आरोप लगाना, सदन की कार्यवाही में बाधा डालना, साक्ष्य को प्रभावित करना आदि ऐसे दोष है जिसके तहत संवाददाता या समाचार पत्रो को दोषी ठहराया जा सकता है।

परमाणु शक्ति अधिनियम 1962 के तहत प्रतिबंधित ऐसी शक्ति के प्लान्ट की जानकारी देना या उनका समाचार छापने पर एक वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों ही हो सकते है।

समाचार पत्रो को प्राप्त विशेषाधिकार हालांकि पत्रकार को समाज हित में व्यक्ति एकांत के अधिकार के उल्लंघन का अधिकार है फिर भी पत्रकार को व्यक्ति के निजी जीवन में झांकने से बचना चाहिए। प्रेस संबंधी कानून से पत्रकार को परिचित होना चाहिये। आपात स्थिति के अतिरिक्त प्रेस पर पूर्ण सेंसर व्यवस्था संविधान के प्रतिकूल है। गोपनीयता अधिनियम के तहत देश या राज्य के हितों व सुरक्षा के विरूद्ध निषिद्धि स्थानों का विवरण प्रकाशित न करे और न सूचना दे।

कापीराइट मौलिक रचना के नकल के प्रकाशन से संबंधित कानून है जो दूसरे के परिश्रम बुद्धि कुशलता के प्रतिफल को हड़पने पर लागू होता है। किन्तु कोई भी रचनात्मक कार्य 60 साल बाद सार्वजनिक संपत्ति बन जाता है, यहां तक की कोई मौलिक लेखन भी लेखक की मृत्यु के 60 साल तक ही कापीराइट का अधिकार देती है।

आज के व्यवसायिक वैश्वीकृत दौर में पत्रकारों का समाज के प्रति भारी उत्तरदायित्व है। चाहे कितनी विपरीत परिस्थिति हो (स्वतंत्रता आन्दोलन के समय के पत्रकारों भांति महान उद्देश्य लेकर) वे सच्चाई ईमानदारी लोक कल्याण की मशाल प्रज्जवलित करे। आज के दिग्भ्रंमित मानव मूल्यों की भूलभुलैया में पत्रकार समाज का सही मार्गदर्शन करे। वे अपनी आचार संहिता का आधार सत्य, शिव, कल्याण की नींव पर रखे। अपनी गलितयों या असत्य समाचार के खंडन व संशोधन का साहस भी रखे। पीत पत्रकारिता समाज के लिये घातक है। पत्रकार का उद्देश्य केवल और केवल स्वार्थ सिद्धि से परे रहकर जनहित में तथ्यात्मक जानकारी देना अपराध भ्रष्टाचार कुत्सितता को बढ़ावा न देना, ज्ञान वृद्धि करना, जन कल्याण और मानवीय नैतिक मूल्यों आदि शिव शक्ति की रक्षा करना होना चाहिये। 'पत्रकार जब जब सत्ता से सुविधायें दर्ज करेगा, उसके शब्द मुर्च्छित होगें, पाठको की भागीदारी ही उसके शब्दो की गरिमा को बचा सकती है। 'कमलेश्वर' समाज की समग्र विषमताओं पर अपनी बेबाक टिप्पणी प्रस्तुत करना ही पत्रकारिता का मूल कर्तव्य है, जिसके द्वारा समाज को उचित और सही दिशा का ज्ञान होता है। आज की परिस्थिति में देश की अखण्डता को अक्षुण्ण बनाए रखना, राष्ट्रीय भावना को मजबूत करना, सामाजिक आर्थिक बुराइयों को दूर करना, धर्म निरपेक्ष भावना को बढ़ावा देना, समाज के विभिन्न लोगों को एक दूसरे के समीप लाना ही पत्रकारिता का मूल उद्देश्य है।

खीचो न कमानों को न तलवार निकालो।
जब तोप मुक़ाबिल हो, तो अखबार निकालो।।

अकबर इलाहाबादी का यह कथन पत्रकारिता की शाक्ति और उसके द्वारा बुराईयो से, हिंसा से लोहा लेने की उसकी जिम्मेदारी को बड़े सरल शब्दों में बयां करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल ।
2. पत्रकारिता के मूल सिद्धांत – नवीन चन्द्र पन्त ।
3. आज की हिन्दी पत्रकारिता – डॉ0 सुरेश निर्मल ।
4. हिन्दी पत्रकारिता – डॉ0 कृेष्ण बिहारी मिश्र ।
5. पत्रकारिता परिवेश और प्रवृत्तियां – डॉ0 पृथ्वीनाथ राव ।

****

अपोलो का रथ - एक श्रेष्ठ यात्रा वृतान्त

डॉ. सरोज जैन *

प्रस्तावना – 'अपोलो का रथ' श्री कांत वर्मा के यात्रा-विवरण का एकमात्र संग्रह है। हिंदी के नये साहित्यकारों की एक विशेषता यह भी है कि उन्होंने न केवल पाश्चात्य साहित्य का गहन अध्ययन किया है बल्कि पश्चिम के विभिन्न देशों की यात्राएँ भी की है। अज्ञेय, धर्मवीर भारती, निर्मल वर्मा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, अशोक वाजपेयी, हरिशंकर परसाई आदि अनेक कवियों और साहित्यकारों ने संसार के विभिन्न देशों की यात्राएं कर अपनी अनुभव संपदा को प्रगाद और आधुनिक बनाया है। केवल पश्चिमी साहित्य से ही नहीं, पश्चिम के राजनीतिक आन्दोलनों, पश्चिम की सभ्यता एवं संस्कृति से उसके गहरे सरोकार हैं। श्रीकांत वर्मा जब पेरिस, एम्स्टरडम या विएना जाते थे तो वे मनोरंजन के लिए नहीं जाते थे। वे संस्कृति (पश्चिम) के घात-प्रतिघातों का एक चिंतक के रूप में आंकलन करते और उस पर अपनी राय देते थे। यात्रा की अवधि में श्रीकांत वर्मा विशिष्ट दृश्यों तक भटकते हुए नहीं पहुँचते थे, वे सुनियोजित ढंग से यात्रा का अपना कार्यक्रम निश्चित करने और कलाकृतियों, नर्तकियों, संग्रहालयों के माध्यम से जीवन, राजनीति और कला के मूलभूत प्रश्नों पर विचार करते थे। अत: उनके यात्रा-विवरण वैचारिक उत्तेजना प्रदान करने वाले निबंध है और उनका पाठक वर्ग भी शिथिल चेतना का पाठक नहीं हो सकता उसे भी श्रीकांत वर्मा की तरह जागरूक और चिंतनशील होना होता है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में पं. राहुल सांस्कृत्यायन तथा अज्ञेय के यात्रा वृत्तों का महत्वपूर्ण स्थान है। इनके यात्रा वृत्त पाठकों को न केवल विश्व की यात्रा पर ले जाते है बल्कि अपने विदेशी प्रवास की भोगी हुई जीवंत अनुभूतियों से उन्हें अभिभूत भी कराते हैं। इसी श्रृंखला में श्रीकांत वर्मा का 'अपोलो का रथ' हमारे समक्ष विद्यमान है। यह रथ मुख्यत: यूरोप की धरती पर घूमा है। लौटते समय भारत का अतीत और वर्तमान उसकी परिधि में आ गया है। इस कृति में 14 निबंध संकलित है। समग्रत: 'अपोलो का रथ' पाश्चात्य लेखकों कवियों, कलाकारों आदि की विचार-सारणियों पर केन्द्रित है।

'हिटलर की वधशाला' के अन्तर्गत श्रीकांत वर्मा ने हिटलर के क्रूर, अमानवीय कार्यो तथा प्लात्जेंसी नामक स्थान, जहां लाखों लेखकों अभिनेताओं, प्रोफेसरों, बुद्धिजीवियों, फौजी अफसरों, छात्रो, राजनेताओं, मजदूरों को मौत के घाट उतार दिया था, का वर्णन हैं। हिटलर की निगाह में मनुष्य और पशु में वाकई कोई फर्क नहीं था। 1933 में हिटलर ने प्लात्जेंसी नामक कोठे को गायों, सुअरों की वधशाला के रूप में परिणत कर दिया।

इस अंधेरे सीलनदार कमरें में लाखों निरपराध स्त्री-पुरूषों बच्चों की चीखों और उनके आंसुओं को दफन किया गया। हिटलर के स्वचलित चरित्र और बर्बर, कायर तथा विक्षिप्त व्यक्तित्व के विरोध में चार्ली चैपलिन ने ' द ग्रेट डिक्टेटर' फिल्म का निर्माण किया जो निश्चय ही जर्मनी की नयी पीढ़ी को विस्मित करती है। [01]

'फेस के इधर-उधर' में बर्लिन यात्रा का वर्णन है। इसमें श्रीकांत वर्मा ने बर्लिन में हिटलर की तानाशाही, युद्ध, बर्लिन का बटवारा, पूर्व और पश्चिम बर्लिन में वैमनस्य, दोनों में अंतर, भारत व यूरोप की कलात्मक व सांस्कृतिक स्थिति का बड़ी सूक्ष्मता से वर्णन किया है। उनके अनुसार- यह कहना अनुपयुक्त है कि पूर्वी बर्लिन एक जीता-जागता कैदखाना है और पश्चिमी बर्लिन केवल विलासिता का केन्द्र है। य़द्यपि आज पूर्वी बर्लिन में वह समृद्धि नहीं जो पष्चिमी बर्लिन में है किंतु पश्चिमी बर्लिन केवल विलासिता का केन्द्र नहीं बल्कि यूरोपीय पुनर्निर्माण का महत्वपूर्ण प्रतीक है।[02]

यूरोप का संसार पार्थिव है जिसमें अमरता के लिए कोई स्थान नहीं। लेखक के मतानुसार- 'प्रस्तर, कांस्य, मिट्टी और धातु से बनी यूरोप की कला अक्षुण्णता का कोई दावा नहीं करती। वह नष्ट होने के लिए ही बनी है क्योंकि मनुष्य का जीवन भी नष्ट होने के लिए ही बना है। [03]

हिटलर, मुसोलिनी, सीजर, होमर, मेटे, शेक्सपियर, कार्ल मार्क्स, लुई-14 मार्टिन लूथर, नेपोलियन, स्तालिन, माइकेल एंजोलो, वॉन गॉग, पिकासो-यूरोप का अनोखा संग्रहालय है। यूरोप के वर्तमान में उसका अतीत इस तरह घुला हुआ है कि दोनों को अलग कर पाना कठिन है। जबकि 19 वीं शताब्दी के अंत में पश्चिमी संस्कृति, शिक्षा और राजनीति को स्वीकारने के साथ ही भारत में अतीत और वर्तमान विभाजित हो गया। 'तुलसीदास किसी समकालीन भारतीय कवि से अधिक समकालीन होते हुए साहित्य मणिकर्णिका में दफनाए जा चुके है। तुलसी के व्यापारी तुलसी की भभूत लपेट कर चंदा मांग रहे है। जबकि शेक्सपियर को अंग्रेज जाति चार सौ साल बाद भी अपना समकालीन बनाने का प्रयत्न कर रही है। उन्हें कब्र से बाहर निकाल कर उनसे संवाद कर रही है।' [04]

'विसेंट वॉन गॉग' नामक लेख में यूरोपीय चित्रकार विसेंट वॉन गॉग के जीवन, धर्म, दर्शन के साथ एम्सटरडम में स्थित वॉन गॉग संग्रहालय का वर्णन किया है। विसेंट वॉन गॉग का जीवन और कला अपने से बड़ी किसी अमूर्त सत्ता की तलाश है। उन्होंने इस सत्ता को सैकड़ों रूपों और रंगों में देखा। धर्म से करूणा, सर्वहारा से प्रेरणा मिलने के बावजूद भी उनके रचना-संसार में एक और जहाँ केवल आलू खाकर जीवन यापन करने वाले मजदूरों और स्त्रियों का अवसाद है, वहीं सूरजमुखी का फटता हुआ प्रकाश है।' थियों के बिना विसेंट की कल्पना असंभव है थियों और विसेंट के बीच दो भाइयों का नहीं बहुत हद तक पति-पत्नी का संबंध था। थियो अपनी पत्नी के बिना, अपनी नौकरी के बिना, संसार के बिना अपने जीवन की कल्पना कर सकते थे, लेकिन विसेंट के बिना नहीं। विसेंट उनके लिए महज एक भाई नहीं था बल्कि एक महान कलाकार था। [05]

श्रीकांत वर्मा के अनुसार- थियों के नाम लिखे गए विसेंट वॉन गॉग के पत्र साहित्य की महानतम उपलब्धियों में से एक है। लेखक न होने पर भी

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

विसेंट के द्वारा थियों को लिए गए पत्र तालस्ताय और दास्ताएव्स्की की रचनाओं से श्रेष्ठ है क्योंकि तालस्ताय की कृतियों में मनुष्य का स्वर्ग है और दॉस्ताएव्स्की की रचनाओं में मनुष्य का नरक। विसेंट वॉन गॉग के पत्रों में दोनों ही हैं।

15वीं 16वीं शताब्दी डच चित्र कला का स्वर्ण युग मानी जाती है। डच चित्र कला की प्रसिद्धि का द्योतक वह रिक्स संग्रहालय है जिसमें रैम्ब्रां के अतिरिक्त लुकाच वॉन लाइडन, फ्रंास हाल्स और वर्मीअर के चित्र संगृहीत हैं। 'रात का पहरा' में श्रीकांत वर्मा ने एम्सटरडम में स्थित रिक्स संग्रहालय में संगृहीत चित्रों के साथ डच चित्रकला की समृद्धता का वर्णन किया है।[06]

'पेरिस डजंट एक्जिस्ट एक- में विक्टर ह्यूगो के समय के पेरिस का और 'पेरिस डजंट एक्जिस्ट दोय में फ्रांसीसी लेखक की जिंदगी, उसका साहित्य तथा गैर फ्रांसीसी का पेरिस के प्रति दृष्टिकोण का वर्णन किया है। 'सारे संसार के पर्यटक पेरिस आकर आजिज होते है। अपनी अप्रासंगिकता को महसूस करते हैं और दोबारा पेरिस न आने का संकल्प लेते हैं। लेकिन वे दोबारा, तिबारा, हर बार पेरिस आते है।'

सेक्स प्रधान यूरोपीय जीवन का वर्णन 'सेक्स की दुकान' नामक यात्रा वृत्तांत में किया है और उसे यूरोपीय समृद्धि का प्रतीक बताकर सेक्स संबंधी भारतीय और यूरोपीय दृष्टिकोण का परिचय किया है। युद्धोपरांत यूरोप में बदलते हुए जीवन मूल्यों का वर्णन डेथ ऑफ एक सेल्समैन' में किया है। पूंजीवादी समाज में जिंदगी की कसौटी पैसा है। 'वहां आउट ऑफ डेट होने पर केवल वस्तुएं ही नहीं बल्कि मनुष्य भी मृतक तुल्य माने जाते हैं। वहां अमेरिका के समान इंसान पालने में जन्म लेते ही अंधी दौड़ में शामिल होता है दूसरों को पीछे छोड़ता, कुचलता, रौंदता और अंत में स्वयं रौंदा जाता हुआ कब्रदाह की यात्रा तय करता है।[07]

विद्रूपता आधुनिक जीवन का यथार्थ है। बीसवीं सदी का जादुई समाज में श्रीकांत वर्मा ने भारतीय कला और साहित्य संबंधी अपना मन्तव्य व्यक्त किए। उनके अनुसार मध्ययुगीन कला की थीम थी, मनुष्य की आधुनिक कला की थीम है- मनुष्य का अधूरापन। एक के जडे पाताल में है, तो दूसरे की आकाश में। 'अंधेरे का क्षेत्र' एक विचारात्मक निबंध है, जिसमें बी.एस. नईपाल द्वारा लिखित पुस्तक ' एन एरिया ऑफ डार्कनेस' की विवेचना की है, उनके अनुसार 'नईपाल ने अपनी इस पुस्तक में उन तमाम लोगों को लपेट लिया है जिनकी निगाहों में अब भी रोशनी है। डॉ. अरविंद त्रिपाठी के अनुसार- श्रीकांत वर्मा द्वारा लिखित यात्रा संस्मरण साहित्यिक दृष्टि से मूल्यवान हैं।'[08]

श्रीकांत वर्मा अपने लेखन के लिए अनेक सम्मानों से सम्मानित हुए। म.प्र. शासन द्वारा 'उत्सव 73' में विशिष्ट के लिए सम्मानित। जलसाघर के लिए तुलसी सम्मान, 1981 में म.प्र. शासन का प्रथम शिखर सम्मान। 84 में कुमार आशान यूनाइटेड नेषन्स इंडियन कौंशिल ऑफ यूथ अवार्ड और म.प्र. के नन्ददुलारे वाजपेयी पुरस्कार से सम्मानित। 86 में मरणोपरांत साहित्य अकादमी पुरस्कार और 1985 में इंदिरा प्रियदर्शनी से सम्मानित हुए।

निष्कर्षत: श्रीकांत वर्मा ने इस यात्रा वृत्त में यूरोप के स्वप्न से ही नहीं उसकी अन्तरंग वास्तविकता से साक्षात्कार करने का प्रयास किया है। यह साक्षात्कार औपचारिक नहीं वरन् ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर साहित्यिक तथा दार्शनिक गंभीरता लिए हुए है। इसमें कवि लेखक की दूसरे देशों को देखने की निजी दृष्टि भी है और वस्तुपरक साक्ष्य भी। अतीत और वर्तमान में मानवीय स्वतंत्रता की तलाश भी है तो वीसवीं सदी के पश्चिमी जादुई समाज और भारत के अंधेरे क्षेत्र में तटस्थ बने रहने का साहस भी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्रीकांत वर्मा, अपोलो का रथ पृ 19
2. वही पृ. 22
3. वही पृ. 36
4. वही पृ. 43
5. वही पृ. 43-44
6. वही पृ.
7. वही पृ. 98
8. डॉ. अरविंद त्रिपाठी श्रीकांत रचनावली भाग-1 पृ. 16
9. डॉ. अरविंद त्रिपाठी, श्रीकांत रचनावली भाग-2 आवरण पृ.

****

जयशंकर प्रसाद के कथा साहित्य एवं निबंधों की सामाजिक उपादेयता

डॉ. रेणू अग्रवाल *

प्रस्तावना – छायावादी युगीन जयशंकर प्रसाद नाटक सृष्टा, कथाकार, उपन्यास, प्रणेता, गद्य– काव्यकार के साथ–साथ निबंध लेखन में भी, उनका बड़ा योगदान रहा है। प्रसादजी के निबंध संस्कृत साहित्य के प्रगाढ़ अध्ययन के सूचक है। उन्होंने प्राचीन सांकेतिक शब्दावली का कहीं त्याग नहीं किया है। वे थोड़ा लिखकर चन्द्रधर शर्मा गुलेरी कहानीकारों की पंक्ति में आ गये, थोड़ा लिखकर पूर्ण सिंह निबन्धकारों की श्रेणी में आ गये, थोड़ा लिखकर भुवनेश्वर प्रसाद एकांकीकारों की पंक्ति में आ गये। उसी प्रकार थोड़ा लिखकर निबन्धकारों की पंक्ति में भी आने का अधिकार रखते हैं।

प्रसादजी की कहानियां सामाजिक उपादेयता रखती हैं। उनकी कहानियां व उपन्यास से समाज को एक अच्छी दिशा मिलती है व व्यक्ति उसे अपने जीवन पर उतारने की कोशिश भी करता है।

तितली उपन्यास जीवन की स्थूल समस्याओं की दृष्टि से ग्रामीण क्षेत्र को ही अपनाती है। ग्रामीण जीवन से नागरिक जीवन की तुलना कर गांवों की गिरी हुई दशा को स्पष्ट करना व नये सुधारवाद दृष्टिकोण का प्रतिनिधि बनाकर उनके द्वारा ग्राम जीवन को सुधारने के लिए निर्देश देना है। अत: प्रसाद जी का हिन्दी साहित्य में बड़ा ही योगदान रहा है। कामायनी इनका महाकाव्य है, जो कि बहुत चर्चित है। अत: समाज में प्रसाद जी द्वारा रचित व लिखित सभी रचनाओं से प्रेरणा मिलती है।

जयशंकर प्रसाद के कथा साहित्य एवं निबंधों की सामाजिक उपादेयता– हिन्दी कथा साहित्य के विकास के प्रथम चरण में ही प्रसाद जी ने कविताओं के साथ कथा साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया। प्रसादजी की सांस्कृतिक अभिरूचि और वैयक्तिक भवानुभूमि की स्पष्ट छाप के कारण उनके द्वारा चरित कथा साहित्य अपनी एक अलग पहचान बनाने में पूर्णत: सक्षम सिद्ध हुए।

कंकाल और तितली की रचना पर युगीन बोध का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। लाचार और बेबस स्त्रियों की समस्याओं के आधार पर यथार्थ को बाह्‌य रूपों का जैसा चित्रण उस समय के लेखक कर रहे थे। प्रसाद जी उन्ही लेखकों की पंक्ति में खड़े हुए और उन्होंने सच्चाईयों की आन्तरिक परतों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। प्रसाद जी व्यक्ति के अन्त: संबंधों के कथाकार है और व्यक्ति के मन की गराईयों में प्रवेश कर उसे उद्घाटित करना चाहते हैं।

कंकाल हिन्दी साहित्य का प्रथम विचार प्रधान उपन्यास है, जिसमें मध्यवर्गीय समाज के नित्य प्रति के जीवन को उसकी विकृतियों और विडम्बनाओं के मूल कारण को उसके यथार्थ रूप में देखने–परखने का प्रयास किया गया है। यह एक सामाजिक व्यंग्य है, जो समाज में व्याप्त आवृत्त विकृतियों, कमजोरियों को सबके सामने प्रस्तुत करता है। प्रसाद जी ने बड़ी ही निर्भीकता से सामाजिक मूल्यों की कृत्रिमता और धर्म की ओट पर पल रहे पाप को उजागर किया है। प्रयाग, काशी, अयोध्या, वृन्दावन, मथुरा और गंगासागर जैसे तीर्थ स्थानों में होने वाले पापों की लेखक कलई खोलकर रख देता है।

तितली के माध्यम से प्रसाद जी ने नारी समस्या के विभिन्न पक्षों को उभारा है। शैला, तितली दो नारी पात्रों के माध्यम से उन्होंने नई चिरपरिचित समस्या उपस्थित की, कि नारी जीवन की सार्थकता अपने स्वतंत्र अस्तित्व को बनाए रखकर पारिवारिक बन्धन को ठुकराते हुए समाज सेवा का व्रत धारण करने में है या गृहस्थी के भर रहकर प्रेम और श्रद्धा के केन्द्र के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को सम्यक् निर्वाह करते हुए समाज के रक्षण निर्माण और विकास में योग देने में है। तितली का कथा शिल्प और वस्तुविन्यास बाह्य यथार्थ और तत्कालीन सामाजिक संदर्भो के प्रति अधिक संवेदनशील है। यही कारण है कि तितली एक श्रेष्ठ उपान्यास बन सका। इसमें महिलाओं की जो समस्या उभारी गई है, वो आज भी प्रासांगिक है।

इरावती अधूरी रचना है। शुंगकालीन ऐतिहासिक कथावस्तु को बड़ी सहजता से उसमें चित्रित किया जा रहा था और बौद्धकालीन रूढ़ियों और विकृतियों के प्रति विद्रोह की सृष्टि की परिणति से निश्चय ही यह उपन्यास एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास बन जाता लेकिन प्रसाद जी इसे पूरा नही कर सके।

कुल मिलाकर प्रसाद जी को हिन्दी के पहले यथार्थवादी और स्च्छंदतवादी उपन्यासकार कहा जा सकता है। प्रेमचन्द ने भी अपने साहित्य में सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया है, किन्तु समग्रत: यह आदर्शवाद के ही परिपोषक ठहरते है। प्रसादजी का उपन्यास साहित्य अपनी सांस्कृतिक दृष्टि और अनुभूति परक रचनाबोध के कारण हिन्दी कथा साहित्य में चिरस्मरणीय बना रहेगा, जो आज भी प्रासंगिक है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में कहानी को आधुनिक जगत की विधा बनाने में प्रसाद का योगदान अन्यतम है। बाह्य घटना को आन्तरिक हलचल के प्रतिफल के रूप में देखने की उनकी दृष्टि,जो उनके निबंधों में शैवाद्वैत के सैद्धान्तिक आधार के रूप में है, ने कहानी में आन्तरिकता का आयाम प्रदान किया है। जैनेन्द्र और अज्ञेय की कहानियों के मूल में प्रसाद के इस आयाम को देखा जा सकता है।

छाया, आकाशदीप, आंधी और इन्द्रजाल में यह आन्तरिकता पुनर्जागरण कालीन दृष्टि से सम्पुष्ट होकर क्रमश: इतिहास और यथर्थ की और उन्मुख हई है। इन्द्रजाल तक वहअन्तर और बाह्य की द्वन्द्वात्मक अर्थ

* अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

संहति मानते से लगते हैं। प्रसादजी की ऐतिहासिक कहानियों में, दासी, देवरथ, पुरस्कार, ममताआदि में वर्तमान का संदेश है, अतीत की घटना नहीं।

प्रसादजी के निबंधों को मूलत: दो भागों में बांटा जा सकता है। एक कोटि में वे प्राथमिक निबंध है, जो सूचनात्मक है और एक कोटि में वे विचारात्मक निबंध है, जिसमें वैदृष्टा के साथ-साथ यथार्थ की पहचान भी है। प्रसादजी के निबंधों मे मनुष्य का इतिहास ही नहीं भावधारा का इतिहास मिलता है।

काव्य और कला, रहस्यवाद और यथार्थवाद, छायावाद प्रसाद जी के सबसे महत्वपूर्ण निबंध है, जिनमें विवेक और आनन्दवादी धारा के सांस्कृतिक विकास क्रम के साथ-साथ उन्होंने अपने समय के महत्वपूर्ण प्रश्नों को तर्क संगत और संतोषजनक उत्तर दिया है। संस्कृति, पुरात्व, वर्तमान, यथार्थ उनके इन निबंधों में जीवित है। अपने समय के आलोचकों की स्थापना विशेषकर रामचन्द्र शुक्ल जी की स्थापना का वे अपने निबंधों में न केवल उत्तर देते हैं बल्कि सपुष्ट प्रमाणों के साथ उत्तर देते हैं।

प्रसादजी के कथा साहित्य और निबंधों से हमें उनके कवि और नाटककार व्यक्तित्व को समझने में न केवल सहायता मिलेगी, बल्कि इसके बगैर उन्हें और इस युग को ही नहीं आज के रचरनात्मक विकास को भी समझना कठिन होगा। इन्हीं सब कारणों से प्रसाद जी आज भी प्रासांगिक हैं। प्रसाद की अपने निबंधों में यदि एक ओर सैद्धान्तिक व्याख्या करते हैं, तो दूसरी ओर कलात्मक निष्कर्ष भी देते हैं तथा कथा साहित्य को अतीत से वर्तमान तक जोड़ते हैं। भय वह सच को कलात्मक ढंग़ से व्यक्त करते हैं, जो मनुष्य को सोचने के लिए विवश करता है। यही गुण प्रसाद जी को प्रासंगिक बनाता है। यही प्रसाद जी की सामाजिक उपादेयता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य - बीसंवी शताब्दी-आचार्यनन्द दुलारे बाजपेयी, पृष्ठ 126
2. प्रसाद जी की सम्पूर्ण कहानियाँ और निबंध - सम्पादन एवं भूमिका डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र, लोक भारती प्रकाषन, 15-ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण- 2003
3. प्रसादजी का सम्पूर्ण उपन्यास - सम्पादन एवं भूमिका डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र, लोक भारती प्रकाशन, 15-ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण- 2003
4. प्रसाद जी एवं उनका साहित्य डॉ. रमेशचन्द्र शाह, साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35 फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली 110001, द्वितीय आवृत्ति 1994

****

कितनी सत्ताएं उपन्यास में वर्णित विविध सत्ताएं- एक अवलोकन

डॉ. संध्या खरे *

शोध सारांश – कितनी सत्ताएं उपन्यास का आरम्भ जे.पी. आंदोलन की पृष्ठभूमि से होता है। उपन्यास के केन्द्रीय पात्र संजय, मेहा और राजन इसी पृष्ठभूमि में सामने आते हैं। इन पात्रों के जीवन के साथ-साथ समाज में फैल रहे जातिवाद, भाई- भतीजावाद, आपराधिक संरक्षण, घूसखोरी, भ्रष्ट राजनीति, सिफारिश, दहेजप्रथा, जाति-गोत्र की संकीर्ण मानसिकता इत्यादि अनेक सत्ताओं का बखूबी चित्रण उपन्यास में है। उपन्यास का अंतिम स्वर मेहा और राजन के माध्यम से आस्थावादी है क्योंकि जिन्दगी में कितना भी कुछ छिन जाये मगर जीने के लिये कोई न कोई कारण, कोई न कोई अवलंब, यथार्थ या आभासी बचा ही रहता है।

प्रस्तावना – कितनी सत्ताएं उपन्यास का आरम्भ जे.पी. आंदोलन की पृष्ठभूमि से होता है। उपन्यास के केन्द्रीय पात्र संजय, मेहा और राजन इसी पृष्ठभूमि में सामने आते हैं। देश में जनशक्ति, युवा शक्ति,छात्र शक्ति जैसे आवाहन के मध्य कानपुर शहर में हिन्दु-मुस्लिम दंगा हो जाता है। राजन छात्र नेता है तथा मेहा और संजय विश्वविद्यालय के विद्यार्थी।

मेहा के द्वारा कर्फ्यू के दौरान संजय को शरण दी जाती है। वह भी ऐसे वातावरण में जब पूरे देश में गिरफ्तारी,लाठी चार्ज, पुलिस फायरिंग,उत्पीड़न का माहौल है और लोगों के आपसी विश्वास दरक रहे हैं। कर्फ्यू के दौरान संजय के मस्तिष्क में दंगा, परीक्षा, हॉस्टल, बहन की शादी, नौकरी, जीवन-मृत्यु, पिताजी की महत्वाकांक्षायें. मां के सपने सब लगातार घूमते हैं।

मेहा के अंकल के परिवार में कर्फ्यू के दौरान रहते हुये जनक्रांति के पश्चात के परिणामों पर विचार होता है। जे.पी. की क्रांति की बागडोर कालान्तर में भ्रष्ट नेताओं के पास जायेगी या उससे वाशिंगटन, मार्टिन लूथर किंग और लिंकन पैदा होंगे यह आज अनिश्चित है।

उपन्यास में जनक्रांति का विवरण इसी अनिश्चितता के साथ समाप्त हो जाता है और शुरू हो जाता है, उपन्यास के पात्रों का यथार्थ जीवन संघर्ष। उपन्यास में सामांतर रूप में दो पीढ़ियों की जीवन-गाथा का वर्णन प्राप्त होता है। संजय ,मेहा, राजन, सतीश, पूनम और उषा की पीढ़ी और इनके माता पिता की पीढ़ी।

पुरानी पीढ़ी अत्यन्त रूढ़िवादी, सामंतवादी क्रूर व स्वार्थी है। वह अपनी महत्वाकांक्षाओं और स्वार्थो के लिये अपने बच्चों के सुखों का ख्याल किये बिना उनके साथ शतरंज के मोहरों की तरह शह और मात का खेल खेलती है।

दूसरी ओर नयी पीढ़ी के युवा अत्यन्त कमजोर साबित होते हैं। कुछ हद तक कमजोर चरित्र भी हैं, जो क्षणिक आंनद में बहकर परस्पर भावनात्मक संबंध स्थापित करते हैं ,परंतु उस पर कायम नहीं रह पाते। वे अपने संबंध को अंतिम आदर्श परिणय तक नहीं पहुंचा पाते। इन कमजोर निर्णयों में उनकी पिछली पीढ़ी की स्वार्थपरता व रूढ़िवादिता तो कारण है ही किंतु ये पात्र स्वयं भी दृढ़चरित्र नहीं हैं।

इन पात्रों के जीवन के साथ-साथ समाज में फैल रहे जातिवाद, भाई-भतीजावाद, आपराधिक संरक्षण, घूसखोरी, भ्रष्ट राजनीति, सिफारिश, दहेजप्रथा, जाति-गोत्र की संकीर्ण मानसिकता इत्यादि अनेक सत्ताओं का बखूबी चित्रण उपन्यास में है।

संजय के विचारों के माध्यम से तत्कालीन समाज में धन, पद ,सुरा-सुंदरी, अपराध, और क्षरित जीवन मूल्यों से तैयार अजेय सत्ता का चित्र सामने आता है, जिसके क्रियाशील होने से क्षणमात्र में प्रतिभा, नैतिकता, साहस, उदात्त सामाजिक मूल्य, स्थापित परंपरायें नपुंसक और अप्रांसगिक हो जाती हैं।

नौकरी के नियुक्ति क्रम में सतीश व पूनम का परस्पर परिचय होता है, जो सतीश के ब्रह्मावर्त का कनौजिया ब्राम्हण और पूनम जिझौतिया ब्राह्माण होने के कारण सतीश के बाबा व पूनम की बुआ के द्वारा विवाह का बहिष्कार करने के जातिगत अहंकार की सत्ता के कारण परिणय तक नही पहुंचता।

कालांतर के संजय के साथ पूनम का विवाह होने पर पूनम व सतीश का प्रेम लगभग व्यभिचार की श्रेणी पर जा खड़ा होता है तथा पूनम और संजय के विवाह विच्छेद का कारण बनता है। प्रश्न खड़ा होता है कि पूनम के इस निर्णय को प्रेम की सत्ता, देह की सत्ता, नारी स्वावलंबन की सत्ता क्या माना जाये।

उपन्यास के केन्द्रीय पात्र संजय के पिता भारत छोड़ो आंदोलन के क्रांतिकारी थे, किंतु उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम सेनानी का प्रमाण पत्र या कोई सरकारी सहायता स्वीकार नहीं की क्योंकि वे देश सेवा की कीमत वसूलना नहीं चाहते।

इन्हीं के समानान्तर उषा के दादा चौधरी साहब हैं, जो डकैती के दौरान पकड़े जाने पर कोर्ट में वन्दे मातरम् का नारा लगा कर देशभक्त बन जाते हैं। देश के स्वतंत्र होने पर उन्होंने विधायकी से अकूत धन-संपदा, पांच सौ बीघा ज़मीन, कई रखैलें और कई अवैध बच्चे अर्जित किये। इस प्रकार स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन में प्रभावी स्वार्थी सत्ताओं का चित्रण भी उपन्यास में मिलता है।

बेरोजगारी के कारण द्वन्द्वग्रस्त संजय के माध्यम से लेखक ने तत्कालीन समय में शिक्षानीति पर भी विचार व्यक्त किये हैं, जिसका घर, परिवार, समाज,देश,परंपरा और जीवन मूल्यों से कोई सरोकार नहीं है, जो हर छात्र को सुपरमैन बनने का सपना दिखाती है। छात्र की सोच, उसके बैंक बेलेंस, उसकी पत्नी, उसके बच्चे, उनके नौकर, उसके ड्राइवर, तक सिमट जाती है। इन सुपरमैनों की सुख-समृद्धि के अपने-अपने अलग टापू होते है और वे होते हैं अपने-अपने टापुओं के एकछत्र शहंशाह।

संजय के पिता जी अपने हर गलत निर्णय के पक्ष में कोई ना कोई सामाजिक तर्क गढ़ लेते है। पितृ सत्ता का यह खौफनाक चेहरा संजय के लिये

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

असहनीय हो जाता है। मेहा के पिता चौधरी साहव अपनी राजनीतिक महत्वाकांक्षा पूरी करने के लिये स्वयं से भिन्न जाति के दीवान साहब के नपुंसक पुत्र रोहित के साथ अपनी इकलौती पुत्री मेहा का विवाह कर देते हैं ताकि उनका विधायकी का टिकट और भिन्न जाति का वोट बैंक पक्का हो सके।

कुछ दशक पहले तक कौन सोच सकता था कि आगे चलकर मां-बाप, भाई-बहन, पति-पत्नी तक के रिश्तों में व्यवसायिकता प्रवेश कर जायेगी। निराशा के इसी वातावरण में मेहा के सामने जे.पी. आंदोलन का छात्र नेता राजन प्रकाश बनकर आता है। आपातकाल का संर्घष, कारावास की यातना, कैरियर का बिखराव, प्रेम की विफलता, परिवार का टकराव भी राजन के आत्मविश्वास और जीवन मूल्यों को डिगा नहीं पाये हैं।

मेहा के पति रोहित के आत्मघात करने के पश्चात मेहा कलेक्टर बनने के स्थान पर राजन के साथ उसके स्वयंसेवी संस्थान के निराश्रित वृद्धो, महिलाओं, अनाथ बच्चों के मन के बियाबान के साथ अपने मन का बियाबान बांटती है।

उपन्यास में समय का मदारी अपना डमरू बार-बार बजाता है:.....भाईजान......मेहरबान......कदरदान..। दुनिया तमाशा देख रही थी। जमूरे उसके इशारे पर नाच रहे थे,हंस रहे थे, रो रहे थे। समय की सत्ता अलग-अलग जमूरों के साथ अलग-अलग खेल खेल रही थी।

किंतु उपन्यास का अंतिम स्वर मेहा और राजन के माध्यम से आस्थावादी है क्योंकि जिन्दगी में कितना भी कुछ छिन जाये मगर जीने के लिये कोई न कोई कारण, कोई न कोई अवलंब, यथार्थ या आभासी बचा ही रहता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

सामाजिक परिदृश्य में 'विष्णु प्रभाकर'

डॉ. अनीता चौबे *

प्रस्तावना - प्रभाकर जी अनुसार 'मैं इतना प्रतिभाशाली नहीं हूँ कि अपने उस 'मैं' को पकड़ सकूँ और अगर 'मैं' को पकड़ने की चेष्टा करनी ही है तो वह दूसरे से जुड़कर ही की जा सकती है यही जुड़ना समाज तक पहुँचने की प्रक्रिया। 'मैं' से अलग अन्य का अर्थ ही है समाज का जन्म। दूसरे की देह से तादात्मय करना ही तो समाज में बैठकर अपने को जानने की चेष्टा है। मनुष्य से घर से समाज बनता है, रहता वही मनुष्य ही है लेकिन इन्हें नये-2 नामों से अलंकृत कर दिया जाता है पर पहले परिवार का, फिर समाज के कर्मो का प्रभाव देख जा सकता है। किसी के लिए समाज अच्छा है, तो किसी के लिए बुरा, समाज से ही व्यक्ति का अस्तित्व है और यही समाज जन्म देता है अच्छी, बुरी मान्यताओं को जिसे व्यक्ति मानने के लिए विवश हो जाता है न चाहते हुए भी उनसे विमुख नहीं होता ऊँच-नीच, जाँत-पाँत, छोटा-बड़ा सभी तो समाज के दिये हुए उपालंभ है।

व्यक्ति चाहे तो अपने मनानुसार कुछ भी करे यह तो मानव शरीर है, कभी भी किसी को भी अपना सकता है, कुछ भी कर सकता है, पर व्यक्ति स्वयं की अपना दुश्मन है, समाज में भी अपना सीमित दायरा बना लिया कि हम हिन्दु है, तो बस मर्दिर जायेंगे, मस्जिद में चले गये तो जिन्न आ जायेगा या हम मुसलमान हैं तो मस्जिद ही जायेंगे मंदिर गये तो भस्म हो जायेंगे ये सब कुरीतियाँ जो व्यक्ति को व्यक्ति से अलग करती है। सभी समाज की देन हैं। इन्हीं सामाजिक मर्यादाओं के बीच बंधा व्यक्ति उम्र भर छटपटाता रहता है, लेकिन उनसे बाहर निकलने की चेष्टा नहीं करता।

इन सभी का प्रभाव यदि बचपन से ही मन पर आ पड़ा तो कभी-कभी इन्हें स्वीकार भी कर लिया जाता है, लेकिन कभी-2 विद्रोही भी बना दी जाती है, जो इन सभी सामाजिक मान्यताओं पर प्रश्न चिन्ह बन कर खड़ी हो जाती है। इन्हें तोड़ने के लिए अन्तर में तीव्र विपरीत परिस्थितियाँ जन्म लेने लगती है और व्यक्ति विद्रोही बन जाता है। यही सब उन्होंने भी सहा देख और जिया भी इसीलिए उनके साहित्य में चरित्र सदा समाज के विपरीत होता है, जो सामाजिक मान्यताओं को सदा मानने से इंकार करता है, हर व्यक्ति सर्जक नहीं होता, न ही हो सकता है। उस समय अवश्य कोई ऐसी घटना होती है, जो उसे सर्जक बनने के लिए प्रेरित करती है।

आपका गाँव सैयद बन्धुओं का इलाका था। अन्तिम मुगलों के समय उनका बड़ा दबदबा था। जिसे चाहे गद्दी पर बिठा दें और जिसे चाहे उतार दें। उन्हीं का खंजाची प्रभाकर जी कोई पुरखा था। एक बार उसने उनके साथ बैठ कर खाना लिया था। उसे उसी दिन से जाति बहिष्कृत कर दिया गया।

उस समय इनके साथी मुसलमान बच्चे इनके घर आते। मॉ उन्हें खाना खिलाती पर उनके जाने के बाद जूठे बर्तनों को आग में तपाया जाता जिससे वह पुन: शुद्ध हो जायें। मुसलमानों के घर जाते तो हिन्दु हलवाई मिठाई बनाते घर की महिलाएँ उसे छूती नहीं थी। इतना सब हो जाने पर भी मन वही निर्मल हो बना रहता वहीं मान्यताओं को स्वीकार कर लिया। सभी की छाया से दूर गाँव के बाहर, गन्दी बस्ती में रहते।

इन सभी को देख कर उनका मन प्रश्नों से जूझने लगता। और सोचते यदि हरिजन छू भी ले तो क्या हो जायेगा ? मुसलमान दोस्तों का छुआ खाना खा लें तो क्या होगा ? इसी समय मन में वही विपरीत विद्रोही परिस्थितियों ने जन्म लिया वही राजकुमार की विपरीत दिशा में जाने की कहानी की तरह जो सदा विपरीत दिशा में जाता था और उस समय सभी सामाजिक मर्यादाओं को तोड़कर हरिजनों को जानबूझकर छू लेते, घर की जमादारिन से चिपट जाते। उस समय मॉ डॉटती और नहलाती सोने का पानी छिड़कती। लेकिन पिता की तो मार खानी ही पड़ती और एक दिन परिक्षण भी कर डाला मस्जिद में जाकर पानी पी लिया और बार-2 अपने ही अंग को देखते कि कहीं जिन्न तो नहीं आया पर सब कुछ ज्यों का त्यों उसी समय मन चीख-2 कर कह उठता कि सब झूठ है और बार-2 मन खीज उठता इन घिसी पिटी मान्यताओं पर और उस समाज पर जिसमें रहने वाला ही व्यक्ति कितनी आसानी से इन्हें स्वीकारता चला जाता है।

इसी प्रकार की बालमन की अनेकानेक घटनाओं ने जैसे जीवन धारा ही मोड़ दी। गाँव के स्कूल में तीसरी कक्षा में प्रथम आने का पूर्ण विश्वास था, लेकिन एक सहपाठी के पिता ने बताया कि तुम इस परीक्षा में सफल नहीं हो सकते। अगर तुम देवी की प्रतिमा को जलेबी चढ़ा दो तो हो सकता है। रोज जलेबी प्रथम आने की लालसा में चढ़ा दिया करते एक दिन देख कि पुजारी का बेटा उन जलेबियों को खा जाता हैं, उसी समय मन में तीव्र भावना कौंध गयी कि ये खा सकता है, तो मैं क्यों नहीं और इसी के साथ अपने पूर्व विश्वास और परिश्रम के साथ कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया। उसी समय अनजाने जो यह प्रश्न मन के किसी कोने में पनप उठा था। वह आर्य समाज के सम्पर्क में आने पर और विराट हो उठा था। लेकिन यहाँ तक पहुँचने पर मन में बहुत सी अतृप्त आंकाक्षायें थी, जिनके बल पर आर्य समाज से परिचय हुआ। मुक्ति संग्राम के सैनिक नहीं बन सके और इन्हीं इच्छाओं ने आर्य समाज की राह सुझायी। उसी समय मन में विचार आया और शीघ्र ही उसे क्रियात्मक रूप देने की ठान ली संग्राम के सैनिक नहीं बन सकें तो आर्य समाज सुधारक के सिपाही ही सही और कूद पड़े उस समाज सुधारक आन्दोलन में किसी न किसी रूप में ही सही समाज के लिए कुछ कर सके।

आपकी प्रारम्भिक रचनाओं के विद्रोह और आर्यसमाज को अधिक बल दिया है आर्य समाज के सम्पर्क में आने के कारण बहुत कुछ सीखने को मिला। हर क्षण जैसे किसी नये घटनाक्रम की खोज रहती मन की अतृप्त आकॉक्षायें थी,उन्हें किसी न किसी रूप में निकलने का अवसर मिलता रहता।

प्रारम्भ में माँ के बक्से की पुस्तकें फाड़-फाड़ कर पढ़ी थी। पिता की दुकान के टोकरों में जहाँ बिक्री के लिए सामान भरा रहता था वहीं एक टोकरे

*अतिथि विद्वान, अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

में पुस्तकें भी भरी रहती थी। 'किस्सा छबीली भटियारिन का', 'किस्सा हातिमताई का', 'चन्द्रकांता', 'राधेश्याम की रामायण', 'सुखसागर' इन सबको यहीं बैठकर पढ़ा।

पंजाब आने पर जब आर्य समाज से सम्पर्क हुआ तो पुस्तकालय मैं हिन्दु धर्मग्रन्थों के अलावा कुरान और बाईबिल आदि को भी जानने का अवसर मिला और यहीं पर बंकिम, रविन्द्र, शरत, प्रेमचन्द्र, प्रसाद आदि को भी जानने का अवसर मिला। और यहीं पर बंकिम, रविन्द्र, शरत, प्रेमचन्द्र, प्रसाद आदि की रचनाऍं पढ़ीं। अनेक विदेशी लेखकों को भी पढ़ा प्रेमचन्द्र को आप गुरू तुल्य मानते हैं। पर मुख्य रूप से शरत को ही अपना आदर्श मानते हैं, आपके प्रारम्भिक जीवन की वेदना और उनकी वेदना से मेल खाती थी। जिस प्रकार उनका वह जीवन साहित्य सृजन का आधार बना उसी प्रकार आपका साहित्यक सर्जन आरम्भिक जीवन से प्रभावित रहा। जहाँ आर्य समाज ने प्रचलित मूल्यों पर प्रश्नचिन्ह लगाना सिखाया। गाँधीजी ने अन्याय का प्रतिकार करने की प्रेरणा दी वहीं शरत् ने कथित पतितों में देवत्त खोजने की भी शक्ति दी। आप स्वयं स्वीकार करते हैं कि जीवन पर शरत् का प्रभाव अधिक है। आपके परिवेश में वही सबसे निकट हैं। उनसे सबसे अधिक पाया है।

आपके लेखन का मूल अन्तर्व्यथा की अभिव्यक्ति रहा है और इसी अभिव्यक्ति में जा मिला हैं, इससे रही-सी आकाँक्षाओं भी जाती रहीं और आर्यसमाज ही जीवन बन गया। किशोरावस्था दफ्तर की आपाधापी में कट गयी। सभी तमन्नाएँ जाती रहीं। अब केवल जीना एक औपचारिकता बन कर रह गया था। उन दिनों नर्वस ब्रेकडाउन हो गया एक डाक्टर ने सलाह दी कि 'जीना चाहते हो तो रिलेक्स करना सीखो' और डाक्टर के कहे ये शब्द जैसे कानों में पल-2 गूंजते रहते और कुछ कर गुजरने की प्रेरणा देते रहते। फिर सोचा यदि रिलेक्स के सहारे जिया जा सकता है तो इस जीवन के कई कार्य भी संभव हो सकते है।

इसी समय पंजाब में साम्प्रदायिक समस्या चल रही थीं। हिन्दु-मुसलमान सभी एक दूसरे के खून के प्यासे हो गये। सब एक दूसरे से नफरत करते थे। दिन में सभी एक राह पर चलते आपस मे एक साथ नौकरी करते पर रात में एक दूसरे के खून के प्यास हो जाते। सहृदय विष्णु जी जो समाज को एक घर मानते थे, सभी व्यक्ति जैसे आपस में एक दूसरे के संबंधी है। यह समाज एक घर की तरह है जैसे घर मैं रहने वाला व्यक्ति एक-दूसरे से प्रेम करता है वैसे ही समाज का हर व्यक्ति करें उनकी नजर में जात-पात, ऊॅच-नीच, छोटा-बड़ा कोई न था। सभी को समान समझते थे। फिर आपस में एक दूसरे से इतनी नफरत क्यों और यही नफरत इन्होंने आपने कई सदियों से सही। इसी भारत मॉ की पवित्र भूमि पर अलग-2 धर्मो का एक ही रंग का रक्त बहते देखा। जिसे मिला दिया जाय तो कोई नहीं कह सकता कि किस धर्म के व्यक्ति का रक्त है पर मानव में इतनी सोचने की क्षमता जैसे समाप्त ही हो गयी है। वे तो बस एक दूसरे को मारकर अपने आपको वीर की श्रेणी में रखना चाहते हैं और इसी लालसा में न जाने कितने बेगुनाह लोगों को अपनी जान देनी पड़ी।

धीरे-2 आर्य समाज का रूप समझ में आया। जो सदाचार का मूल्य सीखा था, उसी की दुर्दशा भी देखनी पड़ी। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में एक महती शक्ति विपरीत संस्कारों की और चल पड़ी लेकिन इस समय तक, आर्य समाज की मान्यताओं ने कस कर जकड़ लिया था और उसे बहुत कुछ मुक्त कराने का श्रेय गाँधी जी के आदर्शो को दिया जाता है। समाज में हो रहे अत्याचारों ने जो मन पर एक अवसाद सा ला दिया था। यूँ भी कहा जा सकता है कि मानवता से जो विश्वास उठने लगा था जो उस विश्वास को बनाये रखने के लिए गाँधी जी के प्रभाव का महत्वपूर्ण योगदान है। फिर उसका प्रभाव उनके साहित्य पर मिलता है आगे चल कर इसका प्रभाव को भी खत्म कर दिया, फिर भी यदा-कदा इसकी झलक कौंध जाती है। आर्य समाज कला को अच्छी दृष्टि से नहीं देखता था, पर विष्णु जी की प्रकृति सदा विपरीत जाने की रही सो उन्होंने नाटक लिखना, उन्हें अभिमंचित करना उनमें अभिनय करना, भाषण देना आदि को अपना लिया जिससे आर्यसमाज के विरूद्ध चलते चले गये और अपने साहित्य की नयी विधा नाटक को भी सीढ़ी चढ़ाते चले गये।

कहते हैं कि स्वामी दयानन्द जी ने उन्हें अधांविश्वास से जूझने, मानव मात्र की समानता का पक्षधर बनने, अपने देश, अपनी भाषा और अपनी संस्कृति पर गर्व करने और देश के मुक्ति युद्ध से जुड़ने की प्रेरणा दी थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विश्वनाथ मिश्र - डॉ.कृष्णचंद्र गुप्त।
2. संचेतना - महीप सिंह।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

समाज, सम्वेदना और स्वंय - विष्णु प्रभाकर

डॉ. अनीता चौबे *

प्रस्तावना - बचपन से लेकर बीते हुये या भोगे हुये क्षणों को साथ लेकर चलता जीवन समाज की विसंगतियों से जूझता मन, परिस्थितियाँ के थपेड़ों से झुलसा तन लेकर उपजी भावनाएँ ही व्यक्ति को रचनाकार बना देती है। अभावों की जिन्दगी में भावनाओं को कुचलकर जीना या लेखनी के जरिए उन्हें उकेरना ये काम प्रभाकर जी ने खूब किया ऐसे विरले व्यक्तित्व ही होते हैं, जो अपने अदंर दर्द समेटे मुस्कराते रहते हैं। वे जब अपने अतीत में झांकते हैं, तो अपने को जिज्ञासु बालक के रूप में देखते हैं, उसमें अतीत के झरोखे में चलचित्र की भाँति चलती जाती हैं और मानसपटल पर अपनी छवि बनाता चला जाता है। तभी उन्होंने अपने समय के ग्रामीण जीवन के सभी पक्षों, सांस्कृतिक आयोजनों, मनोरंजन की क्रीड़ाओं सामाजिक संस्कारों जादू-टोना, अंधविश्वास आदि के मनोरम विवरण प्रस्तुत किये हैं। उसे युग का वर्ण, सम्प्रदाय जाति आदि के बंधनों से मुक्त सामाजिक जीवन दृष्टि को भी निर्धारित करती है।

अपने पिता के व्यक्तित्व का शब्द चित्र भी प्रभाकर जी ने दिया है 'वे करते तो तंबाकू की दुकान, लेकिन स्वभाव सबसे अलग था। उन्हें सभी भगत जी कह कर बुलाते थे वे पढ़ने के बहुत शौकीन थे। प्रभाकर जी ने प्रारम्भ यहीं से किया और वही इनका प्रथम पुस्तकालय था, जहाँ महत्वपूर्ण पुस्तकों को पढ़ने का अवसर मिला इन्हीं को पढ़ कर कल्पनाओं के घोड़े दौड़ाने लगे।

कहा जाता है कि माँ बच्चे की प्रथम गुरू होती है इस तथ्य को प्रभाकर जी ने चरितार्थ कर दिखाया वे अपने व्यक्तित्व विकास से सबसे महत्वपूर्ण योगदान अपनी माँ का ही मानते हैं, वे अपनी माँ की प्रशंसा के शब्द नहीं ढूँढ पाते है, हर छवि में उन्हें माँ ही दिखती है और जैसा स्वरूप उनकी माँ का था वैसा ही वे सभी में उसी स्वरूप को देखना चाहते थे। आपकी माँ का सबसे सहज स्वरूप उनकी मानवीयता और मातृत्व भावना अपने माँ के व्यक्तित्व की महानता का वर्णन करते हुये प्रभाकर जी ने लिखा है 'माँ वही होती है जो दूसरे के जाये को भी प्यार करती है, शेष तो अपने जाये को प्यार करने वाली जननियाँ होती हैं। माँ होना दुर्लभ है जननी होना नहीं, माँ तो प्रभुतुल्य है।'

प्रभाकरजी ने अपने परिवार के उन्हीं व्यक्तियों पर विशेष रूप से लिखा है जिन्होंने उन्हें प्रभावित किया है। व्यक्तित्व की गरिमा के प्रति नमन् अधिक से अधिक लोगों के साथ जुड़ना बाबा से सीखा, उनकी साधु प्रकृति का स्वरूप उनके पिता की देन है, और मन, वचन, कर्म की एकता, कथनी, करनी में सामन्जस्य की भावना और व्यापक मानवीय चेतना उन्होंने अपनी माँ से सीखी। वे ऐसे समाज में पले-पढ़े जहाँ नित्यप्रति घटनाक्रम का स्वरूप बदलता रहता। एक दूसरे को छोड़ कर आगे निकलने की आपाधापी मची रहती, वह समाज जहाँ नैतिक मूल्यों का कोई मोल नहीं व्यक्ति किसी भावना से जी रहा है स्वयं ही उससे अनभिज्ञ था। किसी को भी किसी की भावना कुचलने का कोई रंज न होती सब अपने आप में डूबे अपनी दुनिया में निमग्न। उस परं कुछ ऐसे व्यक्ति जो बीते हुये या बीत रहे वातावरण को कैसे कहें की कल्पना में विचरते रहते। प्रभाकर जी का व्यक्तित्व जो अवर्णनीय है ज्यों अग्नि परिक्षणों के पश्चात और निखर कर उभरे है। एक नहीं कितनी ही अग्नि परीक्षाओं से निकलते चले गये फिर भी जीवन प्रश्न चिन्ह बन कर खड़ा रहा और जीते गये ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते प्रश्नों का उत्तर स्वमेय देते जाते और आज उन्हीं प्रश्नों का नि:सन्देह खरा उत्तर है, हमारे सामने विष्णु प्रभाकर के रूप में बचपन से लेकर आज इस अवस्था तक या यूँ कहें प्रात: से लेकर साँझतक ही शांत स्वरूप लिए अपने आपको बचाते चलते जाते। न जोन कितने कष्ट उठायें जो शायद किसी को भी आत्महत्या के लिए प्रेरित करने में कोई कसर न छोड़ते उन कष्टों को झेलते, अपमानित, आत्महीनता, सहते रहे लेकिन उनको भी समेटते न जाने कितने ही अच्छे-बुरे व्यक्तियों के दर्शन करते रहे फिर भी स्वयं वहीं रहे, वही लेखनी, वही भावना, वह माँ-बाप, पूरा परिवार, गाँव, समाज, पाठशाला से लेकर शहर, आर्यसमाज एक-एक व्यक्ति का कहीं न कहीं अंश दिखाई देता है, भले ही वह विपरीत शब्दावली के कारण अच्छा कर दिखाया हो पर उन बुरे अनुभवों को वे बताना भी नहीं चाहते हैं और छुपाना भी। यही उनके अतीत की धरोहर है, जिसे अपने आप में समेटे फिरते है। कभी किसी कहानी में तो कभी किसी उपन्यास में किसी न किसी सम्बन्धित घटना की झलक झिलमिलाती दिख पड़ती है जैसे भी है, आज भी वही सादगी वही सयंम लिए बैठे इस महान व्यक्ति को देखकर कोई नहीं कह सकता कि यह वही व्यक्ति है जो न जाने कितनी आपदाओं से गुजरते हुये भी मुख-मण्डल पर शांति का भण्डार लिए है।

प्रभाकर जी के सपने टूटते गये और स्वयं परिस्थितियों के साथ चलते गये पर जिन्दगी के इस उतार-चढाव ने उन्हें कितने कष्ट दिये जिसका अनुभव स्वंय वे ही कर सकते हैं, इन्हीं दुखों ने उन्हें लेखक बना दिया। आपके सधे व्यक्तित्व इन सतुंलित विचारों और आज के कुंठा, संत्रास, हताशा वाले माहौल में भी मानवीय मूल्यों से जुड़े उनके आस्थामय लेखक के पीछे एक मानवोचित सामाजिक तथ्य यह भी है कि उनके घर में संयुक्त परिवार अपने बड़े भाई की छत्र छाया, पति के ध्येय को समर्पित एवं हर सुख-दुख की सहभागिनी पत्नि की प्रेमिल देखभाल और बच्चों की किलकारियों से भरेपूरे परिवार के बीच रह कर ही ऐसे महान व्यक्तित्व बनते हैं।

वे अपनी कर्मठता और परिवार में निभाव की प्रेरणा अपनी माँ को मानते हैं और पत्नी की प्रेरणा, सहयोग भी कम नहीं रहा इन सभी के कारण वे आज इतना कुछ लिख सके। इतनी परेशानियों और दायित्वों को जिन्होंने झेला और आगे बढ़ते गये। उन्हीं विष्णु प्रभाकर को उनकी पत्नी की मृत्यु ने अदंर तक कमजोर कर दिया। वही उनकी प्रेरणा शक्ति थी, जो उन्हें अकेला छोड़ कर चली गयी। वे अपने भीतर रिक्तता महसूस करने लगे। अपनी पत्नी को अत्यधिक प्रेम करने वाले प्रभाकर जी को आज ऐसा अनुभव शायद

*अतिथि विद्वान, अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

इसलिए होता है कि व्यक्ति जिस किसी को और उस माध्यम के बिना जीवन दूभर होने लगता है। मनुष्य के संस्कारों में घर–परिवार, परिवेश, अध्ययन संघर्ष सभी का हाथ होता है उन संस्कारों का लेखकीय संस्कारों में बड़ा योगदान होता है।

उनके बाबा सनातनधर्मी थे। इसलिए कभी–2 उनसे दयानन्दजी पर व्यंग्य भी सुनने को मिलते। परिवार में उन्होंने सुना था। कि उनके बाबा को देवी का इष्ट था। वे मूठ फेंक सकते थे। वे गालियाँ देते थे लेकिन वे मूल्यों से जुड़ी होती थी। बाबा की दुकान थी, वे बडे खुद्दार भी थे लेकिन कभी भी जरूरतमन्दों की सहायता करने से पीछें नहीं हटते वे हर सम्भव मदद करते। केवल चावलों की दुकान होते हुये भी वे जरूरतमंदों को उनकी आवश्यकतानुसार हर चीज का प्रंबध कर देते। उनके दादा उन्हें कहानियाँ सुनाया करते थे। उनमें एक था डाकु चेतसिंह जो उसकी साहसिकता के साथ–साथ उसके चरित्रवान होने का भी प्रमाण देती थी। उन्हीं कहानियों को सुन–सुन कर उनके जीवन के प्रसंग विशेष, व्यक्तित्व विशेष का आकर्षण को अपनी कहानी में कहीं न कहीं रूपान्तरित किया है और इसकी प्रेरणा उन्हें अपने बाबा से मिली जो इन सचरित्रों को उत्साहवर्धक तरीके से वर्णित करते हैं।

अपने परिवार अपने सम्पर्क में आये अनेक जन वे परिस्थितियाँ जिनमें से निकले जहाँ पल–पल मौत को पीछे छोड़ते चले गये और सामाजिक विसंगतियाँ जिनको माना भी, जिनको छोड़ा भी, और अपनाया भी सभी कुछ अच्छा–बुरा पल पल सहते रहें और जीत रहे और उन सभी के अनुभवों को समेटकर उनको निचोड़कर साहित्यक रूप दे दिया उसी से निखरा साहित्य नें नया प्रभाकर।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. विश्वनाथ मिश्र – डॉ.कृष्णचंद्र गुप्त।
2. संचेतना – महीप सिंह।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed Research Journal) April to June 2016, Vol. I
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 1.9411 (2015)

मालवी लोक गीत और लोकोक्तियां - एक अध्ययन

डॉ. बिट्टो जोशी *

प्रस्तावना - मानव स्वभावत: राग प्रिय है। उसकी इसी स्वाभाविकता ने इसकी गद्यमयी भाषा को गीतों का स्वरूप दिया। चूँकि आरम्भ में गीतों में अर्थ का कोई स्थान न था , जो कुछ लय के साथ गाया जाता, वही गायक का गीत हो जाता था। लोकगीतों का निर्माण काव्य की तरह कवि कल्पना पर आधारित नहीं होता, पर उस सामग्री पर आधारित होता है, जिसे गीतकार प्रत्यक्ष देखता है। इसीलिए लोकगीतों में स्वाभाविकता होती है। यही कारण है कि लोकगीतों में स्थान स्थान पर लोकोक्तियों का समावेश रहता है।

मालवी लोकगीतों में भी लोकोक्तियां देखने को मिल जाती है। देखेगें-

'हरसा बीर मरा हूँ
सेलां रा भर ज्यां गैरा घाव
जामण का रै जाया
बोलां रा धाव जुग में ना भरे '
अर्थात् भालों के घाव भर जाते है, बोली के नही।
'पाप्या रो रै जुग में सारी को नही'

अर्थात् - संसार में पापियों का पाप बांटने वाला कोई नहीं है।

प्रत्येक गीत अपने लोक को कोई न कोई शिक्षा अवश्य देता है। यह शिक्षा लोकोक्ति के रूप में स्वीकार कर ली जाती है अथवा किसी लोकोक्ति को गीत मे स्थान मिल जाता है।

'सुण्योडी हो ज्या झूठ तुम्हारी नणदूली में।
कांन सुण्योडी होज्या बा झूठ ये।।
काई आख्या तो देख्योडी ये नणदल झूठी ना हुबै जी'

अर्थात - कानों से सुनी हुई बात झूठी हो सकती है किन्तु आँखों देखी बात झूठी नही होती है।

मालवा में गणगौर का त्यौहार चैत्र कृष्ण दशमी से चैत्र शुक्ल तृतीया तक मनाया जाता है। घरों में गौर- ईसर की स्थापना के साथ ही यह गीत गया जाता है।

'अरे सायबा पडी गयी रेशम गॉठ,
टूटे पण ना छूटे जी म्हारा राज,
अरे सायबो खाटो दूध अरू दही ,
फाट्यो रे मन ना जुडे जी म्हारा राज।'

अर्थात - हे प्रिय हमारा मन रेशम की गॉठ की तरह बंध चुका है, जो टूट भी जाएं पर छूट नहीं सकता।

बारहमासा के गीतों में भी लोकोक्तियां देखने को मिल जाता है-

'काच्ची आमली गुदराई रे फागन में
रॉड लुगाई मस्ताई रे फागुन में '

अर्थात- फागुन में इमली के आते ही सभी जन पर मस्ती छा जाती है।

नीति संबंधी अनेक लोकोक्तियां लोक-गीतों में देखी जा सकती है-

'ऊजड खेडा भंवर जी, फेर बसै जी
हांजी ढोला, निरधण रै धन होय
जोवन गया पाछो कोन्या बावडै जी
ओजी थाने लिखूँ बारम्बार
प्यारा घर आवजो कं थारी धण एकली जी '

अर्थात - यदि गॉव उजड जाए तो फिर बसाए जा सकते है, निर्धन धनी हो सकता है किन्तु यौवन चला जाए तो वापस नहीं आ सकता।

मालवी लोकमानस भाग्यवादी है। इसका प्रमाण निम्नांकित लोकोक्ति गीत है।

'कागज हो तो बांच लू,
करम न वांच्यों जाय '

कभी -कभी लोकगीतों मे ऐसी पंक्तियां भी आती है। जिन्हें लोकोक्ति मूलक कहा जा सकता है-

'तीज तिव्हार मा बावडी जै,
अर्थात् - तीज त्यौहारों का कुआं है।'

मालवी लोकोक्तियों का प्रयोग न केवल प्राचीन व मध्यकालीन लोकगीतों में हुआ है। अपितृ आधुनिक लोकगीतों में भी ये प्रयोग देखा जा सकता है। एक आशीवार्दात्मक गीत देखिये-

'गेर गुम्मेर कसी छाव हे आपणा घर की
पूजा है देवता हे या बडा मंदर की
अणमोल्या रतन झडे कसा ई दादी का
दूधो न्हावो, पूतो फलो म्हारा वाला'

मालवी गीतों का प्रयोग शिक्षा देने हेतु भी किया जाता है।

'दुनिया भर का उठ्या लोगना,
कितरा आगे जइरया,
कालो अक्खर भैस बराबर ,
इकसे तम दुख पइरया।'

मीठी वाणी की महिमा गाने वाला एक लोकोक्ति गीत देखिये -

'बोल सरीको अमृत नी है
बोल सरीको जेर
बोल बोल से प्रीत बडे है
बोल बोल से बेर'

उपरोक्त अध्ययन के पश्चात लोकोक्ति साहित्य का महत्व स्वयं सिद्ध है। यह स्वतंत्र रूप में तो सशक्त है ही किन्तु यदि लोक गीतों में मिल जाए तो और भी अधिक प्रभावी हो जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. कन्हैया लाल सहल - राजस्थानी कहावते।
2. जीण माता रो गीत।
3. तेजाजी रो गीत।
4. गणगौर रा गीत।
5. नरहरि पटेल।
6. नरेन्द्र सिंह तोमर के मालवी गीत - उठो किसान भई।
7. आनंदराव दुबे - संपादक नरहरि पटेल।

* 28, गांधी मार्ग, जावद, जिला- नीमच (म.प्र.) भारत

Sick Industries : Nationalisation Or Winding Up

Aprajita Bhargava *

Abstract - Industrial sickness is a problem all economies big and small have to face. What is important is to evolve a proper regulatory and institutional mechanism to deal with the situation. While there should be a mechanism to safeguard the interests of workers, a suitable exit policy for the non-viable units should form an integral part of the new approach. A stringent mechanism should also be devised so that the directors of the company should not play fraud on the unit to bring it within the purview of sickness. The approach of the government towards rehabilitation of a sick unit being very selective, the government is now convinced that there is no point in throwing away further resources in support of the units which are irretrievably sick. Only such units which are found to be potentially viable need to be taken up for formulation of rehabilitation packages to restore them to health. Package consisting of concessions from banks, financial institutions, government (Central/State), government agencies, shareholders, labour, and suppliers of goods should be provided to those units where chances are subsisting for the revival of the sick unit.

Sick industrial company should be left on their own condition and let the market forces to decide the fate of the company. Government should refrain itself from intervention. If at all government wants to do fruitful help for the industrial company, it should help taking the affairs of the industrial company in its own hand for a particular period of time.

Introduction - Industrial sickness is a phenomenon characterised by loss of production and employment of the industries. The industrial sickness basically occurred in the traditional industries which were developed long ago. The term sickness is used to describe the phenomenon of the closure of industries & loss of production with the assumption that, if a nursing programme is taken then the industrial unit may be nursed back to heal the industrial sickness took place in all industrial groups such as cotton, jute, engineering, chemical, rubber, paper electrical equipments & sugar. The industrial sickness syndrome is suffered mostly in West Bengal, T.N. U.P. & Maharashtra.

Meaning - Sickness in simple terms means that a firm or an industry is systematically making losses & the accumulated losses outweigh its assets. A sick unit may be defined as one which does not fulfill the minimum standards of productivity & profitability due to internal shortcomings while other units in the industry are flourshing. It fails to generate internal surplus on a continuing basis and depends for its survival on frequent infuse external funds. A sick unit is one in which the capacity utilisation is 20% or less.

Definition - According to the **Sick Industrial Companies (Special Provisions) Act, 1985**, "An industrial company was defined as sick if :

1. It was registered for atleast 7 years.
2. It incurred cash losses fo the current year & the preceding year
3. Its net worth was eroded.

The 1992 amendment (passed in Dec. 1993) has altered the criterion some what : Firms only need to be registered for five years & the criterion of cash losses for two successive years has been eliminated.

Causes Of Industrial Sickness

(a) External Causes - The following are the external causes of industrial sickness-

1. Power cuts from time to time.
2. Scarce raw materials.
3. Recession in the market.
4. Change in Government policy

(b) Internal Causes - The internal causes may be summarized as following-

1. Fault at the planning & construction stage.
2. Defective plant & machinery.
3. Financial problems.
4. Units by incompetent entrepreneurs
5. Faulty managerial decisions.
6. Labour problems.
7. Administrative difficulties.
8. Lack of working capital.
9. Short supply of imported raw material
10. Lack of demand.

Consequences Of Industrial Sickness - The consequences Industrial sickness are:-

1. Set back to employment prospects.
2. Fear of industrial unrest.
3. Wastage of resources.
4. Adverse impact on related units.
5. Adverse effect on investors & entrepreneurs.
6. Losses to banks & financial institutions.

* **Guest Faculty (Mercantile Law) R.D. Public School, Betul (M.P.) INDIA**

7. Inflationary price rise.
8. Loss of revenue to Government

Government Policy On Industrial Sickness - Mr. George Fernandes, former Union Minister for Industry, made a policy statement on industrial sickness on 15th May, 1978 in the Parliament. The Government announced its policy on industrial sickness on May 15, 1978. The salient features of the policy are as follows :

1. **Special cell on sick units -** Special cell on sick units in the RBI should be formed to monitor the performance of sick units & to suggest corrective measures in regard to the rehabilitation of sick units. Similarly regional monitoring cells have to be formed with experienced & qualified sta to give counselling assistance to agencies financing small scale units
2. **Professional directors -** The financial institutions should jointly set up a group of professional directors to become fulltime employees o the institutions & who could be nominated on the board of directors the companies with doubtful management competence or integrity. In case the mgmt. is incompetent or it has indulged in malpractices, the financial assistance will not be provided to it unitl the mgmt. is changed.
3. **Screening Committee -** The Government should set up a screening committee under the chairmanship o the secretary (Industrial Development) make recommendations relating to the take over o the mgmt. of a sick undertaking.
4. **Reconstruction of sick undertaking -** After take over of the mgmt, the unit could be sold as a running concern or alternatively, a reconstruction of the undertaking could also be done. Such reconstruction will include writing down the share values conversioin of loans to equity, acquisition of shares by the Government. constititution of a new board of directors, etc. the main thrust of the policy is to reduce the incidence of sickness in industry.

Remedial Measures Taken By Banks

(a) By way of concessions - The commercial banks grant various concessions to sick industrial units in a bid to rehabilitate them which are :-

1. Grant of additional working capital facilities to overcome the shortage of working capital faced by such units.
2. Recovery of interest at reduced rates.
3. Freezing a portion of the outstandings in the accounts of sick industries

(b) Special cell in RBI- A sick industrial undertakings cell has been set up in RBI to formulate as a clearing house for information relating to sick units & to act as a coordinating agency between government banks, financial institutions & other agencies for tackling related issues.

(c) State Level inter-institutional committees- State level inter institutional committees have been set up at all regional offices of the Deparment of Banking Operations & Development of RBI for ensure better consideration between the banks, financial institutions & other agencies.

(d) Special cell under Rehabilitation Finance Division- A special cell been set up within the rehabilitation finance division of Industrial Development Bank of India for attending to references from banks in respect of their sick & problem cases.

Remedial Measures Taken By The Government

The measures taken by Government are following-

(a) Steps of Rehabilitation-

1. Government takes over the sick units which cannot be rehabilitated by public sector financial institutions under the provisions of the Industrial Development & Regulation Act.
2. One method of revival of a sick unit is to merge it with a healthy public sector unit or a private sector unit.
3. The Government gives priority in the allocation of scarce raw materials to sick units.
4. The Government established. the Industrial Reconstruction cooperation of India with a view to reviving & rehabilitating sick units.

(b) Legislations :

(i) Sick Industrial Companies (Special Provisions) Act, 1985 (SICA)- The main object of SICA was to carry out early detection of sickness in an industrial unit & then to evolve a package of measures to remove uncertainity about the working of the sick unit. The main provisions of SICA are :

(1) In the terms of SICA, 1985, the Government Of India set up the Board for Industrial & Financial Reconstruction (BIFR) in January. 1987.

(2) The Government appointed a committee on Industrial sickness and Corporate Restructuring in May, 1993 under the chairmansip - Omkar Goswami.

(ii) Companies (Second Amendment) Act, 2002- The Act provides for the constitution of a National Comapny Law Tribunals (NCLT). The functions are presently handled by the Company Law Board (CLB). Dispute Resolution & Compliance; Revival & Rehabilitation of sick companies & High Court - Winding up of company will now the handled by NCLT.

Rehabilitation – Not A Solution - No Rehabilitation, is not the answer and solution for sick industrial companies. It should be closed down as it is undue exercise and puts additional burden upon the government to take care of them. It is opposed by the Federation of Indian Chambers of Commerce & Industry of India (FICCI) on the ground that healthy and sound companies should not suffer for faults of others. The government should not intervene into the affairs of the industrial company and let the market forces decide it, whether company can be run or not. It should leave the industrial company on its own condition and should afford an opportunity to the company to decide its own fate in this era of cut throat competition. The theory of survival of the fittest should be applied in this particular realm, it says competition for survival or predominance and "survival of those who are better equipped for surviving". The Government should segregate itself from the affairs of the industrial company and should do its own job.

Conclusion - According to the Economic survey (1998-99), 214 companies have been declared no longer sick on

successful completion of the rehabilitation schemes sanctioned for them. This is a heartening development. Moreover the proportions of cases effectively decided to those registered by the BIFR till the end of November, 1998 has improved to 80.4%. Lack of modernisation has been identified an important cause for industrial sickness. The Government came to the conclusion that it was not all desirable to devote resources to keep alive through a process of artificial respiration such non-variable units which are destined to die sooner or later.

References :-

1. Bhatia, B.S. & Batra, G.S. (1994), Management of Sick Industries, Deep & Deep Publications, New Delhi.
2. S.Anilkumar, S.C.Poornima, M.K.Abraham, K.Jayshree, “Entrepreneurship Development”,2003
3. Company Law – N.V.Paranjape,2010
4. www.nstedb.com
5. http://isidev.nic.in/pdf/wp4.pdf

****

मुगल काल से वर्तमान काल तक कत्थक नृत्य प्रस्तुतिकरण का बदलता स्परूप -विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. भावना ग्रोवर *

प्रस्तावना - परिवर्तनशीलता जीवन का एक अभिन्न अंग है। पौराणिक काल से लेकर वर्तमान तक भारतीय जीवन शैली में नख से शिख तक परिवर्तन हुए है। परिवर्तन समाज के दोनों पहलूओं से जुड़ा हुआ है। एक परिवर्तन जो समाज की उन्नति के लिए हुआ हो तथा दूसरा जिससे समाज पर दुष्प्रभाव पड़ा है। परन्तु होने वाले परिवर्तन के परिणाम पूर्व में सिद्ध नहीं हो सकते है। इसी प्रकार भारतीय संस्कृति की धरोहर शास्त्रीय नृत्य कत्थक भी परिवर्तनशीलता से अछूता नहीं है। कत्थक नृत्य के इतिहास को मौटे तौर पर खण्डो में विभाजित किया गया है। एक खण्ड दसवीं शताब्दी तक है तथा दूसरा खण्ड दसवीं सदी से वर्तमान तक का। दसवीं शताब्दी के बाद धीरे-धीरे इस्लामी सभ्यता का भारत में प्रवेश हुआ। यह संगीत एवं नृत्य के पतन का काल था। इस काल में अनेक मन्दिर तोड़े गये। हिन्दू सभ्यता को नष्ट-भ्रष्ट किया गया। मुस्लिम शासकों ने भारतीय कला व संस्कृति के महत्व को नहीं समझा तथा संगीत एवं नृत्य को भोग की वस्तु जानकर उसे विलासिता की ओर मोड़ दिया। नर्तकियों को श्रृंगारिकतापूर्ण नृत्य करने के लिए आदेश दिया गया। डॉ. माया टाक लिखती हैं कि 'राजा महाराजाओं, बादशाओं और नवाबों को प्रसन्न करने के लिए उनका स्तर श्रृंगारिक बना दिया गया, जिनके फलस्वरूप समस्त नृत्य की प्रकृति में बड़ा परिवर्तन आया। उसमें अनेक ऐसी परम्पराएँ कायम हो गई जिसमें शराब, विलास तथा निम्नस्तरीय आमोद-प्रमोद ने अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। बादशाहों और नवाबों की विलासप्रियता के उद्दीपन के लिए इस नृत्य को नाना प्रकार से सजाया सँवारा गया।'[1] कथक नृत्य जब मन्दिरों से निकलकर दरबारों में आया। तब कथक नृत्य अपनी सात्विकता छोड़ राजाओं को खुश करने के लिए विलासिता की ओर उन्मुख हो गया। कथक नृत्य में शुद्ध अभिनय के स्थान पर सस्ते ढंग के हाव-भाव, कसक-मसक व कामोत्तोजक अंग संचालनों का प्रयोग होने लगा। डॉ. माया टाक लिखती है कि 'मुस्लिम शासकों ने जब इस कला को आश्रय दिया, तो यह एक नाच या बाजार नृत्य के रूप में परिवर्तित हो गया। इसीलिए मध्य समाज ने इसे स्वीकार नहीं किया।'[2] स्वरूप बदलते ही कथक नृत्य की मूल बंदिशों के नाम में भी परिवर्तन हो गया। जैसे- स्तुति को सलामी कहा गया। नर्तक के मंच पर आगमन को आमद कहा जाने लगा। इतना ही नहीं कथक नृत्य की वेशभूषा में भी परिवर्तन हो गया। लहंगा - चोली के स्थान पर बगलबंदी, चूड़ीदार पायजामा, पिशवाज का प्रयोग होने लगा। जिससे कथक नृत्य का स्वरूप पूर्णरूप से परिवर्तित हो गया। नृत्य में भजन व पौराणिक कथाओं के स्थान पर ठुमरी, दादरा आदि पर नृत्याभिनय होने लगा। जहाँ एक ओर कथक नृत्य इस काल में धीरे-धीरे पतन की ओर जाता रहा वहीं पंद्रहवीं शताब्दी में उत्तर भारत के कुछ संतों ने संगीत व नृत्य द्वारा एक धार्मिक क्रांति ला दी। इसी युग में कुछ कथक मंदिरों में निरन्तर सेवा करते रहे। इसी युग में श्रीमद वल्लभाचार्य ने एक सम्प्रदाय बनाया, जो अष्टछापय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसमें आठ भक्त कवि गायक थे। जिन्होंने भगवान कृष्ण की लीलाओं का वर्णन, गाकर व नृत्य कर किया। भगवान कृष्ण सोलह कला सम्पूर्ण थे अर्थात् नृत्य एवं संगीत कला में निपुण थे। सूरदास आदि कवियों ने भगवान का वर्णन करते हुए नृत्य के अनेक ऐसे तकनीकी शब्दों का प्रयोग अपने पदों में किया है जो उस युग में भी नृत्य के पुष्ट प्रमाण हैं। अनेक ऐसे पद भी है, जिनमें भगवान कृष्ण व राधा का नृत्य वर्णन है, उदाहरण के लिए स्वामी हरिदास द्वारा रचित एक पद देखिए -

'कुंज बिहारी नाचत नीके, लाड़िली नचावत नीके।।
तांडव लास और अंग को गनै।
जै जै रति उपजत नीके, लाड़िली नचावत नीके।।
श्री हरिदास के स्वामी श्याम को, मेरु सरस बन्यौ।
अरू रस गुन परे फीके, लाड़िली नचावत नीकै।'[3]

स्वामी हरिदासजी ने राधा, कृष्ण व गोपियों के रास का साक्षात् वर्णन उपरोक्त पद में किया है।

पन्द्रहवीं से सत्रहवीं शताब्दी के इस काल में जहाँ एक ओर कथक का पतन हुआ, वहीं नृत्य का उत्थान धर्म के द्वारा भी हुआ। सोलहवीं शताब्दी में बादशाह अकबर (1556-1605) संगीत प्रेमी थे। उन्होंने अपने दरबार में संगीतज्ञों व नर्तकों को आश्रय दिया। इसके उपरान्त सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में बादशाह जहाँगीर (1605-1627) तथा शाहजहाँ (1627-1658) के शासनकाल में संगीत व नृत्य को सम्मान व प्रोत्साहन मिला। यह काल 'उत्तर मध्यकालीन स्वर्णयुग' कहा जाता है। ये सभी सम्राट गुणी व कला प्रेमी थे। इनके राज्यकाल में संगीत व नृत्य के क्षेत्र में अत्यधिक विकास हुआ। इस काल में कवियों की लेखनी का प्रभाव नृत्य पर पड़ा। भक्ति आन्दोलन में अनेक कवियों ने भगवान कृष्ण के चरित्र का वर्णन किया। इसी को कथक नृत्य ने भी प्रभाव स्वरूप ग्रहण किया। इस काल में कृष्ण की कथाओं पर भाव, कृष्ण की लीलाएँ आदि कथक में ढालकर प्रस्तुत की जाने लगी। कहने का तात्पर्य यह है कि कथक नृत्य का आज जो स्वरूप है, वह इसी काल की देन है। कथक नृत्य के 'नृत्त' पक्ष में सलामी, आमद, तोड़े, टुकड़े का चलन इस काल में बढ़ा तथा 'नृत्य' में भगवान कृष्ण से सम्बन्धित काव्य का। इन्हीं दोनों का मिला-जुला स्वरूप ही आज हमें कत्थक नृत्य में देखने को मिलता है।

सन् 1700 के बाद भारत में केन्द्रीय सत्ता टूट गई और भारत छोटे-छोटे राज्यों में विभक्त हो गया। जिस-जिस राज्य में जिन-जिन सम्राटों का शासन हुआ, उन सम्राटों की प्रवृत्ति का प्रभाव संगीत व नृत्य पर पड़ा। दिल्ली में मोहम्मद शाह रंगीले का शासन हुआ। मोहम्मद शाह स्वभाव से रसिक व विलासी थे। यद्यपि उनके काल में अनेक कवियों, संगीतज्ञों व नर्तकों को आश्रय मिला, किन्तु बादशाह को प्रसन्न करने के लिए श्रृंगारपूर्ण काव्य की रचना हुई। श्रृंगारिकता को ही संगीत व नृत्य ने अपनाया क्योंकि सभी को आश्रय चाहिए था, इसी कारण बादशाह को खुश करने के लिए सारा माहौल विलासमय हो गया। अत: इस काल में कवियों की रचना में श्रृंगारिकता की

* विभागाध्यक्ष व एसोसिएट प्रोफेसर (परफारमिंग आर्टस) स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.) भारत

सीमा देखी जा सकती है। इसके उपरान्त कथक नृत्य का केन्द्र स्थल लखनऊ बना। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यहाँ नवाब आसफउद्दौला का राज्य था। कथक नृत्य में लखनऊ घराने का प्रारम्भ यहीं से हुआ। ग्यारहवीं शताब्दी से लेकर अठारहवीं शताब्दी तक कथक नृत्य में अनेक परिवर्तन हुए। कभी यह नृत्य नट-नटी ने अपनाया, तो कभी भाँड व नक्कालों ने। कभी यह बाजारू औरतों के पास पहुँचा, तो कभी बादशाहों व सामन्तों ने इसे श्रृंगारिकता का चोला पहना दिया तथा वैष्णव सम्प्रदाय ने भी इसे अपने रंग में रंगा। समय व परिस्थितियों का प्रभाव कथक पर पड़ता रहा तथा कथक भी उसी रंग में रंगता गया।

नवाब आसफउद्दौला के बाद नवाब वाजिद अली शाह के शासन काल में कथक नृत्य का अत्यधिक विकास हुआ। नवाब वाजिद अली शाह सन् 1847 में अवध के बादशाह बने। उस समय उनकी आयु 24 वर्ष की थी। नवाब वाजिद अली शाह का राज्यकाल नौ वर्ष तक रहा। इसके बाद वे कलकत्ता में रहे तथा सन् 1887 में नवाब साहब की मृत्यु हो गई। कहा जाता है कि केवल आठ वर्ष की आयु में इनके पिता ने इन्हें पं. ठाकुर प्रसाद का शिष्य बनाया। युवावस्था आने तक नवाब साहब संगीत व नृत्यकला में निपुण हो गए। नवाब वाजिद अली शाह ने देश के प्रसिद्ध संगीतज्ञों व नर्तकों को अपने यहाँ आश्रय दिया। नवाब साहब बड़े संगीत प्रेमी व कलानुरागी थे। अनेक नर्तक-नर्तकियों को अपने यहाँ बुलाकर नृत्य व संगीत की शिक्षा दी तथा 'परीखाना' में नियुक्त कर बेगमों का नृत्य एवं संगीत शिक्षक बनाया।

नवाब साहब ने अनेक पुस्तकों की रचना भी की, जिनमें से आज कुछ ही उपलब्ध है। परन्तु वे सभी उपलब्ध पुस्तकें संगीत व नृत्य के क्षेत्र में विशेष महत्त्व रखती है। 'बनी' पुस्तक के हिन्दी रूपान्तर में रोशन तकी ने लिखा है कि 'शुद्ध संगीत पर लिखी गई उनकी चार पुस्तक बन्नी, दुल्हन, नाजो और सौतुल मुबारक का अत्यधिक महत्त्व है।'[4] एक अन्य स्थान पर उन्होंने यह भी लिखा है कि 'वाजिद अली शाह द्वारा रचित पुस्तकों अथवा ग्रंथों में जीवन के हर पहलू को उजागर किया गया है। इनमें उनकी आत्मकथा भी है, संगीत भी, शेरोशायरी भी, और रहस भी व नाटक भी।'[5] नृत्य के तीनों पक्ष नाट्य, नृत्त और नृत्य में नवाब साहब ने अधिक विकास किया। नाट्य के अन्तर्गत रासलीला से प्रेरित होकर रहस की रचना की। रहस के अतिरिक्त अन्य कुछ नृत्य-नाट्य व मुख्यत: इन्दरसभा की रचना की जो बहुत प्रसिद्ध हुआ। नवाब वाजिद अली शाह ने नृत्तपक्ष का भी समुचित विकास किया। डॉ. पुरु दाधीच लिखते हैं कि 'नाट्यशास्त्र में नृत्त को नाट्य का उपकारक माना गया है। वाजिद अली शाह इस तत्तव को भली-भाँति समझता था। उसके नाट्य प्रयोगों में कथक शैली के 'नृत्तांग' का अत्यन्त चातुर्यपूर्ण प्रयोग परिलक्षित होता है।'[6] इनकी पुस्तक 'बनी' में भी 21 गतों का उल्लेख प्राप्त है।

नवाब साहब ने कथक नृत्य में अनेक प्रयोग कर नृत्य का सर्वांगीण विकास किया तथा अनेक नर्तकों को आश्रय देकर कथक नृत्य को पुन: विकसित किया। परन्तु नवाब साहब के जाने के बाद भारत में चारों ओर अंग्रेजी सत्ता प्रबल हो गई, उस समय में नृत्य का विकास नहीं हुआ। यद्यपि मैडम मेनका ने नृत्य के विकास में अनेक कार्य किये किन्तु वे अधिक सार्थक नहीं रहे। इधर रायगढ़ दरबार में राजा चक्रधर सिंह ने नृत्य के विकास में अनेक कार्य किये। रायगढ़ में अनेक नर्तकों व संगीतज्ञों को राजाश्रय प्राप्त था। पं. जयलाल, अच्छन महाराज, मोहनलाल, सोहनलाल, शिवनारायण, पं. शुकदेव, पं. सुन्दर प्रसाद, मोतीराम, ज्योतिराम, हनुमान प्रसाद, करामतुल्ला, आबिद हुसैन, अलाऊद्दीन खाँ, इनायत खाँ, अहमद जान थिरकवा, पर्वत सिंह आदि संगीतज्ञ व नर्तक अनेक वर्षों तक इनके पास रहे। राजा साहब ने चार ग्रंथ लिखे, जिनके नाम हैं - 'नर्तक सर्वस्वम्,' 'ताल तोयनिधि', 'राग रत्न मन्जूषा', 'मुरज परन पुष्पाकर।' चक्रधर सिंह ने कथक नृत्य के विकास में अत्यधिक योगदान दिया। पं. कार्तिक राम लिखते हैं कि 'पुरानी चीजों के प्रति मोह और नये-नये प्रयोगों के लिए विकल राजा कथक को पुनर्जीवित करना चाहते थे।'[7]

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कथक नृत्य का विकास घरानों के रूप में हुआ। सरकार ने इस ओर ध्यान देकर नृत्य संस्कृति बचाने के लिए अनेक उल्लेखनीय कार्य किये हैं। 28 जून 1953 में संगीत नाटक अकादमी की स्थापना नई दिल्ली में की गई। इसकी शाखाएँ भी भारत के सभी राज्यों में है। इनका कार्य भारत में स्थित संगीत संस्थानों को चलाने के लिए अनुदान देना है तथा प्रत्येक राज्य के संगीत व नृत्य को दूसरे राज्य में क्रार्यक्रम करा कर एक-दूसरे के संगीत व नृत्य से अवगत कराना व शास्त्रीय एवं लोक संगीत व नृत्य का प्रचार कराना। इसके अतिरिक्त संगीत नाटक अकादमी द्वारा कथक के लिए नई दिल्ली में 1964 ई. में कथक केन्द्र की स्थापना की गई। जिसमें प्रत्येक घराने के विद्वान नर्तकों को बुलाकर नृत्य सिखाने के लिए नियुक्त किया गया। इसकी शाखायें भी भारत के अनेक राज्यों में हैं। प्रयाग संगीत समिति, इलाहाबाद व उसके उपरान्त भातखंडे हिन्दुस्तानी संगीत महाविद्यालय (मैरिस कॉलेज),लखनउ में नृत्य पाठ्यक्रम चलाया गया। जिससे छात्र परीक्षा देकर इस क्षेत्र में डिग्री व डिप्लोमा भी ले सकते हैं। कहने का तात्पर्य है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कथक नृत्य का चहुँमुखी विकास हुआ है। वर्तमान में अनेक विश्वविद्यालयों जैसे - बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस, वनस्थली विद्यापीठ वनस्थली (राज.), भातखंडे विद्यापीठ लखनऊ, बड़ौदा विश्वविद्यालय बड़ौदा, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इंदौर, एस.एन.डी.टी. मुम्बई, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय अमृतसर, पंजाब विश्वविद्यालय पटियाला, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला आदि में कथक नृत्य की विधिवत् शिक्षा दी जा रही है तथा उपरोक्त में से कुछ विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर स्तर पर कथक नृत्य पाठ्यक्रम विषय के रूप में चलाया जा रहा है।

जब देश स्वतंत्र हुआ, तब से कत्थक नृत्य का एक ओर युग प्रारंम्भ हुआ जिसमें कत्थक नृत्य प्रस्तुतिकरण में परिवर्तन होते चले गये। कत्थक नृत्य में नित् नई संरचनायें होने लगी। पौराणिक कथाओं के प्रस्तुतिकरण का स्थान पर समाज के विभिन्न पहलू कत्थक नृत्य के माध्यम से दिखायें जाने लगें, जिसे हम नृत्य-नाटिका (BALLET) कहते है। कत्थक नृत्य के नृत्त पक्ष में भी केवल तीनताल को छोड़कर अन्य तालों व मात्राओं का भी नृत्यांकन होने लगा। प्रस्तुतिकरण हेतु अंगभाव, वेषभूषा, रूपसज्जा, रंगमंच, प्रकाश व्यवस्था आदि में निरन्तर परिवर्तन होने से वर्तमान में कत्थक नृत्य प्रस्तुतिकरण का स्वरूप पूर्णतया भिन्न है। कत्थक नृत्य के इस बदलते हुए स्वरूप से जहाँ एक ओर कत्थक नृत्य का विकास हुआ है वहीं दूसरी ओर नृत्य के मूल स्वरूप में भी परिवर्तन आयें है। जो कहीं लाभकारी तो कहीं हानिकारक भी सिद्ध हुए है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. टाक, डॉ. माया, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में कथक नृत्य, पृष्ठ 9
2. वही, पृष्ठ-9
3. स्वामी हरिदास, सुश्री उमा शर्मा द्वारा मौखिक रूप से प्राप्त
4. शाह, नवाब वाजिद अली, बनी, रूपान्तर रौशन तकी, पृष्ठ-10
5. वही, पृष्ठ-10
6. दाधीच, डॉ. पुरु, कथक नृत्य शिक्षा, भाग-2, पृष्ठ 112
7. राम, पं. कार्तिक , रायगढ़ में कथक, पृष्ठ-29

'दिवास्वप्न' में उल्लेखित गतिविधियों के प्रयोग द्वारा प्राथमिक स्तर पर बालकेन्द्रित शिक्षण व्यवस्था में सुधार करना

प्रमोद कुमार सेठिया* डॉ. महेश कुमार तिवारी**

शोध सारांश – मध्यप्रदेश में गुणात्मक शिक्षा स्थापित करने हेतु विभिन्न कार्यक्रम चलाये जा रहे है। इसी के अन्तर्गत कमजोर उपलब्धि वाली शालाओं में क्रियात्मक अनुसंधान के माध्यम से सुधार का प्रयास किया गया। इस क्रियात्मक शोध कार्य में इंटर्न डी.एल.एड. छात्राध्यापकों द्वारा दो तीन माह तक चयनित शालाओं में बालकेन्द्रित शिक्षण व्यवस्था बनाने हेतु दिवास्वप्न पुस्तक के आधार पर गतिविधियां की गई। गतिविधियों के पूर्व व पश्चात् की स्थिति का अवलोकन कर प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण कर निष्कर्ष प्राप्त किये गये है। आशा है इस क्रियात्मक शोध के परिणाम शालाओं में बालकेन्द्रित शिक्षण व्यवस्था स्थापित करने एवं योजना निर्माण में सहायक होंगे।

प्रस्तावना – शिक्षा बालक की अन्तर्निहित शक्तियों को विकसित करती है। प्राथमिक शिक्षा, सम्पूर्ण शिक्षा की आधारशिला होती है, जिस पर बालक के सफल जीवन की इमारत का निर्माण होता है। चूँकि शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है, अत: आवश्यक है कि शिक्षा जीवन के सभी पक्षों में बच्चों के बहुमुखी विकास का मार्ग प्रशस्त करे। इसके लिये आवश्यक है कि विद्यालयों में विद्यार्थी प्रसन्न व आनंदित रहे क्योंकि वे जब तक प्रसन्न व आनन्दित नहीं होंगे वे किसी भी कला को सीखने में असमर्थ रहेंगे।

गिजुभाई बधेका मानव चेतना के नायक और जीवन मूल्यों के प्रतिष्ठापक थे। हमारी संस्कृति वसुधैव कुटुम्बकम की भावना पर आधारित है जिसकी छबि गिजुभाई की शिक्षाओं में देखने को मिलती है। उन्होंने समाज को नई दिशा व प्रेरणा दी थी। गिजुभाई का मार्ग ममता, समता व क्षमता का था, जो प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में निहित उद्देश्यों को रेखांकित करता है।

गिजु भाई की मुख्य पुस्तक दिवास्वप्न शैक्षिक प्रयोगों की आनन्दमयी प्रयोगशाला है, इन्हें अपनाकर प्रत्येक शिक्षक द्वारा शैक्षिक गुणवत्ता व स्तर के नए शिखर प्राप्त किए जा सकते है।
प्रो. जे.एस. राजपूत

शिक्षा की वर्तमान विकृतियों को दूर करने, बालकेन्द्रित शिक्षण व्यवस्था को स्थापित करने की आतुरता पुन: दृष्टिगत हो रही है। दिवास्वप्न में उल्लेखित गतिविधियाँ इसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन ला सकती है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. छात्राध्यापकों को बालकेन्द्रित शिक्षा की अवधारणा से परिचित कराना।
2. छात्राध्यापकों के माध्यम से इन्टर्नशीप शालाओं में गतिविधि आधारित बालकेन्द्रित शिक्षण की गतिविधियां आयोजित करना।
3. 'दिवास्वप्न' के प्रयोगों का कक्षा शिक्षण में क्रियान्वयन करना एवं विद्यालय की व्यवस्था सुधार में मदद करना।
4. छात्राध्यापकों को लर्निंग बाय डूयिंग मेथड़ एवं चाईल्ड सेंटर्ड मेथड़ का व्यवहारिक अनुभव कराना।

शोध प्रविधि – न्यादर्श एवं चयन का आधार – प्रस्तुत क्रियात्मक शोध हेतु डी.एल.एड. के चयनित इन्टर्नशीप हेतु चयनित, 9 शालाओं को न्यादर्श के रूप में लिया गया। चयनित शालाओं के शिक्षक व बच्चे भी न्यादर्श है।

इन्टर्नशिप के छात्र चयनित विद्यालयों में शिक्षण व्यवस्था एवं शिक्षक अनुभव के लिये 40 दिनों के लिये जाते है। वहां उन्हें पाठ प्रस्तुतीकरण के साथ शाला प्रबंधन व बाल केन्द्रित शिक्षा व्यवस्था को भी अनुभव के आधार पर सीखना होता है। छात्राध्यापकों के माध्यम से विद्यालय की व्यवस्था में भी सुधार किया जा सकेगा।

परिकल्पना – 'दिवास्वप्न' में उल्लेखित गतिविधियों के प्रयोग द्वारा प्राथमिक स्तर पर बालकेन्द्रित शिक्षण व्यवस्था में सुधार किया जा सकता है

उपकरण – प्रस्तुत क्रियात्मक शोध हेतु दिवास्वप्न के प्रयोगों पर आधारित 'शाला अवलोकन प्रपत्र' व शिक्षक साक्षात्कार प्रश्नावली बनाई गई।

आंकड़ों का प्रकार एवं विश्लेषण की योजना– शाला अवलोकन प्रपत्र एवं शिक्षक साक्षात्कार प्रश्नावली के आधार पर पूर्व व पश्च परीक्षण किया गया, प्राप्त प्रदत्तों का सांख्यिकीय एवं रूब्रिक आधारित विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गये।

कार्य प्रणाली – प्रस्तुत क्रियात्मक अनुसंधान 'दिवास्वप्न में उल्लेखित गतिविधियों के प्रयोग द्वारा प्राथमिक स्तर पर बालकेन्द्रित शिक्षण व्यवस्था में सुधार करना' हेतु राज्य शिक्षा केन्द्र के निर्देशानुसार जिले की 'डी' व 'ई' ग्रेड की 9 शालाओं का चयन किया गया। गिजुभाई द्वारा रचित पुस्तक को आधार बनाकर बालकेन्द्रित व्यवस्था हेतु गतिविधियों को चिन्हित किया गया।

दिवास्वप्न आधारित गतिविधियों को शाला में प्रारम्भ करने के पूर्व एक शाला अवलोकन प्रपत्र के माध्यम से शाला की स्थितियां जानी गयी। कक्षा शिक्षण की स्थिति जानने हेतु एक शिक्षक साक्षात्कार अनुसूची बनाई गई। जिसके आधार पर कक्षा शिक्षण की पूर्व स्थिति को जाना गया। गतिविधियां किये जाने के पूर्व छात्राध्यापकों को शोधकर्त्ता द्वारा डाइट में दिवास्वप्न पुस्तक का वाचन करवाया गया। उसमें उल्लेखित गतिविधि पर चर्चा की गई। शाला में पदस्थ शिक्षकों ने भी दिवास्वप्न पुस्तक को पढ़ा। पूर्व परीक्षण के आंकड़ों का संकलन कर विश्लेषण किया गया। विश्लेषण के आधार पर चयनित न्यादर्श शालाओं हेतु गतिविधियां नियत की गई। लगभग दो माह तक शाला के शिक्षकों व डाइट के इन्टर्न छात्राध्यापकों द्वारा शाला

* शोधार्थी, पेसिफिक यूनिवर्सिटी उदयपुर एवं वरिष्ठ व्याख्याता डाइट, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड़ गर्ल्स कालेज आफ टीचर्स ट्रेनिंग, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत

के वातावरण व कक्षा शिक्षण में सुधार हेतु गतिविधियां की गई। शोधकर्ता द्वारा सतत् अनुवीक्षण कर मार्गदर्शन दिया गया। लगभग दो माह पश्चात शाला अवलोकन प्रपत्र व शिक्षक साक्षात्कार अनुसूची द्वारा पश्चवर्ती स्थिति को जाना गया। गतिविधि पूर्व व पश्चात् लिये गये आंकड़ों का संकलन कर विश्लेषण किया गया व निष्कर्ष प्राप्त किये गये।

निष्कर्ष – (देखें सारिणी क्रं. 1 एवं 2)

दिवास्वप्न आधारित क्रियात्मक शोध के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार है :–

शाला के वातावरण व व्यवस्था सुधार के संबंध में – बच्चों कों मित्र बनाने की प्रवृत्ति से सकारात्मक बदलाव देखा गया। कक्षागत शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक को गतिविधि करने की स्वतंत्रता दी गई है।बच्चों की व्यक्तिगत स्वच्छता नाखुन काटना, स्वच्छ वस्त्र, हाथ धुलाई के प्रति सकारात्मक परिवर्तन परिलक्षित हुआ। बच्चों के सतत् व व्यापक मूल्यांकन की प्रक्रिया नियमित हुई। शाला में रेकार्ड अद्यतन हुआ। प्रार्थना सभा, की व्यवस्था शाला में बनाई गई। बच्चे प्रार्थना का सस्वर लय में गायन करने लगे। शाला परिसर की सफाई की ओर ध्यान आकर्षित किया गया। शिक्षकों ने स्वप्रेरणा से ध्यान देना प्रारंभ किया। खेल की गतिविधियां नियमित किये जाने हेतु वातावरण निर्माण हुआ प्रयास जारी है। समुदाय को शाला से जोड़ने के लिये शिक्षकों एवं छात्राध्यापकों ने व्यक्तिगत प्रयास प्रारंभ किये। यद्यपि माता–पिता की सहभागिता अपेक्षित नहीं है। शाला में उपलब्ध पुस्तकालय का बच्चों द्वारा उपयोग किया जाने लगा। रोप लायब्रेरी की व्यवस्था शालाओं में की गई। रचनात्मक, नवाचारों के प्रति शिक्षकों व छात्राध्यापकों ने कार्य किया मिट्टी के खिलौने टी.एल.एम. आदि निर्माण किये गये।

बाल केन्द्रित शिक्षण से संबंधी प्रयास – कहानी सुनाने एवं उसके माध्यम से कक्षा से स्वअनुशासन स्थापित करने का प्रयास किया गया। इस दिशा में और सक्रिय प्रयास आवश्यक है। बच्चे समझ के साथ पढ़े उन्हें रटने से मुक्ति मिले स्वयं अनुभव से सीखे, कक्षा शिक्षण में इन अवधारणाओं का विकास हुआ। बच्चों द्वारा बालगीत लय व हावभाव के साथ सुनाने के कौशल ये सकारात्मक परिवर्तन पाया गया। नाटक, अभिनय से शिक्षण करने में शिक्षक संकोच करते है। आंशिक परिवर्तन परिलक्षित हुआ। कम लागत शिक्षण सामग्री एवं शिक्षक सहायक सामग्री की उपलब्धता, उपयोगिता में वृद्धि हुई। पाठ्य पुस्तक के अतिरिक्त अनुभव से कहानी, गीत, वातावरण समूह गतिविधियों खेल के माध्यम से सीखने के प्रयास हुए। प्रकृति एवं वातावरण से प्रत्यक्ष सीखने हेतु किये गये प्रयास अल्प है। सक्रियता आवश्यक है। सुलेख, श्रुतलेख की गतिविधि में अत्यधिक सकारात्मक परिवर्तन देखा गया। बाल संग्रहालय की स्थापना हेतु सृजनात्मक कार्य, गतिविधियों की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया। बच्चों ने मिट्टी के खिलौने, ड्राइंग, खेल सामग्री, निर्मित की।

सुझाव – प्रत्येक शिक्षक को गिजुभाई की पुस्तक दिवास्वप्न अवश्य पढ़कर आत्मसात करना चाहिए। शालाओं में बच्चों के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार हो। कक्षा शिक्षण में कहानी, कविता, बालगीत जैसी गतिविधियों का समावेश हो। प्रत्येक शिक्षक को कहानी कथन, बालगीत कविता का भावपूर्ण प्रस्तुतीकरण, अभिनय में कुशल होना आवश्यक है। शालाओं में खेल की नियमित गतिविधियां आवश्यक है। प्रकृति भ्रमण व वातावरण से बच्चे अधिकाधिक सीखें, ऐसे प्रयास किये जाना चाहिये। शाला में माता पिता एवं समुदाय की सक्रिय सहभागिता आवश्यक है। शाला परिसर में बागवानी अवश्य होना चाहिए। बच्चे जो भी सीखे, पूरा सीखे, समझ बनाकर सीखे प्राप्त ज्ञान स्थायी हो। बच्चों को सीखने में आनन्द आना चाहिए।

व्यवहारिक उपयोगिता– 'गिजुभाई ने शिक्षा को खेल, आनन्द, प्रेम, रोजमर्रा के क्रियाकलापों से जोड़ा। शिक्षक कल्पनाशील व समर्पित है तो न सिर्फ अपेक्षित शिक्षा का प्रचार प्रसार होगा, बल्कि बच्चे को सम्पूर्ण मानव बना पाना संभव होगा।'

शिक्षा शास्त्री अपना चिन्तन विश्व के किसी भी कोने में रहकर कर सकता है जिसकी उपादेयता संदर्भ के अनुरूप कहीं ओर भी हो सकती है ऐसे ही शिक्षा शास्त्री गिजुभाई बधेका है जिनका कार्यक्षेत्र व प्रयोग क्षेत्र भावनगर गुजरात है लेकिन उनके द्वारा किये गये प्रयोगों की उपादेयता बाल केन्द्रित शिक्षा के संदर्भ वैश्विक स्तर पर हो सकती है।

क्या हमारे पढ़ने, सोचने और लिखने भर से
हमारा काम पूरा हो जाता है। नहीं
हमें तो शिक्षा के नये–नये
मंदिरों का निर्माण करना है
और उन मंदिरों में अब तक अपुज्य रही
सरस्वती देवी की स्थापना करनी है।
बालकों के लिए नये युग का आरम्भ हुआ है
केवल बातें करने से कुछ बनेगा नहीं
कुछ कीजिए ! कुछ करवाईये !!

– गिजुभाई बधेका

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

सारणी क्रं.-1
शाला अवलोकन प्रपत्र-रूब्रिक आधारित विश्लेषण

क्रं.	तथ्य	पूर्व परीक्षण रूब्रिक स्कोर प्रतिशत	पश्च परीक्षण रूब्रिक स्कोर प्रतिशत	वृद्धि/ अन्तर (%में)
1	शिक्षक का बच्चे से व्यवहार मित्रतापूर्ण है।	91.11	100	8.89
2	शिक्षक प्रत्येक बच्चे को नाम से पुकारता है।	95.55	100	4.45
3	बच्चों के नाखून कटे हुए है।	60.00	95.55	35.55
4	बच्चे स्वच्छ धुले हुए कपड़े पहन कर विद्यालय आते है।	51.11	100	48.89
5	बच्चे भोजन से पूर्व व पश्चात हाथ धोते है।	68.88	100	31.12
6	विद्यालय में प्रतिदिन समय पर प्रार्थना होती है।	46.66	100	53.34
7	बच्चे प्रतिदिन प्रार्थना व राष्ट्रगीत का सस्वर गायन करते है।	42.22	95.55	53.33
8	कक्षा में शांति, अनुशासन रहता है।	64.44	91.11	26.67
9	शाला का परिसर साफ, स्वच्छ है।	55.55	91.11	35.56
	शाला परिसर में बागवानी की गई है।	20.00	28.88	8.88
11	शाला में शिक्षक द्वारा प्रतिदिन खेल गतिविधि की जाती है।	24.44	73.33	48.89
12	बच्चों के माता-पिता को उनकी उपलब्धि बताते हुए शाला में आमंत्रित किया जाता है।	28.88	68.88	40.00
13	समुदाय/बच्चों के माता-पिता की शाला के विकास कार्यो में भागीदारी है।	20.00	46.66	26.66
14	शाला में पुस्तकालय का बच्चों द्वारा उपयोग किया जाता है।	20.00	73.33	53.33
15	बच्चे रचनात्मक, सृजनात्मक कार्यो में सहभागिता करते है।	24.44	64.44	40.00
16	शिक्षक बच्चों को हावभाव के साथ कहानी सुनाता है।	28.88	60	1.12
17	कक्षा में स्वअनुशासन रहता है।	51.11	91.11	40.00
18	शिक्षक बच्चों को बालगीत, कविता हावभाव लय के साथ सुनाता है।	37.17	77.77	40.60
19	बच्चे समझ बनाकर सीखते है।	37.17	68.88	31.78
20	शिक्षक बच्चों को रटने पर जोर देते है।	24.44	55.55	31.11
21	शाला में सहायक शिक्षण सामग्री उपलब्ध है।	51.11	100	48.89
22	शाला में सहायक शिक्षण सामग्री का कक्षा शिक्षण में उपयोग हो रहा है।	26.66	91.11	64.45
23	शिक्षक बच्चों को सुलेख की गतिविधि करवाता है।	42.22	100	57.78
24	शिक्षक बच्चों की श्रुतलेख की गतिविधि करवाता है।	33.33	95.55	63.22
25	शिक्षक द्वारा हिन्दी व्याकरण सीखने की गतिविधियां की जा रही है।	24.44	46.66	22.22
26	शिक्षक बच्चों की प्रकृति भ्रमण हेतु ले जाता है।	20.00	33.33	13.33
27	बच्चे प्रकृति भ्रमण व वातावरण से प्रत्यक्ष में सीख रहे है।	20.00	37.77	17.77
28	शाला में बच्चों द्वारा एकत्रित वस्तुओं को संग्रहालय के रूप में रखा गया है।	20.00	60	40.00
29	शिक्षक द्वारा बच्चों का सतत् व्यापक मूल्यांकन किया जा रहा है।	42.22	100	57.78
30	बच्चों को शाला में सीखने में आनन्द आ रहा है।	51.11	95.55	44.44

सारणी क्रं. – 2 शिक्षक साक्षात्कार अनुसूची – रूब्रिक आधारित विश्लेषण

क्रं.	तथ्य	पूर्व परीक्षण रूब्रिक स्कोर प्रतिशत	पश्च परीक्षण रूब्रिक स्कोर प्रतिशत	वृद्धि/ अन्तर (%में)
1	कक्षागत शिक्षण प्रक्रिया में गतिविधि करने में शिक्षक को स्वतंत्रता दी गई है।	100	100	0.00
2	बच्चों को पढ़ाने से पूर्व बच्चों से निकटता की जाकर मित्र बनाया जाता है।	81.05	100	19.95
3	कक्षा में कहानी सुनाकर बच्चों का ध्यान एकाग्र किया जा रहा है।	32.63	62.10	29.47
4	बच्चों की व्यक्तिगत स्वच्छता, नाखुन, स्वच्छ कपड़े की ओर शिक्षक ध्यान दे रहे हैं।	60.00	100	40.00
5	शिक्षक द्धारा प्रतिदिन प्रार्थना करवाई जा रही है एवं बच्चे सस्वर गायन कर रहे है।	51.57	100	48.43
6	शाला परिसर की स्वच्छता की ओर ध्यान दिया जा रहा है	41.05	83.15	42.10
7	बच्चों को प्रतिदिन खेल की गतिविधि करवाई जा रही है।	22.1	68.42	46.32
8	समुदाय को शाला की गतिविधि से जोड़ा गया है।	24.21	53.68	29.47
9	शाला में उपलब्ध पुस्तकालय का बच्चों द्धारा उपयोग किया जा रहा है।	20.00	72.63	52.63
10	बच्चों का सतत् व व्यापक मूल्यांकन किया जा रहा है।	45.26	100	54.74
11	शिक्षक कक्षा में अनुशासन बनाने के लिये कहानी – कविता का प्रयोग करते है।	32.63	57.89	25.26
12	बच्चें समझ के साथ पढ़ रहे है।	45.26	72.63	27.37
13	बच्चे हाव-भाव और लय के साथ बालगीत सुनाते है।	45.26	87.36	42.10
14	शिक्षक द्धारा नाटक, अभिनय के माध्यम से शिक्षण गतिविधि की जा रही है।	20.00	45.26	25.26
15	शाला में सहायक शिक्षण सामग्री और परिवेशी सामग्री उपलब्ध है। शिक्षक द्धारा उसका कक्षा में उपयोग किया जा रहा है।	36.84	82.10	45.26
16	शिक्षक बच्चों को प्रकृति भ्रमण हेतु ले जाते है।	20.00	32.63	12.63
17	कक्षा में सुलेख और श्रुतलेख की गतिविधि हो रही है।	36.84	95.78	58.94
18	शाला में बाल संग्रहालय बनाया गया है।	20.00	64.21	44.21
19	बच्चे पाठ्य पुस्तक के बजाय स्वयं के अनुभव से सीख रहे है।	45.26	68.42	23.16
20	बच्चों को शाला में सीखने का आनन्द आ रहा है।	53.68	87.36	33.58

****

वैश्विक दर्शनों का सार, संस्थावाद और उसकी प्रयुक्तियाँ

डॉ. हजारी लाल मौर्य*

प्रस्तावना – न्याय अन्याय के प्रतिकार का लाभ है। मूल वस्तु अन्याय है। जो व्यक्ति अपने साथ हुए व्यवहार में अन्याय को महसूस करता है वह तीन संख्याओं से न्याय माँगता है। पहली वह व्यक्ति या संगठन होता है जो अन्याय कर रहा है या कर चुकाव है। दूसरी समाज के पैमानों की निर्धारक संस्था पंचायत से न्याय माँगा जाता है। इसी संस्था का विस्तार राज्य और राजा तक जाता है औरप तीसरी संस्था प्रकृति या ईश्वर है जहाँ न्याय माँगा जाता है। अन्यायकारी कारण भी मानव निर्मित और प्राकृतिक होते हैं। युद्ध, राज्य विवाह, शोषण आदि मानव निर्मित कारण हैं तथा महामारी, अकाल, बाढ़, भूकम्प, पशु–जीव आदि प्राकृतिक कारण हैं। इस विश्व में आज तक न न्याय की परिभाषा तय हुई और न अन्याय की। अन्याय को न्याय और न्याय को अन्याय सिद्ध किया जाना कोई मुश्किल कार्य नहीं है। अन्याय आत्मगत भी हो सकता है और वस्तुगत भी। न्याय और अन्याय जलेबी और उससे घिरे स्पेस (शून्य) की भाँति हैं दर्शनशास्त्री या दार्शनिक इसे सीधा कर देने के प्रयास में हजारों वर्षों से जूझ रहे हैं।

विश्व के प्रथम दार्शनिक का नाम बताना सम्भव नहीं है लेकिन सामुहिक रूप से उपजे प्रथम दर्शन को बहुदेव वादी समझ कह सकते हैं। आदिम मनुष्य अपने साथ होने वाली दुर्घटनाओं, दुर्भाग्यों और मृत्युओं के कारण तलाशता था। वह अपने को बिल्कुल छोटा और प्रकृति को बहुत बड़ा मानता था और बड़ी ही पाता था। अत: उसने प्रतयेक घटना और वस्तु का एक देवता या शैतान माना और माना कि उसे मनाने के लिए पूजा या बलि चढ़ाना आवश्यक है। पूरे विश्व के आदिम समाजों में यही हुआ जिसके जीवित जीवाश्म आज भी हैं। आज भी हम वेदों, कुरान, बाइबिल, जेदंअेवस्ता या या प्राचीन सभी ग्रन्थों में इनका मण्डन या प्रतिक्रिया स्वरूप खण्डन पाते हैं। उदाहरणार्थ हम जन्म का देवता ब्रह्मा को, पालन का विष्णु को, श्वसान का शिव को, मृत्यु का यम को, समृद्धि का गणेश को, बरसात का इन्द्र को, समुद्र का वरूण को, धन का कुबेर को, सम्मति और सम्पत्ति का लक्ष्मी को, प्यार का कामदेव को, गर्भ गिराने वाला भैरूँ को, शुभ कार्य में बाधा देने वाला गणेश को, गर्भ स्थापित करने का विष्णु को अन्न का बोडन को, पानी का इन्द्र को, भूमिका भे माता को, वीर्य का जल देवताको, पुत्र का महामाया को, रात्रि का संध्या को, दिन का ऊषा को, चेचक का शीतला माता को, दूध का देवता सूर्य को, दिशाओं का लोकपालों को,रजोस्त्राव का मालासी को, योनि का कामाख्या को, लिंग का शिव को, हँगाई का देव भी जापान में स्थित है, भाग्य लिख्याने वाली बेमाता, मूत्र की देवी भूत माता (गुड़गाँवों में मान्य है) विद्या की देवी सरस्वती को, बलात्मकार का देवता मोर, कूख बाँधने वाली देवी होई, भूख की देवी ग्यारस, सतीत्व की तुलसी, स्त्री काम की देवी रति आदि को मानते है और पूजते हैं। पूरे विश्व में इन देवों, राक्षसों, यक्षों, सनतों की सूची बनाई जाये तो काफी लम्बी हो जायेगी। यह पहला दर्शन है।

इस विश्व में दूसरी समझ या दूसरा दर्शन इस बहुदेववादी समझ की प्रतिक्रिया में उपजा जो प्राय: ही घुमन्तु और पलायन करते रहने वाले पशु चरवाहों के बीच विकसित हुआ। यह समझ तुलनात्मक रूप से वैश्विक देवता मानने वालों की समझ थी। इन लोगों में मोटे तौर पर चार पाँच देवता विकसित हुए और शेष छोटे या स्थानीय देवता छूट गये। ये देवता थे– सूर्य, अग्नि, चन्द्रमा और इन्द्र। यह एकेश्वरवाद की तरफ विकसनशील अवस्था है। जो अपने सबसे अति रूप में कुरान में सामने आई। कुरान के मानने वालों ने ईश्वर या ख्व्युदा का होना तो तक्र से प्रभावित किया लेकिन स्थानीय देव प्रतिमाओं में किसी देवत्व का न होना ताकत से प्रमाणित किया। यद्धपि दुखी, अभागी और पीड़ित होते रहने पर उन्होंने भी व्यावहारिक जीवन में जादू, गण्डे ताबीज, मनौती, कब्र पूजा, बलि आदि को माना। पैगम्बरों पीरों और ओलियाओं में विश्वास किया। एकेश्वरवाद भी पूरे विश्व में किसी न किसी रूप में मानवीय समझ का भाग बना। एक ईश्वर जैसी कोई शक्ति नहीं होती पर तक्र और तलबार के बल पर वह खूब चला आज भी चल रहा है।

तीसरी समझ विकसित हुई उद्घाटकवादी समझके रूप में। ईश्वर एक है लेकिन समय–समय पर जब पृथ्वी का मानवता संकट में (उनकी परिभाषा के अनुसार) होती है तो ईश्वर अवतार लेता है या पेगम्बर भेजता है। ईसा, मोहम्मद, कृष्ण, राम आदि को ऐसे ही उद्घाटक माना गया। यह अन्तर्विरोधी तक्र था कि जो निर्गुण निराकार कण–कण में व्याप्त है वही अवतार लेता है। समझ पूर्णता को प्राप्त नहीं थी परन्तु यह समझ भी चली। आज भी चल रही है। यह प्रकृति के प्रपंचों की व्याख्या नहीं करती।

चौथी समझा पूर्णतया कीनकट थी लेकिन व्यक्तिगत दुख के अभावो, दुर्घटनाओं का कारण या निवारण नहीं बताती थी। यह भी अनीश्वरवादी समझ या भौतिकवादी समझ। भारत में हम इसे बुद्ध और महावीर से पूर्व भी चारवाकों आदि में इसे देख सकते है। भौतिकवादी समझ की अन्तिम और अति पूर्ण परिणति मार्क्सवाद के रूप में हुई।

पाँचवी समझ भी अनीश्वरवादी एवं भौतिकवादी है। इसने प्रकृति में जीवन की उत्पत्ति और यहाँ तक की यात्रा को विकासवादी तरीके से समझा। इसमें भी जीवन के कारण, उद्देश्य और दु:खों के निवारणार्थ कुछ नहीं कहा गया। प्रकृति में संयोग से यह जीवन बना है और किसी दुर्योग से यह जीवन, जो समझने का प्रयास करने वाला भी ब्रह्माण्ड में अकेला है, खत्म हो जाये तो यह प्रकृति किसी के लिए नहीं रोवेगी।

छठी समझ या दर्शन संस्थावाद है जो मानव समाज में विकसित

* व्याख्याता (हिन्दी) राजकीय लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय, कोटपूतली, जिला जयपुर (राज.) भारत

संस्थाओं के आधार पर ही मानव रचित विश्व को समझने का मेरा प्रयास है। मनुष्य जीवन 134 संसथाओं से चलता है। इनके अनुसार जीवन को समझने का वर्णन आगे के पृष्ठों में किया जावेगा।

मानव सर्जित यह विश्व एक समझौते का परिणाम है। यह समझौता हुआ था पुरूष और स्त्री के मध्य। अपनी आत्हन्ता वासना, जो उसे दुस्साहसी भी बना देती है, से ग्रसित पुरूष लगातार और हर काल में स्त्री से प्रणय याचना करता रहता था। पेड़ों पर रहे जाने की आवश्यकता ने उसके हाथों को आज के वानरों जितना, मुक्त कर दिया था। इन मुक्त हाथों के कारण पुरूष आक्रमणकारी और बलात्कारी होने लगा। स्त्री ने सम्भवत: इस मजबूरी को समझकर पुरूष के सामने प्रणय के लिए शर्त रख दी कि वह उसके लिए वन में से भोजन एकत्र करके लाये। पुरूष भोजन एकत्र करके वहाँ लाने लगा जहाँ स्त्री ने अपने को स्थिर कर लिया था और इसके बदले स्त्री समय कुसमय पुरूष की प्रणय की भूख शान्त करने लगी। यही था वह समझौता (आज भी यही है) जिसने आज की वह सारी दुनिया बना दी जो मानव निर्मित है।इस एक समझौते ने एक साथ अनेक दिशाओं में मानवीय सर्जक प्रारम्भ किया। यह मानवीय सर्जन भौतिक, गुणात्मक, नामरूपात्मक, मानसिक और प्रपंचात्मक है। समझौते ने ऐसे जोड़ के लिए यह आवश्यकता पैदा कर दी कि वे शेष समूह से स्वयं को अलग करके अपनी एकता औरसंग्रह स्थापित करें। इस जोड़े की एकल और निजता ने शेष जनों को भी समझौते कर लेने हेतु प्रेरित किया और संग्रह ने निजी सम्पत्ति को जन्म दिया। जिस दिन निजी सम्पत्ति ने जन्म लिया उसी दिन उसके विचलन ने भी जन्म लिया। अर्थात एक जोड़े के द्वारा संग्रह स्थापित करने के विरूद्ध अन्य जनों के मन में उसे छीन लेने, चुरा लेने, बखेर देने, नष्ट कर देने आदि के विचारों और कार्यो ने भी जन्म लिया। इसने एक साथ कई दिशाएँ खोल दी। आपसी समझ से विनिमय कर लेने के व्यापार को जन्म दिया। समझौता लागू रहे इसने विधान को जन्म दिया समझौता तोड़ने वाले को दण्ड दिया जाये इसने पंचायत को जन्म दिया। पंचायत सुचारू चलने की आवश्यकता के राजा या अध्यक्ष को जन्म दिया। इन सब कार्यों के लिए भाषा ने जन्म लिया। स्थिर रहती स्त्री ने घर, रसोई और कला को जन्म दिया। पंचायतों और संग्रह क्षेत्र की परिधियों ने राष्ट्रों या जनों या विशों या जनपदों को जन्म दिया। सीमाओं के अतिक्रमण ने जड़ाईयों को जन्म दिया। लड़ाइयों ने जनपद के अन्दर के न्याय और बाहर के न्याय में अन्तर पैदा किया। वस्तु संग्रहण ने पुरूषार्थ और स्पर्धा को जन्म दिया। संग्रह को रखने की आवश्यकता ने घर या गुफा के निर्मा को जन्म दिया। पूजन व फफूँद के साथ बीमारियों के सहसम्बन्ध का संज्ञान लिये जाने ने बचाव और चिकित्सा को जन्म दिया और कड़बी दवा पीये-पिलाये जाने की शुरूआत हुई। यहीं से एक आदमी दूसरे का भोक्ता बना। भोक्ता बने जाने के विनियम में वस्तु की मात्रा और गुणवत्ता को सन्तुलित और कलित करने की आवश्यकता पैदा की। संतुलन और कलम ने ही मनुष्य को न्याय और अन्याय को महसूस करने की क्षमता दी और न्याय की अपेक्षा का जन्म हुआ।

सीधे से दिखने वाले इस समझौते ने अनेक पेचीदगियों भरे, प्रपंचों को जन्म दिया। प्रथम दृष्टया यह किसी कारण से उत्पन्न कार्य नजर आता है लेकिन न केवल इस समझौते में प्रपंच के गुण है बल्कि इसके 134 सह उत्पादों में प्रपंच के गुण हैं। प्रपंच (Phenomenon) में निम्न विशेषताएँ होती हैं- 1. प्रपंच मायावी अर्थात् मनुष्य को आकर्षित करने वाले होते हैं। सोने के मृग जैसे। 2. प्रपंच भ्रमपूर्ण होते है। अर्थात् उनके बारे में मनुष्य अपना होने का श्रम पालता है। 3. प्रपंच अन्तर्विरोधी होते हैं। अर्थात् इन्हीं में इनकी उलट विशेषता भी निहित होती है। लेकिन इन पर द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के नियम लागू नहीं होते। वे बहुआयामी होते है। 4. प्रपंच का समस्त वर्तमान बुद्धि लगा देने पर भी पूर्णत: समझ लेने का दावा नहीं किया जा सकता। 5. प्रपंच के एकपक्ष को साधने पर दूसरो या तीसरा कोई अन्य पक्ष उभर आता है। अर्थात् अनचाहे प्रकट हो जाता है। 6. प्रपंच नाम-गुण-रूपात्मक होता है। उसकी भौतिक परिघटनाएँ प्रपंच, प्रपंच नहीं है। 7. प्रपंच मरजीवड़े होते हैं अर्थात वे बार-बार परिघटित होते हैं। हमें कई बार लगता है वे मर गये या खत्म हो गये। इस गुण को सातत्य भी कह सकते हैं। 8. प्रपंच आत्मपोषण करते हैं अर्थात् स्वयं को बनाये रखने के लिए इसी समाज में से खाद पानी ऊर्जा ग्रहण करते है। 9. लगभग प्रपंच काल निरपेक्ष होते हैं। 10. प्रपंचों में स्वयं को पुनरूत्पादित करने की क्षमता होती है।

मनुष्य ने अपनी बुद्धि से जिन वस्तुओं-परिघटनाओं को प्रपंच माना है उन्हें दो भागों में बाँट सकते हैं- प्राकृतिक प्रपंच और मानवीय विश्व के प्रपंच। प्राकृति प्रपंच जैसे-ज्वारभाटा, ज्वालामुखी, वर्षा, अम्लवर्षा, जीवन आदि। मानवीय प्रपंच जैसे मुद्रा, विवाह, युद्ध, राजा आदि। मानवीय प्रपंचों के समाजशास्त्र में 'संस्था' (InstitION) कहते हैं। जो गुण प्रपंच में है वे ही गुण संस्था मतें हैं। लेकिन प्राकृतिक परिघटनाओं को संस्था नहीं कहा जाता है। मानव सर्जित विश्व मतें ऐसी संस्थाओं की संख्या 134 है। अर्थात मानवीय जीवन की संचालक मोटर (Boosting Motor) ये 134 संस्थाऐं हैं। ये संस्थाएँ व्यक्ति और समूहों, चाहे वे किसी भी आधार पर एक हुए हो, की नियमित तय करती हैं। चूँहिक संस्थाएँ इसी समाज में से पोषण-भोजन, पानी, ऊर्जा, ग्रहण करके अपनी परिघटनाओं को बार-बार पैदा करती हैं इसलिए ऐसा लगता है जैसे संस्थाओं ने एक व्यक्ति या देवता का रूप धर लिया हो और हमें अपने अनुसार आचरण करने को विवश कर रही हों। जिस आचरण को हमें करना ही पड़ेगा उसे मैंने उस 'संस्था का विचार' कहा है। जिस आचरण को करने के लिए संस्थाएँ हमें प्रोत्साहित करती रहती है उसे मैंने 'संस्था का आदर्श' कहा है। आदर्श एक ऊँचा लक्ष्य है जो बहुत कम संस्थाओं को पूर्णता में हासिल हो पाता है कोशिश लगातार जारी रहती है। लक्ष्य प्राप्त होने से पूर्व बीच-बीच में, कभी-कभी, संस्थाओं के विचलन होते रहते हैं अर्थात् संस्थाएँ अपने 'विचार' से भी भटक जाती हैं और ऐसे कार्य करने लग जाती हैं (अर्थात् मनुष्य करने लग जाता है) जो न उसके लिए नियत हैं और न लक्ष्य। ऐसे कार्यों को मैंने 'संस्था का विचलन' कहा है। 'संस्था' नाम के वे प्रपंच अभूर्त, मानसिक, वायवीय, अभौतिक, नामरूप, गुणरूप होते है। ये जिन साधनों के माध्यम से प्रकट होते हैं उन्हें मैंने 'करण' और 'उपादान' कहा है। उपादान करण का भी करण अर्थात् 'उपकरण' होता है। यह किसी किसी संस्था में नहीं भी होता। काल के एक बिन्दु पर किसी देश विशेष या विशिष्ट मानव समूह में संस्था प्रकट होती है ओर कुछ काल बाद लुप्त (मृत्यु नहीं) या अदृश्य हो जाती है उसे मैंने संस्था की यपरिघटना' कहा है।

संसथाओं के ये पाँचों आयाम वैश्विक (Global) हैं। पूरे विश्व के प्रत्येक मानव समूह में (अण्डमान के जारवा, ओरी और अमरीश के अन्टेकों को छोड़कर) व्याप्त हैं इसलिए इन्हें यवैश्विक सामाजिकता के सार्व' कहा जाना चाहिये। मैंने शोधोत्तर अनुसंधान के दौरान इनकी गिनती की है। ये 134 हैं। मुझे लगता है हिक मुझसे पहले यह कार्य विश्व में किसी ने नहीं किया है। इन सार्वो को 'वैश्विक आचरण के नियम' भी कह सकते हैं। मैं इन्हें 'जीवन की आचार संहिता' कहता हूँ। आचरण के ये नियम मानवों के

किसी वर्गीकरण को नहीं मानते। इनकी व्याप्ति सब में है। सबको इनके अनुसार क्रिया में, कोशिश में या प्रतिक्रिया में आचरण करना ही है। अत: यह मनुष्य की 'नियति' (अर्थत् जो नियत है) का लेखन है।

इन 134 संस्थाओं के साथ मनुष्य का प्रशिक्षण उसके जन्म के बाद होता है। इनमें से कोई भी प्रपंच आन्तरिक रूप से परावर्तित नहीं होता और विश्व के किसी भी पशु में नहीं (कुत्ते और कौवे ने मनुष्य समाज में रहकर शायद एकाध चीजें सीख्यी हैं जैसे संग्रह, बुद्धि, गिनती आदि) होती। अर्थात् ये 134 संस्थाऐं ही मनुष्य को पशु से भिन्न बनाती है और ये ही प्रकृति और मनुष्य जीवन में अन्तर का आधार हैं। इन 134 संस्थाओं में मनुष्य जीवन अपनी पूर्णता में, प्रपंचपूर्ण अन्तर्विरोधों के साथ धड़कता है। अपनी सुविधाके लिए इन्हें आठ मोटे वर्गों में बाँटा जा सकता है। ये वर्ग हैं- 1. विवाह वन्य, इसमें 14 संस्थाएँ हैं। परिवार, पिता, माता, पुत्र, पीहर, मेहर, पति, पत्नी, विवाह, स्त्री कौमार्य, ससुराल, बेटी, दापा और दहेज। 2. समाज तन्त्रइसमें 15 संस्थाऐं है। जाति, गोत्र, शिक्षा, प्रक्रिया, ब्राह्मणगर्दी, नैतिकताएँ, व्यक्ति, पंच, पंचायत, कबीला, रसोई, जनस्वास्थ्य, प्रजाति, रंग, रीति-रिवाज और मेला। 3. मिथतत्भ- इसमें तेरह संस्थाएँ हैं। धर्म, सम्प्रदाय, ईश्वर, पुनर्जन्म, ईश्वरीय न्यायालय, देवत्व, राक्षसत्व, पूजा केन्द्र, आप्तपुरूष, ईमान, जादू, चमत्कार और सत्य की अपेक्षा। 4. अर्थतन्त्र- इसमें बीस संस्थाएँ हैं- मुद्रा, बाजार, उत्पादन प्रणाली, धन, पूँजी, कम्पनी, व्यवस्थापन, ऋण देना, ऋण लेना, वेश्य, कृषक, श्रमिक, चालक, खिलाड़ी, खाती, कुम्हार, मृत्यशुकर्मी, धातुकर्मी, वस्त्र और परिश्रमिक। 5. राज्य तन्त्र- इसमें बीस संस्थाएँ हैं- राज्य, राजा, सेना, सैनिक, कोष, कर, महापंचायत, पंच, दल, कानून, संविधान, पवित्रता, रानी, अधिकार, कर्तव्य, ग्राम, जनता, सत्ता, युद्ध और साहित्यकार। 6. व्यक्तित्व तन्त्र- इसमें 23 संस्थाएँ है- श्रृंगार, सौन्दर्य, फैशन, वाद, शर्म, जैविकमनुष्य, संस्कार, मूल प्रवृत्ति, मन, प्रेम, स्वास्थ्य, स्मृति, बुद्धि, स्पर्धा, प्रतिक्रिया, चरित्र, शर्त, अभिवादन, जिजीविषा, देह, साहस, आत्मसाक्षात्कार और गोपनीयता। 7. विज्ञान तन्त्र- इसमें 16 संस्थाएँ है- तथ्य, जिज्ञाषा, ज्ञान, विज्ञानसर्जन, प्रज्ञा, वैज्ञानिक, तकनीक, गति, सरदी-गरमी, अग्नि, ऊर्जा, समय, दिशाबोध, मौसम, जीवन और माप। 8. मानसिक सर्जन समूह- यह तेरह संस्थाओं का समूह है। ये संस्थाएँ अपने आप में स्वतन्त्र हैं अत: तन्त्र नहीं कह सकते। संस्कृति,सभ्यता, भाषा, लिपि, साहित्य, कला, नामकरण, गति, दर्शन, सुरता, ज्ञान, इतिहास और भविष्यवाणी। इस प्रकार मनुष्य जीवन में संचरित 134 संस्थाएँ है जो मनुष्य की नियति को तय करती हैं। प्रत्येक मनुष्य को इनके अधीन नाटक करना पड़ता है। इनका अतिक्रमण करना मनुष्य के वश में नहीं है। राजा, तानाशाह, दार्शनिक, क्रान्तिकारी, पैगम्बर, मसीहा, दुखमोचक, नेता, सत्ताधीश आदि जो मनुष्य का भाग्य बनाने, लिखने या नये तरीके से गढ़ने की बातें करते हैं वे भी इन्हीं 134 से संचालित हैं। चाहे क्रिया करके चाहे प्रतिक्रिया करके।

इस समझौते की व्याख्या दूसरे तरीके से भी की जा सकती है। पुरूष ने भोजन सामग्री का एकत्रीकरण और कठोर श्रम को स्वीकार किया। उसकी थकावट और कलाहीन प्रकृति ने मनुष्य को गतिशील प्रकृति प्रदान की जो गरम, सूर्य की प्रतिनिधि, आगरण से बचने के लिए केल्शियम की अधिकता से काव्य रंगधारक, सोडियम प्रधान भोजन आदि के लिए बाध्य करती है। दूसरी तरफ स्त्री ने एक स्थान पर बैठना स्वीकार किया, जो उसे जड़त्वपूर्ण पृथ्वी की प्रतिनिधि, शीतल, गोरा रंग, केल्शियम प्रधान भेजन, कलात्मक प्रकृति, नरम श्रम, ममता और करूणापूर्ण, कमविद्युत से शरीर का संचालन, दुखों से न घबराने वाला और गति विरोधी बनाती है। स्त्रियाँ आज भी सबसे ज्यादा सुकून अपने घर में प्राप्त करती है। वे बुद्धिविलास या शरीर थकाने वाले अनुत्पादक खेलों में भाग नहीं लेती बल्कि कलात्मक और सौन्दर्यवर्धक अनुत्पादक कार्य करना पसन्द करती हैं।

इन 134 संस्थाओं के विचारों, आदर्शों, करणों, उपकरणों, परिघटनाओं और विचलनों का वर्णन 'सामाजिकता के सार्व' में किया जा चुका है। इसलिए यहाँ उनका संक्षिप्त और तकनीकी वर्णन किया जायेगा।

इन संस्थाओं के वर्णन के बाद स्वाभाविक प्रश्न शेष रह जाता है कि जब संस्थाओं ने मनुष्य की भूतिमका तय कर दी तो मनुष्य और राज्य के लिए करणीय क्या है। जो करणीय है और संस्थाओं से उत्पन्न जो समझ या दर्शन उभरता हैउसे संस्थावाद कहा जा सकता है। संस्थाएँ मनुष्य के लिए उचित भूमिका एवं आदर्श भूमिका का निर्धारण करती है। संस्थावाद की परिभाषा तय करने के बाद यह देखा जाना आवश्यक है कि मुझसे पहले किसी ने संस्थावाद जैसी बातें कहीं हैं या नहीं? मेरे वर्तमान ज्ञान के अनुसार मार्क्स और मार्क्सवाद में प्रपंच या संस्था का कहीं भी उपयोग नहीं किया गया। इनके आयामों का चिन्तन भी लगभग नहीं है। इसलिए मार्क्स व्यक्तित्व और कला के रहस्यों को सुलझाने में फेल हुआ है। बहुत कुछ संस्थानों के पक्ष में चीनी दार्शनिक कन्फ्यूशियस का चिन्तन है। उसके उपदेश अनेक संस्थाओं और उसके आयामों को परिवेष्टित करते हैं। मेरे पास कन्फ्यूशियस का साहित्य अत्यल्प है। अधिक जानने की कोशिश की जायेगी। आस्तित्ववादी दार्शनिक ज्यापाल सार्य की शब्दों की बाजीगरी में कुछ संस्थावादी उलझन नजर आ जाती है। सार्य पश्चिम की स्वतंत्रता का भी व्यक्तिवादी माहौल में पैदा हुए और जीये थे इसलिए उनके शब्दों के कौशल में एक प्रकार की बाजीलगरी है। उनके कथन इस प्रकार हैं- हम हमारे कपड़ों में केद हैं इसलिए हम स्वतन्त्र है इनमें अँटे रहने के लिए। या हम रास्ते के दोनों किनारों के मध्य चलने के लिए स्वतन्त्र है। या नहीं अपने किनारों के मध्य बहने के लिए स्वतंत्र है। मनुष्य मान्य पैमानों में जीवन जीने के लिए स्वतंत्र है। ऐसी बाजीगरी के कुछ कारण थे एक तो वे पश्चिमी स्वतंत्रता के विरोध में कुछ कहना नहीं चाहते थे। दूसरे द्वन्दात्मक भौतिकवाद विश्व को समझने की उनकी प्रिय प्रविधि थी लेकिन साम्यवाद उन्हें पसन्द नहीं था। तीसरे वे स्पष्ट रूप से प्रपंचवादी समझ तक नहीं पहुँच सके थे।

प्रथम दृष्टया उक्त वाक्यों का कोई अर्थ नजर नहीं आता। नदी किनारों में बहने के लिए स्वतंत्र है तो उसकी गुलामी भी यही है। इन वाक्यों के अर्थ संस्थावाद के माध्यम से आसानी से समझ आ जाते हैं। संस्थाएँ अपने विचार को प्रयुक्त करवाती है तब भी एक आदर्श आदमी के सामने रख देती हैं। फिर भी मनुष्य यअपनी' कर बैठता है और संस्थाएँ उसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दण्ड दे देती हैं। यही हमारी स्वतंत्रता भी है और गुलामी भी। परन्तु सार्य संस्थावाद की एक अस्पष्ट सी झलक देख पाये। अध्ययन में विस्तार से विचार किया जायेगा। भारत में मनुस्मृति, विदुर नीति, चाणक्य नीति, कौटिल्य के अर्थशास्त्र आदि में ग्रन्थों में संस्थाओं के विचारात्मक या आदर्शात्मक आयामों पर उपदेश किये गये हैं इन्हें यथा आवश्यक देखा जायेगा। महाभारतकार ने संस्थाओं की प्रपंचात्मक उलझन को समझा था और उसका साहित्यिक गुम्फन भी अत्यन्त कलात्मकता से किया है वह चिन्तनीय है और प्रमाण बताने योग्यक भी। नागसैन की मिलिन्द पन्हों भी विचारणीय है। अवसर मिला तो इन सभी को संस्थावादी समझ से जाँचा जावेगा।

संस्थावाद को स्वीकार कर लेने के बाद विश्व में क्या परिवर्तन हो सकते है? मैं समझता हूँ कि विश्वविद्यालयों में विषय अर्थात् डीलक्षशलीं पढ़ाये जाने के बजाय प्रपंच पया संस्था अर्थात् Instution पढ़ाये जाने लगेगें। संस्थावाद अन्तिम रूप से शान्ति और संतोष का पोषण करता है अत: पूँजीवादी आपाधापी खत्म होगी। संस्थावाद विकास के बजाय सन्तोष का मार्गी है। संस्थावाद विश्व को द्वन्द्वात्मक नहीं मानता अत: बहुआयामी समझ विकसित होगी। संस्थावाद ईश्वर विहीन भौतिक विश्व को समझने में मदद करता है। संस्थावाद प्रकृति से इतर मानव जीवन के उद्देश्यों और सार्थकता की तलाश करता है। इस अध्ययन में मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों पर विचार किया जायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दर्शन के सौ वर्ष, जॉन पेसमोर, पृ. 81, संस्करण 1987.
2. दर्शन कोश, प्रगति प्रकाशन, मास्को, 1980
3. विश्व के प्रमुख दार्शनिक, वैज्ञानिक तथा तकनीकि शब्दावली आयोग, 1991.

****

मृच्छकटिकम् का वैशिष्ट्य एवं दृष्टिकोण

डॉ. आशा उपाध्याय *

प्रस्तावना – संस्कृत साहित्य में नाटकों का अपना विशिष्ट स्थान है । संस्कृत नाट्यसाहित्य में वैसे तो एक से एक सुन्दर रूपक है पर महाकवि शूदक कृत मृच्छकटिकम एक निराली कृति है। इसमें एक साथ प्रणय कथात्मक प्रकरण, धूर्तसंकुल भाषा, तथा राजनीतिक नाटक का वातावरण दिखायी देता है। यह एक ऐसी अकेली रचना है जो अपने समय की मध्यम वर्ग की सामाजिक स्थिति को पूर्ण रूप से प्रतिबिम्बित करती है। मृच्छकटिक के नाटकीय संविधान, शैली भाषा और विशेषत: उसकी प्राकृत के आधार पर यह निश्चय ही कालिदास के बाद की रचना है।

कालिदास के 'अभिज्ञानशाकुन्तलम' विशाखदत्त के मुद्राराक्षस और संस्कृत शूदक के मृच्छकटिकम अतिरिक्त के सभी नाटकों में घटनाचक्र सामान्य है पर मृच्छकटिक की सफलता और प्रसिद्धि का यह भी कारण है कि घटना की प्रगति तीव्र होती हुई दिखायी गई है। नाटक में प्रमुख वस्तु व्यापार अभिनय के द्वारा आगे बढ़ता हुआ दिखाया गया है।' प्रकरण की दूसरी विशेषता है कौतूहलवृत्ति अथवा जिज्ञासा में रुचि। यह भी सफल नाटक के लिए बड़ा आवश्यक है। मृच्छकटिक की यह विशेषता है कि इसमें आकांक्षा निरन्तर तीव्र होती जाती है।'

यह संस्कृत का अकेला यथार्थवादी नाटक है। कालिदास के के अभिज्ञानशाकुन्तलम और भवभूति के उत्तरनामचरितम् में काव्य और भावना का सुन्दर वातावरण मिलता है। कठोर जीवन की वास्तविकता देखने को नहीं मिलती। इसके विपरीत मृच्छकटिक में जीवन के पग पग की कठिनाइयों के साथ काव्य और भावना का उदात्त वातावरण भी देखने को मिलता है। सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु विषय बाहुल्य के साथ पात्रों की भी अधिकता है। इसमें प्रदर्शनीय तत्वों की अधिकता है। विट ने अभिसार रूप में जाने वाली वसंत सेना के सम्पूर्ण शील की बड़ी सुन्दरता से चित्रण किया है। 'अपघ्ना लक्ष्मी'[1] कहकर वसंतसेना के उत्फल्ल सौन्दर्य को, अनंग की ललित प्रहरण कहकर सौन्दर्य की आक्रामकता, कुलांगनाओं का शोक कहकर रूपश्री विवाहित पुरुषों को जाल में फंसाने की अद्‌भुत क्षमता की मदन वृक्ष की कुसुम कहकर सौन्दर्य की सुकुमारता की तथा रति समय लज्जा प्रणयिनी कहकर गणिका वसंतसेना की मोहक माधुरी की अभिराम व्यंजना[2] की गई है। इसकी वह विशेषता है कि इसमें प्रेम कथा के साथ राजनीतिक षड्यंत्र भी सम्मिलित हो' इसमें समाज के सभी वर्गो से चुने हुए पात्रों का समावेश है। यदि एक और धर्मपरायण ब्राह्मण और पतिपरायणा साध्वी महिला और पवित्र भिक्षु के दर्शन होते हैं तो दूसरी ओर पतित, चोर, ब्राह्मण, गणिक और पापी शकर भी है जो सच में अरुचि के पात्र है। चरित्रों का ऐसा वैशिष्ट्य अन्य नाटकों में देखने को नहीं मिलता।' मृच्छकटिक के के पात्र व्यक्तिगत रूप से पृथक पृथक अपना अस्तित्व परखते हैं। मृच्छकटिक में प्रहसन और विषाद एवं सरलता और कुटिलता का अद्‌भुत संयोग है।'

मृच्छकटिक के पात्रों में प्रमुख नायक चारूदत्त धीर प्रशान्त है। यह जन्म से ब्राह्मण पर कर्म श्रेष्ठी वह कुलीन, सभ्य एवं सच्चरित्र है। त्याग की सजीव वह निर्धन हो गया है, हो चिन्ता तो इस बात की है कि उसे निर्धन समझ कर उसके सुबत् भी सौहार्द में शिलि दिखाते हैं। वह उच्चमध्यम वर्ग के चित्र को उपस्थित करता है। साहित्य और संगीत कला में उसकी खा़ि रुचि है ।

कथावस्तु की दृष्टि से विचार करने पर भवभूति के मालतीमाधव एवं उत्तामरामचरित नाटकों में दोषपूर्ण विस्तृत वर्णन की उपलब्धि होती है पर मृच्छकटिक इस दृष्टि से निर्दोष है। क्योंकि उसमें विशद वर्णनों का अभाव नाटकीय प्रवाह में बाधक नहीं होता है।[3] काव्य सौन्दर्य के विचार सभी यह उत्तम कृति है। संस्कृत नाटकों में प्राय: अन्तितियों एवं सुख पर्यवसायी नाटकों के उपयुक्त वातावरण का अमान है पर मृच्छकटिक में ऐसा नहीं है।' संस्कृत के सभी नाटकों में प्राकृत भाषा का प्रयोग – उपलब्ध होता है पर ऐसा कोई नाटक नहीं जिसमें सभी प्रकार की प्राकृत भाषाएं हों।[4] मृच्छकटिक प्रकरण वस्तु एक नई परम्परा प्रचलित की पर आगे वह स्थिर न रह सकी)' इसमें पुरातन नाटकीय परम्पराका त्याग स्पष्ट है। आज के जगत की वास्तविक चित्र है। इसमें भारतीय समाज की त्रुटियों का दिग्दर्शन कराते हुए शूद्रक ने सुधारात्मक दृष्टिकोण से समस्याओं का समाधान प्रस्तुत– किया है।

भरत के नाट्यशास्त्रीय विधान के अनुसार प्रकरण में लौकिक वृत्त होना चाहिए पर संस्कृत के नाटककारों ने इतिहास एवं पुराण का आश्रय लेते हुए लौकिक जीवन का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। मृच्छकटिककार ने इस काल्पनिक तथा आदर्शात्मक नाट्य परंपरा में चारूदत्त और वसन्त सेना की प्रेम कहानी को ऐसे ढंग से चित्रित किया है। जिससे लौकिक जीवन का यथार्थवादी वातावरण बना रहे।

विषय चयन के साथ विषय निरूपण भी मृच्छकटिक में निराला है। भास से प्रेरित होकर शूद्रक ने ऐसी स्फूर्ति और साहस दिखा है जिससे परंपरा का विरोध स्पष्ट झलक रहा है। नाट्यकला के नियमों का प्राय: उल्लंघन, राजपथ पर जुआरियों की लड़ाई, तृतीय अंक में संधिच्छेद का साहसपूर्ण कार्य, छठे तथा नवम अंक में वीरक, चन्दनक एवं शकार विदूषक का परस्पर संघर्ष, आठवें अंक में वसंतसेना का कंठनिपीडन एवं अन्तिम अंक में चितारोहण का भयानक एवं कारूणिक दृश्य संस्कृत रंगमंच के लिए

* व्याख्याता (संस्कृत) से.मु.मा. राज. कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

सर्वथा नवीन है।

शूद्रक अपने संसार का एकमात्र स्वामी है वहाँ कालिदास अथवा भवभूति द्वितीय श्रेणी के नागरिक समझे जायेंगे।[5] संस्कृति के अन्य नाटककार समाज के जिस चित्र को प्रतिबिम्बित न कर सके वहाँ यह सिद्ध कर दिखाया कि कला कला के लिए नहीं वरन कला के लिए है। इसी से वह सभी से अद्‌भुत है। औरों की जीवन भाँति वह काव्यरूपी कलेवर के प्रसाधन में नहीं जुटा रहा उनके अन्तरूकरण में तो एक चाह थी और वह थी काव्य-रूपी शरीर के अन्तर्गत उसकी जीवात्मा को ठीक से पहचानना अन्त में यह कहना सर्वथा उपयुक्त होगा कि मृच्छकटिक के अनुपम कथानक में मानव जीवन का वास्तविक चित्र वर्ग की परिधि को छिन्न भिन्न करके प्रस्तुत है। इसमें मानव को नहीं वरन मानवता को महत्तव दिया गया है।' यदि संस्कृत में नाटकों का वैशिष्ट्य है तो मृच्छकटिक से संस्कृत का वैशिष्ट्य है। प्राकृत भाषाओं की विभिन्नता यदि एक ओर भावात्मक एकता व्यक्त कर रही है तो दूसरी ओर प्रसादगुणपूर्ण संस्कृत की भावमयी सूक्तियाँ इसके माधुर्यपूर्ण सौन्दर्य की सहगामिनी है।'

संक्षेपत: मृच्छकटिक की चरित्रगत विशेषताएं एवं वस्तु निन्यास निराला है। घटनाओं की विविधता और भावों की रोचकता भी अनुभवगम्य है। नाट्यशास्त्रीय परम्परा के अनुरूप संस्कृत रंचमंच पर विशुद्ध यर्थार्थवाद कभी प्रस्तुत नहीं किया गया पर मृच्छकटिक ने इस मर्यादा को तोड़कर वास्तविक चित्रण किया है। मृच्छकटिक प्रकरण के विषय में कहा गया है - 'प्रस्तुत प्रकरण सामाजिक एवं कलात्मक चुनौतियों का नाटक है।'[6]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मृच्छकटिकम् - शूद्रक - 5.12
2. मृच्छकटिकम् - 5.15
3. मृच्छकटिकम् - 1.13
4. डॉ. रमाशंकर तिवारी : महाकवि शुद्रक
5. डॉ. रमाशंकर तिवारी : महाकवि पृ. 402
6. सी.आर. देवधर, चारूदत्त : पृ.-51

****

Effect of some selected Agrochemicals on germination of *Abelmoschus esculentus* (Linn) Moench.

Dr. Indu Bala Soni *

Abstract - The paper reports the effect of some selected agrochemicals (2, 4-D, McPA, TCA, Dalapon, Tribunil, NaF and $NaClO_2$)on the germination behavior of a vegetable crop *Abelmoschesculentus* (Linn.) Moench. All the substances tried reduced the germination percentage and the effect was less severe under dark incubation. In respect of the germination inhibitory capacity the various agrochemicals tried (on the basis of the germination percentage recorded at 2000 ppm conc.) may be arranged in the following order:- Dalapon> 2, 4-D > TCA = McPA>Tribunil>NaF> $NaClO_3$.

Introduction - The main problems that face mankind today are ecological. In particular, ways must be found to increase biological productivity. Such a problem is being affected profoundly by the chemical revolution of agriculture, which has occurred during the past quarter of the eentury. Man has been efficient in developing the methods of weed control, which is a process of limiting weed infestation, balanced with less probable injury to the crops (Khinchi*et al* 1982). With the discovery of the great herbicidal potential of chlorophenoxy compounds, chemical weed control has progressed at an accelerating rate. The weeds and crops do not differ much in their physiology. The recommendations which form the basis of any herbicide to be sold in the market are weed based and not crop based. An application of herbicide may adversely affect the physiology of germination and subsequent growth of crop species (Shakirullah*et al*, 2016). In view of this the present study was conducted.

MATERIAL AND METHODS: Freshly packed seeds of *Abelmoschus esculentus* (Linn.) Moench variety PusaSawani were used in this study. Germination of seeds was tried in sterilized petri dishes lined with a single layer of filter paper. The filter papers were kept moist by periodical addition of distilled water. The seeds were imbibed in distilled water or test solution (in dark at 30 + 1°C) for 8 hour.

Agrochemicals tried in the present study were 2, 4-D (2, 4-dichlorophenoxy acetic acid), McPA (4-chloro-2-methyl phenoxy acetic acid), ICA (Trichloro acetic acid), Dalapon (2, 2-dichloro-propionic acid), Tribulin. (N-2-benzothiazoyl) N-methyl urea), Sodium fluoride and Sodium chlorate.

The seeds were incubated at 30 + 1°C under light as well as dark. The source of light was a bank of two incandescent bulbs of 60 watt fixed at a distance of 30 cm from the dish level. The energy of light as recorded at the dish level by a radiometer was 2:6 $ergs/mm^2/sec$. Emergence of the radicle from the seed coat was taken as a criterion of seed germination. The germination was recorded daily for a period of 7 days. The values are presented, as average of ten replicates of 20 seeds each.

RESULTS AND DISCUSSION: From the pilot experiments it was observed that the seeds of *A. esculentus* had hundred percent viability and that they were light indifferent, since under both light and dark conditions hundred percent germination was recorded in a period of 7 days Further that these seeds required a eight hour duration of soaking and incubation temperature of 30 + 1°C.

Data on the effect of different concentrations (1 ppm-2000 ppm) of various agrochemicals on the germination of *A.esculentus* seeds have been recorded in table 1. It was observed that in all the agrochemicals tried the inhibitory capacity was less severe under dark incubation. Of the seven agrochemicals tried the four that is TCA, Dalapon, Sodium fluoride and sodium chlorate could not inhibit the germination in these seeds upto their concentration of 25 ppm. Of these four sodium chlorate could not show any inhibitory effect (in dark) even upto its maximum concentration (2000 ppm) tried.

In respect of their inhibitory capacity the various agrochemicals tried (on the basis of the germination percentage recorded at 2000 pm concentration) may be arranged in the following order:

Agrochemical	Dalapon>	2,4-D>	TCA =	McPA>
Germination %	0	50	60	60
	Tribunil>	NaF	NaClO3	
	75	90	95	

The control of weeds by herbicides has gathered such a momentus that the quality of its consumption is being taken as the index of the agricultural development of a country. With such an advancement certain unwilling problems are liable to creepin. The agricultural land is an ecosystem and the addition of such man made substances can alter the balance and can disturb the cycle by affecting the components. The role of herbicides is thus no less than any other pollutant (Dubey and Mall, 1972).

*Associate Professor (Botany) Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA

It has been reported that on account of herbicidal treatment during germination, the activation of proteases, amylase, phosphatase and peroxidase is inhibited (Sen, 1977). Correlation between the effect of 2, 4-D on germination and proteolytic enzymes suggests that the effect on mobilization of stored protein is not solely responsible for the inhibition of germination (Ashton *et al*., 1968).

Table 1 (see below)

Growth inhibition effect of 2, 4-D has been reported by Kezeli*et al*(1973) and this fact has been related to change in nucleic acid and protein metabolism, induced by the application of 2, 4-D (Shannon et al, 1964). This view is also supported by Vyas and Garg (1974).

The retarding effect of sodium fluoride and Dalapon as observed in the present case was well expected since these substances have been reported to be potent respiratory inhibitors (King, 1966; and Audus, 1976). In addition to this Namdeo and Dubey (1973) have demonstrated that Dalapon decreases the proteinase activity. Sharma (1980) while working with Phalaris minor an important weed of wheat crop has reported Tribunil to be least effective in inhibiting the germination of the seeds of this weed. On the contrary in the present study 2, 4-D has been found to show a very serve effect on the germination of *Abelmoschus esculentus* seeds.

References;-

1. Ashton, F. M., Penner, D. and Hoffman, S. 1968. Weed Sci., 16: 169-171.
2. Audus, L. J. 1976. Herbicides. Academic Press, London.
3. Dubey, P. S. and Mall, L P. 1972. Pans 18 (6) : 443-444.
4. Kezeli, T. A., Guamichava, N. R., Tarashashvili, K. M. and Piranishvili, N,S.1973. SoobshchAkad. Nauk. Gruz. SSR. 69 : 145-148.
5. Khinchi, S. P., Chauhan, G. S. and Upadhyaya, S. D, 1982. In Advance in Environmental Research. Ed. S. K. Agarwal, I. E. O., Kota, 71-78.
6. King, L. J. 1966. Weeds ef the World, Biology and Control, Wiley Eastern Pvt.Ltd., New Delhi.
7. Namdeo, K. N. and Dube, J. N. 1973. Soil Boil. Biochem. 5: 855-859.
8. Sen, D, N. 1977. In “Environment and seed germination of Indian plants”. The Cronica Botanica Co.
9. Shahnazdawar, *et al.* 2008. Effect of seed coating material in the efficacy of microbial antagonists for the control of rot fungi on Okra and sunflower. Pakistan Journal of Botany. 40(3): 1269-1278.

Table 1: Per cent seed germination of *Abelmoschusesculentus* under light and dark incubation.

S.	Agrochemicals	Concentration of Agrochemicals (ppm)									
		1	5	10	25	50	100	250	500	1000	2000
	LIGHT										
1.	2, 4-D	90	90	84.6	80	75	70	64	60	55	50
2.	McPA	80	76	72.4	70	68.4	65	65	64.6	62.6	60
3.	TCA	100	100	100	100	100	100	80	72.4	65	60
4.	Dalapon	10	100	100	100	60	58.3	50	45	20	0
5.	Tribunil	100	100	95	90	88.4	85	82.4	80	76	75
6.	Sodium fluoride	100	100	100	100	96.6	94.6	92.4	90	90	90
7.	Sodium chorate	100	100	100	100	100	100	100	100	96	95
	DARK										
1.	2, 4-D	95	90	86	80	75	72.6	70	68.4	65	60
2.	McPA	90	88.4	86	85	83.3	80	78.4	76	75	75
3.	TCA	100	100	100	100	100	100	90	80	73.3	65
4.	Dalapon	100	100	100	100	75	70	66.6	60	50	0
5.	Tribunil	100	100	100	100	95	93.3	90	86.6	85	80
6.	Sodium fluoride	100	100	100	100	100	100	100	96.6	95	95
7.	Sodium chorate	100	100	100	100	100	100	100	100	100	100

****

जनभाषा में सांस्कृतिक अस्मिता के संदर्भ

डॉ.अनुपमा सक्सेना*

प्रस्तावना – 'भारत की परम्परा विभिन्न संस्कृतियों का समन्वय है, संघर्ष नहीं। यही परम्परा भाषा में विद्यमान है।'

पृथक्-पृथक् स्थितियों और परिस्थितियों के कारण एक जाति दूसरी जाति के संपर्क में अवश्य ही आती है और उनके बीच बहुत स्तरों पर संबंध भी स्थापित होते हैं। किन्तु विभिन्न जातियाँ अपनी भाषा संस्कृति, रीति-नीति, आचार विचार के संवर्द्धन और सुरक्षा के प्रति न केवल अधिक सचेत होती है अपितु अपनी विशिष्टता बनाए रखने पर उनका विशेष आग्रह भी रहता है। भाषिक समुदाय छोटा या बड़ा दोनों ही प्रकार का अस्तित्व रखता है। निघंटु पाणिनि, पतंजलि, थैंक्स और सस्यूर के समय से अद्यतन भाषा की उत्पत्ति, विकास और परिवर्तन संदर्भित होता आया है। किन्तु, भाषा अपनी मंथर गति से इस प्रकार यात्रा कर रही है कि किसी विचार या मान्यता को स्थिर ही नहीं होने देती। स्वन (ध्वनि) शब्द रूप वाक्य और अर्थ मिलकर भाषा बनाते है और देशकाल, जलवायु के साथ इनका विकास अपरिहार्य है।

स्वन के उच्चारण परिवर्तन में समाजिक परिवेश की महती भूमिका होती है। स्वन युग्मों को समाज से अर्थ मिलता है। कठिन से सरल की ओर प्रवृत्त होने की मानवीय प्रवृत्ति व्याकरणिक व्यवस्था में भी दृष्टिगत होती है। शब्द के मूल अर्थ को विस्तार देना, संकुचित करना, यहाँ तक कि पूर्णत: परिवर्तित तक करने की क्षमता समाज में निहित होती है। इसी का दूसरा पक्ष यह भी है कि भाषिक समुदाय विशेष की सामाजिक, सांस्कृतिक विभिन्नता का पता देने वाली भी भाषा ही होती है।

हिन्दी क्षेत्रीयता और भाषा समुच्चय के अर्थ में अन्य भाषाओं से पृथक् है। विभिन्न प्रकार के सामाजिक-सांस्कृतिक संपर्क के लिए जो लोग इसका उपयोग करते हैं, वे हिन्दी या हिन्दुस्तानी हैं। संस्कृत से प्राकृत, प्राकृत से अपभ्रंश और अपभ्रंश से उत्तर भारत की आधुनिक भाषाएँ विकसित हुई। इन आरम्भिक मूल भाषाओं में प्रादेशिक निष्ठा के अभाव में जातीय भाषाओं में यही निष्ठा बढ़ी। फलस्वरूप जातीय भाषाओं ने संस्कृत और अपभ्रंश से बहुत कुछ लिया। हिन्दी ने अपभ्रंश की विरासत को सर्वाधिक ग्रहण किया। अनेक बोलियों और भाषाओं का समुच्य होते हुए भी हिन्दी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति एवं रूपविधान के वैविधय में भी जातीय एकसूत्रता से जुड़ी हुई है, साथ ही सांस्कृतिक अस्मिता को जनभाषा के रूप में संदर्भ सहित व्याख्यायित करती है। इसकी सर्वमान्य स्वीकृति इसकी जातीयता स्वत: सिद्ध करती है। इसके अन्तर्विरोध भी इसे प्रादेशिकता की संकीर्णता में नहीं बंधने देते। सहिष्णुता, प्रदेश निरपेक्षता, विशिष्ट बौद्धिकता और गहरी राष्ट्रीयता जैसे गुणों का केन्द्र होने के कारण इस पर राष्ट्रीयता व सांस्कृतिक एकता निर्भर करती है।

वस्तुत: नवजागरण का बहुत कुछ दायित्व दो संस्कृतियों की टकराहट में अपनी अस्मिता की पहचान में है। भारतीय नवजागरण से सम्बद्ध महापुरुषों, राजा राममोहनराय से महात्मागांधी तक, ने अपनी अस्मिता की प्रतिष्ठा तथा जनता की जागरूकता के लिए भारतीय संस्कृति का आधार ग्रहण किया। नि:संदेह अपने यहाँ काल का एक सातत्य (Continuous) है। इसी कारण हिन्दी एक ओर जहाँ भारतीयों की अस्मिता का प्रतीक बन गयी वहीं दूसरी और मानवीय मूल्यों की भाषा के रूप में भारतीय धर्म और संस्कृति की संदेश वाहक भी बन गई।

आत्मचेतस का भावतो संपूर्ण भारतीय नवजागरण में प्रवाहित है, जो भारतीय अस्मिता और सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान है। भारतेन्दु ने इसी आत्मचेतस को समष्टि चेतरा की ओर उन्मुख किया। खड़ी बोली का अस्तित्व न संस्कृतनिष्ठ हुआ न उर्दूपरस्त, क्योंकि भाषा का निर्माण तो कदाचित् संभव ही नहीं है। भाषा तो सामाजिक परिवेश तथा सामाजिक आवश्यकताओं, समाज विशेष की संस्कृति और संस्कार तथा मान्यताओं और परम्पराओं के बीच पुष्पित-पल्लवित होती हुई अपनी राह पर बढ़ती है। यदि ऐसा नहीं होता तो आज तमाम प्रयासों के बावजूद भी 'हिंगलिश' की आवक और प्रचलन को प्रतिबंधित करना लगभग असंभव नहीं होता ।

भारतीय संस्कृति के समान ही उसकी द्योतक बन चुकी हिन्दी भी उदारता के गुण के साथ बहता पानी 'निर्मला' को चारितार्थ करती है। दूसरी संस्कृतियों के आगमन से उनकी भाषा के आगमन को पृथक किया जाना असंभव है। ऐसे में समन्वय का सिद्धांत सर्वोपरि है। किसी के चाहने और न चाहने से परे शब्दों का समायोजन लगभग अप्रभावित रहता है। भारत में आने वाली संस्कृतियाँ यदि अपने शब्द हमारे यहाँ लेकर आई हैं तो आज भारत से जाने वाले लोग अपने साथ भारतीय संस्कृति और अपनी भाषा ले भी जा रहे हैं। हमारा अपनी भाषा के साथ अपनी संस्कृति से प्रदूषित होने के लिए चिंतित होना स्वाभाविक है किन्तु एक दूसरा पक्ष यह भी है कि हिन्दी के माध्यम से आज भारतीय संस्कृति विश्व से पुन: प्रतिष्ठित होने की राह पर निरंतर अग्रसर है। प्रगति के लिए परिवर्तन आवश्यक है और प्रतिष्ठा के लिए उदारता और सहिष्णुता अपरिहार्य है। अन्य भाषा से परहेज करने वाली भाषा कुण्ठित होकर लुप्त हो जाती है कदाचित समन्वय और उदारता के चलते ही हिन्दी आज विश्व की चीन के बाद दूसरी सबसे बड़ी भाषा बन चुकी है। विश्व में हिन्दी भाषियों की संख्या साठ करोड़ है। हिन्दी में विश्व समाज समाहित है तो हिन्दी पूर्णत: वैज्ञानिक और व्याकरण संगत भी है और विश्व में अब वही भाषा सर्वोपरि होगी जो यह दोनों शर्तें पूरी करती हो। जिस भाषा की प्रधानता होगी उसकी ही संस्कृति प्रधान होगी और दूसरी संस्कृतियों का समावेश हर आयाम पर उसी में होगा, जैसा कि

* व्याख्याता (हिन्दी) राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

होता आया है।

वस्तुतः भाषा और संस्कृति दोनों का अपना-अपना कार्यक्षेत्र होते हुए भी दोनों अन्योन्याश्रित है। सांस्कृतिक अस्मिता जनभाषा में ही निहित होती है और सांस्कृतिक सुदृढ़ता जनभाषा से अभिव्यक्त होती है। संस्कृति के वटवृक्ष की जड़े भूमि के अंदर जहाँ संस्कारों को मजबूती से पकड़े रहती हैं वही उसकी शाखाओं की जड़ें जनभाषा के रूप में उसके संदर्भों को अभिव्यक्ति देती है। भारतीय संस्कृति का वटवृक्ष जितना प्राचीन और विशाल है उतने ही गहरे और समृद्ध उसके सांस्कृतिक अस्मिता के भाषायी संदर्भ है। संस्कृतियों की टकराव अंततः समन्वय पर ही समाप्त होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Woman Perspective in Urdu Literature

Dr. Arshad Siraj*

Abstract - After Independence Hindu-Muslim culture started to lose its commonalities, with the change inthe physical and cultural dimensions of both countries along with the religious and political biases.This resulted in a change in themes and styles in the world of Urdu literature. Since Urdu literaturedivides into two channels, in the aftermath of Independence, the focus of the research is Pakistaniliterature, and particularly Pakistani novels.

Female characters portrayed in "Murat-ul-Uroos" are the hallmark of Muslim culture and that isthe sole reason for their inclusion in this study. Since Independence was responsible for thebifurcation of the two cultures, literature written in India — in the post partition era — could notbe made a part of the study. Another and more important reason for the exclusion of such literaturewas the fact that it would not have been in the scope of this study to include female charactersfrom two different cultures. The common culture that developed side by side in the two countrieshas been taken as the backdrop for the study and comparison of female characters.Female characters in folklore and dastaans and in the changing social order are well depicted in the Urdu fiction.
Keywords- Literature, Perspective, Fiction, Poetry, Shayri.

Introduction - Some of the top female Urdu writers/novelists in Pakistan at present include BanoQudsia, Umera Ahmed, and FarhatIshtiaq. These writers have gained widespread recognition for their contributions to Urdu literature and have won numerous awards for their work. They are known for their ability to tell compelling stories that resonate with readers and tackle important social issues.

There are many notable female poets in Urdu literature, some of whom are:

1. Parveen Shakir
2. Kishwar Naheed
3. Fahmida Riaz
4. Ada Jafri
5. Ishrat Afreen

These poets, among others, are deserving of the title "female poet" because they are women who have written poetry in the Urdu language. Despite facing societal barriers and discrimination, they have overcome these obstacles to express themselves through poetry, often exploring themes related to gender, identity, and social justice.

Their contributions to Urdu literature are significant and have helped to expand the cultural and literary landscape of the language. Their work is celebrated for its artistic value as well as its importance in representing the experiences and perspectives of women in Urdu-speaking communities.

The first woman to write in Urdu was probably MukhtarBai. She was a poet and the sister of poet AltafHussainHali. MukhtarBai gained recognition for her poetry during the late 19th century.

As for the first woman poet in Urdu, the distinction is often attributed to MahLaqa Bai Chanda. She was a renowned poetess who lived in the 18th century in Hyderabad, Deccan (now part of present-day India). MahLaqa Bai Chanda was a prolific writer and a prominent figure in the literary circles of her time, known for her elegant Urdu poetry.

It's worth mentioning that the history of women's contributions to Urdu literature spans centuries, and there were likely many other women writers and poets who made significant contributions to the language throughout its development. The individuals mentioned here are notable figures in the early history of women's engagement with Urdu literature.

In Urdu literature, The Story of Amir Hamaz retains an exceptional status. But it is also true that in the second half of the nineteenth century, the British Raj's newly expanded administration, which preceded the introduction of Western education and of modern industry, had a huge influence.

This inspired Urdu writers to discuss women's rights, education, and freedom from the veil. These writers rejected men and women's prescribed gender roles.Among these, two important names are Sajjad Haider Yaldram and Mirza Azeem Baig Chughtai. Sajjad Haider Yaldram was among the first Urdu writers whose goal was to bring equality to women. In his stories, women defy their prescribed gender roles and are seen shirking the veil, receiving modern education and participating in mixed gatherings. Perhaps he got these ideas from his wife, Nazar Sajjad Haider, who wrote novels with female characters who rejected their prescribed gender roles.

***Lecturer & HOD (Urdu) SK Govt. College, Sikar (Raj.) INDIA**

When it comes to rebelling against gender expectations, no name is more important than Azeem Baig Chughtai's. He personified women in a new way. His women lived in a beautiful world based on gender equality, who were educated and had brilliant minds, who took in air side by side with men, as companions.

In his famous novel, Shahazoori, there is a female who is illiterate and lower class, but who is nonetheless fully conscious of her rights. The heroine of Shazhazoori defies ancestry, class status and male dominance with such vehemence that there is none like her in Urdu literature. Such characters—who disrupt the traditions of male and female gender roles and turn them on their heads—had never been created before, and this too from a man's pen. At the end of the nineteenth century, RashidaAlnasa's novel showed men and women with slightly distorted gender roles, but from the beginning of the twentieth century, Saghara Humayun Mirza, Nazar Sajjad Haider, Walda Afzal Ali, Mrs. Hijaab Imtiaz Ali, and many other female writers came to the fore. Many of them defied prescribed gender roles in their creations and shocked readers.

With publication of Angare (embers) began the Urdu Progressive Writers movement, which gave us the work of Premchand, Krishan Chander, Doctor Rasheed Jahaan, Ismat Chughtai, Azeez Ahmed Baidi, Manto, Qara Alaiin Haider, Ahmed Nadeem Qasmi, Khadija Mastoor, Hajrah Maroor, Shaukat Siddiqui and other very important names.

While these writers portrayed traditional gender roles, they would also write rebellious male and female characters who deviated somehow or another from norms and traditions. Among these writers, Sadaat Hasan Manto and Ismat Chughtai's names are key. Both wrote stories that defied gender roles exposing society's hypocrisy. Ismat Chughtai's stories, on one hand, include female characters who are financially independent, such as those in her novels Crooked Line and Innocence. These women move within the labyrinth of the film world, where old gender traditions are forgotten. Jeelani Bano and Wajida Tabussum also tore down gender roles in their work.

If Quratulain Hyder included some traditional gender roles in her stories, she also wrote modern, educated and independent women, like Sita Marchandaani in Sita Haran and Chumcha Ahmed in River of Fire, as well as the heroine of Autumn's Voice. Rejecting tradition, she determines her own new gender roles.

In the last fifty years, new names have come to the fore in Urdu literature. In the wake of India's partition, hundreds of thousands were uprooted, murdered and massacred, impoverished and without livelihood.. Women were violated. Western civilization had space to invade, and in its wake came sexual aggression. In cities there was sectarian violence, political repression and stringent ideological and religious prejudices. All this gave Urdu writers a wide variety of topics, which they each took on in their own style.

There were both men and women among these writers. Many have written stories about men and women that reflect traditional gender roles, but some of the stories and novels have examples of men and women deviating partially or entirely from tradition.Literature illustrates the temporal and physical realities of its context: it is not possible that society's traditional gender roles would change and literature would go on as though nothing had happened. In Urdu literature, a clear change is occurring, reflecting the changing relationships between men and women in our society.

Objectives of the Study: To focus on the woman perspective in Urdu literature.

Related Literature Review

'It was in the second half of the nineteenth century, especially after 1857, that Indians embarked on a systematic reinterpretation of their culture. This phenomenon was even more pronounced in the case of IndianMuslims, who had recently lost their political supremacy and had to dealwith a brand of Western literature which was rather hostile towards Islam. One of the most evident examples of thereaction among Muslims was the emergence of Islamic Modernism, amovement led by Sir Sayyid Ahmad Khan. Among the points at issue, inthe context of Modernism, the status of women gained increasing importance and, although Sir Sayyid himself cannot be considered a staunchadvocate of female education, some of his supporters felt a deep urge forrenewal. Among these intellectuals Mumtaz'Ali holds a special position,not onlybecause of the work he carried out in the field of women's journalism, but also because he wrote Tahzibu'n-Nisvan (Women's Rights),published in Lahore in 1898, a particularly important title in the categoryof "literature addressed to women.'[1]

'Reading Urdu-language fiction contributed to the development of a young Muslim girl's sense of self, as she was growing up in the 1920s in a scholarly, religious family of illustrious ancestry but relatively modest means. In an unpublished memoir the author tells of her childhood passion for reading popular Urdu novels. She identified with female characters who retained the traditional feminine virtues while also acquiring modern educations and pursuing professional careers. These novels helped her to construct a sense of the kind of person she wanted to be and what she wanted to do with her life, as well as to come to terms with ongoing distressing issues in her own family for which she could find no solution in the real world[2].

'The major writers to write as a women appeared before and soon after independence of Pakistan. Among these personalities, AdaJafri is a first writer who wrote of her experiences as a wife and a mother in a modified traditional idiom. She has beenfollowed by Zehra Nigah, who attempts to portray a desire for a degree of equality of emotional expression in women'srelationships. The two most influential and important women poets who have written deliberately are Kishvar Naheed and Fehmeedah Riyaz, both of whom started writing in the sixties. A younger generation of women writers such as Parveen Shakir,Bano Qudsia and many more took their cue from these predecessors, but more

closely examined the subtleties of human andsocial relations in their writings. This information on Urdu literature would not only create the journalism consciousness among the women, but also open a wide range scope for them to participate in practical lives..[3]

'Hindi novelist Munshi Premchand's Sevasadan (1917) (The House of Service) critiques the institution of marriage, much like the Bengali widow remarriage novel Kishnakanter Uil (1878) (Krishnakanta's Will) by Bankimchandra Chatterjee and Charitraheen (1913) (Characterless) by SaratchandraChatterjee. Sevasadan draws on Urdu educational reform novels such as Nazir Ahmad's Fasana-e-Mubtala (1885) (The Story of Mubtala) and M.H. Ruswa'sUmraoJaan Ada (1899) to evoke an alternative triangulation of sexuality, respectability, and femininity through the figure of the courtesan. However, reformist and nationalist anxieties about women's sexuality prevent her from becoming a viable alternative. The novel then espouses a specifically Gandhian nationalist ideology, which opens up space for a new figure—the Indian woman, rather than the Hindu woman. Sevasadan, then, unlike the Bengali and Urdu social reform novels, offers a nationalist solution to the question of social reform. However, this solution remains unrealized within the scope of the novel for the birth of the nation is inhibited by the mores of Hindu society.'[4]

'In Urdu fiction the feminist perspective starts from the study of Azad and Sharar who distinctly focused on the education of women in their social perspective in the 19 century. Then it moves to Prem Chand to IsmatChugtai, QuratAinhaider and finally to the modern feminists.[5]

Hypothesis: Urdu literature has a woman perspective about it.

Methodology: Secondary data based qualitative work.

Findings, Suggestions & Conclusion: Historically, Urdu has her roots in an obsolete Indian language, Brij Bhasha, that has a "sin'f" (type) widely known as "Rekh'ta". (Sin'f is a form of literature. The other forms may include prose, journalism, essays, and poetry.) Generally, Rekh'ta had been employed as a tool to communicate among erudite learneds based in Punjab where the native language was/is Punjabi. After the Muslim conquest of Indian subcontinent, Muslims saints, either natives or foreigners, resided in western part of the subcontinent, now a days Pakistan. Those saints brought or discovered "Tas'awuf", the wisdom, that is a search of the Truth (God) in one's own inner. As the natives of the land were not unfamiliar with this concept of God, therefore, Tas'awuf attracted people from all religions. (Hindu, Budhists Sikh all practiced Tas'awuf with different names.) Therefore, the sufi saints found it easy to communicate the wisdom (Tas'awuf) to masses in their native language.

In tas'awuf, the poetry revolves around God, the beloved, and a person, the lover. As God is considered omnipotent and strong, so, according to the notions of old times, God was called as male or a hero. The same methodology was adopted in Rekhta. Thereafter, Urdu also embraced the practice with open hands.In the three or four centuries after the birth of Urdu, this practice have had a strong hold in literature and every day communications. Now, it is nearly impossible to revert the process, or to be unbiased to gender nomination. A renowned Urdu author, Mushtaq Ahmad Yousafi, once put it as follow:

A verse by Momin Khan Momin,
Tum meray pass hotay ho goya
Jab koi dosra nahi hota
After changing the gender nomination, it may become,
Tum meray pass hoti ho goya
Jab koi dosri nahi hoti

Sultan akhtar is one of the prominent modern poets. All the poets mentioned in the answers are no doubt one of the best. Here is a Ghazal by Sultan akhtar-

Silsila mere safar ka Kabhi tuuta hi nahin
Main kisi mod pe Dum lene to Thahra hi nahin
Khusj Khonton ke tasavvur se larazne vaalo
Tum ne tapta huasahra Kabhi dekha hi nahin
Ab to har baat pehasne ki tarah hansta huun
Aisa lagta Hai Mera Dil Kabhi tuuta hi nahin
Main vo sahra jise pani ki hawas le duubi
Tuwo Badal Jo Kabhi tuut ke barsa hi nahin
Mujhse milti hi nahin Hai Kabhi Milne kitarah
Zindagi se Mera jaise Koi rishta hi nahin

References:-

1. Valerio Pietrangelo-Urdu Literature and Women, The Anuual of Urdu Studies, 2004
2. Sylvia Vatuk-A Passion for Reading: The Role of Early Twentieth-Century Urdu Novels in the Construction of an Individual Female Identity in 1930s Hyderabad, Speaking of the Self:Gender, Performance, and Autobiography in South Asia, 2015
3. Muhammad Sarwar etc.-A Review of the Contributions by Women to Urdu Literature in Earlier and Nearby Periods, American Journal of Educational Science Vol. 1, No. 4, 2015, pp. 152-158
4. KrupaShandilya-The Widow, the Wife, and the Courtesan: A Comparative Study of Social Reform in Premchand'sSevasadan and the Late Nineteenth-Century Bengali and Urdu Novel, Comparative Literature Studies (2016) 53 (2): 272–288.
5. Dr. AqeelaBasheer-Journal of Research (Languages and Islamic Studies), Vol 6, Issue 1, 2004

****

Raman Effect

Ashok Kumar Verma*

Abstract - In physics, Raman scattering or the Raman effect is the inelastic scattering of photons by matter, meaning that there is both an exchange of energy and a change in the light's direction. Typically this effect involves vibrational energy being gained by a molecule as incident photons from a visible laser are shifted to lower energy. This is called normal Stokes-Raman scattering. The paper deals with some of the major aspects and validity of Raman Effect.
Keywords-Raman effect, scattering, vibrational, energy, photons.

Introduction - Light has a certain probability of being scattered by a material. When photons are scattered, most of them are elastically scattered (Rayleigh scattering), such that the scattered photons have the same energy (frequency, wavelength and color) as the incident photons but different direction. Rayleigh scattering usually has an intensity in the range 0.1% to 0.01% relative to that of a radiation source. An even smaller fraction of the scattered photons (approximately 1 in 1 million) can be scattered inelastically, with the scattered photons having an energy different (usually lower) from those of the incident photons—these are Raman scattered photons.[1] Because of conservation of energy, the material either gains or loses energy in the process.[1,2,3]

The effect is exploited by chemists and physicists to gain information about materials for a variety of purposes by performing various forms of Raman spectroscopy. Many other variants of Raman spectroscopy allow rotational energy to be examined (if gas samples are used) and electronic energy levels may be examined if an X-ray source is used in addition to other possibilities. More complex techniques involving pulsed lasers, multiple laser beams and so on are known.

The Raman effect is named after Indian scientist C. V. Raman, who discovered it in 1928 with assistance from his student K. S. Krishnan. Raman was awarded the 1930 Nobel Prize in Physics for his discovery of Raman scattering. The effect had been predicted theoretically by Adolf Smekal in 1923.

The elastic light scattering phenomena called Rayleigh scattering, in which light retains its energy, was described in the 19th century. The intensity of Rayleigh scattering is about 10^{-3} to 10^{-4} compared to the intensity of the exciting source.[2] In 1908, another form of elastic scattering, called Mie scattering was discovered.

The inelastic scattering of light was predicted by Adolf Smekal in 1923[3] and in older German-language literature it has been referred to as the Smekal-Raman-Effekt.[4] In 1922, Indian physicist C. V. Raman published his work on the "Molecular Diffraction of Light", the first of a series of investigations with his collaborators that ultimately led to his discovery (on 16 February 1928) of the radiation effect that bears his name. The Raman effect was first reported by Raman and his coworker K. S. Krishnan,[5] and independently by GrigoryLandsberg and Leonid Mandelstam, in Moscow on 21 February 1928 (5 days after Raman and Krishnan). In the former Soviet Union, Raman's contribution was always disputed; thus in Russian scientific literature the effect is usually referred to as "combination scattering" or "combinatory scattering". Raman received the Nobel Prize in 1930 for his work on the scattering of light.[6]

In 1998 the Raman effect was designated a National Historic Chemical Landmark by the American Chemical Society in recognition of its significance as a tool for analyzing the composition of liquids, gases, and solids.[7]

Instrumentation: Modern Raman spectroscopy nearly always involves the use of lasers as an exciting light source. Because lasers were not available until more than three decades after the discovery of the effect, Raman and Krishnan used a mercury lamp and photographic plates to record spectra.[10] Early spectra took hours or even days to acquire due to weak light sources, poor sensitivity of the detectors and the weak Raman scattering cross-sections of most materials. The most common modern detectors are charge-coupled devices (CCDs). Photodiode arrays and photomultiplier tubes were common prior to the adoption of CCDs.[11]

Theory: The following focuses on the theory of normal (non-resonant, spontaneous, vibrational) Raman scattering of light by discrete molecules. X-ray Raman spectroscopy is conceptually similar but involves excitation of electronic, rather than vibrational, energy levels.

Molecular vibrations: Raman scattering generally gives

*Deptt.of Physics, Govt. College, Dholpur (Raj.) INDIA

information about vibrations within a molecule. In the case of gases, information about rotational energy can also be gleaned.[12] For solids, phonon modes may also be observed.[13] The basics of infrared absorption regarding molecular vibrations apply to Raman scattering although the selection rules are different.[4,5,6]

Degrees of freedom: For any given molecule, there are a total of 3N degrees of freedom, where N is the number of atoms. This number arises from the ability of each atom in a molecule to move in three dimensions.[14] When dealing with molecules, it is more common to consider the movement of the molecule as a whole. Consequently, the 3N degrees of freedom are partitioned into molecular translational, rotational, and vibrational motion. Three of the degrees of freedom correspond to translational motion of the molecule as a whole (along each of the three spatial dimensions). Similarly, three degrees of freedom correspond to rotations of the molecule about the axes. Linear molecules only have two rotations because rotations along the bond axis do not change the positions of the atoms in the molecule. The remaining degrees of freedom correspond to molecular vibrational modes. These modes include stretching and bending motions of the chemical bonds of the molecule. For a linear molecule, the number of vibrational modes is 3N-5, whereas for a non-linear molecule the number of vibrational modes is 3N-6.[14]

Discussion: Raman scattering is conceptualized as involving a virtual electronic energy level which corresponds to the energy of the exciting laser photons. Absorption of a photon excites the molecule to the imaginary state and re-emission leads to Raman or Rayleigh scattering. In all three cases the final state has the same electronic energy as the initial state but is higher in vibrational energy in the case of Stokes Raman scattering, lower in the case of anti-Stokes Raman scattering or the same in the case of Rayleigh scattering. A classical physics based model is able to account for Raman scattering and predicts an increase in the intensity which scales with the fourth-power of the light frequency. Light scattering by a molecule is associated with oscillations of an induced electric dipole. The oscillating electric field component of electromagnetic radiation may bring about an induced dipole in a molecule which follows the alternating electric field which is modulated by the molecular vibrations. Oscillations at the external field frequency are therefore observed along with beat frequencies resulting from the external field and normal mode vibrations.[10][2]

The spectrum of the scattered photons is termed the Raman spectrum. It shows the intensity of the scattered light as a function of its frequency difference Äí to the incident photons, more commonly called a Raman shift. The locations of corresponding Stokes and anti-Stokes peaks form a symmetric pattern around the Rayleigh$\Delta v=0$ line. The frequency shifts are symmetric because they correspond to the energy difference between the same upper and lower resonant states. The intensities of the pairs of features will typically differ, though. They depend on the populations of the initial states of the material, which in turn depend on the temperature. In thermodynamic equilibrium, the lower state will be more populated than the upper state. Therefore, the rate of transitions from the more populated lower state to the upper state (Stokes transitions) will be higher than in the opposite direction (anti-Stokes transitions). [7,8,9]

Results: The Raman-scattering process as described above takes place spontaneously; i.e., in random time intervals, one of the many incoming photons is scattered by the material. This process is thus called spontaneous Raman scattering.On the other hand, stimulated Raman scattering can take place when some Stokes photons have previously been generated by spontaneous Raman scattering (and somehow forced to remain in the material), or when deliberately injecting Stokes photons ("signal light") together with the original light ("pump light"). In that case, the total Raman-scattering rate is increased beyond that of spontaneous Raman scattering: pump photons are converted more rapidly into additional Stokes photons. The more Stokes photons that are already present, the faster more of them are added. Effectively, this amplifies the Stokes light in the presence of the pump light, which is exploited in Raman amplifiers and Raman lasers.

Suppose that the distance between two points A and B of an exciting beam is x. Generally, as the exciting frequency is not equal to the scattered Raman frequency, the corresponding relative wavelengths λ and λ' are not equal. Thus, a phase-shift $\Theta= 2\pi x(1/\lambda$ " $1/\lambda')$ appears. For $\Theta = \pi$, the scattered amplitudes are opposite, so that the Raman scattered beam remains weak.

· A crossing of the beams may limit the path x.

Several tricks may be used to get a larger amplitude:

1. In an optically anisotropic crystal, a light ray may have two modes of propagation with different polarizations and different indices of refraction. If energy may be transferred between these modes by a quadrupolar (Raman) resonance, phases remain coherent along the whole path, transfer of energy may be large. It is an Optical parametric generation.
2. Light may be pulsed, so that beats do not appear. In Impulsive Stimulated Raman Scattering (ISRS), the length of the pulses must be shorter than all relevant time constants. Interference of Raman and incident lights is too short to allow beats, so that it produces a frequency shift roughly, in best conditions, inversely proportional to the cube of the pulse length.

In labs, femtosecond laser pulses must be used because the ISRS becomes very weak if the pulses are too long. Thus ISRS cannot be observed using nanosecond pulses making ordinary time-incoherent light.

A Raman laser is a specific type of laser in which the fundamental light-amplification mechanism is stimulated Raman scattering. In contrast, most "conventional" lasers (such as the ruby laser) rely on stimulated electronic transitions to amplify light.[10,11,12]

Specific properties of Raman lasers

Spectral flexibility: Raman lasers are optically pumped. However, this pumping does not produce a population inversion as in conventional lasers. Rather, pump photons are absorbed and "immediately" re-emitted as lower-frequency laser-light photons ("Stokes" photons) by stimulated Raman scattering. The difference between the two photon energies is fixed and corresponds to a vibrational frequency of the gain medium. This makes it possible, in principle, to produce arbitrary laser-output wavelengths by choosing the pump-laser wavelength appropriately. This is in contrast to conventional lasers, in which the possible laser output wavelengths are determined by the emission lines of the gain material.

In optical fibers made of silica, for example, the frequency shift corresponding to the largest Raman gain is about 13.2 THz. In the near infrared, this corresponds to a wavelength separation between pump light and laser-output light of about 100 nm.

Types of Raman lasers: The first Raman laser, realized in 1962, by Gisela Eckhardt and E.J. Woodbury used nitrobenzene as the gain medium, which was intra-cavity-pumped inside a Q-switching ruby laser.[1][2] Various other gain media can be used to construct Raman lasers:

Raman fiber lasers

The first continuous-wave Raman laser using an optical fiber as the gain medium was demonstrated in 1976.[3] In fiber-based lasers, tight spatial confinement of the pump light is maintained over relatively large distances. This significantly lowers threshold pump powers down to practical levels and furthermore enables continuous-wave operation.

In 1988, the first Raman fiber laser based on fiber Bragg gratings has been made.[4] Fiber Bragg gratings are narrow-band reflectors and act as the mirrors of the laser cavity. They are inscribed directly into the core of the optical fiber used as the gain medium, which eliminates substantial losses that previously arose due to the coupling of the fiber to external bulk-optic cavity reflectors.

Nowadays, commercially available fiber-based Raman lasers can deliver output powers in the range of a few tens of Watts in continuous-wave operation. A technique that is commonly employed in these devices is cascading, first proposed in 1994:[5] The "first-order" laser light that is generated from the pump light in a single frequency-shifting step remains trapped in the laser resonator and is pushed to such high power levels that it acts itself as the pump for the generation of "second-order" laser light that is shifted by the same vibrational frequency again. In this way, a single laser resonator is used to convert the pump light (typically around 1060 nm) through several discrete steps to an "arbitrary" desired output wavelength.

Silicon Raman lasers: More recently, Raman lasing has been demonstrated in silicon-based integrated-optical waveguides by BahramJalali's group at the University of California in Los Angeles in 2004 (pulsed operation[6]) and by Intel in 2005 (continuous-wave[7]), respectively. These developments received much attention[8] because it was the first time that a laser was realized in silicon: "classical" lasing based on electronic transitions is prohibited in crystalline silicon due to its indirect bandgap. Practical silicon-based light sources would be very interesting for the field of silicon photonics, which seeks to exploit silicon not only for realizing electronics but also for novel light-processing functionality on the same chip.[13]

Conclusions: The inverse Raman effect is a form of Raman scattering first noted by W. J. Jones and Boris P. Stoicheff. In some circumstances, Stokes scattering can exceed anti-Stokes scattering; in these cases the continuum (on leaving the material) is observed to have an absorption line (a dip in intensity) at v_L+v_M. This phenomenon is referred to as the inverse Raman effect; the application of the phenomenon is referred to as inverse Raman spectroscopy, and a record of the continuum is referred to as an inverse Raman spectrum.

In the original description of the inverse Raman effect, the authors discuss both absorption from a continuum of higher frequencies and absorption from a continuum of lower frequencies. They note that absorption from a continuum of lower frequencies will not be observed if the Raman frequency of the material is vibrational in origin and if the material is in thermal equilibrium.

Supercontinuum generation: For high-intensity continuous wave (CW) lasers, stimulated Raman scattering can be used to produce a broad bandwidth supercontinuum. This process can also be seen as a special case of four-wave mixing, in which the frequencies of the two incident photons are equal and the emitted spectra are found in two bands separated from the incident light by the phonon energies. The initial Raman spectrum is built up with spontaneous emission and is amplified later on. At high pumping levels in long fibers, higher-order Raman spectra can be generated by using the Raman spectrum as a new starting point, thereby building a chain of new spectra with decreasing amplitude. The disadvantage of intrinsic noise due to the initial spontaneous process can be overcome by seeding a spectrum at the beginning, or even using a feedback loop as in a resonator to stabilize the process. Since this technology easily fits into the fast evolving fiber laser field and there is demand for transversal coherent high-intensity light sources (i.e., broadband telecommunication, imaging applications), Raman amplification and spectrum generation might be widely used in the near-future.

Applications: Raman spectroscopy employs the Raman effect for substances analysis. The spectrum of the Raman-scattered light depends on the molecular constituents present and their state, allowing the spectrum to be used for material identification and analysis. Raman spectroscopy is used to analyze a wide range of materials, including gases, liquids, and solids. Highly complex materials such as biological organisms and human tissue can also be analyzed by Raman spectroscopy.

For solid materials, Raman scattering is used as a tool

to detect high-frequency phonon and magnon excitations. Raman lidar is used in atmospheric physics to measure the atmospheric extinction coefficient and the water vapour vertical distribution.

Stimulated Raman transitions are also widely used for manipulating a trapped ion's energy levels, and thus basis qubit states.

Raman spectroscopy can be used to determine the force constant and bond length for molecules that do not have an infrared absorption spectrum.

Raman amplification is used in optical amplifiers.

The Raman effect is also involved in producing the appearance of the blue sky (see Rayleigh Scattering: 'Rayleigh scattering of molecular nitrogen and oxygen in the atmosphere includes elastic scattering as well as the inelastic contribution from rotational Raman scattering in air').

Raman spectroscopy has been used to chemically image small molecules, such as nucleic acids, in biological systems by a vibrational tag[14]

References:-

1. Harris and Bertolucci (1989). Symmetry and Spectroscopy. Dover Publications. ISBN 978-0-486-66144-5.
2. Keresztury, Gábor (2002). "Raman Spectroscopy: Theory". Handbook of Vibrational Spectroscopy. Vol. 1. Chichester: Wiley. ISBN 0471988472.
3. Smekal, A. (1923). "ZurQuantentheorie der Dispersion". Naturwissenschaften. 11 (43): 873–875. Bibcode:1923NW.....11..873S. doi:10.1007/BF01576902. S2CID 20086350.
4. Nature (19 December 1931). "A review of the 1931 book Der Smekal-Raman-Effekt". Nature. 128 (3242): 1026. doi:10.1038/1281026c0. S2CID 4125108.
5. Raman, C. V. (1928). "A new radiation". Indian Journal of Physics. 2: 387–398. hdl:10821/377. Inaugural Address delivered to the South Indian Science Association on Friday, the 16th March, 1928
6. Singh, R. (2002). "C. V. Raman and the Discovery of the Raman Effect". Physics in Perspective. 4 (4): 399–420. Bibcode:2002PhP.....4..399S. doi:10.1007/s000160200002. S2CID 121785335.
7. "C. V. Raman: The Raman Effect". American Chemical Society. Archived from the original on 12 January 2013. Retrieved 6 June 2012.
8. K. S. Krishnan; Raman, C. V. (1928). "The Negative Absorption of Radiation". Nature. 122 (3062): 12–13. Bibcode:1928Natur.122...12R. doi:10.1038/122012b0. ISSN 1476-4687. S2CID 4071281.
9. Thomas Schmid; Petra Dariz (2015). "Raman Microspectroscopic Imaging of Binder Remnants in Historical Mortars Reveals Processing Conditions". Heritage. 2 (2):1662–1683. doi:10.3390/heritage 2015102. ISSN 2571-9408.
10. Long, Derek A. (2002). The Raman Effect. John Wiley & Sons, Ltd. doi:10.1002/0470845767. ISBN 978-0471490289.
11. McCreery, Richard L. (2000). Raman spectroscopy for chemical analysis. New York: John Wiley & Sons. ISBN 0471231878. OCLC 58463983.
12. Weber, Alfons (2002). "Raman Spectroscopy of Gases". Handbook of Vibrational Spectroscopy. Vol. 1. Chichester: Wiley. ISBN 0471988472.
13. Everall, Neil J. (2002). "Raman Spectroscopy of the Condensed Phase". Handbook of Vibrational Spectroscopy. Vol. 1. Chichester: Wiley. ISBN 0471 988472.
14. Keith J. Laidler and John H. Meiser, Physical Chemistry (Benjamin/Cummings 1982), pp.646-7 ISBN 0-8053-5682-7

****

An Understanding of Physics and its Importance in the Life of Man

Ashok Kumar Verma*

Abstract : Physics is the branch of science concerned with the nature and properties of matter and energy. The subject matter of physics includes mechanics, heat, light and other radiation, sound, electricity, magnetism, and the structure of atoms.Physics - the study of matter, energy and their interactions - is an international enterprise, which plays a key role in the future progress of humankind.

The support of physics education and research in all countries is important becausePhysics is an exciting intellectual adventure that inspires young people and expands the frontiers of our knowledge about Nature; Physics generates fundamental knowledge needed for the future technological advances that will continue to drive the economic engines of the world; Physics contributes to the technological infrastructure and provides trained personnel needed to take advantage of scientific advances and discoveries; Physics is an important element in the education of chemists, engineers and computer scientists, as well as practitioners of the other physical and biomedical sciences; Physics extends and enhances our understanding of other disciplines, such as the earth, agricultural, chemical, biological, and environmental sciences, plus astrophysics and cosmology - subjects of substantial importance to all peoples of the world; Physics improves our quality of life by providing the basic understanding necessary for developing new instrumentation and techniques for medical applications, such as computer tomography, magnetic resonance imaging, positron emission tomography, ultrasonic imaging, and laser surgery. In a word, Physics is an essential part of the educational system and of an advanced society.

The research paper falls in the category of the review article which aims at exploring the importance of Physics in the various fields and which aims at finding that Physics has a wide importance as it helps man understand the physical world.

Keywords: Physics, Science,Matter, Energy, Mechanics, Heat, Light, Sound, Electricity.

Introduction - Physics is the scientific study of the fundamental principles that govern the behavior of the universe. It seeks to understand the nature of matter, energy, space, and time, and it provides the foundation for explaining the physical phenomena and laws that govern our world. Physics is often divided into various branches, including classical mechanics, electromagnetism, thermodynamics, quantum mechanics, and relativity.

The importance of physics is multifaceted:

1. **Understanding the Universe:** Physics helps us comprehend the fundamental laws that govern the behavior of the universe, from the smallest particles to the largest galaxies.
2. **Technological Advancements:** Many technological advancements are rooted in physics principles. Innovations in electricity, electronics, telecommunications, and transportation have their foundations in physics.
3. **Problem Solving:** Physics develops critical thinking and problem-solving skills. It equips individuals with the ability to analyze complex situations, apply principles, and find solutions.
4. **Advancing Science:** Physics provides the basis for other scientific disciplines, such as chemistry, biology, and astronomy. It contributes to the growth of knowledge in various fields.
5. **Medicine and Healthcare:** Physics plays a role in medical imaging technologies like MRI and X-rays, as well as in radiation therapy for cancer treatment.
6. **Environmental Understanding:** Physics is crucial in understanding environmental issues, climate change, and sustainable energy sources.
7. **Space Exploration:** Physics underpins space exploration, from the laws of motion that govern spacecraft to understanding the cosmos.
8. **Economic Impact:** Physics research can lead to the development of new materials, which can have significant economic impact.
9. **Educational Value:** The study of physics fosters curiosity and a deeper understanding of the natural world, promoting a sense of wonder and discovery.

In other words, physics is a fundamental science that not only expands our knowledge of the universe but also drives technological progress and has far-reaching implications for various aspects of our lives and society.

***Deptt.of Physics, Govt. College, Dholpur (Raj.) INDIA**

Objectives Of The Study:

1. Exploring the literal etymological meaning of Physics
2. Capturing depth of the subject matter of Physics
3. Elaborating the importance of Physics

Hypothesis:

1. Physics is a natural science.
2. The subject matter of Physics includes the study of matter, energy, motion, and the interactions between them.
3. There are several sub-fields of Physics.

Review Of Related Literature

A. P. Rao (1994), in his research study on **'Role of Physics in Engineering Education',** elaborates that 'basic sciences have their own importance in the broad spectra of engineering education system. The history of physics and its relation with engineering have been discussed. Then our present engineering education system and the status provided to the subject physics have been discussed. The need is to frame the syllabus in proper way for various engineering courses with logical step-up. The author stresses on a multi-tier changes in the structure of current curricula to start constructive interaction between physicist and engineers of the future, right from degree level. From author's point of view, the coordination among physicists, engineers and educationists shall help the engineering students to go for higher studies which positively affect our technological development. Then,. the examples of material engineering, optoelectronics, cryogenics and superconductivity have been described and it is shown that in engineering education, the coordination between physicist and engineers is a must which results in a faster rate of development in technology for the betterment of mankind.'

Jeffrey M Schwartz, et. al. (2005), in their joint study titled **'Quantum physics in neuroscience and psychology: a neurophysical model of mind–brain interaction',** observe that 'Neuropsychological research on the neural basis of behaviour generally posits that brain mechanisms will ultimately suffice to explain all psychologically described phenomena. This assumption stems from the idea that the brain is made up entirely of material particles and fields, and that all causal mechanisms relevant to neuroscience can therefore be formulated solely in terms of properties of these elements. Thus, terms having intrinsic mentalistic and/or experiential content (e.g. 'feeling', 'knowing' and 'effort') are not included as primary causal factors. This theoretical restriction is motivated primarily by ideas about the natural world that have been known to be fundamentally incorrect for more than three-quarters of a century. Contemporary basic physical theory differs profoundly from classic physics on the important matter of how the consciousness of human agents enters into the structure of empirical phenomena. The new principles contradict the older idea that local mechanical processes alone can account for the structure of all observed empirical data. Contemporary physical theory brings directly and irreducibly into the overall causal structure certain psychologically described choices made by human agents about how they will act. This key development in basic physical theory is applicable to neuroscience, and it provides neuroscientists and psychologists with an alternative conceptual framework for describing neural processes. Indeed, owing to certain structural features of ion channels critical to synaptic function, contemporary physical theory must in principle be used when analysing human brain dynamics. The new framework, unlike its classic-physics-based predecessor, is erected directly upon, and is compatible with, the prevailing principles of physics. It is able to represent more adequately than classic concepts the neuroplastic mechanisms relevant to the growing number of empirical studies of the capacity of directed attention and mental effort to systematically alter brain function.'

Clas Blomberg (2007), in**'THE PHYSICS OF LIFE: PHYSICS AT SEVERAL LEVELS',** finds that There is an undeniable arrogance among some physicists who may claim that physics is at the top of all science. Everything is basically physics there are physicists who apply established methods to biology without understanding that they oversimplify or that the methods are not relevant to biology. Shall physics be applied to biology, one has to understand the biological background and also to look for the relevant physical description. One has to ask "What biology?" and "What physics?".

Margareta Enghag, et. al. (2007), in their invaluable research article on **'From Everyday Life Experiences to Physics Understanding Occurring in Small Group Work with Context Rich Problems During Introductory Physics Work at University',**report from in-depth analysis of one group of four students, video-recorded over 135min solving a context rich problem (CRP). Through transcripts of the group's conversations and from flow-charts made of the group talk we have categorised how students' experiences develop into physics reasoning. The conversations in the cooperative group are sometimes carried out by "exploratory talks", but there are also parts of the conversation where the students develop their own thoughts without response from the others. Some evidence is given of: 1) how the students use exploratory talks to reach consensus about the boundary conditions of the task; 2) how the students state the problem more precisely by starting to talk about experiences they have had and to use their experiences as arguments, and 3) how individual questions are formulated in a process of meaning making. We find in this case-study that students' personal everyday life experience develops into physics reasoning during group talk. We argue accordingly for more time in the physics classroom to solve open ended physics problems which promote group discussions taking departure from own experiences and enhance physics understanding.

Boonchoat Paosawatyanyong&Pornrat Wattanakasi-wich (2010), in their study **'Implication of physics active-learning in Asia',**observe that 'In teaching and learning

physics, it is always difficult to make students interested in the subject or to realize connections between physics and phenomenon in everyday lives. Recent research in science education suggests that traditional instruction hardly improve students' understanding and appreciation in physics even if the instruction includes physics demonstrations, simulations or computer-aided instruction. All these techniques are not that effective because students are not engaged or participating actively in the learning process. Therefore with supports from UNESCO, physics experts and science education researchers from developing and developed countries and Asian Physics Education Network (ASPEN) have developed a new effective approach in teaching physics, called an "active learning" method, which is actively engaging students in learning physics. The instructor using this method has to prepare learning environments through activities, questions, or discussions. Students actively construct their learning while observing and doing experiments, making mathematical descriptions along with constructing theories, and developing scientific reasoning through discussions.'

TDittrich (2014), in **'The concept of information in physics': an interdisciplinary topical lecture',** observes that 'Ideas to develop a course on the role of information in physics and in the neighbouring sciences go back to a personal anecdote, during my postgraduate studies. One day, driven by curiosity, I randomly browsed journal volumes just returned from the bookbinder to the department library, and stumbled into an article that immediately enthraled me: in a seminal paper, Shaw interprets deterministic chaos in terms of a directed flow of information from invisible microscopic scales to macroscopic magnitude. The idea not only stimulated the choice of my principal area of scientific interest. It also left me deeply convinced that information flows in time, in space, and between scales constitute an extraordinarily powerful tool to understand a vast range of phenomena on a common footing, not only in physics but also in the neighbouring sciences.

Dr.Shivaraj Gadigeppa Gurikar (2015), in his research paper entitiled**'The Emergence of Physics as a Study and its Importance in Society-An Analysis'**observes that'Physics touches every aspect of our lives. It involves the study of matter, energy and their interactions. As such, it is one area of science that cuts across all other subjects. Other sciences are reliant on the concepts and techniques developed through physics. Other disciplines — such as chemistry, agriculture, environmental and biological sciences — use the laws of physics to better understand the nature of their own studies. Physics focuses on the general nature of the natural world, generally through a mathematical analysis. Physics is one of the most difficult subjects taught in schools. A number of students are even more daunted with its use of mathematics.'

Method: For the preparation and writing of the research paper the adopted method was inductive method which was adopted and worked out under a research design which allowed the scholar to incline to the set objectives of the study and to test the hypotheses formulated for the study at the beginning of the study. For the purpose, a few relevant research papers published in the esteemed research journals available on the various internet sites were selected for the review making and for arriving at the conclusion. All the steps of scientific method were observed while developing the thought and while proceeding further towards the finding of the conclusion.

Findings, Conclusion And Ethical Considerations: Physics is a natural science that deals with the study of matter, energy, motion, and the interactions between them. It seeks to understand the fundamental principles that govern the universe, from the smallest subatomic particles to the largest galaxies. Physics is often divided into several sub-fields, including classical mechanics, electromagnetism, thermodynamics, quantum mechanics, and relativity.

The importance of physics can be seen in various aspects of our daily lives and in the broader context of scientific advancement and technological innovation. Here are some reasons why physics is important:

Understanding the natural world: Physics helps us understand the fundamental laws that govern the behavior of the universe. By studying physics, we can gain insights into how the world works at both the macroscopic and microscopic levels.

Technological advancements: Many technological innovations and advancements are based on principles derived from physics. From electricity and magnetism to semiconductors and lasers, physics has played a crucial role in the development of modern technology.

Solving real-world problems: Physics provides the tools and methods to solve complex problems in various fields, such as engineering, medicine, environmental science, and astronomy. By applying principles of physics, scientists and engineers can develop solutions to challenges facing society.

Promoting critical thinking: Studying physics helps develop critical thinking skills, problem-solving abilities, and a logical approach to analyzing and interpreting data. These skills are valuable not only in scientific research but also in many other areas of life.

Advancing scientific knowledge: Physics is a foundational science that contributes to our understanding of the natural world. Many other scientific disciplines, such as chemistry, biology, and astronomy, rely on principles derived from physics to explain phenomena and make new discoveries. The study of matter, energy, and their interactions is known as physics, and it seeks to comprehend the underlying principles and rules that control the behavior of the universe at both the macroscopic and microscopic levels.It offers a framework for comprehending the motion of planets and the behavior of subatomic particles, among other natural phenomena.Understanding the basic ideas that underpin several scientific fields, including chemistry, biology, and engineering, is made easier by physics.Because so many

of the technologies we use daily are founded on physics principles, they also play a significant part in technological breakthroughs.

Our ability to address practical issues and create new and improved technologies is facilitated by our understanding of physics.Additionally, it fosters critical thinking and problem-solving abilities, which help us dissect and solve complex problems using logic and mathematics.Overall, physics plays a crucial role in shaping our understanding of the universe and driving technological progress. Its importance extends far beyond the realm of pure science and has wide-ranging applications in various aspects of human life and society.

References:-

1. Blomberg, Clas, 'THE PHYSICS OF LIFE: PHYSICS AT SEVERAL LEVELS',Physics of Life, 2007
2. Dittrich, T, 'The concept of information in physics': an interdisciplinary topical lecture', European Journal of Physics, Volume 36, Number 1, 2014. DOI 10.1088/0143-0807/36/1/015010
3. Enghag, Margareta; Gustafsson, Peter and Jonsson, Gunnar, 'From Everyday Life Experiences to Physics Understanding Occurring in Small Group Work with Context Rich Problems During Introductory Physics Work at University',Research in Science Education 37(4):449-467, 2007.DOI:10.1007/s11165-006-9035-4
4. Gurikar, Dr.Shivaraj Gadigeppa, 'The Emergence of Physics as a Study and its Importance in Society-An Analysis', International Journal of Research and Analytical Reviews (IJRAR), R June 2015, Volume 2, Issue 2.www.ijrar.org
5. Paosawatyanyong, Boonchoat &Wattanakasiwich, Pornrat,'Implication of physics active-learning in Asia',Lat. Am. J. Phys. Educ. Vol. 4, No. 3, Sept. 2010
6. Rao, A. P., 'Role of Physics in Engineering Education', Journal of Engineering Education Transformations, Year: 1994, Volume: 8, Issue: 2, Pages: 43-47. DOI: 10.16920/jeet/1994/v8i2/114721
7. Schwartz, Jeffrey M;Stapp, Henry P and Beauregard, Mario, Quantum physics in neuroscience and psychology: a neurophysical model of mind–brain interaction', Philos Trans R Soc Lond B Biol Sci. 2005 Jun 29; 360(1458): 1309–1327.

****

A Critical Analysis of Human Relationships in R.K.Narayan's Novels

Dr. Sitaram*

Abstract - Narayan is considered the first and foremost an artist in his presentation of Indian life, culture and tradition. He covers the wide gamut of human experience from the innocent pranks of children to serious communal riots, misery of common man to filial relationship, superstitions and orthodox social traditions to the supernatural elements. R. K. Narayan broke India's greatest English language through with the help of Graham Greene, his mentor and friend. His themes in his stories and novels find a vivid life from historical observation of common place incidents and humdrum life. Malgudi is a fictional town of R.K. Narayan, where his literary works take origin. The study of the family and various family relationships, the renunciation, conflict between tradition and modernity, the East-West encounter, education, etc. are his other themes.
Keywords: Malgudi, encounter, predicament, filial.

Introduction - Rasipuram Krishnaswami Narayan is one of the founding pillars of Indian Writing in English. Narayan is credited with bringing Indian literature in English to the rest of the world, and is regarded as one of novelists. The other themes are: the study of the family and various family relationships, the renunciation, generational disaffiliation, conflict between tradition and modernity; the East-West encounter, education, etc. Narayan's method is to treat his themes, not in abstract or didactic terms but in terms of individuals in flesh and blood and their experiences. And the universal appeal of his novels, although they confine themselves a narrow region in South India. The themes of Narayan are all inter-related and inter-dependent. But for purposes of study and analysis one may have to isolate them. The average and the middle-class milieu of Malgudi and the family provide Narayan to study at close quarters human individuals and human relationships in all variety and intricacy: The mainspring of Narayan's fictional art is his abiding, humane and responsible interest in varieties of people, especially the vast majority of the average and the ordinary, and in the limitless possibilities of their lives. In factMalgudi which is wholly imaginary suburban town and the locale of the bulk of his fiction is a richly peopled world. Here indeed one finds "God's plenty." Along with Malgudi the family provides the novelist with a convenient and manageable context, concrete and particular, to study at close quarter's human individuals and human relationships in all variety and intricacy. It also helps him in creating the illusion of realism, so very necessary for the success of his kind of fiction in which the fabulous figures frequently.

The fictional world of R.K. Narayan in its exploration of the familial relationship of the domestic world is largely devoted to the study of the family and various family relationships in detail, as the family forms the basic unit for any society. Narayan presents his protagonists against the background of their families and familial relations. He skillfully draws particular attention to the various details of their families. Many of them are seen as rooted in the traditions, customs, beliefs, and superstitions of their families. Thus every one of the important characters is given a recognizable identity and helped to come alive. The first two novels of Narayan, Swami and Friends and The Bachelor of Arts illustrate this point. The central theme of either novel is growth towards emotional maturity which involves a crisis involving relations with others and the growth is made possible largely by the stability, solidarity and security of their respective families. The family is a secondary but significant theme in both the novels. The Dark Room and The English Teacher appear chronologically after the first two novels and present the obverse and reverse of the theme of married life, the second of the traditional stages or garhasthya, according to the Hindu way of life. While The English Teacher presents the song of love in marriage, The Dark Room offers "a study of domestic harmony." These two are pre-eminently domestic novels, and sensitive studies of husband-wife relationship, and they give ample scope for comparison and contrast. The Financial Expert and The Vendor of Sweets explore the father-son relationship and the generation gap. While Margayya sheds his love of money and returns to the family fold, Jagan seeks release from the family bonds by taking to the stage of vanaprasthya, the third of the traditional stages. Waiting for the Mahatma and Painter of Signs novels delineate the grandmother-grandson and the grandaunt-grandnephew relationship peculiar to Indian culture and family. Certain individuals deliberately choose to isolate themselves from any and every

* Lecturer (English) Swami Vivekanand Govt. College, Khetri, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

form of family relationship and defy the norms and conditions of society, to seek their individual potential, only to render their services to the said society in one way or other, though they are termed "misfits." The Guide, The Man-Eater of Malgudi, and The Painter of Signs present such characters who become estranged from the conventions, codes and mores of the family and society, who go out of the family fold either by necessity or by choice to live their lives independent of every one of the bonds. It is, as it were for them, the demand of the family and by the same token, society proves an obstacle to the development of their selves and to full realization of their potentialities. There are others who in spite of the obstacles, obligations and limitations placed over them by the bonds of family and restricted by a strict social code, strive to realize their absurd aims and ambitions, irrespective of the consequences. However, it is brought home to them that society does not tolerate any such folly and finally they return to the folds of the society.They are of course ultimately led to a stage where their illusions crumble and normalcy is restored. Thus they mature and are all the more wiser for their follies. For, to preserve the harmony between all individuals and society, individual ambitions have to be subdued. The protagonists of some of the novels feel impelled to try some form of renunciation because of frustration, disappointment, failure, irreparable loss, and failure of relationship. Here Narayan tells us of the fraudulent holy man or guru, ideal sainthood and about the real ascetic or sanyasi. To start with, The Bachelor of Arts and The Dark Room grouped together to facilitate the purpose of study; explore the premature and ignorant renunciation taken up to escape certain emotional crises and subsequent upheaval in their lives.

The novelist makes a satiric exposure of the false sanyasi far less important than focusing attention on the role of faith that a credulous community places in one who is believed to be a holy man, and its consequences to both the ascetic as an individual and as a public figure, and to the humanity. The Vendor of Sweets tells the story of Jagan, an eccentric and an obscurantist father, who can be devoted to Gandhi and the Gita, and also make handsome profits as a sweet-vendor, his absurd affection for his son, and his disillusionment and withdrawal from familial attachment and entering of vanaprasthasrama. Narayan's vision is characterized by a unique Indian sensibility is of no doubt. And his adherence to the ancient Indian tradition—(as reflected in his fictional world) a tradition which is deeply rooted in the beliefs of the transmigration of the soul, karma, reincarnation and renunciation, becomes clear through a perceptive study of his fiction. Almost all his novels touch upon the above mentioned themes. The only difference being that while in some of the novels they form the major themes, in others they provide a significant and added meaning to the narration. As one of his characters in the novels comments, he always finds "some ancient model." He always comes upon an ancient myth or legend which lends itself to him to express his moral vision of life.He is actually a sensible novelist who deeply loves his country and his countrymen.Malgudi is like a landscape as alive and active as a personified character. The fictitious region is woven in such a smooth thread that it creates a fine fabric of inseparable part of Narayan's realistic art. It is as remarkable a place in literature as Border Countries . It is a town created from Narayan's own experiences, his childhood, and his upbringing. The people in Malgudi are the people he meets every day. He thus creates a place which every Indian could relate to. A place where you could go "into those loved and shabby streets and see with excitement and a certainty of pleasure, a stranger approaching past the bank, the cinema, the hair cutting saloon, a stranger who will greet you, we know, with some unexpected and revealing phrase that will open the door to yet another human existence". Most of Narayan's stories are set in Malgudi. Critics have attempted to find out the origin of this mythical town.

Narayan's Themes and Characters belong to the native Indian soil and are reminiscent of its culture. They mainly depict the Indian life and clearly express his view of the world and those who live in it, simple but a fascinating plot, lively characterization, strict economy of narration and subtle simplicity of language are some of the most outstanding features of these stories.The themes of Narayan's stories and novels seem to be of perennial interest especially to a sensitive mind interested in human beings. The themes of Narayan are all dependently interrelated and inter-connected. One of them is man's susceptibility to self-deception which is the most recurrent providing excellent field for Narayan's comedy. The study of the family and various family relationships, the renunciation, generational disaffiliation, conflict between tradition and modernity, the East-West encounter, education, etc. are his other themes. Through his themes Narayan reinforced the concerns and motifs of his writing in his long career like exile and return, education (in the widest sense of the term), woman and her status in the society, myths and the ancient Indian past, tradition and modernity, Malgudiand its culture, appearance and reality, the family and so on. Through his themes and characters Narayan ploughed the literary soil and has made it fertile. The simplicity and apparent transparency of his style might give the reader the impression that Narayan is easily read and understood but at the same time he has many hidden depths so if a reader who is not tactful or willing to look beyond the obvious is likely to read him as much less effectively. Narayan's success lies in individualizing his characters and exposing the unnoticed, subtle possibilities of the average and the unremarkable. His characters appear natural as he observed thoroughly and closely life's little incidents, a healthy sense of humour coupled with irony and satire. In his novels Narayan creates a recognisable Indian community, peopled by various human types -astrologers, clerks, criminals, guides, dancers, painters, hotel owners, tailors, uncles, nephews, fathers, mothers, sons, siblings, students and historical figures.

Conclusion - Narayan is one of the founding pillars of Indian Writing in English. Indian culture and tradition, ideologies and views of Indian philosophy and thought appear in Narayan's writings. The themes in his stories and novels find a vivid life from historical observation of common place incidents and humdrum life. Narayan is regarded as the first and foremost an artist in his presentation of Indian life, culture and tradition. He covers the wide gamut of human experience from the innocent pranks of children to serious communal riots, misery of common man to filial relationship, superstitions and orthodox social traditions to the supernatural elements. He is actually a sensible novelist and short story writer who deeply loves his country and his countrymen.Naryan's stories are simple stories of common folk with the characters from everyday life. The themes of Narayan's stories and novels seem to be of perennial interest especially to a sensitive mind interested in human beings.

References:-

1. K.R.S. Iyengar, Indian Writing in English (Bombay: Asia Publishing House, 1973), PP.281-284.
2. R.K. Narayan, My Days (Mysore: Indian Thought Publications, 1975), P.95.
3. R.K. Narayan, Under The Banyan Tree and Other Stories (Chennai, Indian Thought Publications, 2011) P. 97
4. R. K. Narayan, Malgudi Days (Chennai, Indian Thought Publications 2012) P. 149
5. S. Sundaram, R. K. Narayan (New Delhi Arnold Heinemann, India, 1973) P.16
6. Ved Mehta, "The Train had just arrived at Malgudi Station", John's Easy to please (London: Seeker and Warburg, 1974), P.124.

****

Role and Significance of Communication Skills in Organisation

Dr. Govind Prakash Acharya*

Abstract - Effective communication plays a crucial role in fostering employee loyalty within an organization. When employees feel that their voices are heard, opinions are valued, and information is transparently shared, they develop a sense of trust and belonging. Open and honest communication from leaders and managers helps establish a culture of transparency and integrity, creating an environment where employees feel comfortable expressing their concerns, ideas, and feedback. By actively listening to their employees, leaders can address their needs and provide support, which in turn boosts morale and loyalty.Effective communication plays a vital role in increasing employee engagement within an organization and there are several ways to make employees more involved. These can be open and transparent communication, two-way communication, recognition and feedback, making sure that levels of expectation are clearly set out, empowerment and autonomy is provided to all levels of employees, and teams are regularly communicated to and encouraged to collaborate on tasks. Effective communication that is open, transparent, two-way, and focused on recognition, feedback, clarity, empowerment, growth, and collaboration contributes to increased employee engagement.
Keywords – Orgamisation, Environment, Recognition Empowerment.

Introduction - Effective communication is important when it comes to developing a better company culture and the growth and plays a pivotal role in driving growth and success in any setting, be it within a business, a team, or even personal relationships. When individuals are able to communicate their thoughts, ideas, and goals clearly and concisely, it leads to increased understanding, collaboration, and productivity. By fostering open dialogue, active listening, and clear messaging, effective communication paves the way for growth, innovation, and success .Effective communication plays a vital role in fostering innovation within an organization and can be achieved via idea sharing and collaboration, active listening and feedback, cross-functional communication, and transparent and inclusive communication.On the subject of idea sharing and collaboration, when individuals feel comfortable expressing their thoughts and opinions, it creates a fertile ground for innovation.With regards to active listening and feedback, when individuals actively listen to others' ideas and provide constructive feedback, it promotes a culture of mutual respect and encourages the free exchange of ideas. Constructive feedback helps refine and strengthen innovative concepts, leading to improved outcomes.On the subject of cross-functional communication, effective communication facilitates collaboration across departments, teams, and disciplines, enabling the cross-pollination of ideas. By breaking down silos and encouraging interdisciplinary communication, organizations can leverage diverse skill sets and knowledge, resulting in fresh insights and breakthrough innovations.Last but not least, transparent and inclusive communication can facilitate collaboration across departments, teams, and disciplines, enabling the cross-pollination of ideas. By breaking down silos and encouraging interdisciplinary communication, organizations can leverage diverse skill sets and knowledge, resulting in fresh insights and breakthrough innovations.

Effective communication has a significant impact on productivity in the workplace. When communication is clear and concise, employees have a better understanding of their roles, responsibilities, and objectives. Clear communication eliminates confusion and ambiguity,enabling employees to prioritize their tasks and work efficiently towards specific goals. The end result of all that? You got it. Improved productivity. Effective communication plays a key role in increasing efficiency within an organization. There are several ways in which it contributes to improved efficiency. Experts maintain that it can come via clear instructions and expectations, more streamlined processes, timely information sharing, regular feedback and performance evaluation, effective collaboration and teamwork, and better utilization of technology. By eliminating misunderstandings, facilitating quick decision-making, promoting teamwork, and leveraging technology, efficient communication optimizes workflows and resource utilization, leading to improved overall efficiency within the organization Communication promotes motivation by informing and clarifying the employees about the task to be done, the manner they are performing the task, and how to improve

* Lecturer (Agriculture Extension) Govt. College, Uniyara, Tonk (Raj.) INDIA

their performance if it is not up to the mark.Communication is a source of information to the organizational members for decision-making process as it helps identifying and assessing alternative course of actions.Communication also plays a crucial role in altering individual's attitudes, i.e., a well informed individual will have better attitude than a less-informed individual. Organizational magazines, journals, meetings and various other forms of oral and written communication help in moulding employee's attitudes.

Communication also helps in socializing. In todays life the only presence of another individual fosters communication. It is also said that one cannot survive without communication.As discussed earlier, communication also assists in controlling process. It helps controlling organizational member's behaviour in various ways.There are various levels of hierarchy and certain principles and guidelines that employees must follow in an organization. They must comply with organizational policies, perform their job role efficiently and communicate any work problem and grievance to their superiors.Communication helps in controlling function of management.An effective and efficient communication system requires managerial proficiency in delivering and receiving messages.A manager must discover various barriers to communication, analyze the reasons for their occurrence and take preventive steps to avoid those barriers.Thus, the primary responsibility of a manager is to develop and maintain an effective communication system in the organization.Organizations are totally reliant on communication, which is defined as the exchange of ideas, messages, or information by speech, signals, or writing. Without communication, organizations would not function. If communication is diminished or hampered, the entire organization suffers. When communication is thorough, accurate, and timely, the organization tends to be vibrant and effective.Communication is central to the entire management process for four primary reasons: Communication is a linking process of management. Communication is the way managers conduct the managerial functions of planning, organizing, staffing, directing, and controlling. Communication is the heart of all organizationsCommunication is the primary means by which people obtain and exchange information. Decisions are often dependent upon the quality and quantity of the information received. If the information on which a decision is based is poor or incomplete, the decision will often be incorrect.The most time consuming activity a manager engages in is communication. Managers spend between 70 to 90 percent of their time communicating with employees and other internal and external customers.Information and communication represent power in organizations. An employee cannot do anything constructive in a work unit unless he or she knows what is to be done, when the task is to be accomplished, and who else is involved. The staff members who have this information become centers of power.The ability to communicate well, both orally and in writing, is a critical managerial skill and a foundation of effective leadership. Through communication, people exchange and share information with one another and influence one another's attitudes, behaviors, and understandings. Communication allows managers to establish and maintain interpersonal relationships, listen to others, and otherwise gain the information needed to create an inspirational workplace. No manager can handle conflict, negotiate successfully, and succeed at leadership without being a good communicator.

However, lack of communication and communication challenges and barriers can arise in any training scenario, affecting the quality of learning outcomes and the satisfaction of the participants. But all hope is not lost. There are ways to address these issues and ensure effective communication with training stakeholders. Identify the audience, choose the right mode of training that suits attendees, use clear and concise language, handle difficult situations, and finally evaluate and improve by using surveys, tests, observations, or feedback forms, to measure the effectiveness and impact of your communication on your audience's learning outcomes and satisfaction.The right leadership and communication development program can improve productivity, employee retention, engagement levels, corporate culture, and internal hiring. More and more studies are showing that effective communication and communication-related skills amongst employees contribute to some of an organization's most important KPIs, including profitability, productivity, and client engagement. Whilst on the subject of leadership training, it has been proven that leadership development boosts employee engagement, increases the organization's ability to deal with gaps in the talent pipeline, and reduces the headaches and costs associated with turnover.

Having effective management communication and an effective communication strategy can help improve many aspects of a business. There are many ways you can improve management communication in the workplace, as every company is different. Some of the best practice tips on how managers can develop and improve their management communication skills are, work on writing skills, create an open channel for communication, listen and be receptive, involve your team and be transparent, and have a primary channel of communication.Effective communication serves as a powerful tool in resolving work problems and conflicts. When faced with challenges or disagreements, open and honest communication allows individuals to express their concerns, perspectives, and emotions in an early and respectful manner. By actively listening to each other, seeking to understand different viewpoints, and engaging in constructive dialogue, parties involved can find common ground and work towards a mutually beneficial resolution. Clear communication helps clarify misunderstandings, addresses underlying issues, and prevents conflicts from escalating further.Effective communication plays a significant role in enhancing skills in various areas. There are many ways that it can contribute

to skills development and those include; greater clarity and articulation, an increase in active listening, greater incidences of nonverbal communication, better empathy and rapport-building, advanced conflict resolution and negotiation, and more effective written communication. Overall, effective communication enhances various skills, including clarity and articulation, active listening, nonverbal communication, empathy, conflict resolution, negotiation, presentation, and written communication. By consciously practicing and refining these skills, individuals can become more effective communicators, leading to improved personal and professional growth.Verbal communication: Verbal communication involves the use of spoken words, tone of voice, and effective listening. It helps in resolving misunderstandings by providing clarity and immediate feedback. Through face-to-face conversations, phone calls, or video conferences, individuals can express their thoughts, ask questions, and seek clarification in real-time, ensuring clear understanding and reducing the chances of misinterpretation.Nonverbal communication: Nonverbal cues such as body language, facial expressions, and gestures convey important information in workplace interactions. Paying attention to nonverbal cues helps individuals understand emotions, attitudes, and intentions, which can aid in resolving communication problems. For example, observing signs of frustration or confusion allows others to respond appropriately and offer support or clarification. Written communication: Written communication, including emails, memos, reports, and documentation, provides a clear and permanent record of information. It helps overcome communication problems by ensuring that details are accurately conveyed, allowing individuals to refer back to messages for reference or clarification. Written communication also provides time for thoughtful reflection and revision, reducing the likelihood of misunderstandings caused by hasty or impulsive responses.Visual communication: Visual aids such as charts, graphs, diagrams, and presentations can enhance understanding and overcome communication barriers. Visual communication simplifies complex information, making it easier to grasp and remember. Visuals can be especially useful when dealing with diverse audiences or when language barriers exist, as they transcend linguistic differences and convey information in a universally understandable manner.

Conclusion : Communication is key in business, and those organizations that have been able to master this crucial art of open and honest channels of communication between leaders and employees, and vice versa, will be best placed to reap all of the benefits. With open, honest and effective communication organizations will be able to mitigate conflict, increase employee engagement, improved productivity, a healthy workplace culture, boosted employee satisfaction, and increased innovation. Can being a great communicator be taught? You bet it can! Anyone can be a great communicator with training and practice and as an added bonus, it can make you a better leaders. The best communicators and leaders spend time developing, practicing and incorporating feedback into their communication efforts.

References :–

1. Bodie, G. & Crick, N. (2014). Theory of communicative action. Vol. 1: Reason and the rationalization of society. Psychology Press
2. Boston, MA: Beacon Press. Burnside-Lawry, J. (2011).
3. The dark side of stakeholder communication: Stakeholder perceptions of ineffective organisational listening. Australian Journal of Communication, 38(1), 147-173, 149.
4. Frandsen, F., Johansen, W. & Pang, A. (2013).
5. Belmont, CA: Thomson-Wadsworth. Ruck, K. & Welch, M. (2012). Valuing Internal Communication; Management and Employees Perspectives. Public Relations Review, 38, 294-302.

****